CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3990

न. अ. व्याप

गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य-साहित्य को देन

3990.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

डा० नटवरलाल अम्बालाल व्यास

891.43
व ग

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

डा० नटवरलाल अम्बालाल व्यास

891.43
व ग

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

STATE MUSEUM, LUCKNOW
LIBRARY

Acc. No. 3990

Book No. 891·43
व ग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुजरात के कवियों की
हिन्दी काव्य साहित्य
को देन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

[आगरा विश्वविद्यालय की पी० एच० डी०
उपाधि के लिए स्वीकृत प्रबन्ध]

लेखक
डॉ० नटवरलाल अम्बालाल व्यास
एम० ए०, पी-एच० डी०
प्राध्यापक
क० मुं० हिन्दी एवं भाषाविज्ञान विद्यापीठ,
आगरा विश्वविद्यालय, आगरा

राजकीय संग्रहालय पुस्तकालय, लखनऊ
Museum Library, Lucknow
3990
18.2.71

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-३

891.43
व गा

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

प्रथम संस्करण : १९६७
मूल्य : १२.००

3990

कैलाश प्रिंटिंग प्रेस, आगरा-२
[१२५६७]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समर्पण

परम पूज्य पिता जी श्री अम्बालाल व्यास
एवं
माताजी जडाव बहन व्यास को
सादर समर्पित

—नटवरलाल व्यास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिचय

डॉ० नटवरलाल अम्बालाल व्यास पिछले आठ वर्षों से क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा में गुजराती के प्राध्यापक का काम कर रहे हैं। उपर्युक्त संस्था के प्रवर्त्तन काल से लेकर जब तक मैं उनका निदेशक रहा तब तक डा० व्यास के सम्पर्क का मुझे लाभ था। मैं इनकी अध्ययनशीलता से बहुत ही प्रभावित रहा हूँ। अध्यापन का कार्य करते हुए उन्होंने ऐसे विषय पर अनुसंधान किया है, जिसके बारे में गुजराती के ही नहीं, अपितु हिन्दी के विद्वानों का भी ध्यान नहीं गया था। नरसिंह मेहता से लेकर मूलदास तक गुजराती के कवियों ने गुजरात में हिन्दी के विकास और समृद्धिवर्द्धन में अपनी रचनात्मक शक्ति द्वारा जो योग दिया, हिन्दी की सरस्वती की आराधना में अपनी प्रतिभा की जो भेंट चढ़ाई, इन सबका सम्यक् अध्ययन डा० व्यास ने अपने शोध प्रबन्ध "गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन" में प्रस्तुत किया है।

इस ग्रन्थ में ९० से अधिक कवियों के विषय में विस्तृत जानकारी उनकी रचनाओं के उदाहरण के साथ दी गई है। इनमें से बहुतेरे कवियों के विषय में हमारी जानकारी प्रायः बहुत कम थी। प्रारम्भ में डा० व्यास ने गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास तथा गुजरात में हिन्दी की लोकप्रियता का जो विवेचन किया है, उससे इस ग्रन्थ का महत्त्व और बढ़ गया है। धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से गुजरात प्रारम्भ से ही देश का प्रमुख अंग रहा है। भगवान कृष्ण के समय से लेकर आज तक धार्मिक, सांस्कृतिक और सामयिक जन-आन्दोलनों का प्रभाव गुजरात पर पड़ा है। उस प्रभाव को गुजरात के हिन्दी कवियों ने किस रूप में ग्रहण किया, इसका बड़ा रोचक परिचय हम इस पुस्तक में पायेंगे। गुजरात के मध्यकालीन कवियों द्वारा विरचित भक्ति-काल तथा राजाश्रित कवियों द्वारा प्रणीत अलंकृत काव्य का हिन्दी साहित्य की विकास परम्परा में विशिष्ट स्थान है। इस विवेचन से यह भी स्पष्ट होगा कि हिन्दी का विकास प्रारम्भ से ही अखिल भारतीय रूप में हुआ है और उसमें हिन्दीतर क्षेत्र के साहित्य स्रष्टाओं का भी वैसा ही योग रहा है जैसा हिन्दी क्षेत्र के।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डा० व्यास की इस विद्वत्तापूर्ण कृति की मैं भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ और विद्वन्मण्डली के समक्ष इसकी संस्तुति करते हुए मुझे असाधारण आनन्द हो रहा है।

डा० विश्वनाथ प्रसाद
निदेशक,
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

२६-१-१९६५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्तावना

श्री नटवरलाल अम्बालाल व्यास सन् १९५६ में क० मुं० हिन्दी विद्यापीठ में गुजराती के प्राध्यापक पद पर नियुक्त होकर आगरा आये। तभी से मेरा इनसे परिचय हुआ। डा० व्यास अत्यन्त सीधे-सादे, मितभाषी और सरल प्रकृति के अध्यापक हैं। विद्यापीठ अनुसंधान-प्रधान संस्था थी अतः इसके प्रत्येक प्राध्यापक को किसी-न-किसी प्रकार के अनुसंधान में प्रवृत्त होना आवश्यक था। इसी प्रेरणा से डा० व्यास ने पी-एच० डी० करने का निश्चय किया। इसमें आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति एवं उत्तर प्रदेश के गवर्नर श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी जी का भी हाथ था। इनकी नियुक्ति के तुरन्त बाद ही मुंशी जी ने मुझसे कहा कि इन्हें शीघ्र डाक्ट्रेट दिलाओं, और व्यास जी से कहा कि किसी अच्छे अनुसंधान से पी-एच० डी० प्राप्त कीजिए।

क० मुं० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ की कल्पना में एक अत्यन्त दिव्य भावना काम कर रही थी। उस भावना का मूल स्रोत संभवतः मुंशी जी ही थे। कल्पना यह थी कि हिन्दी क्षेत्र में एक ऐसा शोध-संस्थान स्थापित होना चाहिए जिसमें भारत की समस्त भाषाओं के विद्वान उपस्थित रहें, समस्त भारत के सभी भाषा क्षेत्रों से विद्यार्थी भी वहाँ आयें—इन विद्यार्थियों को उच्चस्तरीय अध्ययन कराया जाय तथा तुलनात्मक अनुसंधान कराया जाय। इस समस्त अध्ययन-अध्यापन और शोध का माध्यम हिन्दी हो। इस प्रकार भारत की सभी भाषाओं का एक केन्द्र बने, जिसमें भारत की सभी भाषाओं के विद्वान तथा व्यक्ति परस्पर एक-दूसरे के घनिष्ठ सम्पर्क में आयें और यह सम्पर्क सारस्वत भूमि पर भारतीय साहित्य को यथार्थतः भारतीय रूप दे। और इस समस्त उपक्रम का माध्यम हिन्दी बने। इस योजना के अन्तर्गत इस विद्यापीठ में तुलनात्मक साहित्य में शोध कार्य को प्रमुखता दी गयी। डा० व्यास ने इसी योजना के अन्तर्गत 'गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन' विषय पर शोध करने का निश्चय किया।

डा० व्यास अध्यवसाय और लगन से अपने अनुसंधान में लग गये। आपके इस शोध-ग्रन्थ के संबंध में एक विद्वान का यह मत है "The treatment of the subject is lucid and records much valuable information

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

to the literary studies. He has found out as many as 91 poets born and brought up in Gujarat who wrote notable poems in Hindi and prescribed varied specimen of poetry (Kavya) and a new variety of metres and subject-matter." इन्होंने ही आगे लिखा है, "The work is doubtlessly an outcome of the candidate's patient industry and careful research and could be deemed to be a worthy contribution towards the advancement of the literary studies both in Hindi and Gujarati as well."

यह उद्धरण इस ग्रन्थ के महत्त्व को भी स्पष्ट करता है। गुजराती क्षेत्र ने हिन्दी के विकास में कितना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, यह डा० व्यास के इस ग्रन्थ से स्पष्ट हो जाता है। और हमें 'शिक्षण अने साहित्य' के लेखक श्री जनक दवे के इस कथन का स्मरण हो आता है कि गुजरातियों के हाथों हिन्दी भाषा की जो सेवा हुई है वह मूक होते हुए भी महान है। जैसे डा० व्यास ने इसी कथन को सिद्ध करने के लिए अपने अध्यवसायपूर्ण अनुसंधान से प्रमाण रूप में ही यह ग्रन्थ दिया हो। इससे यह भी स्पष्ट है कि दोनों भाषाओं का हृदय एक है, दोनों के साहित्य की साधना का स्वरूप एक है।

गुजरात के कई हिन्दी कवियों से जब तब हम लोग परिचित होते रहे हैं। नरसी मेहता का नाम तो सभी हिन्दी क्षेत्र में परिचित था, पर नरसी का भात या नरसी का भामेरा या माएरा भी जहाँ तहाँ बड़ी रुचि से गाया और सुना जाता रहा है, गाँवों में, लोक क्षेत्र में लोक गाथा के रूप में। इन पंक्तियों के लेखक ने बचपन में नरसी का भात सुना था, वह बड़ी प्रवाहपूर्ण शब्दावली में था, गाने वाला भी उससे प्रभावित होता था और सुनने वाला तो मंत्रमुग्ध हो जाता था। दयाराम भी पहले से हमारे जाने-माने कवि थे। ऐसे ही कुछ और भी थे जिन्होंने हिन्दी के संवर्द्धन में महत्त्वपूर्ण भाग लिया है। स्पष्ट ही गुजरात का क्षेत्र भी हिन्दी अथवा ब्रजभाषा का एक विशद पालना था। गुजरात क्षेत्र के कच्छ में ही हमें राजा लखपत के द्वारा स्थापित ब्रजभाषा विद्यापीठ का पता चलता है जहाँ ब्रजभाषा का विशेष अध्ययन कराया जाता था, विशेषतः काव्य-रचना की शिक्षा के लिए ऐसे विद्यापीठ का पता हमें अन्यत्र कहीं नहीं लगता। यह कहा जाता है कि इस विद्यापीठ में शिक्षा ग्रहण करने के लिए दूर-दूर के लोग आते थे।

यहाँ इस बात की ओर ध्यान जाता है कि आधुनिक युग में गुजरात ने देश को महान नेता प्रदान किये हैं—स्वामी दयानन्द गुजरात के थे और महात्मा गांधी भी गुजरात के थे, दोनों ने ही हिन्दी को देश की भाषा का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गौरव प्रदान किया, दोनों ने ही हिन्दी को पुष्ट और समृद्ध करने के प्रयत्न किये। गुजराती भाषा का साहित्य आज किसी भी देश भाषा के साहित्य से कम नहीं माना जा सकता। देश का मस्तक जब स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा महात्मा गांधी के लिए झुकता है तो वह गुजरात के अभिनन्दन के लिए ही झुकता है क्योंकि इस भूमि की दृष्टि वस्तुतः सत्य को ग्रहण करने वाली रही है। स्वामी दयानन्द का "सत्यार्थ प्रकाश" और महात्मा गांधी का सत्याग्रह—गुजरात के सत्यान्वेषी और सत्यारूढ़ स्वभाव के ही परिणाम हैं।

इस सत्य के प्रति आस्था के कारण ही इस भूमि से देश को एक सूत्र में बांधकर महान बनाने की ओर अग्रसर करने के सूत्रों का उद्‌भव हुआ। यह सत्य कल्याणकारी ही होता और वैष्णव भावना से ओत-प्रोत—

"वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीर पराई जाणे रे।"

इन गुणों से ही किसी जाति को महानता मिलती है। गुजरात में इन गुणों की व्यापकता सिद्ध है और वह गुजराती के (और हिन्दी के भी) आदि काल से ही इसमें पनपती रही है। यही गुण इसके साहित्य में अवतरित हुए हैं। अतः इस क्षेत्र के कवियों ने ब्रजभाषा अथवा हिन्दी में भी लिखा तो कोई आश्चर्य नहीं और यह सब तब से आरम्भ हुआ जब से आधुनिक लोक भाषाएँ अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थीं।

उसी की एक व्यवस्थित झांकी हमारे डा० नटवरलाल अम्बालाल व्यास जी ने प्रस्तुत की है। मुझे पूरा भरोसा है कि इस ग्रन्थ का हार्दिक स्वागत किया जायगा।

डा० व्यास के इस प्रयत्न को महत्त्व केवल इस दृष्टि से ही नहीं है कि गुजराती कवियों के हिन्दी सर्जन से हम परिचित हो सकेंगे, इसलिए भी नहीं कि हमें यह विदित हो सकेगा कि हिन्दी तथा ब्रज क्षेत्र का गुजरात से भावनात्मक ऐक्य साहित्यिक भूमि पर दीर्घकाल से दृढ़ रहा है, इसलिए भी नहीं कि ऐसे अनुसंधानों से नये कवियों और उनके कृतित्व के उद्घाटन से साहित्य के इतिहास की खोयी कड़ियाँ मिलती हैं, और यह स्वयंमेव एक महत्त्वपूर्ण कार्य है, वरन् इस प्रयत्न की ऐतिहासक महत्ता इसलिए भी है कि निष्पक्ष अनुसंधान का यह ग्रन्थ एक आदर्श है। साथ ही इससे हमें हिन्दी तथा ब्रज से इतर क्षेत्र में स्वीकृत हिन्दी तथा ब्रज की भाषा के स्वरूप का भी पता चलता है, साहित्यिक चिन्तन के देशव्यापी स्तर की कल्पना भी इसके द्वारा हो सकती है। यह ग्रन्थ ऐसे ही अन्य प्रयत्नों को प्रेरणा देगा, ऐसा मुझे भरोसा है, और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डा० व्यास जी भी अब अपने परिपक्व ज्ञान से और भी अधिक उज्ज्वल रत्न हिन्दी को भेंट कर सकेंगे।

हिन्दी विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर।
अक्षय तृतीया सं० २०२४

डा० सत्येन्द्र—
आचार्य एवं अध्यक्ष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दो शब्द

क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ में प्राध्यापक पद पर नियुक्त होने के पश्चात् मैं अनुसन्धान के विषय की खोज में रहा। पर्याप्त विचार के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि 'गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन' विषय पर अनुसंधान किया जाय। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल एवं आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति महोदय महामहिम श्री डा० के० एम० मुंशी जी ने मेरे इस विषय की बहुत ही प्रशंसा की। शीघ्र ही विद्यापीठ के प्रवाचक एवं कार्यवाहक संचालक डा० सत्येन्द्र जी के मार्गदर्शन में अनुसन्धान का श्रीगणेश कर दिया।

अभी तक प्रायः यही प्रवृत्ति रही है कि प्रत्येक भाषा-भाषी अपनी ही भाषा के साहित्य का अनुसंधान करता रहा है। गुजरात में कवियों की गुजराती रचनाओं का ही अध्ययन, अध्यापन एवं अनुसन्धान होता रहा। इसी तरह हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी कवियों की रचनाओं का ही अध्ययन, अध्यापन एवं अनुसन्धान होता रहा और यह स्वाभाविक ही था। यह प्रवृत्ति अनुसन्धान करने वालों में थी। पर, कवियों की दृष्टि इतनी संकुचित नहीं थी। गुजराती भाषी प्रदेश के बहुत से कवि एवं इनकी रचनाएँ बहुत ही समय तक हिन्दी भाषी लोगों से अदृष्ट ही रहीं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने अपने स्वातन्त्र्य संग्राम के असहयोग आन्दोलन के साथ-साथ ही राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार को भी अपना जीवन ध्येय समझा। उनके आदेश से स्वर्गीय नारायण मोरेश्वर खरे ने आश्रम भजनावलि का संकलन किया जिसमें भारत की विभिन्न भाषाओं के भक्ति-गीत संगृहीत थे। उसी संग्रह में गुजराती कवियों के हिन्दी भक्तिगीत सर्वप्रथम प्रकाशित हुए और इस तरह गुजरात के कवियों की हिन्दी रचनाएँ भी सभी के सामने प्रस्तुत की गईं। तदनन्तर कई विद्वानों का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित हुआ। 'सरस्वती' मासिक के ई० स० १९२० वर्ष में श्री भवानीशंकर याज्ञिक ने 'गुजरात प्रान्त के हिन्दी कवि' शीर्षक लेख लिखा था। यह लेख अब सरस्वती हीरक जयंती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशेषांक (ई० स० १९००-१९५९) में भी ग्रन्थस्थ किया गया है।[1] गुजराती साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान श्री जगजीवन क० मोदी ने 'गुजरात नुं हिन्दी साहित्य' विषय पर ई० स० १९२१ के अक्टूबर के गुजराती के अंक में एक लेख लिखा था। गुजराती के अन्य विद्वान श्री डाह्याभाई पी० देरासरी ने इसी विषय पर 'गुजराती ओए हिन्दी-साहित्यमां आपेलो फालो' नामक पुस्तिका लिखी थी। किन्तु इन तीनों के प्रयत्न प्रशंसापूर्ण होने पर भी संपूर्ण नहीं थे। श्री जनक दवे ने 'शिक्षण अने साहित्य' (मासिक) में जुलाई १९५१ से जनवरी १९५२ तक के कई अंकों में 'सुरत अने हिन्दी' शीर्षक लेखमाला में इस विषय का पर्याप्त अध्ययन प्रस्तुत किया है। परन्तु उसमें विशदता एवं गहनता का अभाव है। श्री अंबाशंकर नागर ने 'प्रवीणसागर' लेख सम्मेलन पत्रिका संवत् २०१३, अंक २ में और 'स्वामी ब्रह्मानन्द की हिन्दी कविता' लेख सन्त-वाणी (मासिक) वर्ष १, अंक ६ में लिखे हैं। इस विषय के सम्बन्ध में उनके ई लेख निकलते रहे। 'ब्रजभारती' में श्री अगरचन्द नाहटा ने भी प्रवीण सागर और अन्य ऐसे ही विषयों पर मननीय लेख लिखे हैं। हिन्दी अनुशीलन १९५८ के वर्ष में श्री जयेन्द्र त्रिवेदी का 'गोविन्द गिल्लाभाई' पर लेख निकला है। इस प्रकार इस दिशा में कुछ प्रयत्न तो अवश्य हुए हैं। पर इस बात की आवश्यकता प्रतीत होती रही कि गुजराती कवियों की यथासम्भव समस्त हिन्दी रचनाओं का समीचीन अध्ययन एवं सर्वेक्षण किया जाय। क० मुं० हिन्दी एवं भाषाविज्ञान विद्यापीठ ने आरम्भ से ही विविध भारतीय भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था की और विविध भारतीय भाषाओं की पारस्परिक तुलना का भी प्रवर्तन किया। इस दृष्टि ने मुझे और भी उत्साहित किया और मैं 'गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन' विषय पर अनुसंधान करने में प्रवृत्त हुआ।

उपर्युक्त आधारयुक्त सामग्री का उपयोग करते हुए मैंने इस विषय में पूर्णतः मौलिक अनुसंधान करने का नम्र प्रयास किया है। सभी प्राप्त रचनाओं का मैंने विधिवत अध्ययन किया है और उनका सर्वेक्षण एवं उनकी समालोचना निजी ढंग से ही की है। कई ऐसे कवि हैं जिनके विषय में सर्वप्रथम उल्लेख इसी प्रबन्ध में किया गया है। उनका अध्ययन भी साथ साथ प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रबन्ध के लिए आवश्यक सामग्री एकत्र करने में मुझे अनेक संस्थाओं से सहायता प्राप्त हुई है जिनमें अग्रलिखित मुख्य हैं :

---

[1] **हीरक जयंती विशेषांक**, पृ० ५८५-५९२।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१. गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद ।
२. मा० जे० पुस्तकालय, अहमदाबाद ।
३. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद ।
४. क० मुं० हिन्दी तथा भाषा-विज्ञान विद्यापीठ, आगरा
५. यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी, आगरा ।

अपने अनुसंधान के सम्बन्ध में निम्नलिखित विद्वानों से साक्षात्कार द्वारा या पत्र-व्यवहार करके मैंने सहायता प्राप्त की है। एतदर्थ उनका बहुत ही अनुगृहीत हूँ :

सर्वश्री कन्हैयालाल मुंशी, कांतिलाल व० व्यास, डॉ० भोगीलाल ज० सांडेसरा, के० का० शास्त्री, डॉ० हरि वल्लभ भायाणी, डॉ० मंजुलाल मजमुदार, उमाशंकर जोषी, विष्णुप्रसाद त्रिवेदी, विश्वनाथ म० भट्ट, अनन्तराय रावल, डॉ० अम्बाशंकर नागर, डॉ० ईश्वरलाल र० दवे, अगरचन्द नाहटा, त्रि०क० ठक्कर, रंग अवधूत, महाराज, अमृतलाल मोदी, सुन्दरम, सौ० इन्दुमती ह० देसाई जी ।

यह प्रबन्ध क० मुं० हिन्दी तथा भाषा-विज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्व-विद्यालय के भूतपूर्व प्रवाचक तथा कार्यकारी संचालक एवं राजस्थान विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष, डा० गौरीशंकर 'सत्येन्द्र' जी के निर्देशन में ई० स० १९६० में प्रस्तुत किया गया था। अतः यह प्रबन्ध उनकी ही प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं मार्ग-प्रदर्शन का परिणाम है। क० मुं० हिन्दी एवं भाषाविज्ञान विद्यापीठ के भूतपूर्व संचालक एवं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निर्देशक आदरणीय डॉ० विश्वनाथ प्रसाद जी से मुझे समय-समय पर अपूर्व सहायता एवं मार्ग-दर्शन मिलता रहा है। अतः मैं उनका भी बहुत आभारी हूँ। मेरे मित्र भी उदयशंकर शास्त्री जी भीसमय-समय पर अपने सुझाव मुझे देते रहे हैं। उनके सुझावों से तथा उनके निजी संग्रहालय की पुस्तकों के उपयोग की सुविधा रहने से मेरा दुष्कर कार्य भी सुकर हो गया। एतदर्थ मैं उदयशंकर शास्त्री जी का बहुत ही अनुगृहीत हूँ। डॉ० अंबाशंकर नागर के कई लेखों की सहायता मैंने ली है। इसके लिए मैं इनका बहुत ऋणी हूँ।

परिशिष्ट में गुजरात के कवियों की हिन्दी कविताओं का संकलन दिया गया है। जिन-जिन कवियों की कृतियों से उद्धरण लिये गये हैं उन सभी कवियों का एवं इनकी कृतियों के प्रकाशकों का मैं बहुत आभारी हूँ। विशेष रूप से मैं पं० बहेचरदास दोशी, सस्तुं साहित्यवर्धक कार्यालय, अहमदाबाद के व्यवस्था-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पक श्री त्रि० क० ठक्कर, श्री अमृतलाल मोदी एवं सौ० इन्दुमती ह० देसाई जी का विशेष ऋणी हूँ जिन्होंने अपने प्रकाशनों में से या अपनी कृतियों में से संकलन करने की अनुमति प्रसन्नतापूर्वक दी है। आगरा विश्वविद्यालय ने इस प्रबन्ध के प्रकाशन के लिए आर्थिक सहायता दी है। एतदर्थ मैं इनके संचालकों का आभारी हूँ।

क० मुं० हिन्दी विद्यापीठ
आगरा विश्वविद्यालय आगरा
१२-५-६७

रलाल अम्बालाल व्यास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय-सूची

प्रकरण—१

गुजरात का सांस्कृतिक इतिहास एवं गुजरात में हिन्दी की लोकप्रियता के कारण १–१३

प्रकरण—२

गुजरात के विभिन्न धार्मिक संप्रदाय और इसका साहित्य पर प्रभाव १४–१९

स्वामीनारायण सम्प्रदाय १५; प्रणामी पन्थ १६; रविपन्थ १६; रामानन्दी पन्थ १६ जैन धर्म १७; सूफीमत १८ ।

प्रकरण—३

गुजरात के १५वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन २०–२८

नरसिंह मेहता २१; भालण २३; केशवदास २५; कृष्णदास २५; शाह अली मुहम्मद आमधनी २७; काजी महमूद परियायी २८ ।

प्रकरण—४

गुजरात के १६वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन २९–३७

दादूदयाल ३०; मीराबाई ३१; सायां झुला ३२; ईसर बारोट ३३; हजरत खूब मोहम्मद साहब चिश्ती ३३; सैयद शाह हाशिम ३४ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण—५

गुजरात के १७वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन ३५–४९

रामचन्द्र नागर ३६; पुहकर ३६; भगवान ३७; आनन्दघन ३८; ज्ञानानन्द ३८; यशोविजय ३९; विनय विजय ४०; प्राणनाथ ४०; इन्द्रामती ४१; अखो ४१; शामल भट्ट ४६; विश्वनाथ जानी ४७; मुकुन्द ४७; शम्सवली उल्लाह ४८; शुजाउद्दीन नूरी ४९।

प्रकरण—६

गुजरात के १८वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन ५०–९१

महेरामणसिंह ५१, राजासाहब अमरसिंहजी ५८; महाराव लखपतिजी ५८; दुर्गेश्वर ५८; चाँदण शासन ५९; गौरीबाई ६०; जसुराम ६०; कवीश्वर दलपतिराय और बन्शीधर ६०; केवलराम ६२; धीरो ६२; प्रीतमदास ६३; खुमानबाई ६६; भोजा भगत ६७; मुक्तानन्द स्वामी ६८; निष्कुलानन्द ६९; सहजानन्द स्वामी ६९; ब्रह्मानन्द ७०; प्रेमानन्द स्वामी (प्रेमसखी) ७४; गंजन ७०; दयाराम ७६; गिरिधर ८५; मनोहर स्वामी सच्चिदानन्द ८७; किशनदास ८७; हर्षदास ८८; निरान्त ८९; भाणादास ८९; रविसाहब ९०, खीमसाहब ९० त्रिकम साहब ९०; मोरार साहब ९१; मूलदास ९१।

प्रकरण—७

गुजरात के १९वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन ९२–१०९

नभुलाल द्यानतरायजी द्विवेदी ९३; छोटम दलपतराम डाह्याभाई कवि ९६; गोविन्द गिल्लाभाई ९९; नृसिंहाचार्य १०१; अरजुन भगत १०२;

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बालाशंकर उल्लासराम कंथारीआ १०३; राजा साहब अमरसिंह जी १०४; राजा साहब रणभल्ल सिंह जी १०४, राजासाहब मानसिंहजी १०४; पिंगलसिंह पाताभाई गढ़बी १०५; हीराचन्द कानजी कवि १०५; राधाबाई १०५; जामसुता जाडेजी प्रतापबाला १०६; वजमलजी महेडु १०६; उद्धव उपनाम औघड़ १०६; होथी साहब १०६, जीवण दास १०६; दीनदरवेश १०७; कहान १०८; कल्याण १०८; भाण १०८; सवितानारायण १०८; महात्मा हरिदास १०८।

प्रकरण—८

गुजरात के २०वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन ११०–१२२

श्री अविनाशानन्दजी १११; काजी अनवर मियाँ "ज्ञानी" ११३; दूलेराय काराणी ११४; कुंवरजी नथु वैद्य ११५; दूला भाया काग ११६; सौ० इन्दुमनी ह० देसाईजी ११८; रंग अवधूत महाराज ११९ राजकवि मूलदास मोनदास नीमावन १२१।

प्रकरण—९

उपसंहार १२३–१२४

परिशिष्ट १

गुजरात के हिन्दी कवियों की कविताओं से संकलन १२५–३२४

परिशिष्ट २

सन्दर्भ ग्रन्थ ३२५–३२९

परिशिष्ट ३

हिन्दी काव्य साहित्य को प्रदान करने वाले प्रमुख गुजराती कवि। ३३१–३३७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण १

गुजरात का सांस्कृतिक इतिहास एवं गुजरात में हिन्दी की लोकप्रियता के कारण

गुजरात का इतिहास बहुत पुराना है। सिंधु-संस्कृति (३५००-२७५० ई० पू०) सिन्धु की घाटी तक ही सीमित नहीं थी। निश्चित साधनों से पता चलता है कि इस संस्कृति का विस्तार, सिन्ध, सौराष्ट्र एवं नर्मदा तथा ताप्ती के समीपवर्ती भागों तक था।[1] भड़ोच एवं स्तम्भ तीर्थ, आधुनिक खंभात गुजरात के प्राचीन बन्दरगाह थे। आर्य भारत में या गुजरात में किस समय आये यह कहना दुष्कर है। प्रारम्भ में नाग जाति के लोग गुजरात में रहते थे।[2] अशोक के युग में रड्डीक जाति ने सौराष्ट्र में रहने का प्रारम्भ किया और उसके नाम पर से ही प्रदेश का नाम सु रठ (सौराष्ट्र) पड़ा होगा।[3]

ईसा मसीह के सातवीं शताब्दी पूर्व गुजरात में कई प्रमुख बन्दरगाह थे जिनमें भृगुकच्छ एवं सुपरिक बहुत ही प्रसिद्ध थे। गुजरात में सर्वप्रथम आनेवाली आर्य जाति शर्याति थी। तदनन्तर कई आर्य जातियों ने यहाँ पदार्पण किया।" हैय जाति के महान् विजेता सहस्रजुंन कार्तकार्य ने इस भूमि पर अपना ध्यान आकर्षित किया। कौरवों एवं पांडवों के महाभारत के युद्ध तक

---

1 Dikshit, *Prehistoric Civilization of the Indus Valley*, p. 12.

2 K. M. Munshi, *Gujarat and Its Literature*, p. 8.

3 *Ibid.*

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आनर्त या सौराष्ट्र में निश्चित सामग्री नहीं मिलती।[1] महाभारत के युद्ध से पूर्व शूरसेन की यादवप्रजा अपने राजा कंस के विरुद्ध हो गई और कृष्ण ने कंस की हत्या की। तदनन्तर मगध के राजा एवं कंस के साले जरासंध के भय से अभिभूत होकर कृष्ण एवं बलदेव के नेतृत्व में यादवगण गुजरात में आकर आनर्त एवं सौराष्ट्र में बस गये। कृष्ण की सहायता से उग्रसेन द्वारिका के सारे राज्य का संचालन करता था। कृष्ण आर्य संस्कृति एवं सभ्यता के सर्वोत्तम प्रतिनिधि माने जाते थे।[2]

महाभारत के वन पर्व में युधिष्ठिर की गुजरात यात्रा के विषय में उल्लेख मिलता है। यहाँ आकर इन्होंने देखा कि बम्बई से उत्तर के प्रदेश में—अपरान्त में कई आर्य जाति रहती थीं। मार्कंडेय ऋषि का आश्रम पयोष्णी (ताप्ती) नदी के किनारे पर था। नर्मदा नदी के तीर पर भृगुओं के आश्रम थे। महाभारत के युद्ध के समय कृष्ण ने पांडवों को विजेता बनाने में बहुत योग दिया। यादवों ने बहुत ही वीरता के साथ महाभारत के युद्ध में भाग लिया था पर अपने घर आकर इन्होंने अपने वैमनस्य एवं वैर में अपना ही सर्वनाश कर दिया। सौराष्ट्र में प्रभास से कई मील दूर श्रीकृष्ण ने देहोत्सर्ग किया था। इसके बाद मगध के मौर्य शासन तक कई शताब्दियों के बारे में हमें कुछ ज्ञान नहीं है। इस समय के दरम्यान अनार्य निषाद लोग गुजरात में रहने लगे।[3] गुजरात के भील जाति के लोग इनके ही वंशज हैं।[3] बुद्ध एवं जैन धर्म का भी प्रभुत्व बढ़ रहा था। ग्रीक गवर्नर यायान थेरा की सहायता से अशोक (२७२-२३२ ई० पू०) सौराष्ट्र पर शासन कर रहा था। गिरिनार पर्वत पर चढ़ते हुए इनके शिलालेखों को हम आज भी देख सकते हैं।

मौर्य शासन के अन्त के बाद (१८७ ई० पू०) एपोलोडोट्स एवं मिनान्दर ने इस प्रदेश का शासन किया। तदनन्तर ईसु की प्रथम शताब्दी में सौराष्ट्र में क्षत्रियों के शासन का प्रारम्भ हुआ। रुद्रदामन[3] (ई० स० १४३-१५८) आनर्त, अनूप, कच्छ, सौराष्ट्र, अवन्ती, गुजरात इत्यादि प्रदेशों पर शासन करता था। क्षत्रियों के बाद चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) का शासन गुजरात पर रहा।

---

1 K. M. Munshi, *Gujarat and Its Literature*, p. 5.
2 *Ibid.*, p. 6.
3 *Ibid*

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस समय के दरम्यान गुजरात एवं उत्तर भारत में आर्य संस्कृति का प्रचार एवं प्रसार हो रहा था। आश्रमों में ऋषि रहते थे एवं विद्यार्थियों को शिक्षा देते थे। आश्रम व्यवस्था आर्य संस्कृति का विशिष्ट प्रदान है और सभी आश्रम अन्योन्य से सम्बन्धित होने के साथ-साथ ब्रह्मावर्त एवं नैमिषारण्य के विविधाधामों से सम्बन्धित थे। वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में 'धर्म' ही सर्वेसर्वा माना जाता था। सारे भारतवर्ष से ब्राह्मण गिरिनार, आनर्तपुर, प्रभास एवं चन्द्रतीर्थ (चाणोद) की ओर आकर्षित हुए।[1] आबु के समीप वसिष्ठ के, सिद्धपुर के समीप कपिल के, नर्मदा के तीर पर भृगु के एवं पयोष्णी के तीर पर मार्कंडेय ऋषि के आश्रम थे।[2] गुजरात में आनेवाली जातियों में आभीर उल्लेखनीय है। आभीरों की उपभाषा पर ही अपभ्रंश की रचना हुई है। आभीर लोग म्लेछ ही माने जाते थे। इन्होंने महाभारत के युद्ध में भाग लिया था तथा श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् यादवों को सौराष्ट्र में से भगा दिया था। मनुस्मृति के आधार पर आभीर लोग ब्राह्मणों एवं पतित स्त्रियों के सयोग से पैदा हुए थे। कुछ भी हो, ई० स० १ के पहले सामाजिक लघुता का अनुभव किये बिना ही आभीर लोग रहते थे।

सौ वर्ष तक गुजरात गुप्त साम्राज्य का भाग रहा।[3] गुप्त वंश के दरम्यान ही महाभारत इसके आधुनिक रूप में दिखाई दिया। वायुपुराण, हरिवंश पुराण, मत्स्य पुराण, मार्कंडेय पुराण एवं अन्यान्य पुराणों की रचना भी इसी वंश में हुई। विधि, विज्ञान, तत्त्वज्ञान, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र इत्यादि का विधिवत् अध्ययन होता रहा। इस तरह ज्ञान विज्ञान की प्रत्येक शाखा का विकास होता रहा। संस्कृत सारे भारत में व्यवहार के लिए प्रयोग में लाई जाती थी।[4] इस समय गुजरात में भाषाओं का स्थान निम्न रूप से था :[5]

(क) ई० पू० द्वितीय शताब्दी एवं तदनन्तर कई शतियों तक मिडल इण्डो-आर्यन भाषाओं का अस्तित्व था।

(ख) तदनन्तर संस्कृत साहित्यिक एवं राजकीय भाषा बन गई। द० गुजरात के कई भागों में कन्नड़ भाषा का प्रयोग होता था।

(ग) ईसा की चतुर्थ एवं पंचम शताब्दियों में जैन साधुओं द्वारा जैन महाराष्ट्री प्राकृत का प्रयोग होता था।

---

1 K. M. Munshi, *Gujarta and Its Literature*, p 10.
2 *Ibid*, p. 13.
3 *Ibid*. p. 13.
4 *Ibid*.
5 *Ibid*., pp. 18-19.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(घ) उसी समय सौराष्ट्र में शौरसेनी प्राकृत से निष्पन्न गुर्जर अपभ्रंश का प्रयोग होता था।

(ङ) उत्तर गुजरात या आनर्त की भाषा में भी संभवतः विशिष्ट प्रकार का साहित्य विद्यमान था।

पुराने समय से ही गुजरात में जैन साधुओं का सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व रहा है। गुप्तवंश की अवनति के समय उसी साम्राज्य के विद्रोही सेनापति भट्टारक ने स्वतन्त्रता की घोषणा की तथा सौराष्ट्र और आनर्त के कई प्रदेश का राजा बन बैठा। ईसा की ५५० शताब्दी के लगभग हरिचन्द्र नामक ब्राह्मण ने भिल्लमाल में (आबु के समीप आज के श्रीमाल में) छोटे से राज्य की स्थापना की और वह आसपास के प्रदेशों पर राज्य करने लगा। उसके राज्य में मारवाड़ का भी थोड़ा भाग था जिसे उस समय 'गुर्जर' या 'गुर्जरदेश' कहते थे।[1] हरिचन्द्र एवं उनके उत्तराधिकारी शीघ्र ही बहुत बलवान हुए और सम्भवतः उनके चतुर्थ पुत्र ने लाट पर चढ़ाई की तथा भील ठाकोर को पराजित करके अपना राज्य नर्मदा की घाटी तक बढ़ाया। इस तरह श्रीमाल के गुर्जर राजाओं ने दक्षिण गुजरात को जीत लिया।

प्रसिद्ध चीनी यात्री हु-एन-चांग ने ६४१ ई० में गुजरात की यात्रा की थी। ये नासिक से भ्रगुकच्छ (दक्षिणी गुजरात) तक गये थे।[2] यहाँ ये गुजरात के अन्य भागों में भी गये थे। इनके अनुसार उस समय वल्लभीपुर सत्ता, धन एवं संस्कृति का केन्द्र था।[3] पवित्र एवं धार्मिक ग्रन्थों का विशाल पुस्तकालय यहाँ था। स्थिरमति एवं गुणमति यहाँ के प्रसिद्ध एवं ज्ञानी भिक्षु आचार्य थे जिनका यश भारतवर्ष के बाहर भी था। लोग सुखी एवं सम्पन्न थे और व्यापार में बहुत ही निपुण थे। आनन्दपुर आनर्त की राजधानी थी।[4] यहाँ से चीनी यात्री गुजरात की राजधानी भिल्लमाल (या श्रीमाल) की ओर बढ़ा। भिल्लमाल विद्या एवं संस्कृति का केन्द्र था। पौराणिक आधार पर कहा जा सकता है कि २० से २० मील तक इस नगर का विस्तार था। ११ हजार शिवलिंग एवं ४००० मठ थे जहाँ ज्ञान की सभी शाखाओं का अध्ययन-अध्यापन होता रहता था। स्वाभाविक रूप से ही ७वीं शताब्दी में भिल्लमाल आर्य संस्कृति एवं विद्या का महान् केन्द्र था।

---

1 K. M. Munshi, *Gujarat and Its Literature*, p. 25.
2 *Ibid.*, p. 26.
3 *Ibid.*
4 *Ibid.* p. 17.

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सारे गुजरात में पर्याप्त जनसंख्या थी। भिल्लमाल, वेरावल, वलभी इत्यादि बड़े-बड़े नगर थे तो उज्जयिनी, भ्रगुकच्छ, आशापल्ली, खेटक; आनन्दपुर मालवा इत्यादि बड़े नगरों की तुलना में छोटे थे। ये सभी विद्या के केन्द्र थे। साबरमती की घाटी में भी पर्याप्त जनसंख्या थी। जम्बूसर, अक्रूरेश्वर (अंकलेश्वर) श्रीभावन (सरभोण) एवं नवसारिका (नवसारी) प्रमुख शहर थे।

जब गुर्जर राजाओं ने कान्यकुब्ज को जीत लिया तथा साम्राज्य की स्थापना की तब अरब यात्री इन्हें जुभ्र या गुज्जर नाम से जानते थे।[1] इस साम्राज्य के विस्तार में पंजाब, राजस्थान एवं मध्य प्रदेश तथा गुजरात के प्रदेश थे। आज के जोधपुर, जयपुर तथा आबु का कई भाग दशवीं शताब्दी तक गुर्जरत्रा या गुजरात नाम से सुशोभित था। इस प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाने वाले लोग भी गुर्जर कहलाते थे। ई० स० ९६० में इन गुर्जरों ने अलवर के थोड़े से प्रदेश पर प्रभुत्व प्राप्त किया। काश्मीर एवं हिन्दुकुश के 'गुर्जर' जाति के लोग मेवाती तथा मारवाड़ी के समान भाषा बोलते हैं।

कई विद्वानों के आधार पर गुर्जर विदेश से भारत में चौथी तथा पाँचवीं शती के दरम्यान आने वाली विदेशी जाति थी। बहुत ही प्रसन्नता-पूर्वक इन्होंने भारतीय संस्कृति को अपनाया, गुर्जरराज के राज्य की स्थापना की, हिन्दू वर्ण व्यवस्था को स्वीकार किया, सातवीं सदी में आनर्त एवं लाट को जीत लिया। ई० स० ७५० में वलभी राजाओं को पराजित किया और ई० स० ९५३ में भिल्लमाल को छोड़कर आनर्त में बस गये तथा अपने सरदार मूलराज को अणहिलवाड़ पाट्टण का राजा बनाया।[2]

पाँचवी शती से पूर्व गुर्जर शब्द नहीं पाया जाता है। भाषा विषयक एवं साहित्यिक मान्यताओं में ई० स० ५५० से ई० स० ११९९ तक क्रमशः विकास होता गया। अलाउद्दीन खिलजी ने जब गुर्जरदेश के तृतीय साम्राज्य—चालुक्य राज्य—को पराजित किया तभी यह विकास रुका।[3]

कनौज की प्रेरणा से गुजरात में गुर्जरों ने कला एवं ज्ञान के उच्च सोपान सिद्ध किये। मोढेरा का सूर्य मन्दिर इसका दृष्टान्त है।

मालवा के राजा भोज के ई० स० १०५४ में मृत्यु के पश्चात् इसके साम्राज्य के टुकड़े हो गये। अणहिलवाड़ का राजा भीम चालुक्य स्वतन्त्र हो

---

1 Elliot and Daroso, *History of India as told by Its own Historians*, p. 413.

2 K. M. Munshi. *Gujarat and Its Literature*, p. 28.

3 *Ibid*, p. 29.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गया और शीघ्र ही सौराष्ट्र, सारस्वत मण्डल, सत्यपुर मंडल, कच्छ, आनर्त, खेटक मंडल तथा मही घाटी का मालिक बन बैठा। इस तरह अणहिलवाड़ के काल में गुजरात के अलग राज्य की नींव डाली गई।[1]

भीम के पुत्र कर्ण (ई० स० १०६४–१०९४) ने कर्णवती (आज के अहमदाबाद) की स्थापना की। इस विषय में 'प्रबन्ध चिन्तामणि' के लेखक मेरुतुङ्ग ने लिखा है—

"कर्ण सागरतडागांलंकृतां कर्णावतीपुरं निवेश्य स्वयं तत्र राज्यं चकार।"

—प्र० भू० ५५, प्रबन्ध चिन्तामणि

कर्ण के राज्यकाल में काश्मीरी पं० बिल्हण ने 'कर्णसुन्दरी' नामक संस्कृत भाषा में नाटक लिखा था। गुजरात में लिखा हुआ यह सर्वप्रथम नाटक है ऐसा प्रतीत होता है। कर्ण के पश्चात् उनका पुत्र जयसिंह सिद्धराज (ई० स० १०७४ ११४३) राज्य सिंहासन पर आसीन हुआ। जीवन में प्रारम्भ में कई विपत्तियों का सामना करने के बाद ई० स० १११४ में इन्होंने सौराष्ट्र को जीत लिया था। ई० स० ११२७ तक इन्होंने राजस्थान एवं मालवा के कई प्रदेशों को जीत लिया था।

जयसिंह सिद्धराज ने अणहिलवाड़ पाटण को अपने राज्य का केन्द्र बनाया। सिद्धराज ज्ञान एवं कला का भी महान् आश्रयदाता था। इन्होंने सिद्धपुर के रुद्रमहात्मय का पुनरुद्धार कराया तथा पाटन में सहसलिंग सरोवर बनवाया। सारे राज्य में इन्होंने मन्दिर बनवाये, तालाब खुदवाये और उज्जयिनी एवं धारानगरी के धन, कला, एवं साहित्य को पाटन में लाने की भरसक कोशिश की।

पाटन एक महान् विश्वविद्यालय तथा सभी विद्या एवं कला के ग्रह के रूप में परिणत हो गया। सिद्धराज ने मालवा के परमार राजाओं के गुरु भाव वृहस्पति को गुजरात में आकर रहने का निमन्त्रण दिया। ये भोज के पुस्तकालय को पाटण में लाये एवं हेमचन्द्राचार्य को व्याकरण लिखने की प्रेरणा दी। हेमचन्द्र ने अपने प्रसिद्ध व्याकरण का प्रणयन किया तथा सिद्धराज और अपना नाम इस ग्रन्थ के साथ जोड़कर इसका 'सिद्ध हेमचन्द्र' नाम रखा। सिद्धराज ने इसकी कई प्रतियाँ बनवाकर सारे भारतवर्ष में भेजीं। इसकी २० प्रतियाँ काश्मीर भेजी गई थीं जो उस समय विद्या देवी सरस्वती का गृह माना जाता

---

1 K. M. Munshi, *Gujarat and Its Literature*, p. 69.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था। इससे सारे भारतवर्ष में इनकी कीर्त्ति फैली। सिद्धराज ने हेमचन्द्राचार्य को राजकवि बनाया। हेमचन्द्र ने 'द्रवाश्रय' नामक महाकाव्य लिखा जिसके प्रत्येक श्लोक में संस्कृत व्याकरण के नियमों को समझाने के साथ-साथ ही सिद्धराज की यशोगाथा के गुणगानों का भी वर्णन है। इन दो ग्रन्थों के अतिरिक्त भी हेमचन्द्र ने विद्या के कई क्षेत्रों में सुन्दर ग्रन्थों का प्रणयन किया है जिसके फलस्वरूप वे 'कलिकाल सर्वज्ञ' के अभिधान से सुप्रसिद्ध हैं। इनके कई शिष्यों ने भी साहित्य एवं संस्कृति को महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रदान किये हैं। सिद्धराज, वीरधवल जैसे राजा तथा विमल, वस्तुपाल एव तेजपाल जैसे मंत्रियों के हाथों गुजरात के स्थापत्य और साहित्य को विकसित होने का पर्याप्त अवसर मिला था। देलवाड़ा, शत्रुंजय और गिरनार के सुशोभनीय मन्दिर और हेमचन्द्राचार्य के दोहे इस युग के ऐश्वर्य, गौरव और स्वदेशाभिमान के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

गुजरात का यह गौरव अधिक समय तक न रह सका। ई० सन् १२९७ में अलाउद्दीन खिलजी ने गुजरात के राजा करण वाघेला को हराकर पाटण हस्तगत कर लिया। लगभग सत्तर वर्ष तक गुजरात दिल्ली के खिलजी और तुगलक शासकों के अधीन रहा। ईसा की १५ वीं और १६ वीं शताब्दी में गुजरातियों को स्वधर्म की रक्षा के लिए अनेक कठिनाइयों एवं अत्याचारों का सामना करना पड़ा। ई० स० १५७२ में मुगल सम्राट् अकबर ने पुनः गुजरात में शान्ति स्थापित कर दी। औरंगजेब के राज्य काल तक गुजरात का यह शान्त वातावरण थोड़ा बहुत बना रहा। पूर्णतः सानुकूल न होते हुए भी गुजराती भाषा और साहित्य को इन परिस्थितियों में विकसित होने का अवसर मिला।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद सरदारों, सूबेदारों और मराठों की स्वेच्छाचारिता के कारण गुजरात का शान्त वातावरण फिर क्षुब्ध हो उठा। ई० सन् १७३२ में बड़ौदा में गायकवाड़ का राज्य स्थापित हुआ। पर औरंगजेब से लेकर १९ वीं शताब्दी के प्रथम चरण—अंग्रेजों के शासनारूढ़ होने तक गुजरात में अशान्ति का वातावरण बना रहा। अतः इस काल का लोक जीवन और साहित्य कुंठित सा प्रतीत होता है। अंग्रेजों के आगमन के बाद गुजरात में पूर्णतया सुख-शान्ति स्थापित हुई। आज गुजराती भाषा बोलने वाले गुजरातियों का भारतवर्ष के अन्तर्गत अलग राज्य है और उसका सर्वाङ्गीण विकास तीव्रगति से हो रहा है।

गुजराती भाषा : उत्पत्ति एवं विकास

गुजराती भाषा का मूल संस्कृत भाषा है। मराठी, बंगाली, हिन्दी एवं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अन्य कई भारतीय भाषाओं की तरह गुजराती भी इण्डो-आर्यन भाषा है। संस्कृत से प्राकृत की उत्पत्ति हुई और प्राकृत से गुर्जर अपभ्रंश की उत्पत्ति हुई[1]।

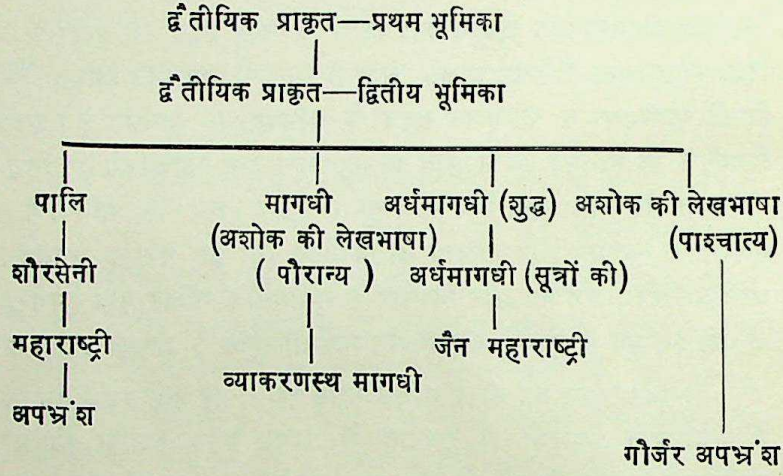

साहित्यिक महाराष्ट्री में से अपभ्रंश द्वारा गुजराती पैदा हुई है। इसका सीधा सम्बंन्ध जैन महाराष्ट्री से है। भाषा के जिस स्वरूप को हम आज गुजराती कहते हैं, वह वास्तव में ५०० वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। इसीलिए सामान्यतः नरसिंह मेहता (जन्म १५०० ई०) गुजराती के आदि कवि माने जाते हैं। किन्तु जूनी गुजराती (प्राचीन गुजराती) और गुर्जर अपभ्रंश का समावेश गुजराती के अंतर्गत करने पर गुजराती के विकास का इतिहास पिछले ८०० वर्षों का इतिहास हो जाता है।

गुजराती भाषा की उत्पत्ति १२ वीं शती में हेमचन्द्र के समय से निर्विवाद मानी जा सकती है। हेमचन्द्र गुजराती भाषा के जन्मदाता हैं। व्याकरण की दृष्टि से वे गुजराती के पाणिनि और साहित्य की दृष्टि से वे गुजराती के वाल्मीकि हैं।[2]

हेमचन्द्र से नरसिंह मेहता (ई० १६ वीं शती) तक की भाषा को साधारणतया गुजराती कहा जा सकता है।

नरसिंह मेहता के समय तक गुजरात और राजस्थान के बहुत से भागों में एक सामान्य भाषा प्रचलित थी जिसे डॉ० टेसीटरी ने प्राचीन मारवाड़ी या

---

[1] आपणा कविणो, खंड १, (प्रथम आवृत्ति)—के० का० शास्त्री, पृ० २८।
[2] गुजराती भाषानी उत्क्रांति—पं० बेचरदास दोशी, पृ० २।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राचीन गुजराती नाम न देकर प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी नाम दिया है। डॉ० टेसीटरी ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि शौरसेनी अपभ्रंश से ई० १० वीं से १२ वीं शताब्दी में उत्पन्न इस सामान्य भाषा से ही आगे चलकर १६ वीं शती के बाद आधुनिक मारवाड़ी और गुजराती भाषाओं का विकास हुआ है।[1]

१६ वीं शती से पूर्व की गुजराती भाषा राजस्थानी और प्राचीन हिन्दी के कितनी निकट है और धीरे-धीरे इन भाषाओं से दूर हटती गई है यह बताने के लिए १२ वीं से १८ वीं शती तक की गुजराती भाषा के कुछ उदाहरण दिए जाते हैं :

ई० १२ वीं शती की गुजराती

जइ हिमगिरिहि चडेविणु निवडइ
अह पयाय - तरुहि वि इक्कमणु।
निक्कइअवें विणु समयाचारेण
विणु मण-सुद्धिए लहइ न सिवु जणु॥

—हेम चन्द्राचार्य

ई० १३ वीं शती की गुजराती[2]

परमेसर तित्थेसरह पचपंकय पणमेवि।
भणिसु रासु रेवंतगिरे अंबिकदेवि सुमरेवि॥१॥
गामा - गर-पुर वण-गहण-सारि-सरवरि सुपएसु।
देवभूमि दिसि पच्छिमह मणहरु सोरठ देसु॥२॥

—रेवंतगिरिरासु में विजयसेनसूरि

---

1 "In western India like Saurasena Apabhransha was succedeed by that form of language which I have chosen to call old Western Rajasthani and other old Gujarati. This was in use over like whole of Gujarat and Western Rajputana and flourished till about like end of 16th century A. D. when it finally developed into two distinct vernaculars, modern Gujarati and modern Marwari."—Dr. L. P. Tessitori's article on 'Old Gujarati and Old Western Rajasthani', *Report of the V Gujarati Sahitya Parishad.*

2 **गुजराती भाषानी उत्क्रान्ति, बेचरदास—पृ० ४९९।**

 CC-0. Agamnigam Foundation. Digitized by eGangotri

ई० १४ वीं शती की गुजराती[1]

अहे सोहग सुन्दुर रूपवंतु गुणमणि भंडारो ।
कंचण जिस झलकंतकंति संजम सिरिहारो ।
थूलिभद्दमुणिराउ जाम महिचलि बोहंतउ ।
नयरराय पाडलियमाहि पहुतउ विहरंतउ ॥२॥

ई० १५ वीं शती की गुजराती

भणता दोष दरिद्र तनि टलि भणि असाईत अफला फलि ।
भणि भणावि नित गुणि नवनधि आवि अंगणि ॥१०॥
संवत १४ चऊ चंद्रमुनि शंष वछहंसवर चरित असंष ।
बावन वीरकथा रस लीउ एह पवाडु ससाईत कहिउ ॥१८॥

—असाईत कृत हंसाउली

ई० १६ वीं शती की गुजराती[2]

भारति भगवति मनि धरी गुरुपय नमीय पवित्र ।
बोलिसु बुद्धइ आगलउं बोहातणउं चरित्र ॥१॥
जस जसवाय अछइ घणउ जयु ति जसभद्र सूरि ।
त्रीजउं कहीइ किन्ह रसि नांभइं दुरिया दूरि ॥

—लावण्यसमय कृत खिमऋषिरास

१७ वीं शती की गुजराती[3]

प्रभात काल हवो सहु चाल्या करवा माहा संग्राम ।
दुर्योधन पांडव जीत्यानी करी हृदि शूं राम ॥७॥
त्यारि कर्ण किहि माहारी वीधानुं सकल कार्ण देषाडुं ।
कि पांडव मुझनि मारि कि हु तेहनि नाश पमा डुं ॥८॥

—विष्णुदास कृत महाभारत

१८ वीं शती की गुजराती[4]

पास घणा वही चाल्या तोहे अर्जुन नाव्या गाम्य ।
घोर रूप अपशुकन देखता घमारोय ते ठाम्य ॥५॥
कालतणी गति घोर निहाली अवला ऋतुना धर्म ।
क्रोध लोभ अनृत आकुल नर करता पातक कर्म ॥

---

१ गुजराती भाषानी उत्क्रान्ति—वेचरदास दोशी, पृ० ५१८ ।
२ वही, ५६३ ।
३ वही, पृ० ५९२ ।
४ वही, पृ० ६१९ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इन उदाहरणों से हम जान सकते हैं कि हिन्दी एवं गुजराती के विकास और स्वरूप में कितना साम्य है।

हिन्दी, गुजराती और राजस्थानी का विकास शौरसेनी के नागर अपभ्रंश से हुआ है।[1] १६वीं शती तक इन तीनों भाषाओं में साधारण से प्रादेशिक भेद को छोड़कर अधिक भेद दृष्टिगोचर नहीं होता। बाद में राजनीतिक कारणों से गुजराती का हिन्दी तथा राजस्थानी से सम्बन्ध विच्छेद हो गया और स्वतन्त्र रूप से उसका विकास होता गया। गुजराती भाषा के विकास हो जाने पर भी गुजरात के कवि अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त हिन्दी (अपभ्रंश, डिंगल, ब्रज और खड़ीबोली) में लिखते रहे।

गुजरात में हिन्दी की लोकप्रियता

अन्य प्रदेशों की अपेक्षा गुजरात में हिन्दी बहुत ही लोकप्रिय रही है क्योंकि गुजरात हिन्दी भाषी प्रदेशों से बहुत ही निकट है। सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारतवर्ष एक है। भारतवर्ष के तीर्थों ने जाति, धर्म और प्रदेशों के लोगों को अन्योन्य के निकट लाने में सबसे अधिक सहायता दी है। भारत के निवासी तीर्थयात्रा को अपने जीवन का आवश्यक दायित्व समझते हैं। इस तरह की तीर्थयात्राओं से भी हिन्दी सभी प्रदेशों में और विशेषरूप से गुजरात में अधिक लोकप्रिय रही।

धार्मिक कारणों से भी हिन्दी गुजरात में अधिक लोकप्रिय रही। हिन्दी को निर्गुण संतमत और वैष्णव धर्म के आन्दोलन से अधिक बल मिला है। निर्गुण सन्तों ने जानबूझकर संस्कृत इत्यादि भाषाओं का त्याग किया था। इन सन्तों ने खड़ीबोली को अपना लिया और ये अपना उपदेश इसी भाषा में देते थे। प्रारम्भ में ही खड़ी बोली बहुत ही व्यापक थी। इसीलिए अहिन्दी प्रदेशों में घूमने वाले साधु भी इसी भाषा का प्रयोग करते थे और उनके सम्पर्क से अहिन्दी प्रदेशों में भी हिन्दी बोली व समझी जाती थी। गुजरात, महाराष्ट्र एवं अन्यान्य अहिन्दी प्रदेशों में फकीरों तथा संतों के घूमने-फिरने

---

[1] इन (अपभ्रंशों) के नाम नागर, उपनागर और व्राचड़ थे। इनमें नागर अपभ्रंश मुख्य थी और यह उस भाग में बोली जाती थी जहाँ आजकल नागर बसते हैं। नागर विद्यानुराग के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। इन्हीं के नाम से कदाचित नागरी अक्षरों का नाम पड़ा। नागर अपभ्रंश के व्याकरण के लेखक हेमचन्द्र (१२ वीं शताब्दी) गुजराती ही थे।

—हिन्दी भाषा का इतिहास।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से और उपदेश देने से हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ती गई। निर्गुण सन्तों के अतिरिक्त वैष्णव धर्म के प्रचारकों की वजह से हिन्दी अहिन्दी प्रदेशों में लोकप्रिय रही। हिन्दी को व्यापक बनाने में वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायियों का प्रमुख हाथ रहा है। वल्लभाचार्य जी और उनके अनुयायियों ने कृष्ण भक्ति और ब्रजभाषा के प्रचार में अभूतपूर्व योग दिया है। 'रामचरितमानस' जैसे तुलसीदास भक्ति के उत्कृष्ट ग्रन्थों ने भी हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में अपना योगदान दिया है।

ई० सन् ११९१ में मुहम्मद गोरी ने पानीपत में पृथ्वीराज को पराजित किया और दिल्ली पर अधिकार कर लिया। इसके एक साल बाद जयचंद राठौर भी पराजित हुआ और इस तरह दूसरा हिन्दू राज्य कन्नौज भी तुर्कों के अधीन हो गया। जयचन्द की हार के पाँच-सात साल बाद अन्तिम हिन्दू-राज्य महोबा भी हिन्दुओं के हाथ से जाता रहा। इन तीनों राज्यों ने हिन्दी को जन्म दिया था। पर विजेताओं की मातृभाषा तुर्की थी तथा दरबारों में फारसी का प्रभुत्व था। इस तरह हिन्दी को अपनी शैशवावस्था में बहुत ही कष्ट झेलने पड़े। तुर्कों के बाद आये हुए मुगल बादशाह तुर्कों की तुलना में अधिक उदार थे। मुगल बादशाह भारतवर्ष की संस्कृति, धर्म एवं भाषा का आदर करते थे। कई मुगल बादशाहों ने भी स्वयं हिन्दी में रचनाएँ की हैं। बादशाहों के हिन्दी प्रेम को देखकर प्रजा ने भी हिन्दी भाषा को स्नेह से अपनाया। मुस्लिम बादशाहों को हिन्दी को अपनाते देखकर हिन्दू राजा भी अपने दरबारों में हिन्दी के कवियों को अपनाने लगे। गुजरात, महाराष्ट्र एवं अन्यान्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों के राजाओं ने भी हिन्दी को आश्रय दिया था। कच्छ (गुजरात) में ब्रजभाषा की सुप्रसिद्ध पाठशाला थी और इसमें राजस्थान तथा अन्य हिन्दी बोलने वाले प्रदेशों से भी कवि यशःप्रार्थी ब्रजभाषा और पिंगल का अध्ययन करने के लिए आते थे। इस तरह हिन्दी काव्य साहित्य को गुजरात का अपूर्व योगदान प्राप्त हुआ है।

हिन्दी भी गुजराती, मराठी एवं भारत की अन्य भाषाओं की तरह संस्कृत से पुष्ट हुई है। अतः इन सभी भाषाओं में लिपि एवं शब्दकोष की दृष्टि से बहुत साम्य है। भारत की प्रायः सभी भाषाओं में ७० प्रतिशत से भी अधिक शब्द संस्कृत भाषा के ही या संस्कृत से बने हुए तद्भव हैं। गुजराती एवं हिन्दी में तो बहुत ही साम्य है। इस साम्य से प्रारम्भ से लेकर आज तक बहुत से कवि हिन्दी भाषा की ओर आकर्षित हुए तथा अपनी मातृभाषा गुजराती के अतिरिक्त खड़ीबोली, ब्रजभाषा या अवधी में काव्य रचना करने लगे।

महाराजा सयाजी राव गायकवाड़, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, काका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालेलकर एवं अन्यान्य महापुरुषों के प्रयास से गुजरात में ही नहीं, अपितु सारे भारतवर्ष में हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार बढ़ा। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन एवं अन्यान्य हिन्दी प्रेमी राष्ट्र के उन्नायकों के प्रयास से हिन्दी राष्ट्रभाषा के साथ-साथ राजभाषा भी हो गई है। अतः अन्तर्प्रान्तीय विनिमय के लिए भी इसी का प्रयोग होता है या होना चाहिए। इस तरह सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, साहित्यिक, राष्ट्रीय एवं अन्यान्य कारणों से हिन्दी गुजरात में लोकप्रिय रही है और अब भी है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण २

गुजरात के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदाय और इनका साहित्य पर प्रभाव

गुजरात में हिन्दू, मुस्लिम, सिख, पारसी, जैन इत्यादि सभी धर्म के लोग रहते हैं। मध्यकाल तक गुजरात में मुख्यतः हिन्दू, मुस्लिम एवं जैन धर्म का पालन करने वाले ही रहते थे। इन धर्मों एवं इनके सम्प्रदायों का भी गुजरात के साहित्य पर बहुत प्रभाव रहा। गुजरात में रहकर गुजराती के अतिरिक्त हिन्दी भाषा में भी साहित्य सर्जन करने वाले महानुभाव भी इनसे अछूते नहीं रह सके।

गुजरात में वैष्णव सम्प्रदाय का प्रभाव बहुत ही है। प्राचीनकाल से ही भागवत गुजरात में बहुत लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध था। १४ वीं शती तक प्रसिद्ध कवि जयदेव का गीत-गोविन्द भी गुजरात में प्रचलित हो गया था।

गुजरात के कवियों ने भागवत, रामायण और महाभारत से प्रेरित होकर ग्रंथों का प्रणयन आध्यात्मिक दृष्टि से ही किया है। वैष्णव-सम्प्रदाय पर बहुत ही प्रकाशित सामग्री मिलती है और सारे भारतवर्ष में सामान्य लोग भी इससे परिचित हैं। अतः इस सम्प्रदाय पर अधिक पिष्टपेषण अनावश्यक है। उसी तरह निर्गुण भक्ति को लेकर भी कई कवियों ने उत्तम कविताओं का सर्जन किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वामीनारायण सम्प्रदाय

स्वामी नारायण सम्प्रदाय वैष्णव भक्ति सम्प्रदाय है और इसके संस्थापक श्री स्वामी नारायण के नाम से अभिहित किये जाते हैं। श्री स्वामी नारायण—श्री सहजानन्द स्वामी (ई० स० १७८१-१८३०) उत्तर-प्रदेश के अयोध्या समीप छपैया गाँव में ब्राह्मण के घर पैदा हुए थे। बाल्यावस्था में इनका नाम घनश्याम था। बारह वर्ष की अवस्था में घर छोड़कर तपश्चर्या एवं योग साधना करते-करते देश में नीलकंठ ब्रह्मचारी के नाम से सात वर्ष तक परिभ्रमण करते हुए ई० स० १८०० में सौराष्ट्र में आकर मांगरोल के समीप भोज में उद्धव का अवतार माने जाने वाले स्वामी रामानन्द से उद्धव सम्प्रदाय की दीक्षा लेकर स्वामी सहजानन्द बने। स्वामी रामानन्द ने उनकी योग्यता को देखते हुए अपनी मृत्यु से पहले ही उनको युवावस्था में ही आचार्यत्व प्रदान किया।[1]

श्री सहजानन्द स्वामी ने गुजरात एवं सौराष्ट्र में कई जगह मन्दिर बनवाये एवं जगह-जगह पर घूमकर लोगों ज्ञान एवं वैराग्य का उपदेश दिया। गुजरात में बड़ताल, अहमदाबाद, गढ़डा एवं मूली में इनके प्रसिद्ध मन्दिर हैं। उन्होंने यज्ञ में से हिंसा दूर की। चोरी एवं डकैती करने वाली काठी एवं कोली जाति को शांत, प्रामाणिक एवं धर्मनिष्ठ बनाया। उन्होंने सामाजिक क्षेत्र में कई सुधार किये।

देहातों में एवं निम्न वर्ण की श्रमजीवी जातियों में फैलकर गुजरात की संस्कार सेवा करने वाले इस स्वामी नारायण सम्प्रदाय ने गुजराती साहित्य के साथ-साथ ही हिन्दी साहित्य की भी अमर एवं चिरंजीवी सेवा की है। गोपालानन्द, नित्यानन्द, शुकानन्द, वासुदेवानन्द जैसे साधुओं ने एवं दीनानाथ शास्त्री ने कई संस्कृत ग्रन्थ लिखकर इस सम्प्रदाय की सेवा की है। मुक्तानन्द, ब्रह्मानन्द, निष्कुलानन्द, प्रेमानन्द और देवानन्द ने गुजराती में सहस्रों पद लिखे हैं। गुजराती के अतिरिक्त इस सम्प्रदाय के बहुत से साधुओं ने हिन्दी में भी काव्य सर्जन किया है। संयम एवं वैराग्य पर जोर देने वाली इस वैष्णव भक्ति मार्गी सम्प्रदाय के स्तम्भों की कविता वैराग्य और भक्ति की ही कविता बने यह स्वाभाविक ही था। गुरु एवं ईश्वर के अवतार माने जाने वाले सहजानन्द स्वामी पर भी सम्प्रदाय के साधु-कविओं ने कविता लिखी हैं।

स्वामी नारायण सम्प्रदाय का उल्लेखनीय ग्रन्थ 'वचनामृत' है। इसमें श्री सहजानन्द स्वामी के उपदेशों का संग्रह है।

---

1 **गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)**—अनन्तराव रावल, पृ० २०४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वामीनारायण सम्प्रदाय के कवियों में से मुक्तानन्द, ब्रह्मानन्द, प्रेमानन्द, निष्कुलानन्द, मूलानन्द, देवानन्द, मंजुकेशानन्द एवं दयानन्द की हिन्दी रचनाएँ भी मिलती हैं।

प्रणामी पन्थ

इस पन्थ के अन्य नाम खीजड़ा या धामी पन्थ भी हैं। सौराष्ट्र एवं पन्ना में इसका बहुत ही प्रचार है। बहुत से विद्वान् ऐसे सगुण भक्ति की एक शाखा मानते हैं। पर ऐसा लगता है कि प्राणनाथ के गुरु स्वामी निजानन्द या देवचन्द प्रारम्भ में पुष्टिमार्गी थे पर आगे चलकर उनका झुकाव भी निर्गुण सन्तमत की ओर हो गया था।[1] निजानन्द स्वामी की मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्य प्राणनाथ (ई० स० १६१८-१६७५) ने इस सम्प्रदाय को व्यवस्थित करके इसे प्रणामी पन्थ नाम दिया।

इस पन्थ की विशेषता यह है कि वह सर्व-धर्म में समन्वय मानता है। हिन्दू और मुस्लिम दोनों इस सम्प्रदाय के शिष्य हो सकते हैं। इस सम्प्रदाय के अनुयायी प्राणनाथ द्वारा रचित काज में शरीफ की भक्ति भाव से पूजा करते हैं। इस ग्रन्थ के कुल १४ भाग हैं जिनमें ४ गुजराती में, १ सिंधी में और ९ हिन्दी में हैं। प्राणनाथ का जन्मस्थान जामनगर इस सम्प्रदाय का मुख्य केन्द्र है जहाँ इस पन्थ का एक मन्दिर भी है। गुजरात में सामान्यतः पाटीदार, कायस्थ, बनिया, राजपूत, बढ़ई, दरजी, कोली इत्यादि जातियों में इस सम्प्रदाय का अधिक प्रचार है।

रवि पन्थ

'रविराम' और रविदास शब्द से पदों में अपना नामोल्लेख करने वाले रवि साहब (जन्म ई० १७५०) ने बड़ौदा में इस पन्थ की स्थापना की थी। ये कबीरपन्थी सन्त थे। लोहाणा, बढ़ई, चारण इत्यादि जातियों में इस सम्प्रदाय का अधिक प्रचार है।

रामानन्दी पन्थ

सौराष्ट्र में इस पन्थ का अधिक प्रचार है। सौराष्ट्र के प्रत्येक देहात में रामानन्दी मन्दिर सामान्यतः होता है। पाटीदार, लुहार, बढ़ई जैसी जातियों में इस सम्प्रदाय का अधिक प्रचार है। इन पन्थों के अलावा दादू, निरांत, राधास्वामी, रामसनेही और उदासी पन्थों का भी गुजरात में थोड़ा बहुत प्रचलन है।

---

[1] **उत्तर भारत की सन्त परम्परा**—परशुराम चतुर्वेदी, पृ० ५३१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निर्गुण सम्प्रदाय पर हिन्दी में बहुत लिखा गया है। विशेषतः डॉ० पीताम्बरदास बड़थ्वाल एवं श्री परशुराम चतुर्वेदी के ग्रन्थ बहुत ही माननीय हैं। कबीरदास गुजरात में भी आये थे और भृगुकच्छ के तट पर ठहरे थे।[1] ये गुजरात में सम्वत् १५६४ (ई० स० १५०८) में आये थे। इनका भी गुजरात के नरसिंह मेहता, अखो एवं अन्याय कवियों पर बहुत ही प्रभाव पड़ा है। गुजरात में निर्गुण भक्ति के प्रचार में कबीर का प्रमुख हाथ रहा। नरसिंह मेहता से लेकर रंग अवधूत महाराज तक की यह निर्गुण भक्ति की पुनीत जाहावी हमेशा के लिए वृद्धिगत होती आ रही है। गुजरात में विशेष रूप से सगुण भक्ति पर कविता लिखने वालों का अधिक महत्त्व रहा। फिर भी निर्गुण भक्ति एवं निर्गुण भक्ति की कविता लिखने वालों का काम भी अवश्य उल्लेखनीय एवं उच्च कोटि का है। इन सब सम्प्रदायों के अतिरिक्त जैन साधुओं एवं सूफी मत के फकीरों तथा कवियों ने उत्तम प्रकार के साहित्य की रचना की है।

जैन धर्म

जैन धर्म हिन्दू एवं बुद्ध धर्म की तरह भारतवर्ष का प्राचीन धर्म है। इस धर्म के २४ वें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी ईसा मसीह से पाँच शताब्दी पहले हुए थे। भगवान बुद्ध के समकालीन महावीर के समय में समाज की स्थिति बहुत दयनीय थी। यज्ञयोगादि में हिंसा बहुत ही प्रचलित थी। कर्मकांडों में ब्राह्मणों का बहुत ही जोर था। इन सब को देखकर महावीर ने अहिंसा को मुख्य स्थान देकर सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य पर जोर दिया और जाति-पाँति, यज्ञलोकाचार आदि की व्यर्थता सिद्ध की। जैन धर्म के मूल सिद्धान्त यही हैं।

प्राचीन काल से ही गुजरात में जैन धर्म का प्रचार एवं प्रसार रहा है। जैनों के २१ वें तीर्थंकर नेमिनाथ ने (कृष्ण के पैतृक भाई ने) गिरिनार पर समाधि लेने, ई० स० ५ वीं शती में मुनि सुव्रत तीर्थंकर के शकुनि का विहार नामक आश्रम के भृगुकच्छ में होने और ई० सन् ५ वीं शताब्दी में वल्लभी के राजा शिलादित्य और वृद्धपुर (वड़नगर) के राजा ध्रुवसेन के जैन धर्मावलंबी होने का उल्लेख मिलता है।[2] तदनंतर १३ वीं शती में वनराज चावड़ा और शिलादित्य जैसे सोलंकी वंश के राजाओं तथा वस्तुपाल और तेजपाल जैसे महामंत्रियों के हाथों गुजरात में जैन धर्म को बहुत ही प्रोत्साहन मिला।

---

१ कबीर सम्प्रदाय, पृ० १४१ और १५५।

२ मध्यकालीन गुजराती साहित्य—क० मा० मुंशी, पृ० ७२।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राचीन भाषा और साहित्य के ग्रन्थों की समुचित रक्षा कर जैन धर्मियों ने समाज एवं संस्कृति की अविस्मरणीय सेवा की है। भाषा के अतिरिक्त विषय की दृष्टि से भी गुजराती का जैन साहित्य महत्त्वपूर्ण है। श्वेताम्बर जैन कवियों में पौराणिक चरित्रों के अलावा राजाओं, गुरुओं और ऐतिहासिक व्यक्तियों के चरित्र देने की भी प्रथा रही है। भोज प्रबन्ध, कुमारपाल चरित्र, भूता नेणसीरोख्यान एवं अन्यान्य रचनाएँ ऐतिहासिक जैन-ग्रन्थों के उदाहरण हैं। जैन धर्मियों ने साहित्य के अतिरिक्त तत्त्वज्ञान, अध्यात्म ज्ञान, व्याकरण जैसे विषयों पर भी सुन्दर ग्रन्थों का प्रणयन किया है।

सूफी मत

सूफी शब्द वस्तुतः अरबी 'सूफ' से बना है, जिसका अर्थ ऊन (परम, ऊँट की ऊन तथा बालों का कपड़ा) होता है।[1] इसलिए सूफी का अर्थ हुआ ऊनी अथवा बालों का कपड़ा धारण करने वाला। कई विद्वानों के अभिमत से यह शब्द यूनानी शब्द 'सोफस' (साधु) से सम्बन्धित है।[2] अब इस शब्द का प्रयोग मुस्लिम साधु के लिए किया जाता है जिसका विमल हृदय संसार से विरक्त हो।[3] परन्तु शरीयत (इस्लामी विधि-निषेध) का पाबन्द हो।

सूफी के लिए 'सालिक' शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। 'सालिक' का अर्थ है अध्यात्म-पथ की ओर अग्रसर होने वाला। जब सूफी ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर लेता है—मारिफत का अभ्यस्त हो जाता है, तब वह 'आरिफ' कहलाता है। विशेष पहुँचे हुए सूफी पीर को 'जली' (बहुबचन औलिया) कह कर सम्बोधित करते हैं। सभी साधुओं के लिए सामान्यतः 'फकीर' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

यों तो सूफी मत बहुत कुछ ईरान का ही प्रसाद है और वहीं के साहित्य से उसके अंग, प्रत्यंग पुष्ट हुए हैं। परन्तु अपने प्रकृत रूप में यह प्रेम-मार्ग है। जीव ईश्वर का ही अंश है। वह उस अनन्त से डरता नहीं है, सत्कार भी नहीं करता, पूजा भी नहीं करता, केवल प्रेम करता है और चाहता है उसका समीप्य, सानिध्य, 'दीदार'। चाहें तो भारतीय दार्शनिक बोली में इस पद्धति को माधुर्य अथवा मादन भाव की भक्ति कह सकते हैं। सूफी बाह्याचार पसन्द नहीं करता। वह किसी धार्मिक ग्रन्थ अथवा रीति का भी कायल नहीं है, वह सबको एक दृष्टि से देखता है, सबसे सहानुभूति रखता है। अब्दुल हसन

---

१ नूरूल्लुगात (चतुर्थ भाग), पृ० ४९७।

२ इंगलिश एन्साइक्लोपीडिया में 'सूफी' पर लेख।

३ कश्फ-अल-महजूब, पृ० ३८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुहम्मदइन-अहमद-अल फारसी के अनुसार सूफी के दस व्रत हैं—सम्बन्ध-विच्छेद, श्रवण-शक्ति की यथार्थता, मैत्री, पूर्व व्यवस्था की सुविधा, स्वेच्छा का परिहार, भावोन्माद की प्रचुरता, विचारों का रहस्योद्घाटन, पर्यटन-प्रियता, भावावेश का प्रस्फुटन तथा परिग्रह वृत्ति[1] का निरोध, परन्तु वह स्वभावतः धार्मिक प्रतिबन्धों का बागी होता है। कुछ विद्वानों का तो निष्कर्ष है कि 'सूफीमत इस्लामी विधानों' की प्रतिक्रिया का परिणाम है।[2] ईश्वर के वियोग में वह दिन-रात तड़पता है, उसको प्रत्येक वस्तु उसी के वियोग में जलती हुई दिखाई देती है। अतएव वह उस समय की बड़ी लालसा से प्रतीक्षा करता है जब 'प्रियतम' का दीदार नसीब होगा—वह मृत्यु के आलिंगन को सदैव उतावला रहता है।[3]

सूफी मत पर अधिक जानकारी के लिए 'उत्तर भारत की सन्त परम्परा' एवं डा० जयदेव कृत 'सूफी महाकवि जायसी' विशेष रूप से देख सकते हैं।

मुस्लिम आक्रमकों के साथ मुस्लिमों की भाषा—फारसी एवं उर्दू—भी गुजरात में आई। गुजरात में मुस्लिमों के अतिरिक्त कई उच्च वर्ण के हिन्दू भी फारसी में बहुत कुशलता प्राप्त करके शासन की व्यवस्था में योगदान देते थे। फारसी के साथ सूफी मत भी गुजरात में आया और गुजरात के कई सूफी कवियों ने भी हिन्दी में पद रचना की। साहित्य की दृष्टि से इन कवियों का अधिक मूल्य न होने पर भी गुजरात के सूफी कवियों की कविता कम महत्त्व की नहीं है। उर्दू के विद्वानों ने गुजरात के इन सूफीमत के कवियों की भाषा को उर्दू का प्रारम्भिक रूप माना है। पर वस्तुतः इन कवियों की भाषा खड़ी बोली (हिन्दी) की परम्परा की एक कड़ी है। शेख बहाउद्दीन बाझन, काजी महमूद दरियायी, शाह अलीजी नामधनी, हजरत मुहम्मद चिश्ती आदि गुजरात के प्रमुख कवि हैं जिन्होंने सूफी मत पर हिन्दी भाषा (खड़ी बोली) में काव्यों का प्रणयन किया है।

इन सब सम्प्रदायों के कवियों के अतिरिक्त गुजरात के कई राजा-महाराजाओं ने स्वयं हिन्दी में कविता लिखकर या हिन्दी में कविता लिखने वाले कवि, भाट एवं चारणों को आश्रय देकर हिन्दी की महती सेवा की है। अब हम गुजरात के हिन्दी कवियों की कृतियों की विस्तृत समीक्षा बाद के प्रकरणों में विस्तार से करेंगे।

---

१ *Doctrine of the Sufism*, p. 78.

२ ऐवरीमैन्स एन्साइक्लोपीडिया, भाग १२, पृ० ५४।

३ डा० जयदेव सूफी महाकवि जायसी, पृ० २६९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण ३

गुजरात के १५वीं शती के कवियों की हिंदी काव्य साहित्य को देन

१४ वीं शती तक गुजरात, राजस्थान एवं उत्तर प्रदेश की भाषा समान थी। १४ वीं शती से ही आधुनिक भारतीय भाषाओं का उदय माना जाता है। अतः इस शती से पूर्व हेमचन्द्राचार्य आदि अपभ्रंश के जो गुजराती कवि हुए हैं, इनके विषय में इस प्रबन्ध में चर्चा नहीं की है। १४ वीं शती के पश्चात् ही हिन्दी एवं गुजराती में अन्तर बढ़ता गया।

इस प्रकरण में नरसिंह मेहता, भालण, केशवदास, कृष्णदास शाह अली मुहम्मद आमधनी एवं काजी महमूद दरियायी के विषय में चर्चा की गई है। नरसिंह मेहता को तो गुजराती के आदि कवि का पद मिला हुआ ही है। पर कालान्तर से इनकी भाषा में बहुत ही परिवर्तन होते आये हैं। अतः इनकी भाषा आधुनिक भाषा जैसी ही प्रतीत होती है। यह नरसिंह मेहता की लोकप्रियता का प्रतीक है। भालण को नरसिंह जितनी प्रसिद्धि न मिलने के कारण से इनके ग्रन्थों की भाषा पहले के जैसी ही देख सकते हैं। भालण पर समकालीन ब्रजभाषा के कवियों का प्रभाव था। केशवदास एवं कृष्णदास ने इसी शतक में महत्त्वपूर्ण हिन्दी कविताएँ लिखी हैं जिनका विवरण आगे दिया जा रहा है। शाह मुहम्मद आमधनी सूफीमत के प्रसिद्ध कवि हैं। वे सदैव अपनी भाषा को गुजरी कहते थे। अब इन सभी कवियों की विस्तृत समीक्षा करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नरसिंह मेहता (ई० स० १४१५–१४८१)[1]

नरसिंह मेहता जूनागढ़ के नागर ब्राह्मण थे। उनके पिता का नाम कृष्णदास और माता का नाम दयाकोर था। भावनगर के समीप तलाजा में उनका जन्म हुआ था और वहाँ से करीब बीस साल बाद वे जूनागढ़ गये थे। बाल्यावस्था में माता-पिता की मृत्यु हो जाने से अपने चचेरे भाई एवं भाभी के साथ रहते थे। जाति से शैव होने पर भी बाल्यकाल से ही वह कृष्ण भक्ति में तन्मय हो रहा था।[2] नगर में आये हुए साधुओं के समूह में ही वह पाया जाता था और कभी-कभी ब्रज की गोपी का वेश धारण करते हुए नाचता और गाता भी था। ऐसे कई कारणों से उसके भाई-भाभी एवं उनके जातिजन उससे असन्तुष्ट रहते थे। भाभी के कठोर बचन सुनकर वह अपने भाई का घर छोड़कर गोपनाथ महादेव में चला गया और 'अपनी इच्छा पूर्ण नहीं करोगे तब तक मैं वापस घर जाने वाला नहीं हूँ' ऐसी प्रतिज्ञा करके शिवजी की पूजा करने लगा।[3] उनकी भक्ति एवं तप से शिव प्रसन्न हो गये और उन्हें द्वारिका ले जाकर कृष्ण-राधा की रासलीला बताई। इससे श्री कृष्ण के विशिष्ट प्रसाद प्राप्त किए हुए भक्त के रूप में उनके भविष्य का निर्माण हुआ। तदनन्तर वे घर आकर अपने भाई-भाभी से अलग वह रहने लगे। उनके पुत्र का नाम शामल एवं पुत्री का नाम कुँवरबाई था। उनका समय भजन गाने एवं नाचने में ही व्यतीत होता था। उनकी पत्नी माणेकबाई उन्हें ताने सुनाती और कभी-कभी तो अपने मायके भी चली जाती पर इसका कोई प्रभाव नरसिंह मेहता पर नहीं पड़ा। बच्चे बड़े होने पर भी इस निर्धन कृष्ण भक्त ने केवल कृष्ण को ही आधार माना और कहा जाता है कि कृष्ण परमात्मा ने ही उनके बच्चों की शादी के प्रसंगों में सहायता की।[4] तदनन्तर उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई और

3990

---

[1] नरसिंह मेहता के समय एवं मृत्यु के वर्ष के विषय में बहुत मतभेद है। स्व० अम्बालाल जानी, स्व० डा० आनन्द शंकर ध्रुव, श्री मुन्शी, श्री दुर्गाङ्कर शास्त्री, श्री नटवरलाल देसाई इत्यादि विद्वानों के इस विषय में विभिन्न अभिमत हैं। बम्बई विश्वविद्यालय की ठक्कर व्याख्यानमाला (ई० स० १९३२) में श्री नरसिंह राव दीवेटी आने (पृ० ४२-४७) इन सबकी समालोचना की है। श्री दीवेटीआ डा० आनन्द शंकर ध्रुव की तरह मानते हैं कि नरसिंह मेहता का समय ई० स० १४८० के बाद का होना चाहिए। —हरिलीला षोडशकला उपोदघात- पृ० ७८-८५।

[2] गु० सा० ना० मार्गसूचक स्तंभो (द्वितीय आवृत्ति)—कृ० मो० झवेरी, पृ० ३८।

[3] वही, पृ० ३९।

[4] वही, पृ० ४१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शीघ्र ही उनके पुत्र की भी मृत्यु हो गई और पुत्री सुसराल चली गई। अतः एक तरह से तो उनके संसार की समाप्ति हो गई। प्रेमानन्द में उनके मुख से कहलाया हुआ वाक्य—

"भलुं थयुं भागी जंजाल,
सुखे मजीशुं श्रीगोपाल"

(अच्छा हुआ कि चिन्ता दूर हो गई, अब तो सुख से भगवान का भजन करेंगे) गुजराती भाषा में लोकोक्ति के रूप में रूढ़ हो गया है और संसार भार से मुक्त हुए मनुष्य की गोपाल को भजने की मनोवृति प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त होता है।[१] उनके जीवन में कई चमत्कारिक घटनाएँ घटी थीं। आज भी जूनागढ़ में मजेवड़ी दरवाजे 'नरसिंह महेतानो चोरो' विद्यमान है।[२] वहाँ उनके इष्टदेव की मूर्ति है और यह स्थान कवि का स्मारक माना जाता है।

ये ऊँच-नीच या ब्राह्मण हरिजन के भेद को नहीं मानते थे। उनके विचारों के कारण अपने जाति बन्धुओं से एवं जूनागढ़ के तत्कालीन राजा रा मांडलिक से बहुत सहन करना पड़ा था। पर अन्त में नागर लोगों ने एवं रा मांडलिक ने नरसिंह महेता के विचारों को स्वीकार किया ही था।

उन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थ गुजराती में लिखे हैं—हारमाला, सुदामा चरित्र, चातुरी षोडशी, चातुरी छत्रीसी, सामलदास नो विवाह, दानलीला, गोविन्दगमन, भक्ति एवं शृङ्गार विषयक लगभग दो हजार पद तथा सुरत संग्राम।[3]

उनके ग्रन्थ सामान्यतः दो प्रकार के हैं—शृङ्गार के, एवं भक्ति के। उनका शृङ्गार अन्त में तो भक्ति में ही बदल जाता है।[४] नरसिंह प्रेम लक्षणा भक्ति को मानते हैं।[५] प्रेम की प्रबलता एवं तन्मयता की बात ही बार-बार उनके पदों में मिलती है। कनककुण्डल का उदाहरण देकर नरसिंह हमारे सामने अविकृत परिणामवाद को रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं।[६] उन्होंने राधाकृष्ण की शृङ्गारिक लीला तन्मयता से गाई है।

---

१ गु० सा० ना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय आवृत्ति)—कृ० मो० झवेरी, पृ० ४२।

२ वही, पृ० ४४।

3 वही, पृ० ४५।

4 वही, पृ० ४६।

५ के० का शास्त्री, कविचरित, भाग १-२, पृ० ५४।

६ वही, पृ० ५७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुंज समीपे ते आविया, कुंवरी ने तेडी कुमार,
एकान्त स्थाने रची शयया, मली करे रे विहार।
भूधरे ते भीडी हृदेशुं, चुंबन लीधुं गाल,
रसीओ ते रस प्रीते पीए, कंद्रप रूप रसाल ॥

(राधा को लेकर कृष्ण कुंज के पास आ गये। एकान्त में शय्या बनाकर वे विहार करते हैं। कृष्ण भगवान ने उसे आलिंगन दिया एवं गाल पर चुम्बन किया। कामदेव के समान कृष्ण आनन्द से रसकेलि कर रहे हैं)

नरसिंह मेहता के कुछ पद मारवाड़ी एवं ब्रज में भी प्राप्त हैं।[1] उन्होंने ब्रजभाषा की लोक प्रचलित काव्य परम्परा में कई पद रचे हों ऐसा माना जा सकता है।

भालण

भालण एवं नरसिंह के समय से गुजरातियों द्वारा रचित ब्रजभाषा की कविता मिलती है पर अभी तक दोनों के जीवन काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। कन्हैयालाल मुन्शी उसका समय १४२६ से १५०० तक मानते हैं।[2] पर रामलाल मोदी उसका समय ई० स० १४०५ से १४८९ तक मानते हैं।[3] अतः इन अभिमतों के अनुसार भालण को नरसिंह मेहता का समकालीन कह सकते हैं।[4] नरसिंह मेहता वृद्ध होंगे तब तक भालण युवावस्था में होगा ऐसा प्रथम मानने वाले श्री के० का० शास्त्री जी भालण के दशम स्कन्ध में ब्रज के पदों का कर्तृत्व उनका ही मानकर उन पर सूरदास के प्रभाव को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि भालण १६ वें शतक का कवि है। यदि इसको स्वीकार करें तो भालण को नरसिंह का समकालीन न मानकर अनुगामी मानना पड़ेगा।[5]

भालण पाटन (उ० गुजरात) का मोढ़ ब्राह्मण था। प्रारम्भ में वह शाक्त था और उत्तरावस्था में वह रामभक्त हो गया था यह उनके कई काव्यों में आती पंक्ति 'भालण प्रभु रघुनाथ' से प्रतीत होता है।[6]

---

१ 'नरसिंह महेतानां पदोनो मारवाड़मां प्रचार'—गु० सा० सम्मेलन १२वें अधिवेशन की रिपोर्ट—डा० मंजुलाल मजमुदार।

२ गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर, के० एम० मुन्शी, पृ० १६८।

३ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १०२।

४ वही, पृ० १०२।

५ वही, पृ० १०२।

६ वही, पृ० १०३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके विष्णुदास एवं उद्धव नामक दो पुत्र थे। इन पुत्रों ने भी अच्छे आख्यान लिखे हैं।

भालण की प्रसिद्ध कृति संस्कृत में लिखित बाणभट्ट की कादम्बरी का भाषान्तर है। इस गद्य-काव्य के भाषान्तर में हम उनकी कुशलता देख सकते हैं। कथा रचना मूल ग्रन्थ जैसी ही है और वर्णनों में भी अनुकरण करने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने दो नलाख्यान लिखे हैं एवं सप्तशती का भाषान्तर किया है। उन्होंने राम की बाल-लीला के पद भी लिखे हैं। श्रीराम की बाल क्रीड़ा, कौशल्या की चिन्ता इत्यादि के उत्कृष्ट वर्णन भालण ने दिए हैं। शिव-भीलड़ी सम्वाद, मृगी आख्यान, ध्रुवाख्यान, दुर्वासाख्यान के अतिरिक्त भालण ने दशमस्कन्ध भी लिखा है। दशमस्कन्ध में ही ब्रजभाषा में लिखे हुए पाँच पद पाये जाते हैं।[1] इस ग्रन्थ की सबसे प्राचीन प्रति सम्वत् १७५५ की है। इसमें कुल ४४१ पद हैं। ई० स० १५२९ तक वल्लभाचार्य गुजरात में चार बार आ गये थे और इस समय तक उनका शिष्यत्व ग्रहण करने वाले सूरदास के ब्रजभाषा के पदों से गुजरात परिचित हुआ होगा यह माना जाय तो ऐसा अनुमान कर सकते हैं कि ब्रजभाषा के उस समकालीन वैष्णव सन्तकवि का थोड़ा प्रभाव भालण पर पड़ा होगा। श्री के० का० शास्त्री जी ने ऐसा अनुमान किया भी है।[2] भालण यदि सचमुच नरसिंह का समकालीन ठहरता है तो उसे ही 'ब्रजभाषा का आदि कवि' मानना पड़ेगा और भालण ने ही ये पद लिखे हैं ऐसा सिद्ध न होने पर उसे ब्रजभाषा का कवि कह ही नहीं कह सकते हैं। यह भी उतना ही सत्य है।[3] गुजराती साहित्य की रूपरेखा के विद्वान लेखक श्री विजयराय वैद्य उन्हें 'संस्कृत के व्युत्पन्न पंडित' कहकर उनके संस्कृत ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं।

दशमस्कन्ध की सम्वत् १७५५ की प्रति में निम्नलिखित पाँच पद ब्रजभाषा में हैं—

१. मैया मोरे भावे दधि भात ॥२१२॥
२. ब्रज को सुख समरत ही श्याम ॥२१४॥
३. कहो मैया कैसे सुख पाऊँ ॥२१५॥
४. अब पढवे को आयो दिन ॥२१६॥
५. सुत मैं सुनी लोक में बात ॥२१९॥

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—देरासरी।
[2] गुजराती साहित्यनुं रेखादर्शन, खण्ड १—के० का० शास्त्री, पृ० ८९, ९२।
[3] गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १०४।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इसके बाद की प्रतियों में ब्रजभाषा का एक पद और मिलता है—

६. कौन तप कीनोरी नन्द घुराणी ॥७२॥[1]

इन सभी पदों के अन्तिम चरण में भालण का नाम आता है। अतः दृढ़ता से यह कहा जा सकता है कि ये पद भालण के ही हैं।

केशवदास

केशवदास जाति के कायस्थ थे और प्रमाय पाटन में रहते थे।[2] इनके पिता का नाम हृदयराम था। उन्होंने भागवत के दशमस्कन्ध के आधार पर श्री कृष्ण लीला काव्य की गुजराती में रचना की है। उसके १४ वें और १६वें सर्ग में ब्रजभाषा की फुटकर रचनाएँ मिलती हैं।

श्री के० का० शास्त्री जी इस ग्रन्थ का रचना काल सम्वत् १५९२ मानते हैं।[3]

कृष्णदास

कृष्णदास का जीवन वृतान्त मूल 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' स० ८१ में और 'अष्टसखान की वार्ता' स० ४ में दिया हुआ है।[4] नाभाजी कृत 'भक्तमाल' में कृष्णदास नाम के कई भक्तों का उल्लेख मिलता है, किन्तु इसके छप्पय सं० ८१ में एक कृष्णदास का वृत्तान्त इस प्रकार दिया गया है[5] :

श्री बल्लभ गुरु दत्त, भजन-सागर गुन-आगर।
कवित नोख निरदोष, नाथ-सेवा में नागर॥
बानी बंदित विदुष, सुजस गोपाल अलंकृत।
व्रज-रज अति आराध्य, बहै धारी सर्वस चित॥
सांनिध्य सदा हरिदास वर्य, गौर-स्याम दृढ़ व्रत लियौ।
गिरिधरन रीझि कृष्नदास कों, नाम मांझ साझौ कियौ॥

---

[1] दशमस्कन्ध की छपी हुई प्रति में इन पदों के नम्बर क्रमशः २५१, २५३, २५४, २५५ २६५ एवं ७८ हैं।

[2] गु० स० ना मार्गसूचक स्तम्भो (दूसरी आवृत्ति)—कृ० मो० झवेरी, पृ० ५८।

[3] गु० सा० नुं रेखादर्शन—के० का० शास्त्री, पृ० ८८।

[4] अष्टछाप परिचय (दूसरा संस्करण)—प्रभूदयाल मीतल, पृ० २०५।
अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय—दीनदयालु गुप्त, पृ० २४५।
'सो ये कृष्णदास गुजरात में एक चिलोतरा गाँव है तहाँ एक कुनबी के घर जन्मे (अष्टछाप, कांकरोली पृ० ११७ तथा लेखक के पास की हरिरायकृत भाव प्रकाश वाली ८४ वार्ता)।

[5] अष्टछाप-परिचय (द्वितीय संस्करण)—प्रभुदयाल मीतल, पृ० २०५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपर्युक्त वृत्तान्त से ज्ञात होता है कि यह अष्टछाप के कृष्णदास से सम्बन्धित है। इसमें उनकी भक्ति और काव्य रचना विषयक महत्त्व की चर्चा की गई है, किन्तु उनके भौतिक चरित्र पर कुछ भी प्रकाश नहीं डाला गया है। प्रियादास ने उक्त छप्पय की टीका में उनके चरित्र की कतिपय बातों का भी उल्लेख किया है, किन्तु उन्होंने उनके आरंभिक जीवन-वृत्तान्त के विषय में कुछ भी नहीं बताया है। ध्रुवदास कृत 'भक्तनामावली' में भी उनके भौतिक चरित्र के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा गया है। उसके एक छन्द में कुंभनदास के साथ कृष्णदास के भक्ति भाव और उनके कीर्तन की प्रशंसा की गयी है। इस प्रकार पुष्टि सम्प्रदाय के वार्ता साहित्य के अतिरिक्त अन्य साधनों से कृष्णदास के भौतिक जीवन पर कुछ भी प्रकाश नहीं पड़ता है।[१]

'भाव प्रकाश' से ज्ञात होता है कि कृष्णदास का जन्म गुजरात में वर्तमान अहमदाबाद जिले के 'चिलोतरा' नामक ग्राम में हुआ था। वे कुनबी पटेल थे; जिनको बार्ता में शूद्रवर्ण का लिखा गया है। कृष्णदास का पिता चिलोतरा ग्राम का मुखिया था।[२]

अपने पिता के साथ वैमनस्य होने से वे घर छोड़कर तीर्थयात्रा करते हुए ब्रज आ गये। 'बल्लभ-दिग्विजय' के अनुसार मथुरा के विश्रामघाट पर और हरिरायजी कृत 'भाव प्रकाश' के अनुसार गोवर्धन में बल्लभाचार्य जी ने कृष्णदास को शरण में ले लिया था।[3]

उनकी शिक्षा इनके बाल्यकाल में चिलोतरा गाँव में ही हुई होगी और वह शिक्षा गुजराती भाषा के माध्यम से हुई होगी, क्योंकि ये श्रीनाथजी के मन्दिर के अधिकारी होने के बाद वहाँ का हिसाब गुजराती भाषा में ही करते थे।[४] साधु-संगति की ओर इनका विशेष ध्यान था। इसलिए लौकिक शिक्षा के अतिरिक्त उपदेशात्मक शिक्षा उन्हें बाल्यकाल से साधु महात्माओं के संग से ही मिली। वार्ता में लिखा है कि जब ये पाँच वर्ष के थे तभी जहाँ कथा-वार्ता होती, वहाँ जाते थे, यद्यपि इनके माता-पिता इन्हें बहुत रोकते थे।[५] बल्लभ सम्प्रदाय में आने के बाद तो इन्होंने बहुत योग्यता का प्राप्त कर ली

---

१ अष्टछाप-परिचय (द्वितीय संस्करण)—प्रभूदयाल मीतल, पृ० २०५।
२ वही पृ० २०७।
3 वही पृ० २१९।
४ अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय—दीनदयालु गुप्त, पृ० २४६।
५ अष्टछाप, कांकरोली, पृ० १७७।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

था। ब्रजभाषा के ये इतने बड़े पंडित हो गये कि भक्त नाभादास ने इनकी ब्रजभाषा की कविता को निर्दोष और पंडितों द्वारा आदृत कहा है।[1] सं० १५५२ वि० के लगभग का समय कृष्णदास के जन्म का आता है।[2] कृष्णदास जी ने गुसाईं विट्ठलनाथ जी के सातों पुत्रों की बधाई मनाई है। इस हिसाब से उनका सम्वत १६३१ तक जीवित रहना सिद्ध होता है।[3]

कृष्णदास अधिकारी के नाम पर दी जाने वाली रचनाएँ निम्नलिखित विभागों में डा० दीनदयालु गुप्त के विचार से हैं[4] :

कवि की प्रामाणिक रचना—बल्लभ सम्प्रदाय केन्द्रों में हस्तलिखित तथा छपे कीर्तन रूप में पाये जाने वाले पद-संग्रह

सन्दिग्ध रचनाएँ—१. भ्रमर-गीत
२. प्रेम-सत्व-निरूप
३. वैष्णव-बन्दन

लम्बे पद अथवा पद-संग्रह के ही नामान्तर वाली रचना जो स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं कही जा सकतीं।

१. प्रेम रसराज
२. कृष्णदास की बानी

अप्रामाणिक रचनाएँ—१. जुगलमान चरित्र
२. भक्तमाल टीका
३. भागवत भाषानुवाद

कृष्णदास के जीवन एवं साहित्य के बारे में हिन्दी में बहुत लिखा गया है। विशेष सामग्री के लिए प्रभूदयाल मीतल का 'अष्टछाप-परिचय' तथा डा० दीनदयालु गुप्त का 'अष्टछाप और बल्लभ-सम्प्रदाय' एवं अन्यान्य ग्रन्थ देखे जा सकते हैं।

शाह अली मुहम्मद आमधनी

ये सैयद अहमद कबीर रिफाहकी के वंशज थे। इनका इन्तकाल १५१५ ई० में हुआ। इनका मजार अहमदाबाद में रायखड़ में है। इनका

---

[1] भक्तमाल, भक्तिसुधा-स्वाद—तिलक, छन्द नं० ८१, पृ० ५८१।
[2] अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय—डा० दीनदयालु गुप्त, पृ० २५४।
[3] वही, पृ० २५४।
[4] वही, पृ० ३२४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दीवान जवाहिरे इसरारुल्लाह के नाम से प्रसिद्ध है। इनकी कविता में सूफियों के प्रेम की पीर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने हमेशा अपने आपको प्रेमी (आशिक) मानकर परमात्मा को प्रेमिका (माशूक) के रूप में देखा है। आपकी वाणी प्रेम के रंग से धुली हुई है। इनका तर्जेकलाम हिन्दी शौरा का सा है।[1] उन्होंने सदैव अपनी भाषा को गुजरी कहा है।

काजी महमूद दरियायी

ये वीरपुर (गुजरात) के रहनेवाले थे। इनकी मृत्यु सन् १५२१ में ६७ वर्ष की उम्र में हुई। इनके पिता काजी हमीद या शाह चलन्दाभी पहुँचे हुए फकीर थे। दरिया के मुसाफिरों के वली होने के कारण शाहचलन्दा दरियायी कहे जाते थे। आगे चलकर इनके पुत्र और मुरीद काजी महमूद भी दरियायी कहे जाने लगे। इन्होंने हिन्दी में कुछ उपदेश दिए। मौ० अब्दुलहक ने इस विषय में कहा है कि इनकी जबान हिन्दी है जिसमें कहीं-कहीं गुजराती और अरबी लफज भी आ जाते हैं। कलाम का तर्ज भी हिन्दी है।[2]

---

[1] उर्दू की इबतदाई नश्व व नुमा में सूफिया ए इकराम का काम, पृ० ५८।
[2] वही, पृ० ५६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण ४

गुजरात के १६वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य-साहित्य को देन

१६वीं शती के गुजरात के हिन्दी कवियों में दादूदयाल, मीराबाई, साया झुला, ईसर बारोट, हजरत खूब मोहम्मद साहब चिश्ती एवं सैयद शाह हाशिम मुख्य हैं। दादूदयाल एवं मीराबाई से तो हिन्दी साहित्य के प्रेमी पूर्ण-रूपेण परिचित हैं ही। दादूदयाल गुजरात के होते हुए भी इनकी रचनाएँ गुजराती में नहीं पाई जाती हैं जबकि मीराबाई जन्म से राजस्थानी होते हुए भी इनकी रचनाएं गुजराती में पाई जाती हैं क्योंकि गुजरात के विद्वानों के अभिमतानुसार मीराबाई जीवन के अंतिम वर्षों में द्वारिका (गुजरात) में रहकर गोविन्द गोपाल की पूजा में तन्मय रहती थीं। आज भी सारे गुजरात में नरसिंह मेहता के पदों की ही तरह मीराबाई के गुजराती पद भी बहुत ही लोकप्रिय हैं। मीराबाई के पदों को भाषा की दृष्टि से तीन विभागों में बाँट सकते हैं :

१. केवल राजस्थानी (हिन्दी) भाषा के पद

२. केवल गुजराती भाषा के पद

३. ऐसे पद जो दोनों (हिन्दी एवं गुजराती) भाषाओं में पाये जाते हैं।

यहाँ मीराबाई के केवल हिन्दी पदों पर ही विचार किया जाएगा। सांया झुला एवं ईसर बारोट हिन्दी साहित्य के मनीषियों के लिए नये एवं महत्त्वपूर्ण कवि हैं। हजरत खूब मोहम्मद साहब चिश्ती एवं सैयद शाह-हाशिम इस शती के सूफीमत के प्रसिद्ध कवियों में से हैं। अब इन सभी कवियों की कृतियों की सम्यक् आलोचना करें।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दादूदयाल

दादू पन्थी लोग इनका जन्म सम्वत् १६०१ में गुजरात के अहमदाबाद नामक स्थान में मानते है।[१] पर डा० रामकुमार वर्मा के अभिमतानुसार इनका जन्म सम्वत् १६५८ में हुआ था।[२] इनकी जाति के सम्बन्ध में भी मतभेद है। अहमदाबाद के लोदी राम नामक नागर ब्राह्मण को वांछा नदी में एक बहते सन्दूक में एक बालक मिला, जिसे इन्होंने पाला। यह बालक ११ वर्ष की अवस्था में विरक्त होकर देशाटन को निकला पर मातापिता ने पुनः घर लाकर विवाह करा दिया। वे निर्वाह के लिए रुई धुनने का काम करने लगे। इनके दो पुत्र और दो पुत्रियाँ थीं।[३]

ये अकबर के समकालीन थे। दादू के शिष्य जनगोपाल ने लिखा है कि अकबर और दादू में धार्मिक वार्तालाप भी हुआ करता था। गार्साद तासी के अनुसार दादू रामानन्द की शिष्य परम्परा में छठे शिष्य थे। इनका जन्म तो अहमदाबाद में हुआ था पर इन्होंने अपने जीवन का विशेष समय राजस्थान के नराना एवं भराना नामक स्थानों में व्यतीत किया। दादू इतने अधिक दयालु थे कि लोग इन्हें दादूदयाल के नाम से पुकारने लगे। इन्होंने एक अलग पन्थ का निर्माण किया जो दादूपन्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन्होंने कबीर की भाँति हिन्दू-मुसलमान का एक्य करना चाहा। कबीर के दृष्टिकोण के अनुसार ही इनकी रचना के अंग हैं। इनकी कविता बड़ी प्रभावोत्पादिनी है। वह सरलता से हृदयंगम हो जाती है और एक आध्यात्मिक वातावरण छोड़ जाती है।[४]

दादू ने लगभग ५००० पद्य लिखे हैं जिनमें बहुधा से ग्रन्थों में नहीं पाये जाते। वे केवल साधु-सन्तों की स्मृति में हैं। दादू ने धर्म के प्रायः सभी अंगों पर प्रकाश डाला है। मूर्तिपूजा, जाति, आचार, तीर्थ व्रत, अवतार आदि पर दादू कबीर के पूर्णतः अनुयायी हैं। डा० ताराचन्द के अनुसार दादू ने सूफीमत की व्याख्या अधिक सफलता के साथ की है। उसका कारण यह है कि वे कमाल के शिष्य थे। दादू ने गुरु की महिमा की बहुत प्रशंसा की है। इनके अनुसार गुरु के बिना आत्मा वश में नहीं आती। इनके शिष्य जनगोपाल ने

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ८५।

२ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—राम कुमार वर्मा, पृ० २६७।

३ खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास—(दूसरा संस्करण) —ब्रजरत्नदास, पृ० ८३।

४ वही, पृ० २६९।

CC-0. Agamnigam Research Foundation, Chandigarh

दादू की एक जीवनी 'जीवन परचा' के नाम से लिखी है।[1] जनगोपाल के अतिरिक्त दादू के अन्य शिष्य रज्जब ने इनके जीवन पर प्रकाश डाला है।[2]

इनके चलाये सम्प्रदाय में निरन्जन निराकार ब्रह्म की सता मानी जाती है और हिन्दू धर्म की बहुत सी बातों को ये आडम्बर या ढोंग समझकर नहीं मानते जैसे मूर्ति-पूजन, तिलक आदि। इनके यहाँ परोपकार, अहिंसा, दैन्य, वैराग्य, ज्ञान आदि में तल्लीनता ही का उपदेश है। साधु के लिए किसी प्रकार बाह्य आडम्बर रखना ये निस्सार समझते हैं। तप, योग तथा भक्ति में तत्पर रहना ही आवश्यक कर्म है। पर अब बहुत से साधु भगवा रङ्ग के वस्त्र पहनते हैं, जो विरक्त हैं। नागा साधु श्वेत वस्त्र पहनते हैं और कुछ टोपा-चादर भी धारण करते हैं। राजस्थान, पंजाब, एवं उत्तर प्रदेश में इस दादूपंथ के अनुयायी अधिक हैं।[3] हिन्दी में दादूदयाल पर बहुत ही सामग्री मिलती है। अतः यहाँ अधिक पिष्टपेषण अनावश्यक है।

मीराबाई (ई० स० १४९९-१५४७)

नरसिंह मेहता की तरह मीराबाई का नाम भी गुजरात के बाहर भी आदर के साथ लिया जाता है। जन्म से राजस्थानी मीरा जीवन के अंतिम वर्षों में गुजरात में द्वारिका में आई थीं। इस प्रकार की मान्यता गुजराती साहित्य के इतिहासकार रखते हैं। उनके काव्य हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं में पाये जाते हैं। उस समय तक गुजरात एवं राजस्थान की भाषा में बहुत ही साम्य था। सुप्रसिद्ध भाषाविद् डा० टेसिटोरी[4] ने उसी भाषा का नाम पुरानी पश्चिमी हिन्दी (Old Wesrern Rajasthani) रखा था। इसी को ही गुजरात के विद्वान् पुरानी गुजराती (Old Gujarati) कहते हैं।

उनके जीवन में भी कई चमत्कारिक घटनाएँ घटीं थीं ऐसा कहा जाता है। मीराबाई के सम्बन्ध में हिन्दी में भी विपुल साहित्य होने से अधिक पिष्ट-

---

१ दादू—श्री क्षिति मोहन सेन, विश्व भारती, कलकत्ता, पृ० २३-२४।

२ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—रामकुमार वर्मा, पृ० २७०।

३ खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास (दूसरा संस्करण)—ब्रजरत्नदास, पृ० ८३।

4 "In western India the Saurasena Apabhransha was succeeded by that form of language which I have chosen to call O. W. R. and other old Gajarati. This was in use over the whole of Gujarat and Western Rajasthan and flourished till about the end of 16th century A. D., when it finally developed into two distinct vernaculars, modern Gujarati and modern Malwari."—Dr. L. P. Tessitori's article in Report of the fifth Guj. S. Parishad.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पेषण करना उचित नहीं। गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं की प्रतिभा-सम्पन्न कवयित्री बनने का परम सौभाग्य मीराबाई को मिला था।

उनका जन्म मेड़ता (राजस्थान) में हुआ था। पिता का परिवार वैष्णव भक्ति में बहुत ही श्रद्धा रखता था। मीराबाई की शादी चित्तौड़ के राणा कुंभाजी के पुत्र भोजराज से हुई थी। थोड़े समय में ही पति की मृत्यु होने से मीराबाई अपने पिता के घर गईं और वहाँ उनका जीवन अधिक भक्तिमय होता गया। मेड़ता का विनाश होने के बाद वे पुनः चित्तौड़ गईं वहाँ उनके भक्तिमय जीवन की अत्यन्त कटु आलोचना होती देखकर वे द्वारिका (गुजरात आई और कृष्ण भगवान की भक्ति करते-करते ही इनकी मृत्यु ई० स० १५४७ के आस-पास ही हुई हो ऐसा माना जाता है।[१]

पहले माना जाता था कि मीराबाई का समय ई० स० १४०३ से लेकर ई० स० १४७० तक है और वह मेवाड़ के राणा कुंभाजी की पत्नी थीं। पर आधुनिक अनुसन्धानों से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मीराबाई मेड़ता के विष्णुभक्त राठौर राव दुदाजी की पौत्री थी और ई० स० १४९९ में इनका जन्म हुआ था। वह मेड़ता के राणा संग्राम सिंह या संग के (शादी के बाद थोड़े ही समय के उपरान्त स्वर्गस्थ होने वाले) युवराज भोजराज की बाल-विधवा थीं।[२]

नरसिंह की तरह मीराबाई के भी कई पद आत्मचरित्रात्मक हैं। 'गोविन्दो प्राण हमारो रे', 'अब नहीं भानूं राणा थोंरी मैं वर पायो गिरधारी' और अन्यान्य पद मीरा के जीवन प्रसङ्गों को अभिव्यक्त करते हैं।[3] 'तेरा कोई नहिं रोकन हार मगन होई मीरा चली रे', 'मैं तो हरिगुण गावत नाचुंगी', 'मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरो न कोई', 'बाई मैंने गोविन्द लीनो मो' एवं अन्यान्य पदों में उनकी भक्ति भावना के हमें दर्शन होते हैं।[४]

प्रभु मिलन के एव प्रभु विरह के भावों को अभिव्यक्त करने वाले उनके काव्य भी बहुत सुन्दर हैं। मीरा के विषय में हिन्दी साहित्य में बहुत कुछ लिखा हुआ है। अतः अधिक पिष्टपेषण समीचीन नहीं है।

सायां झुला

ये ईडर के निकटवर्ती गाँव फुवावा के निवासी थे। उन्होंने नागदमण नामक एक अत्यन्त सरस और सुन्दर ग्रन्थ की रचना की है। पालनपुर के श्री

---

१ गुजरात साहित्य (मध्यकालीन) अनन्तराय रावल—पृ० १११।
२ वही, पृ० १११
३ वही, पृ० ११३
४ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अन्तराय रावल, पृ० ११३।

CC-0. Agamnigam Aanandji Kalyanji Pedhi Trust Foundation, Chandigarh

हमीरदान ने इस काव्य को प्रकाशित किया है। श्री हमीरदान के अभिमतानुसार इसका रचना काल सम्वत १६३२ (सन् १५७६) है।

'नागदमण' में कवि ने शृङ्गार, करुण, वात्सल्य एवं भक्ति विषयक मनोहारी चित्र प्रस्तुत किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में कृष्ण के जीवन के विभिन्न प्रसंगों पर भावोत्पादक शैली में कविता की गई है। 'नागदमण' के अतिरिक्त उन्होंने रुक्मिणी हरण एवं अंगदविष्टि भी लिखे हैं जो पर्याप्त महत्त्व के हैं।[1]

ईसर बारोट

ईसरदास या ईसर बारोट मद्रेस नामक गाँव (मारवाड़) में ई० स० १५३९ में पैदा हुए थे। बड़े होने पर ये सौराष्ट्र के राजाओं के आश्रय में चले आये। इन्होंने अपनी कवित्व शक्ति के बल पर नवानगर के रावल जाम के दरबार में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया था। राजस्थान से आकर गुजरात में बसने वाले यह प्रथम चारण थे ऐसा कहा जाता है। उनके गुजरात में आने के विषय में एक कहानी प्रसिद्ध है :

ईसर मारवाड़ से नवानगर के रावल जाम की सभा में आया। अपनी कवित्व शक्ति से उन्होंने सभी को प्रभावित कर दिया। बहुत ही खुश होकर जाम साहब ने ईसर को सम्मानित करने के लिए राजपंडित पीताम्बर की सम्मति माँगी पर पं० पीताम्बर ने सम्मति नहीं दी। उसी रात ईसर ने पं० पीताम्बर से इसका बदला लेने का निश्चय किया और कटार लेकर राजपण्डित के घर पहुँच गये। पर वहाँ की बात सुनकर उनके हृदय का परिवर्तन हो गया। राजपण्डित अपनी पत्नी से कह रहे थे : "राजा ईसर का सम्मान करना चाहते थे पर मैंने सोचा शब्द ब्रह्म की ऐसी अप्रतिम शक्ति का साधक राजाश्रय प्राप्त करके प्राकृत जन का गुणगान करने लगेगा, अतः मैंने सम्मति नहीं दी।"

यह सुनते ही ईसर का सारा क्रोध जाता रहा और कटार फेंककर वे राजपण्डित के चरणों में गिर पड़े। उसी प्रसंग से प्रेरणा प्राप्त करके उन्होंने 'हरिरस' काव्य लिखा ऐसा कहा जाता है।

उन्होंने हरिरस, देवीयाण, छोटा हरिरस, बाल लीला एवं अनेक स्फुट पदों की रचना की है।

हजरत खूब मोहम्मद साहब चिश्ती

आप अहमदाबाद के रहने वाले थे। आपका जन्म ई० सन् १५३९ में

---

[1] बुद्धिप्रकाश, १८९६, पृ० १६८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा देहान्त ई० सन् १६१४ में हुआ। आपने खूब नरंग नामक एक मसनवी लिखी है। इस मसनवी में आपने अपनी भाषा को अरबी-फारसी आमेज गुजराती कहा है पर यह मसनवी हिन्दी भाषा से ही अधिक समीप है।

सैयद शाह हाशिम

आप अहमदाबाद के सूफी संत थे। आपकी मृत्यु ई० सन् १६४९ में अहमदाबाद में हुई। आपकी वाणी हिन्दी में मिलती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण ५

गुजरात के १७वां शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

सत्रहवीं शती के हिन्दी सेवी कवियों में रामचन्द्र नागर, पुहकर, आनन्दघन, ज्ञानानन्द, यशोविजय, विनय विजय, प्राणनाथ, इन्द्रामती, भगवान, मुकुन्द, अखो, शामल भट्ट, शम्सवली उल्लाह, एवं शुजाउद्दीन नूरी मुख्य हैं। इन सभी कवियों ने महत्त्वपूर्ण कृतियों की रचना करते हुए हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में अपना योग दिया है। रामचन्द्र नागर, पुहकर एवं भगवान ने भक्तिरस प्रधान पदों की रचना की है। मुकुन्द, अखो एवं शामल भट्ट ऐसे महत्त्वपूर्ण कवि हैं जिनकी रचनाएँ गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं में काफी प्रसिद्ध एवं महत्त्वपूर्ण हैं। अखोजी एवं कबीर में बहुत साम्य है। अखोजी ने भी कबीर की ही तरह समाज पर प्रहार किए हैं। सामान्य जनों के लिए इनकी भाषा कठिन है पर श्री नरसिंह राव दीवेटिआ ने इनके बारे में सर्वथा उचित ही कहा है कि "Where Akho is simple; he is sublime." मुकुन्द एवं शामल भट्ट की भाषा मधुर एवं सरल है। आनन्दघन, ज्ञानानन्द, यशोविजय जैन धर्मी कवि हैं, फिर भी इनकी कविता में साम्प्रदायिकता नहीं है। शम्सवली उल्लाह एवं शुजाउद्दीन नूरी सूफी मत के कवि हैं जिनके काव्यों का हिन्दी एवं उर्दू साहित्य में उच्च स्थान है। अब इन कवियों एवं इनकी कृतियों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रामचन्द्र नागर

रामचन्द्र नामक गुजराती नागर कवि ने सम्वत् १७०० के करीब 'गीत गोविन्दादर्श' एवं 'लीलावती' नामक दो ग्रन्थों की रचना की है।[१] इन ग्रन्थों की रचना कवि ने विभिन्न छन्दों में की है जिसे देखने से इनके पांडित्य का पता चलता है।[२] शिवसिंह सरोज एवं मिश्रबन्धु विनोद[३] में भी इनकी चर्चा है, पर कवि का नाम रामचन्द्र न लिखकर रायचन्द लिखा गया है। रचनाओं के समान नाम होने से स्पष्ट होता है कि ये एक ही व्यक्ति की रचनाएँ हैं।

पुहकर

पुहकर मोहनदास के पुत्र थे। जाति से ये कायस्थ थे। ये प्रतापपुर (मैनपुरी) के निवासी थे और जहाँगीर के समकालीन थे। इनका आविर्भाव-काल सम्वत् १६७५ माना गया है।[४] इनके पूर्वज श्रीनिवास जी सोमतीर्थ के पास प्रतापपुर में महाराज रुद्रप्रताप के यहाँ रहते थे, पर इनके प्रपितामह दुर्गादास जी अकबर के दरबार में चले आये थे।

मिश्रबन्धुओं[५] ने तथा डाह्याभाई देरासरी ने[६] भी पुहकर को भूमिगाँव सोमनाथ (गुजरात) का ही निवासी माना है और किसी कारण से आगरे में सम्वत् १६८१ में कैद हो जाने का उल्लेख किया है। कारागार में इन्होंने 'रसरतन' नामक एक सुन्दर ग्रन्थ रचा। इस पर प्रसन्न होकर जहाँगीरशाह ने इन्हें कारागार से मुक्त कर दिया था ऐसा कहा जाता है।[७] खोज में यह ग्रन्थ सम्वत् १६७३ का होना पाया जाता है।

'रसरतन' ग्रन्थ में सूरसेन की बड़ी लम्बी कथा वर्णित है। इसमें स्थान-स्थान पर नीति, शृङ्गार और काव्य के अनेक अंगों का वर्णन है। इसमें

---

१ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ११।

२ शिवसिंह सरोज—शिवसिंह, पृ० ४४२।

३ मिश्रबन्धु विनोदः द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ४२५।

४ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—रामकुमार वर्मा, पृ० ३३१।

५ मिश्रबन्धु विनोदः द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ४०७।

६ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ९।

७ मिश्रबन्धु विनोद : द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ४०७।

CC-0. Vidyaranyam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रेमाख्यानक शैली का सम्पूर्णतः अनुसरण किया गया है और प्रत्येक बात का वर्णन विस्तारपूर्वक है।[1] प्रेमाख्यानक कवियों एवं ग्रन्थों में पुहकर तथा 'रस-रतन' का स्थान मूर्धन्य एवं महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ की रचना अवधी, ब्रज एवं डिंगल में की गई है। कहीं-कहीं प्राकृत मिश्रित भाषा का प्रयोग है। छंद बहुत प्रकार के हैं, परन्तु दोहा एवं चौपाइयों की प्रधानता है। कुल २७६६ छन्दों व ५५६ पृष्ठों में ग्रन्थ समाप्त हुआ है। कविता अच्छी है। हम इनको छत्र की श्रेणी में रखते हैं। खोज (१९०३) से इनके एक और ग्रन्थ 'नखशिख' का पता चलता है।[2]

उदाहरण :

चले मत मैमन्त झुमन्त मत्ता, मनो बद्दला स्याम माथै चलन्ता।
बनी बागरी रूप राजन्त दन्ता, मनो बग्ग आषाढ़ पाँतें उदन्ता।
लसैं पीत लालै सुढालैं ढलकैकं, मनौं चंचला चौंधि छाया छलकैकं।

कवित्त

चन्द की उजारी प्यारी नैन न निहारी परै,
चन्द की कला में दुति दूनी दरसाति है;
ललित लतानि में लतासी गहि सुकुमारि,
मालती-सी फूलै जब मृदु मुसकाति है।
पुहकर कहै जित देखिए बिराजै तित,
परम विचित्र चारु चित्र मिलि जाति है;
आवै मनमाहिं तब रहै मन ही मैं गड़ि,
नैननि बिलोके बाल बैननि समाति है।[3]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अभिमतानुसार पुहकर की कविता सरस और भाषा प्रौढ़ है। इस कवि के और ग्रन्थ नहीं मिले हैं पर प्राप्त ग्रन्थ को देखने से ये एक अच्छे कवि जान पड़ते हैं।[4]

भगवान

मिश्रबन्धुओं ने[5] चतुर्थ भाग में इनका उल्लेख किया है। ये सूरत

---

१ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—रामकुमार वर्मा, पृ० ३३१।
२ मिश्रबन्धु विनोद : द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ०४०७।
३ वही।
४ हिन्दी साहित्य का इतिहास (ग्यारहवां संस्करण)—रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २११।
५ मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग)—मिश्रबन्धु, पृ० ६३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
शहर के निवासी थे। उनका जन्मकाल सं० १७७० है और शृंगारसिन्धु इनकी रचना है। उनका कविता काल १८०७ है। ये जाति के पाटीदार थे और कृष्णदास के वंशज थे। उनके काव्य के उदाहरण के लिए निम्नलिखित पद देखिए—

चलि गयो चंद औ तरैयां रहीं भोर की-सी,
ससि को सरूप गयो छाले रहे आन जू।
मुकाहल गयो पार सीप को समूह फैल्यो,
माखन गयो है रह्यो भक्तन में पान जू॥
भरमि सुकवि सत्य सरदाक बानि कहे,
कृष्णदास जू के कुल अथै गयो भान जू।
दरन को कलस फूटो कवि को तिलक छूटो,
गुन को जहाज लूटो गयो 'भगवान' जू॥[१]

आनन्द घन

आनन्द घन का दूसरा नाम लाभानन्द भी है। ये १७वीं शती के जैन कवि हैं। इनके सम्बन्ध में कोई निश्चित जानकारी नहीं मिलती, केवल इतना सुना जाता है कि ये गुजरात में पर्याप्त समय तक रहे और मेड़ता (राजस्थान) में इन्होंने समाधि ली। इनका पहला ग्रन्थ आनन्द घन चौबीसी गुजराती में है। अतः हम अनुमान कर सकते हैं कि आनन्द घन या तो गुजराती होंगे या गुजरात में पर्याप्त समय तक रहे होंगे। देश के विभिन्न प्रदेशों में भ्रमण करने से इन्होंने मारवाड़ी और ब्रज में भी पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर ली थी। आनन्द घन ने हिन्दी में अनेक मधुर, भाववाही तथा प्रासादिक पदों की रचना की है। बहुत से अन्य सन्त कवियों की तरह ये भी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति वाले आध्यात्मिक पुरुष थे। इन्होंने जैन आगमों का ठोस अध्ययन किया था। जैन होने पर भी इन्होंने कविता में साम्प्रदायिक विचारों को प्रकट नहीं किया है। इनकी कृतियों में से आनन्द घन चौबीसी और आनन्द घन बहोत्तरी विशेष प्रसिद्ध हैं। दूसरी रचना के बहुत से पद हिन्दी में हैं। इन मधुर एवं भाववाही पदों में असाम्प्रदायिक भाव से इन्होंने ज्ञान और वैराग्य का उपदेश दिया है।

ज्ञानानन्द

इनके जन्म और निवासस्थान के सम्बन्ध में निश्चित इतिवृत्त नहीं मिलता। अनुमानतः ये सन् १७वीं शती में वर्तमान थे। इनकी भाषा पर

---

[१] मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग)—मिश्रबन्धु, पृ० ६३।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुजराती का प्रभाव देखकर हम अनुमान कर सकते हैं कि ये या तो गुजराती होंगे या गुजरात में कई वर्षों तक रहे होंगे। इनके नाम की छाप वाले बहुत से पद एवं भजन मिलते हैं। इन्होंने निधि-चरित नाम को आदर सहित पदों में बार-बार दोहराया है। अतः अनुमान होता है कि निधि-चरित इनके गुरु थे।

इनकी कविता बहुत ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है। आनन्द घन की तरह ज्ञानानन्द ने भी जैन होते हुए भी असाम्प्रदायिक स्वतन्त्र और शाश्वत तथ्यों का ही वर्णन कविता में किया है। इनकी वाणी में हमें सन्त कवियों की परम्परा मिलती है। भाषा की सरलता एवं सजीवता, गम्भीर विचारों एवं शाश्वत सत्यों की अभिव्यक्ति, ऐक्य का समर्थन और संसार की असारता तथा अज्ञानता का परिचय कराने के लिए संत-साहित्य के वही परिचित शब्द और प्रतीक इनकी कविता में भी प्रयुक्त हुए हैं। राम-रहीम, अल्ला-जोगी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, महल, मन्दिर, दश-द्वार, भस्म, विभूति, सुन्नत, पिया, प्यारी, अलख निरंजन, ज्ञानी, गुरु, साधु, संतगुरु, अजर, अमर इत्यादि शब्द भारत-व्यापी संत-परम्परा के ही प्रतीक हैं। इनकी कविता को साम्प्रदायिकता ने स्पर्श तक नहीं किया है।

यशोविजय

इनका जन्म पाटण के समीप गाँव कानहेडु में एक वैश्य परिवार में हुआ था। ये आनन्द घन के समकालीन थे। इनके पिता का नाम नारायण व्यवहारी और माता का नाम सौभाग्यवती था। इनके गुरु का नाम नयविजय वाचक था।

यशोविजय सुप्रसिद्ध कवि होने के साथ-साथ उच्च कोटि के विद्वान भी थे। इनकी शिक्षा-दीक्षा आगरे तथा वाराणसी में हुई थी। इन्होंने व्याकरण और अलंकार शास्त्र का ठोस अभ्यास किया था। कहा जाता है कि काशी की विद्वत्सभा में विजेता होकर इन्होंने न्याय विशारद की उपाधि प्राप्त की थी। वहाँ से अहमदाबाद पहुँचने पर गुजरात के तत्कालीन सुलतान महोबतखां ने इनका भव्य स्वागत किया। इनका स्वर्गवास बड़ौदा के समीप एक गाँव में हुआ था। इस गाँव में इनकी समाधि भी है।

इनकी विद्वत्ता, प्रतिभा और ठोस अध्ययन को देखते हुए कई लोग इन्हें जैन समाज का दूसरा हेमचन्द्राचार्य कहते हैं। इन्होंने गूढ़ दार्शनिक विचारों को बहुत ही सरल वाणी में व्यक्त किया है। इनके ३७ के लगभग हिन्दी एवं गुजराती ग्रन्थ अब तक प्रकाश में आ चुके हैं। इन्होंने प्रासादिक एवं मधुर शैली में संगीतात्मक पद, भजन एवं रास भी लिखे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विनय विजय

गुजरात के निवासी जैन कवि विनय विजय ई० सन् १७ वीं शती में वर्तमान थे।[1] इनके पिता का नाम तेजपाल और माता का नाम राजश्री था। कीर्तिविजय उपाध्याय इनके गुरु थे। ये संस्कृत, हिन्दी एवं जैन आगमों के प्रकांड पंडित थे। भाषा (हिन्दी) में इन्होंने अनेक स्तुतियां बनाई हैं। जिस प्रकार जयदेव ने शृंगार रस के अद्भुत ग्रन्थ गीत-गोविन्द का प्रणयन किया है उसी प्रकार विनय विजय ने शांतरस के एक संस्कृत ग्रंथ शांत सुधारस का प्रणयन किया है।

प्रारम्भ में ये जैन मत की ओर प्रवृत्त हुए। पर धीरे-धीरे ये अन्य संत कवियों की तरह ही अंतर्मुखी हो गये थे और इनकी भाषा की कविता देखने से प्रतीत होता है कि इनका संकुचित दृष्टिकोण विस्तृत हो गया था और ये समदर्शी तथा सर्वधर्मसमन्वयी हो गये थे।

प्राणनाथ

प्रणामी सम्प्रदाय के द्वितीय प्रसिद्ध गुरु प्राणनाथ ने काठियावाड़ प्रदेश के जामनगर नामक स्थान के एक धनी क्षत्रिय परिवार में ई० सन् १६१८ में जन्म लिया था[2] और इनकी मृत्यु सन् १६९५ में हुई। इनके पिता क्षेमजी जामनगर के जमींदार थे। बहुत छोटी उम्र में ही विरक्त होकर आप घर से निकल पड़े और देश-भ्रमण एवं सत्संग से जल्दी ही अरबी, फारसी, हिन्दी तथा संस्कृत में बहुत ही निपुणता प्राप्त कर ली। सभी भाषाओं के धर्मज्ञान प्राप्त करके अपने ज्ञान का विकास किया।

सिंध, गुजरात, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र एव मालवा में इन्होंने बहुत भ्रमण किया। इनके गुरु के बारे में निश्चयपूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इन्हें अमरकोट के देवचन्द नामक साधु से धर्म विषयक प्रेरणा मिली थी ऐसा कहा जाता है। प्राणनाथ अरब भी गये थे। तदनंतर वहाँ से वापस आकर वे थोड़े समय के लिए घिरोल (धौलपुर) के राजा के दिवान भी रहे थे। पर गुरु की आज्ञा से तुरन्त ही इस पद को छोड़ दिया था। अपने गुरु के निधन के पश्चात ये गद्दी के अधिकारी हुए। पोरबंदर, कच्छ, सिंध आदि प्रदेशों में भ्रमण करते हुए अंत में ये सूरत जाकर ठहरे। यहाँ आपने गुजराती में कलश नामक पुस्तक लिखी। यहाँ से चलकर इन्होंने अनेक राजा-महाराजाओं को अपना शिष्य बनाया। महाराज छत्रसाल इनके प्रधान शिष्य थे।

---

[1] भजनसंग्रह धर्मामृत—सं० पं० बेचरदास।

[2] महाराजा छत्रसाल बुन्देला—डा० भगवानदास गुप्त, पृ० १०४।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इनकी रचनाओं की संख्या लगभग १४ बताई जाती है।[१] सभी रचनाएँ पद्य में हैं। इनके ग्रन्थों में 'कलज मे शरीफ' नामक ग्रन्थ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।[२] यह ग्रन्थ धामी पन्थ का प्रधान ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की भाषा में गुजराती, सिन्धी, उर्दू एवं हिन्दी का सम्मिश्रण है। अधिकांश रचनाएँ हिन्दी में हैं। उनकी दृष्टि सर्वधर्मसमन्वय की ओर गई थी। ये बड़े ही अच्छे साधु थे। इन्होंने बुन्देलखण्ड में जातीयता जाग्रत की थी। इनकी स्फुट कविता बहुत सुन्दर जोरदार और भक्तिपूर्ण है।[3]

इन्द्रामती

प्राणनाथ की पत्नी इन्द्रामती ने भी कई रचनाएँ की हैं। पर दोनों की रचनाएँ संयुक्त हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि कौन किसकी रचना है।[४] ये रचनाएँ साहित्यिक दृष्टि से सामान्य कोटि की हैं। कविता में सिद्धान्तों की चर्चा ही विशेष रूप से है। अतः काव्य में सरसता नहीं है। (३५४।१) द्वि० त्रे० रि० में प्राणनाथ की पदावली प्राप्त हुई है जिसमें इनकी स्त्री इन्द्रामती बाई की भी कविता है। हिन्दी में लिखने वाली यह दूसरी स्त्री कवि है।[५]

अखो

अखो अहमदाबाद के निकटवर्ती जेतलपुर गाँव का निवासी था। तदनन्तर वह अहमदाबाद आकर रहा था। वह परजिया सुनार जाति का था एवं अपने व्यवसाय में बहुत ही प्रसिद्ध था। दक्ष एवं विश्वास मनुष्य को ही सौंपा जा सके ऐसा टकसाल का कार्य उन्हें सौंपा गया था। प्रामाणिक होने पर भी उस पर कई आरोप लगाये गये। अतः संसार पर से उसकी प्रीति कम होती चली। अपनी एक धर्मभगिनी ने भी उसको एक गहना बनाने के लिए दिया था। अखो ने अपनी ओर से सोना जोड़कर वह गहना बनाया। फिर भी उसकी धर्मभगिनी को उस पर अविश्वास ही हुआ। संसार के ऐसे कटु अनुभवों से वह विरक्त को गया। इन दोनों प्रसंगों का वर्णन श्री कृष्णलाल मोहननाल झवेरी ने 'माइल स्टोन्स इन गुजराती लिट्रेचर' में एवं श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने 'गुजरात एण्ड इट्स लिट्रेचर में दिया है। पर 'गुजराती

---

१ उत्तर भारत की सन्त परम्परा—परशुराम चतुर्वेदी, पृ०५२८।

२ महाराजा छत्रसाल बुन्देला—डा० भगवानदास गुप्त, पृ० १०७।

३ मिश्रबन्धु विनोद (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० १३९।

४ मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ—डा० सावित्री सिन्हा, पृ० ८३।

५ मिश्रबन्धु विनोद, द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ४४०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
साहित्य जी रूपरेखा' के लेखक श्री विजयराय वैद्य एवं 'अखो : एक अध्ययन' के लेखक श्री उमाशंकर जोषी इन प्रसंगों को प्रमाणित नहीं मानते।

श्री उमाशंकर जोषी ठोस अध्ययन के आधार पर इसके काल को ई० स० १५९१-१६५६ तक मानते हैं एवं उसके काव्य रचना का समय स० १६४१ से स० १६४९ तक होगा ऐसे निष्कर्ष पर आते हैं।[१]

अखोजी ने गोकुल जाकर गोकुलनाथ को अपना गुरु बनाया। फिर भी उनके मन का समाधान नहीं हुआ। ऐसी लोककथा प्रचलित है कि सच्चे गुरु की खोज में वे काशी गये थे और वहाँ ब्रह्मानन्द नामक साधु से ज्ञान प्राप्ति की। अखो की कविता में कई बार 'ब्रह्मानन्द' शब्द आता है और कई विद्वानों के अभिमत से यह शब्द उनके गुरु के लिए ही प्रयुक्त किया गया है। पर वस्तुतः यह गलत है।[२]

अद्वैत तत्त्वज्ञान को अभिव्यक्ति करने वाले निम्नलिखित काव्य ग्रन्थ उन्होंने लिखे हैं—अखेगीता, चित्त विचार संवाद, पंची करण। ये ग्रन्थ गुजराती में हैं।[3] कैवल्यगीता, 'कक्को, वार, महीने, कुंडलियाँ, छप्पय, साखी, दूहे एवं कृष्णउद्धव सम्वाद में उनकी प्रकीर्ण कविताओं का संग्रह है। ये रचनाएँ भी गुजराती में ही हैं। इनके अतिरिक्त 'संतप्रिया' एवं 'ब्रह्मलीला' हिन्दी रचनाएँ हैं। उन्होंने कई साखी एवं पद भी हिन्दी में लिखे हैं।[४]

इन सब रचनाओं का प्रधान रस एक ही है और वह है ब्रह्मरस। 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः'। यह एक ही पंक्ति उनकी कवित्व-प्रवृत्ति का लक्ष्य हो और अखो के लिए कविता इसे व्यक्त करने का एक साधन ही हो ऐसा प्रतीत होता है।[५]

'अनुभव बिन्दु', 'अखेगीता', 'पद' एवं छप्पै साहित्यिक दृष्टि से अधिक महत्त्व के हैं। 'अनुभव बिन्दु' नाम से प्रतीत होता है कि अखो बिन्दु नाम से अभिहित उपनिषद एवं 'सिद्धान्त बिन्दु' जैसे वेदान्तग्रन्थ से परिचित होगा। ४० छप्पे में परब्रह्म के स्वरूप एवं विस्तार विलास, काल, माया एवं उसे दूर करने के उपाय, माया का प्राबल्य, कैवल्य ईश्वर एवं जीव का अन्तिम

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १२९।
२ वही, पृ० १३०।
3 गुजरात एण्ड इट्स लिट्रेचर—के० एम० मुंशी, पृ० २३१।
४ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १३०।
५ वही, पृ० १३१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अभेद, उस 'महापद' के 'अनुभव' के साधन इत्यादि का वर्णन साहित्यिक शैली में एवं समुचित अलंकारों का प्रयोग करके किया गया है।

'अखेगीता' उनकी परिणत प्रज्ञा का फल है। अविद्यावश जीव की दुर्दशा, माया की लीला, भक्त जीवन मुक्त ज्ञान एवं विदेही के लक्षण, ब्रह्मवस्तु निरूपण, माया का स्वरूप एवं उससे ब्रह्मांड की उत्पत्ति, शून्यवाद एवं अन्य दर्शनों की न्यूनताएँ, सत्संग एवं सद्गुरु का माहात्म्य, परमतत्त्व का अद्वैत स्वरूप, ब्रह्मानुभूति का आनन्द—इस विषय सूची से ही प्रतीत होता है कि इस कृति में अपने पूरे तत्त्वज्ञान को भरने की अखो ने कोशिश की है। 'अखेगीता' मध्यकालीन गुजराती ज्ञानाश्रयी कविता का एक उच्च शिखर उल्लेखनीय सिद्धि है। 'अखेगीता' में तत्वज्ञान स्वयं काव्य अथवा काव्य स्वयं तत्त्वज्ञान हो गया है।[1]

अखोजी की कविता का सच्चा विलास उनके पदों में देखा जा सकता है। इन पदों में भावों की उत्कटता एवं भाषा का वैभव विशेष उल्लेखनीय है। 'आज आनन्द मारा अंगमां ऊपज्यो परिब्रह्मनी मुने भाल लागी,' 'शां शां रूप वखाणुं संतो शां शां रूप बखाणुं,' 'हरिकुं हेरतां रे सखि में रे हेराणी,' 'आली सब सखियन में कवन शाम,' 'आली सघन कुंज में खेलन जाहें,' 'लाजू लाज न रहींए' इत्यादि पदों से प्रतीत होता है कि उसके केवलाद्वैत ने उसके वैष्णवी संसार को नहीं मिटा दिया था।[2] गुजराती एवं हिन्दी में लिखे गये बहुत से पद उत्तर हिन्द के कबीर आदि के भजन साहित्य के परिचय का एवं अखो के काशी निवास का फल होगा। अखो ने 'संतप्रिया', 'ब्रह्मलीला' तथा कुंडलिया एवं झूलण हिन्दी में ही लिखे हैं। भालण-मीरां के समय से दलपतराम तक गुजराती कवियों ने हिन्दी में भी काव्य रचना की है। अतः अखो की हिन्दी रचनाओं से हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए।[3] अखो का उल्लेख मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग) में भी मिलता है।[4] मिश्रबन्धुओं के अभिमत से इनकी कविता सात्विक हुआ करती थी।

सन्तप्रिया—सन्तप्रिया में कवि अजन्मा ब्रह्म को अपने काव्य का विषय बनाकर कहते हैं :

---

१ **अखो : एक अध्ययन**—उमाशंकर जोशी, पृ० २४१।

२ **गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)**—अनन्तराय रावल, पृ० १३३।

३ **वही**, पृ० १३४।

४ **मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग)**— मिश्रबन्धु, पृ० ३४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आद्य निरंजन आप अज, त्यां किनो अध्यारोप।
अर्ध मात्रा अखो कहे, कीनो प्रगट गोप॥
ताही को विस्तार सद्य, भाषा कवित करके कहुँ।
हे चिद् अरणव अगाध, हुँ चीडी चंच भरी के कहुँ॥[१]

उसी काव्य में गुरु की महिमा बताते हुए कवि कहते हैं :

गुरु गोविन्द गोविन्द सोही गुरु, गुरु गोविन्द गने नहि न्यारा॥[२]

सन्तप्रिया में धन, तन, स्त्री एवं माया में लुब्ध पुरुष का सुन्दर चित्र भी खिंचा है :

धन-तन त्रियासुं ऐसे जडयो मन, जैसे पडयो मीन के मन पानी।
धन, तन, त्रिया सों छांड़ जात है, मन की प्रीति न होय पुरानी॥
एही अविद्या घेर्यो दशोदश, ज्युं जल डूबत नाव भरानी।
अब कर करतार शब्द को खेवा, जो लों सोनारा भीने की भान न जानी॥[3]

उसी काव्य में तन, धन एवं जोबन की व्यर्थता बताते हुए कवि मन को उपदेश देते हैं :

रे मन ! राम रटे न पहेचान्यो, तुं कवन निन्द सोयो रे गुमानी।
ओसको नीर यह तन धर जोबन, ज्युं धन में बिजली मुसकानी॥
ताही में मोती हुँ पोई ले प्यारे, सई से सद्गुरु सन्त ज्ञानी।
हन्सकला गुरु देवे सोनारा, न्यारा रहे दूध पानी का पानी॥[४]

सन्तप्रिया में ही ब्रह्मज्ञान का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं :

ब्रह्म ज्ञान बिना सुख की सीहीर नपाये, ज्ञान बिना संसे नहीं छूटे।
ज्ञान बिना देह को अपराधी, ज्ञान बिना नित्य ये सब लूटे॥
ज्ञान बिना श्वान शुकर जे सो, ज्ञान आयो भ्रम को भांड फूटे।
ज्ञान सो गोविन्द गोविन्द सो ही ज्ञान, ऐसे अखो कहे माया से टूटे।[५]

इस तरह दोहरे एवं कवित्तों का प्रयोग करके कवि ने अपनी विशिष्ट

---

[१] अखानी वाणी (चतुर्थ आवृत्ति), प्र० सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० २६६।

[२] वही, पृ० २६७।

[3] वही, पृ० २६९।

[४] अखानी वाणी (चतुर्थ आवृत्ति)—प्र० सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० २६९।

[५] वही, पृ० २७१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शैली में तत्त्वज्ञान की विभिन्न उलझनों को सुलझाया है। उनकी भाषा एवं शैली किसी भी हिन्दी कवि से टक्कर ले सकती है।

ब्रह्मलीला—ब्रह्मलीला काव्य में चौखरा एवं छन्द का प्रयोग किया गया है। इस काव्य में प्रारम्भ में ब्रह्म को प्रणाम करते हुए वे कहते हैं :

ऊँ नमो आदि निरन्जन राया, जहाँ नहि काल कर्म अरु माया।
जहाँ नहिं शब्द उच्चार न जन्ता, आपे आप रहे उर तन्ता ॥[1]

इस छोटे काव्य में ब्रह्म, माया, अध्यास एवं प्रकृति पुरुष के विविध विलासों का कवि ने वर्णन किया है :

ऐसो रमन चाल्यो नित्य रासा, प्रकृति पुरुष को विविध विलासा।
जेसें भाँत रची चित्रशाला, नाना रूप लखे ज्यों विशाला ॥[2]

ब्रह्म लीला का गान करने वाला भाग्यवान है और अपने हृदय में ही वह हरि को प्राप्त करेगा यह कहते हुए कवि ब्रह्मलीला की अन्तिम पंक्तियों में कहते हैं :

रज्जु लगी सो भुजंग भ्रम हैं, बिन रज्जु केसो अहि।
प्रीछीवे को प्रताप बड है, जान ही बिरला जन ॥
आगें पाछै ओर नाहीं, आप बिलस्या आपना।
कहे अखा ए ब्रह्मलीला, बड़भागी जन गाय गो।
हरि हीरा अपने हृदय में, अनायास सों धायगो ॥[3]

'ब्रह्मलीला' काव्य भी साहित्यिक दृष्टि से सर्वाङ्ग सुन्दर है। इन दो काव्यों के अतिरिक्त कई भजन भी उन्होंने हिन्दी में लिखे हैं जिनमें 'अक्ल कला खेलत नर ज्ञानी' बहुत ही प्रसिद्ध है और इस भजन ने 'आश्रम—भजनावलि स० नारायण मोरेश्वर खरे) में भी स्थान प्राप्त कर लिया है।[4] उनके कई पदों एवं भजनों की हस्तलिखित प्रतियाँ गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद में मौजूद हैं।

अखो गुजराती का एक ही तत्त्वज्ञ कवि है। सारे भारत में भी उसकी कक्षा का कवि, बारबार या जगह-जगह पर नहीं मिलता। हाँ एक कबीर की

---

१ **अखानी वाणी (चतुर्थ आवृत्ति)**—सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० २९२।
२ **वही**, पृ० २९४।
३ **वही**, पृ० २९७।
४ **आश्रम-भजनावलि (आवृत्ति १६वीं)**, पृ० ११९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बात अलग है। पर कबीर जैसे तो—हमारे देश में ही क्यों—सारी दुनिया में भी कितने हुए होंगे यह कह नहीं सकते।[1]

अखो तो सम्प्रदाय में नहीं मानता था।[2] फिर भी भड़ोच के जम्बुसर तहसील के कहानवा गाम में उनके नाम का सम्प्रदाय चल रहा है। श्री सागर जी ने इनकी कविता संशोधित की है और गुजरात विद्या सभा ने प्रकाशित की है। अखो समन्वयदर्शी कवि है। वैसे तो प्रत्येक संत कवि समन्वय के लिए ही कोशिश करता है। अखो एक ऐसा मध्यकालीन कवि है, जो गुजराती साहित्य में ही नहीं, पर सारे देश की साहित्य परम्परा में महत्त्व के स्थान का अधिकारी है।[3]

शामल भट्ट

शामल भट्ट प्रेमानन्द के पुत्र वल्लभ का समकालीन एवं प्रतिस्पर्धी था। वह अहमदाबाद के बेगणपुर (आज का गोमतीपुर) का श्रीगौड़ मालवी ब्राह्मण था। उसके पिता का नाम वीरेश्वर, माता का नाम आनन्दी बाई एवं गुरु का नाम नाना भट्ट था।[4] उस काल के शिक्षित वर्ग की तरह उसने संस्कृत एवं ब्रजभाषा का अच्छा अभ्यास किया था। उस समय अहमदाबाद में मुगल बादशाहों का प्रभुत्व होने से दरबार की भाषा फारसी थी। अतः फारसी भाषा का अभ्यास भी उन्होंने किया था। कवि पद्मनाभ के बाद उनके ग्रन्थों में ही फारसी भाषा के शब्द पाये जाते हैं।[5]

उनके नन्दबत्रीसी, पंचदंड, विद्याविलासिनी जैसी कथाओं से प्रतीत होता है कि उन्होंने जैन कवि रचित कथाओं एवं प्रबन्धों का भी अच्छा अभ्यास किया होगा।

खेड़ा जिले के मातर तहसील के सुंज गाँव के निवासी रखीदास पटेल उनके आश्रयदाता थे। उन्होंने अपने आश्रयदाता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उन्होंने लगभग २४ ग्रन्थ गुजराती भाषा में लिखे हैं :

---

१ अखानी वाणी (चतुर्थ आवृत्ति), 'गरवो ज्ञाननो बडलो' में उमाशंकर जोषी, पृ० २२।

२ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० ६७।

३ अखानी वाणी (चतुर्थ आवृत्ति), 'गरवो ज्ञाननो बडलो' में उमाशंकर जोषी, पृ० ८।

४ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १७३।

५ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तंभो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० ११३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१. बत्रीस पूतलीनी वार्ता, २. सूडा बहोतेरी ३. शिवपुराण—ब्रह्मोत्तर खण्ड ४. रेवाखण्ड ५. बोडाणाख्यान, ६. अंगदविष्टि, ७. पद्मावती, ८. नन्द बत्रीसी ९. रावण मन्दोदरी, १०. उद्यमकर्म सम्वाद, ११. शामल रत्नमाला, १२. विनेचटनी वार्ता, १३. अभराम कुलीना शलोको या रुस्तम बहादुर नो पवाडो, १४. बरास कस्तुरी, १५. चन्द्र चन्द्रावती, १६. काली माहात्म्य, १७. शुकदेव आख्यान, १८. सुन्दर का मदार, १९. द्रोपदी वस्त्र हरण (कर्तृत्व शंकास्पद), २०. भोज कथा, २१. पदरमी विद्या, २२. रखीदास चरित्र, २३. विश्वेश्वराख्यान २४. मदनमोहना।[1] इनमें से प्रथम सात ग्रन्थ तो रखीदास के आश्रय में लिखे थे।

उनके कई ग्रन्थ वर्णनात्मक एवं कथात्मक हैं तो कई ग्रन्थ बोधात्मक[2]। 'अंगदविष्ट' में राम और अंगद एवं रावण और अंगद के बीच के सम्वाद उन्होंने हिन्दी के करवाये हैं। नरसिंह मेहता, प्रेमानन्द, एवं दयाराम की तरह ही शामल भट्ट गुजराती साहित्य की परम प्राज्ज्वल प्रतिभा है।

विश्वनाथ जानी

विश्वनाथ जानी के चार काव्य 'मोसाला चरित्र', 'सगालशा चरित्र', 'प्रेम पचीसी' एवं 'चातुरी चालीसी' मिलते हैं। 'सगालशा चरित्र के अन्त में रचना का वर्ष सम्वत् १७०८ मिलता है, अतः कवि सम्वत् १७०८ में विद्यमान था यह निश्चित होता है।[3] मोसाला चरित्र के—

'गोविन्द कृपाए ग्रन्थ बान्ध्यो प्रेम पाटण देश'

इस उल्लेख से वह पाटण का निवासी था ऐसा प्रतीत होता है। 'सगालशाचरित्र' एवं 'चातुरी चालीशी' की केवल एक-एक प्रतिलिपि पाटण में से ही प्राप्त हुई है। इस पर से उसका निवासस्थान पाटण होने का मत दृढ़ होता है।[4] प्रेम पचीशी का १८ वां पद ब्रजभाषा में है। 'प्रेम पचीशी' में भागवत के अभिमतानुसार कवि ने उद्धवसन्देश दिया है।

मुकुन्द

मुकुन्द द्वारका का गूगली ब्राह्मण था। उसने 'भक्तमाल' नामक उत्तम

---

१ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तंभो (दूसरा संस्करण)—कृष्णलाल मो० झवेरी, पृ० ११७।

२ वही, पृ० ११७।

३ सत्तरमा शतकनां प्राचीन गुर्जर काव्य—डा० भोगीलाल ज० सांडेसरा, पृ० ३१।

४ वही, पृ० ३१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रन्थ ई० स० १६६५ में लिखा था।[1] हिन्दू-मुसलमान दोनों के पूजनीय कबीर और गोरख के चरित्र उसने लिखे हैं। उनके जीवन के बारे में भी उसमें विशदता से चर्चा की गई है। 'कबीर चरित्र' एवं 'गोरखचरित्र' से उनके उच्च कोटि के ज्ञान से हम परिचित होते हैं। 'कबीर-चरित्र' में कबीर विषयक सभी लोककथाओं का प्रयोग करके काव्य को सरस बनाया है। गजराती में से हिन्दी में और हिन्दी में से गुजराती में वह आसानी से चला जाता है। इससे इसके हिन्दी भाषा के प्रभुत्व से हम परिचित होते हैं। 'कबीर चरित्र' में हिन्दी का अधिक उपयोग हुआ है। हिन्दी के व्यासंग से मुकुन्द ने शब्दालंकारों का ठीक ठीक प्रयोग किया है।[2]

शम्सवली उल्लाह (१६६८-१७४४ ई०)

आप उर्दू के आदि कवि माने जाते हैं। उनके वतन के सम्बन्ध में उर्दू के इतिहासकारों में काफी मतभेद है। कुछ लोग इन्हें औरंगाबाद का रहने वाला बताते हैं। परन्तु डार साहब के अभिमत से ये गुजराती थे :

बली ने अपनी उम्र का एक बड़ा हिस्सा सैजे सियाहत में गुजारा है और उसी सियाहत के दौरान में वे बरसों औरंगाबाद में भी रहे हैं। इसी बिना पर उनके मुतल्लिक झगड़ा शुरू हो गया। दक्खनी कहते हैं कि वली दक्खनी हैं। इसके खिलाफ गुजरातियों का दावा है कि वे बहुत हद तक इस बात में कामयाब रहे हैं कि आप वली को शाह बजी उद्दीन के खानदान का एक फर्द साबित कर दिखायें। वली का इन्तकाल स० हि० १११८ में अहमदाबाद में हुआ और इन्हीं के खानदानी कब्रस्तान में जो नीली गुम्बद के नाम से मशहूर है, दफन भी किये गये।[3]

श्री रामनरेश त्रिपाठी ने भी वली की मृत्यु सन् १७४४ में अहमदाबाद में मानी है और लिखा है कि उन्हें गुजरात अधिक प्रिय था।[4]

---

[1] गु० साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (दूसरा संस्करण)—कृष्णलाल मो० झवेरी, पृ १३२।

[2] गुजराती साहित्य (मध्यकालीन) (द्वितीय संस्करण)—अनन्तराय रावल, पृ० १४३।

[3] प्राणलाल किरपाराम देसाई सन्मान अंक में जनाब डार साहब का लेख, पृ० १४३।

[4] कविता कौमुदी, भाग ४ (चौथा संस्करण), पृ० १२९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बली की कविता की भाषा में भी इधर-उधर गुजराती देशज शब्द मिल जाते हैं। इससे भी यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे गुजराती ही होंगे या गुजरात में लम्बे अरसे के लिए रहे होंगे।

शुजाउद्दीन नूरी

शुजाउद्दीन नूरी गुजराती का पहिला कवि माना जाता है, जो फैजी का मित्र और अकबर का समकालीन था।[1] यह सुलतान अबुल हसन कुतुबशाह गोलकुण्डा वाले के वजीर के पुत्र का शिक्षक था। इसके कुछ शैर 'कायम' के तजकिरे में मिलते हैं। अब यह विचारणीय है कि वास्तव में नूरी प्रथम कवि हैं या नहीं। अबुलहसन कुतुबशाह सन् १६७२ ई० में गद्दी पर बैठा। इसका प्रथम वजीर सैयद मुजफ्फर केवल एक वर्ष तक इस पद पर रहा। दूसरा वजीर मदन पंडित था, जो इस पद पर बारह वर्ष तक रहा। इस वजीर के मारे जाने के एक वर्ष के भीतर ही गोलकुण्डा राज्य का अन्त हो गया।..... अब नूरी इन्हीं वजीरों में से किसी के पुत्र के शिक्षक माने जा सकते हैं। मुहम्मद कुली कुतुबशाह सन् १५८० ई० में गद्दी पर बैठा तथा सन् १६११ ई० में मरा था। इसने एक दीवान लिखा है। नूरी इसके पहिले के कवि माने जाते हैं।[2] यदि ये इनके समवयस्क भी रहे हों तो अबुलहसन के समय इनकी अवस्था लगभग एक सौ बीस वर्ष के होती है। ऐसा असम्भव न होते हुए भी एक कवि को, जिसके कुछ ही शैर प्राप्त हैं, पहिला स्थान देना और जिसका समग्र दीवान प्राप्त है तथा जिसकी मृत्यु के बाद भी पहिला भाग लगभग पचहत्तर वर्ष के जीवित रहा हो, उचित नहीं जान पड़ता। 'नूरी' कवि के जीवन की प्राप्त सामग्री बहुत ही कम तथा भ्रमोत्पादक है। फैजी की मृत्यु सन् १५९४ ई० में हुई थी, जिसके यह मित्र कहे जाते हैं और जिसकी मृत्यु के लगभग ९० वर्ष बाद तक जीवित बतलाए जाते हैं। इस विवेचना से यही स्पष्ट जान पड़ता है कि 'नूरी' के जीवन पर विशेष प्रकाश न पड़ने तक उसे प्रथम कवि मानना मुहम्मद कुली कुतुबशाह के साथ अन्याय करना मात्र है।[3]

---

१ उर्दू साहित्य का इतिहास (तृतीय संस्करण)—ब्रजरत्नदास, पृ० ३०।
२ वही, पृ० ३१।
३ वही, पृ० ३१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण ६

गुजरात के १८वीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

इस शताब्दी के हिन्दी सेवी कवियों में महेरामणसिंह, राजा साहब अमरसिंहजी, महाराव लखपतिजी, दुर्गेश्वर, चांदण शासन, गौरीबाई, जसुराम, कवीश्वर, दलपतिराय और बन्शीधर, केवलराम, धीरो, प्रीतमदास, खुमान बाई, भोजा भगत, मुक्तानन्द, निष्कुलानन्द, सहजानन्द स्वामी, ब्रह्मानन्द, प्रेमानन्द स्वामी (प्रेम सखी), गंजन, दयाराम, गिरिधर, सच्चिदानन्द, किशनदास, हर्षदास या हरखजी मेहता मुख्य हैं। इनमें से महेरामणसिंह, जसुराम, दलपतिराय एवं बन्शीधर, दुर्गेश्वर, चांदण शासन, गंजन एवं दयाराम से हिन्दी के विद्वान् थोड़े-बहुत परिचित हैं ही। पर इस प्रबन्ध में प्रथम बार ही इनकी कृतियों की सम्यक् एवं विस्तृत आलोचना की गई है। इन कवियों के अतिरिक्त जिन कवियों की यहाँ समीक्षा की गई है, वे हिन्दी जगत के लिए बिल्कुल नये ही हैं, क्योंकि इनकी रचनाएँ हिन्दी भाषी प्रदेश से काफी दूर होने से तथा गुजराती लिपि में छिपी होने से हिन्दी के विद्वानों ने इनकी हमेशा के लिए उपेक्षा ही की। महात्मा गान्धी जी ने जब 'आश्रमभजनावलि' प्रकट कराई तब इसमें गुजरात के हिन्दी कवियों की काफी रचनाएँ थीं। इस तरह प्रथम बार ही हिन्दी के विद्वानों को प्रतीत हुआ कि गुजरात के कई कवियों ने भी हिन्दी काव्य साहित्य को अपनी विशिष्ट देन दी है।

CC-0. Agamnigam Foundation. Digitized by eGangotri Research Foundation, Chandigarh

इन कवियों में से महेरामणसिंह, राजा साहब अमरसिंहजी, महाराव लखपतिजी, राजा थे जिन्होंने हिन्दी में काव्य रचना करने के साथ-साथ ही अपने दरबार में कई भाट एवं चारणों को आश्रय दिया था और ये भी डिंगल में तथा हिन्दी में हास्य, रौद्र, करुण, शृङ्गार इत्यादि रसों से युक्त रचना करने में प्रवीण थे। चांदण शासन राज्याश्रित कवि थे। धीरो, प्रीतमदास, खुमानबाई, भोजाभगत सन्तमत के कवि हैं जिन्होंने गुजराती भाषा के साथ-साथ ही हिन्दी काव्य साहित्य की भी भक्ति के उन्मेष में महती सेवा की है। इन कवियों की भाषा में कभी-कभी गुजराती भाषा एवं गुजराती लोकोक्ति तथा मुहावरे का प्रयोग पाया जाता है, फिर भी इनकी कविता बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इनकी कविता में हृदय के सर्वोच्च भावों के दर्शन होते हैं।

दयाराम तो गुजरात के हिन्दी कवियों में अवश्यमेव मूर्धन्य हैं और हिन्दी के आलोचकों एवं इतिहासकारों ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। यही उनकी महत्ता का द्योतक है। अब इन सभी कवियों की कविता की विस्तृत समीक्षा द्रष्टव्य है।

महेरामण सिंह

राजकोट के जाड़ेजा राजकुमार महेरामण सिंह ने 'प्रवीण सागर' नामक एक वृहद् महाकाव्य की हिन्दी में रचना की है। हिन्दी के बहुत से इतिहासकारों ने गोविन्द गिल्लाभाई की कृतियों में प्रवीणसागर का नाम भी लिख दिया है[1] पर ये तो प्रवीण-सागर के संग्रहकर्त्ता, सम्पादक और टीकाकार ही हैं। इस ग्रन्थ का उल्लेख मिश्र बन्धुओं ने निम्न प्रकार से किया है :

नाम—(१०३३) महेवा प्रवीन या कला प्रवीन[1]

ग्रन्थ—प्रवीन सागर

कविता काल— १८३७

और

नाम—(२४१५/१)—महरामण जी[2]

ग्रन्थ—प्रवीण-सागर

विवरण—राजकोट निवासी। यह ग्रन्थ पूर्ण होने के पहले ही आपकी मृत्यु हो गई। अतः सम्वत् १९४५ में गोविन्द गिल्लाभाई ने इसे पूर्ण किया।

इसके अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के इतिहासों में इस ग्रन्थ का उल्लेख नहीं मिलता। मिश्र बन्धुओं ने शायद इस ग्रन्थ को नहीं देखा होगा। संभवतः

---

१ मिश्रबन्धु विनोद, द्वितीय भाग (द्वितीय आवृत्ति)—मिश्रबन्धु, पृ० ८२०।

२ मिश्रबन्धु विनोद, तृतीय भाग—मिश्रबन्धु, पृ० ५२५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसीलिए इन्होंने एक ही ग्रन्थ का उल्लेख अलग-अलग कवियों के नाम से किया है।

महेरामण सिंह ने अपने छः मित्रों की सहायता से इस ग्रन्थ को रचा था। निम्नलिखित छन्द से इस बात की पुष्टि होती है—

मित्र सात मिल कें रच्यो, प्रवीन सागर ग्रंथ।
तिन में दरसायो भलो, प्रेम नेम को पंथ॥

—लहर ८४, छंद १४

इन सात में एक तो महेरामण सिंह स्वयं थे। शेष छः मित्रों के सम्बन्ध में कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती है। जनश्रुति के आधार पर छः मित्रों की नामावलि ये है[1] :

१. देवीदान कवि—राजकोट के साधु और कवि
२. जो सो लांगा बदरो—राजकोट के दरबार का चारण
३. जीवन विजय पूज्य—कवि
४. पुरोहित अदागरजी—विनोदी
५. लालजी सुनार—उत्तर भारत के निवासी, संगीतज्ञ
६. शेख रहीम—सिंध निवासी घोड़ों का सौदागर, उर्दू फारसी का जानकार

इन सात मित्रों के अतिरिक्त प्रवीण सागर की रचना में लींबड़ी की राजकुमारी सुजानबा का भी नाम लिया जाता है। जिन छंदों में सागर को संबोधित किया है वे सुजानबा के लिखे माने जाते हैं।

साथ ही इस ग्रंथ की रचना में गुजराती के सुप्रसिद्ध कवि दलपतराम डाह्याभाई और गोविन्द भाई गिल्लाभाई का भी हाथ है। इन दोनों ने अलग-अलग इस रचना का सटीक संपादन किया है और अंतिम १२ लहरों (सर्गों) में जहाँ कहीं आवश्यकता हुई वहाँ अपने-अपने ढंग से मौलिक रचनाएँ करके इस अपूर्ण ग्रन्थ को पूरा किया है।

प्रवीण सागर की कथा—इस ग्रन्थ की कथा संक्षेप में इस प्रकार है—शंकर भगवान की आज्ञा से एक बार कैलास में शिवरात्रि के दिन महोत्सव हुआ। देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व इत्यादि इसमें भाग लेने के लिए एकत्रित हुए। इस महोत्सव में विचित्रानंद नामक एक शिवगण अपनी पत्नी चित्रकला के प्रेम में रत होने के कारण आ न सका। इसकी अनुपस्थिति भगवान शंकर की

---

[1] गुजराती प्रेस द्वारा प्रकाशित प्रवीणसागर की पुरवणी (परिशिष्ट)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अवज्ञा मानी गई। विकटानंद नामक एक शिवगण ने इस अवज्ञा की ओर शंकर भगवान का ध्यान खींचा तो इन्होंने क्रुद्ध होकर दंपती को शाप दिया। अतः दीर्घकाल तक विरह-वेदना सहन करने के लिए इस दंपती को मृत्युलोक में जन्म लेना पड़ा। विचित्रानंद के साथ इनके छः अतरंग मित्रों ने भी मृत्युलोक में जन्म लिया और चित्रकला तथा उसकी सखी पुष्पावती ने भी मर्त्य लोक में जन्म लिया। विचित्रानन्द का जन्म नेहनगर के राजा प्रदीप के घर हुआ। चित्रकला मंछापुरी के राजा नीतिपाल के घर पैदा हुई। इस जन्म में राजकुमार का नाम सागर और राजकुमारी का नाम प्रवीण रखा गया था। सागर बहुत ही सुन्दर और सर्वगुण संपन्न था। सभी कलाओं में वह प्रवीण था। इसी तरह राजकुमारी प्रवीण भी अत्यंत सुन्दर और सर्वगुण संपन्न थी। सागर की तरह वह भी सभी कलाओं में निपुण थी। इन दोनों का यश दूर-दूर तक फैला हुआ था।

प्रवीण के रूप-गुण की चर्चा सुनकर सिंध देश के कुराबाद नामक नगर के तरण तेज नामक राजा ने अपने पुत्र रंगराव की सगाई का प्रस्ताव प्रवीण के पिता के पास भेजा। घर और वर दोनों अच्छे हैं यह समझ कर राजकुमारी के पिता ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और प्रवीण की रंगराव के साथ सगाई हो गई। राजकुमार सागर शिकार खेलने का बहुत शौकीन था। एक बार सजधज कर अपने मित्रों एवं सैन्य के साथ वह शिकार खेलने निकला। मंछापुरी के राजा नीतिपाल ने सोचा कि कोई शत्रु राज्य पर चढ़ आया है। इसलिए वह भी अपनी सेना के साथ लड़ने के लिए आया। पर अपनी शंका दूर होते ही वह राजकुमार को आदर के साथ अपने नगर में ले गया। मंछापुरी में राजकुमार ने राजकुमारी प्रवीण को राजमहल के झरोखे में चिक की ओट में खड़े देखा और उसी क्षण इसके अलौकिक रूप पर आसक्त हो गया। राजकुमारी भी इस पराक्रमी और सुन्दर राजकुमार को देखकर मोहित हो गई। कुछ समय वहाँ रहने के बाद राजकुमार अपने साथियों के साथ अपने देश नेहनगर चला गया।

थोड़े समय के बाद मारवाड़ के मुदितपुर नामक नगर के राजा संग्राम सेन की कन्या से सागर का विवाह हो गया। नई रानी के साथ विलास में कुछ ही समय व्यतीत हुआ था कि एक दिन कई नर्तकियाँ नेहनगर में आईं। राजकुमार सागर के सामने इन्होंने अपनी कला का प्रदर्शन किया और अंत में प्रवीण के बनाए हुए पद गाये—

प्रेम बान दे गयो, न जाने किते गयो।
सुपंथी मन ले गयो, झरोखे दृग लायके॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन पदों को सुनते ही राजकुमार की खोई हुई स्मृतियाँ जाग्रत हो गईं। वे अब राजकुमारी प्रवीण की स्मृति में पागल से रहने लगे। यह देखकर इनके मित्रों ने राजकुमारी को एक पत्र लिखने की सलाह दी। मित्रों की सलाह से सागर ने प्रवीण को एक प्रेमपत्र लिखा और गुप्त रूप से इस पत्र को प्रवीण तक पहुँचाने का काम इन्होंने अपने अंतरंग मित्र कवि भारतीनन्द को सौंपा। मंछापुरी जाकर भारतीनंद एक संन्यासी का वेश बनाकर रहने लगे। संयोग से उनका परिचय राजकुमारी प्रवीण की सहेली कुसुमावली से हो गया। इस तरह कुसुमावली के द्वारा भारतीनन्द ने सागर का पत्र प्रवीण तक पहुँचा दिया। पत्र पढ़ते ही प्रवीण मूर्च्छित हो गई। एक और कुल की मर्यादा और लोकलाज थी तो दूसरी ओर प्रेम था। इस द्वन्द्व में अंतिम विजय तो प्रेम की ही हुई। प्रवीण ने शिवालय में जाकर आजीवन कौमार्य-व्रत धारण करने की प्रतिज्ञा की और किसी अन्य पुरुष का ध्यान न करके सदैव सागर के प्रेम में रत रहने का निश्चय किया। इस तरह भावी जीवन के प्रति दृढ़ होकर अंत में प्रवीण ने सागर को आंसुओं से भीगा पत्र भेजा। उसे पढ़ते ही सागर वैद्य का वेश बनाकर प्रवीण से मिलने के लिए चल पड़ा। अपने आयुर्वेद के ज्ञान से सभी को प्रभावित करके उसने जैसे-तैसे अंतःपुर में प्रवेश पा लिया और प्रवीण से भेंट की। सागर से मिलकर प्रवीण की दशा सुधर गई। यह देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने बहुत ही मान-सम्मान के साथ उनको विदा किया। इस मिलन के बाद राजकुमार तथा प्रवीण का मन पुनः चिर वियोग के भय से भीत हो उठा। उधर भारतीनन्द और कुसुमावली भी अन्योन्य के विरह में दुखी थे। अतः बहुत ही सोचने के बाद नेहनगर और मंछापुरी की सीमा पर नैनतरंग गाँव में सागर ने एक शिवालय की स्थापना की। शिवालय के उद्घाटन के उपलक्ष में एक बड़ा समारोह किया गया। इसमें मंछापुरी के राजा नीतिपाल को भी सपरिवार निमंत्रित किया गया। इस युक्ति को समझ कर प्रवीण और कुसुमावली भी निश्चित दिन शिवालय में पहुँचे। सागर और भारतीनन्द मन्दिर में सिद्धों का वेश बनाकर बैठ गये थे। अतः पुनः एक बार इन प्रेमी युगलों का मिलन हो सका।

सागर और प्रवीण धीरे-धीरे एक दूसरे के अत्यन्त निकट आ गये। एक क्षण का वियोग भी इन्हें असत्य लगता था। अतः वे एक दूसरे को लम्बे लम्बे पत्र लिखा करते थे। इन पत्रों में विविध ऋतुओं का और प्रेमियों की मनोदशा पर उनके प्रभाव का बहुत ही मार्मिक वर्णन है। प्रवीण ने सागर को लिखा कि वह अपनी सहेलियों के साथ द्वारिका की यात्रा के लिए जाने वाली है। यह पढ़ते ही सागर भी अपने मित्रों के साथ द्वारिका के एक मन्दिर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में ब्रजराज गोसाईं के नाम से जा बैठे। प्रवीण और कुसुमावली अपनी सहेलियों के साथ दर्शन करने के बहाने मन्दिर में आईं और दीक्षा देने के बहाने ब्रजराज गोसाईं ने राजकुमारी को निकट बुलाकर उससे बातचीत की। भारतीनन्द और कुसुमावली का भी मिलन हुआ।

ऐसे क्षणिक मिलन और पुनः चिर वियोग के कारण राजकुमार के मन को सदा क्लेश होता रहता था। पुनः एक बार इष्ट साधना के निमित्त अपने मित्रों के साथ सागर घर से निकल पड़े और जोगी का वेश धारण करके मंछापुरी में अलख जगाते हुए बदरिकाश्रम की ओर चले गये। सागर का यह रूप देखकर राजकुमारी प्रवीण को भी बहुत दुख हुआ। उसने भी अमूल्य वस्त्रालंकारों को छोड़ दिया और जोगन वेश धारण करने लगी। बदरिकाश्रम में राजकुमार की भेंट प्रभानाथ से हुई। सात मित्रों की दृढ़ निष्ठा से तुष्ट होकर प्रभानाथ ने इनको यम, नियम, शासन, प्राणायाम, षटचक्र, कुंभक, महामुद्रा, समाधि और शिवभक्ति की विधि बताई। इन मित्रों की कठोर साधना से प्रभानाथ सिद्ध बहुत ही खुश हुए और उन्होंने भगवान शिव से इन विरह व्यथित शिवगणों के उद्धार के लिए निवेदन किया। वे प्रसन्न हुए तथा उन्होंने आदेश दिया कि शिवरात्रि के दिन नैनतरंग के शिव मन्दिर में सब एकत्रित होकर महापूजा करो। सातों मित्र बदरिकाश्रम से मंछापुरी होते हुए नैनतरंग के शिवालय में पहुँचे। प्रवीण तथा उसकी सहेली कुसुमावली को भी शिवजी के आदेश के अनुसार शिवरात्रि के महोत्सव में उपस्थित रहने की सूचना भेजी गई।

शिवरात्रि के उत्सव में हजारों की संख्या में लोग इकट्ठे हुए। प्रवीण भी कुसुमावली के साथ उस महोत्सव में भाग लेने पहुँची। सातों मित्र सात ऋषियों के समान तेजस्वी दिखते थे और दोनों सखियाँ भी रति-रंभा सी सुन्दर दिखती थीं। पूजा समाप्त होते ही इन सबकी देह से दिव्य ज्योति प्रकट हुई। सागर तथा प्रवीण का हस्त-मिलाप हुआ। देवलोक से आये हुए विमानों में से एक में सागर एवं प्रवीण, दूसरे में भारतीनन्द एवं कुसुमावली तथा अन्य विमानों में शेष मित्र बैठकर शिवपुरी चले गए।

प्रवीण सागर ८४ सर्गों का एक वृहद् महाकाव्य है। ई० स० १९११ में गुजराती प्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित सटीक प्रवीण सागर में ८८२ पृष्ठ हैं। इसमें कुल २३३७ छन्द हैं। इस काव्य की सबसे पुरानी प्रति ईडर में सुरक्षित है जिसके आधार पर वहाँ के महाराजा ने ई० स० १८६७ में इसे लिथो में छपवा कर प्रकाशित करवाया। इसमें केवल ६० लहरें (सर्ग) हैं। इसके बाद इस अपूर्ण ग्रन्थ के शेष अंशों का संग्रह गुजरात के भाट चारणों के पास से दलपतराम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डाह्याभाई गौर गोविन्द गिल्लाभाई ने किया। इन दोनों ने ६० से ७२ तक की लहरें खोज निकालीं तथा अन्तिम १२ लहरों की जनश्रुति के आधार पर अलग-अलग ढंग से रचना करके इस अपूर्ण ग्रन्थ को पूर्ण किया।

प्रवीण एवं सागर इस ग्रन्थ के नायिका तथा नायक है। इन दोनों के नामों के आधार पर इस ग्रन्थ का नाम प्रवीणसागर रखा गया है।

यह ग्रन्थ कल्पना पर आधारित है या किसी सत्य घटना पर इस विषय में विभिन्न अभिमत हैं। बहुत ले लोगों का अभिमत यही है कि इस ग्रन्थ की रचना एक सत्य घटना के आधार पर हुई है। पर उस घटना का सम्बन्ध सौराष्ट्र के राजघरानों से होने से उन्होंने इसे दबाने की कोशिश की। प्रवीण-सागर की मूल प्रतियाँ भी उन्होंने नष्ट करवा दीं। राजघरानों के ऐसे प्रयत्नों से लोगों की शंकाएँ निश्चय में परिवर्तित हो गईं।

संक्षेप में सत्य कथा यह बताई जाती है :

राजकोट के राजकुमार महेरामणसिंह किसी कारणवश कुछ दिनों तक लीमडी के ठाकुर के अतिथि रहे। वहाँ पर ठाकुर की लड़की सुजान से उनका प्रेम हो गया। सर सुजान की सगाई पहले ही कच्छ के राव के कुमार से हो चुकी थी। अतः उनका विवाह नहीं हो सका। अतः प्रवीण आजन्म अपरिणीत रही और महेरामण से प्रेम करती रही।

इसी प्रेम कथा को प्रवीण सागर में पात्रों और स्थलों के नाम समानार्थक शब्दों द्वारा बदल कर कहा गया है। महेरामण का नाम सागर, सुजानबा का नाम प्रवीण और उसकी सखी फूल बाई का नाम बदल कर कुसुमावली कर दिया गया है।[1] रचियता के नामों में ऊपर बताये हुए छः मित्रों के नामों को भी बदल दिया गया है। कथा में उन्हीं छः मित्रों के नाम क्रमशः ये हैं[2]—

(१) भारतीनन्द, (३) रविज्योत, (३) वीरभद्र, (४) सत्रसाल (५) रत्न प्रताप, और (६) कुंवर उमराह (दृष्टिकेतु)।

इसके अतिरिक्त राजकोट और लीमडी नगरों के कल्पित नाम नेह-नगर और मंछापुरी रखे गये हैं।

प्रवीण सागर में महाकाव्य के सभी लक्षण हैं। इसका नायक धीरोदात्त है। काव्य का रस शृङ्गार है। शृङ्गार के साथ अन्य रस भी विद्यमान हैं।

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ३३।

[2] सागर मित हितकारी, भारतीनन्द कवि जातं।
वीरभद्र सत्रसालं, रतन प्रतापं कुंवर उमराहं॥ (लहर ८, छन्द ११)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कथानक प्रसिद्ध न होने पर भी ऐतिहासिक है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में परम्परागत मंगलाचरण, तथा अन्य देवी-देवताओं की स्तुतियाँ हैं। ग्रन्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष देने वाला है। ८४ सर्गों के इस महाकाव्य में प्रातः, मध्यान्ह, संध्या, रात्रि, दिन, वन, पर्वत, सागर, मृगया, सैन्य, युद्ध, स्वर्ग, षटऋतु, संयोग-वियोग आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। अतः महाकाव्य के प्रायः सभी लक्षण प्रवीण-सागर में विद्यमान हैं ऐसा कह सकते हैं। यह ग्रन्थ ज्योतिष, राजनीति, आयुर्वेद, काव्यशास्त्र, कोकशास्त्र, संगीतशास्त्र, नाट्यशास्त्र, अलंकार शास्त्र, छन्द-शास्त्र, नायक-नायिका भेद, शकुनशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र, तथा अष्टांग योगादि शास्त्रों के ज्ञान-विज्ञान का ऐसा अतुलित भण्डार है कि यदि इसे ज्ञान मंजूषा (Encyclopedia) कहा जाय तो भी उचित ही है। इस ग्रन्थ में दोहा, चौपाई, सोरठा, कवित्त, गाथा, पद्धरी, मुक्तदाम, छप्पय, सवैया, झूलणा, तोटक, मालती, मनहर, भुजंग प्रयात, तोमर, नाराच, उपजाति, चामर, हनुकाल, मधुमार, चन्द्रावतली, शंखनारी, बिजोह, चंपक माला, सरस्वती, महालक्ष्मी, चन्द्रिका, आभीर, निशिपालिका, प्रिया इत्यादि छन्दों का प्रयोग किया गया है। छन्दों की ही भाँति इस ग्रन्थ में विविध भाषाओं और भाषा शैलियों का भी प्रयोग हुआ है। प्रवीण की सखियाँ गुजराती, मराठी, कच्छी, मारवाड़ी, माथुरी (ब्रज), यावनी (उर्दू), पंजाबी एवं संस्कृत में उनसे बातचीत करती हैं। पद कवि ने रचे हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ हिन्दी में होने पर भी भाषा में स्थिरता और एकरूपता नहीं है। सारे ग्रन्थ में डिंगल, ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली का प्रयोग किया है। ग्रन्थ की भाषा पर गुजरातीपन की झलक तो अवश्य है ही। इसमें कच्छी और गुजराती भाषा का बहुत ही उपयोग किया गया है जिसका अर्थ कोई भी ब्रजभाषा का विद्वान संस्कृत या ब्रजभाषा के कोश के आधार पर नहीं कर सकता। अतः हम इस ग्रन्थ को यह प्रमाणपत्र नहीं दे सकते कि यह ग्रन्थ ब्रजभाषा का है।[1]

मेरे नम्र अभिमतानुसार प्रवीणसागर हिन्दी-ब्रजभाषा का महाकाव्य है। ब्रजभाषा के साथ-साथ डिंगल, खड़ी बोली और विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग इस महाकाव्य की विशेषता है।

यह ग्रन्थ गुजराती एवं हिन्दी के विद्वानों से बहुत समय तक उपेक्षित रहा। हिन्दी का ग्रन्थ समझ कर गुजराती के विद्वानों ने इसकी ओर ध्यान नहीं दिया तो गुजराती के अचल में छिपे इस ग्रन्थ से हिन्दी के विद्वान अनभिज्ञ ही रहे। पर जैसे ही हिन्दी के विद्वान इस ग्रन्थ को ध्यान से देखेंगे,

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ३४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो उन्हें प्रतीत होगा कि एक अहिन्दी भाषी कवि द्वारा लिखित यह प्रवीणसागर महाकाव्य हिन्दी का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। गुजरात के राजकुमार महेरामणसिंह द्वारा यह प्रवीणसागर हिन्दी काव्य साहित्य को महत्त्वपूर्ण देन है।

राजा साहब अमरसिंह जी

उन्होंने ई० स० १८०४ से १८४३ तक ध्रांगध्रा में राज्य किया था। उन्हें साहित्य से बहुत ही प्रेम था। ये प्रायः भक्तिभाव में तल्लीन होकर स्तुति, भजन, पद इत्यादि की गुजराती में रचना करते थे ऐसा कहा जाता है। उन्होंने हिन्दी में भी कई पद लिखे हैं।

महाराव लखपति जी

ये कच्छ के महाराजा थे। इन्होंने ई० सन् १७५२ से १७६१ तक राज्य किया था। इन्होंने लखपति शृङ्गार नामक एक अपूर्व ग्रन्थ हिन्दी में लिखा है।[1] ब्रजभाषा पर इनका बहुत ही प्रभुत्व था। ये अत्यन्त प्रजा वत्सल और गुणग्राही महाराजा थे। इन्होंने भुज में एक बड़ी पाठशाला स्थापित की थी। इसमें कच्छ, सौराष्ट्र और गुजरात के अतिरिक्त राजस्थान तथा अन्य हिन्दी प्रदेशों के कई छात्र काव्य एवं पिंगल की शिक्षा ग्रहण करने आते थे। स्वामी नारायण सम्प्रदाय के प्रसिद्ध कवि ब्रह्मानन्द और कवि दलपतराम डाह्याभाई ने भी इसी पाठशाला में अध्ययन किया था।[2] इस पाठशाला एवं पाठशाला के[3] नियमों तथा अध्ययन-अध्यापन की विधियों के विषय में श्री चन्द्रप्रकाशसिंह (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बड़ौदा विश्वविद्यालय) ने 'सरस्वती' में विस्तार से लिखा है।

दुर्गेश्वर

रचनाकाल—सं० १८१४ ग्रन्थ—साहित्य सिन्धु

आपका निवासस्थान खम्भायतपुर—आज का खम्भात—था। साहित्य

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ५६।

[2] समालोचक १९२३, पृ० १६७।

[3] काव्य-कला की शिक्षा देने के लिए भुज (कच्छ) में एक पाठशाला था। कवियों का सृजन करने वाली यह काव्य-पाठशाला संभवतः सारी दुनिया में अद्वितीय था। अनेक काव्य-रसिक इस संस्था मे पढ़कर राज-दरबारों में राजकवि हुए हैं। इस काव्य-शाला में काव्य-शास्त्र सिखाये जाते थे। जिस तरह एक अनुभवी और निपुण माली ऋतुओं की धूप-छाँह, अभिसिंचन, लालन-पालन और फल-फूलों को चुनने-गूथने की कला का परिचय नए माली को देता है उसी की तरह इस शाला के रसज्ञ और अनुभवी प्राध्यापक रस के उपासकों को नव-रस की वाटिका में घुमाकर काव्य-कला की शिक्षा देते थे। भुज कच्छ के महाराव का सिंहासन है पर भुज की पाठशाला कच्छ के महाराव का कीर्तिमुकुट है।— 'कवीश्वर दलपतराम" शीर्षक पुस्तिक में गुजरात के महाकवि श्री न्हानालाल।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation; Chandigarh

सिन्धु की रचना प्रथम गुजरात प्रान्तातर्गत पट्टीदार ग्राम के निवासी बेनीदास कवि ने प्रारम्भ की थी, किन्तु खम्भात के नवाब के साथ युद्ध छिड़ जाने और इस युद्ध में इनका शरीरपात हो जाने से ग्रन्थ अपूर्ण रह गया। कहा जाता है कवि बेनीदास की स्त्री ने अपने पति की पवित्र स्मृति के उपलक्ष में उक्त ग्रन्थ को आपके द्वारा पूर्ण कराया। आप जाति के ब्राह्मण थे। ग्रन्थ बहुत बड़ा है और संस्कृत ग्रन्थों के आधार पर बनाया गया है। ग्रन्थ में प्रायः एक हजार श्लोकों का समावेश किया गया है।[1]

निम्नलिखित छन्द से ग्रन्थ तथा उसके रचयिता का परिचय मिलता है:

खम्भायतपुर-वासी दुज दुरगेसर को
मान दे बुलाई ग्रन्थ बनवायो नयो है;
उनै ग्रन्थ रह्यौ मौत भयो बेनीदास जू को,
मुकति को देन तहाँ ग्रन्थ चित लायो है।
पीछे गंगाजल-सी पवित्र ताकी बनिता ने,
पिय सुख देनहित ग्रन्थ यह दयो है।
संवत अठारह चतेरदस चैत मास,
नौमी रबिबार ग्रन्थ सम्पूरन भयो है।[2]

चांदण शासन (गुजरात प्रान्त)

रचना काल—सं० १८०२ ग्रन्थ—१. चारणी पिंगल २. केसर रास

आप पाटण के राणा चन्द्रसेन के आश्रित थे। चारणी भाषा के आप अच्छे ज्ञाता थे। ग्रन्थ में पाटण के राणा हरपाल मकवाणा के बड़वान राज्य-स्थापन करने वाली शाखा के अजमाल तथा चन्द्रसेन राजा का उल्लेख है। आपका दूसरा ग्रन्थ ऐतिहासिक काव्य है। इसमें वीरमगाम से निकटस्थ पाटड़ी राज्य के सालावंशीय राजाओं के युद्धों तथा उस राज्य के स्थापन के वर्णन हैं। कहा जाता है, स्वयं कवि ने अपने आश्रयदाता चन्द्रसेन के साथ युद्ध में भाग लिया था। इस ग्रन्थ में वीररस की मुख्यता है।[3]

उदाहरण—

दुदाला श्रीदन्तमाला, उरे अरणे दे अणि।
बुहुमताम्बि सुडालास प्रवित्रम्, आननहा सति नमो ईश॥
सजे दल दखणी सकेजे नजदीणा निशाण।
बड़ भादस बड़ भान थी, खड़े आप रिसाण॥

---

१ मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग)—मिश्रबन्धु, पृ० ६५।
२ वही।
३ वही, पृ० ६२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दामूजी सरदार दले, पुलरू व्रंहि चाले।
सुवादर भाखै सौन जे, उभ्रु झखराले ॥[1]

गौरीबाई (ई० स० १७५९—१८०९)

गौरीबाई[2] का जन्म ई० सन् १७५९ में डुंगरपुर के एक नागर परिवार में हुआ था। इनका विवाह पाँच वर्ष की उम्र में ही हो गया था और विवाह के केवल एक सप्ताह बाद ही इनके पति का देहान्त हो गया। अतः बड़ी होने पर समझ आने पर इनका मन संसार की अनित्यता और वैराग्य से भर गया। इन्होंने बड़ी श्रद्धा से गीता, रामायण, महाभारत एवं अन्यान्य धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया। इनकी भक्तिभावना एवं साधुपरायणता की चर्चा दूर-दूर तक फैल गई। ई० स० १८०४ में ये यात्रा के लिए निकलीं। डुंगरपुर के महाराजा शिवसिंह जी ने तथा जयपुर इत्यादि रियासतों के महाराजाओं ने इनका बहुत ही आदर-सत्कार किया। गौरीबाई मथुरा, गोकुल, वृन्दावन होती हुई वाराणसी गईं। कई वर्षों तक वाराणसी में निवास करके ई० सन् १८०९ में इन्होंने अपनी इच्छा से ही समाधि लगाकर प्राण त्याग किया। इनका जीवन शान्त और भक्तिभावना से ओतप्रोत था।

अन्य सन्त कवियों की तरह गौरीबाई ने भी नीतिवैराग्य और ब्रह्मज्ञान के पद लिखे हैं। इन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी मधुर एवं प्रासादिक शैली में पद रचना की है।

जसुराम

मिश्रबन्धुओं ने इनका उल्लेख इस प्रकार किया है—

नाम—(८६०।१) जसुराम ग्रन्थ—राजनीति
कविता काल—१८१४ विवरण—गुजराती कवि थे।

इन्होंने सोलंकी जगमाल सुत उदयसिंह की प्रेरणा से राजनीत नामक ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ गुजरात में बहुत लोकप्रिय है। इसमें १० छप्पय ६६ कवित्त और ६० दोहे (=१३६ छन्द) हैं।

कवीश्वर दलपतिराय और बंशीधर

ये दोनों मित्र अहमदाबाद के निवासी थे। इन दोनों ने साथ मिलकर कविता की है। इन दोनों में दलपतिराय महाजन और बंशीधर ब्राह्मण थे। दोनों कवियों ने सम्वत् १७९२ में 'अलंकार-रत्नाकर' नामक ग्रन्थ की रचना

---

१ मिश्रबन्धु विनोद (चतुर्थ भाग)—मिश्रबन्धु, पृ० ६२।
२ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१३।
३ मिश्रबन्धु विनोद (द्वितीय भाग), द्वितीय संस्करण—मिश्रबन्धु, पृ० ७२१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की थी।[1] इन्होंने उदयपुर के महाराणा जगतसेन के नाम पर यह ग्रन्थ लिखा है। ये दोनों उदयपुर के नरेश जगतसिंह के आश्रित कवि थे। इन्होंने कुवलयानन्द ग्रन्थ के आधार पर भाषाभूषण की पूर्ति के रूप में इस ग्रन्थ की रचना की है।[2] इस ग्रन्थ में अन्य कवियों की तथा अपनी अपनी कविता में से उदाहरण दिये हैं। ग्रन्थ प्रयोजन इत्यादि कवि के शब्दों में ही देखिए—

नमत सुरासुर मुकट महिं प्रतिबिम्बित अलि माल।
किये रत्न सब नीलमनि सो गनेश प्रतिपाल ॥१॥
उदयापुर सुरपुर मनों सुरपति श्री जगतेश।
जिनकी छाया छत्रबस कीनों ग्रन्थ अशेष ॥२॥
सकल महिपन के राजै सिरताज राज—
पर उपकारी हारी भारी दुःख दन्द के।
देव जगतेस धीर गुरुता गम्भीर धरे—
भंजन बिपच्छ पुच्छ दुच्छ फौज फन्द के।
प्रभुता प्रकास अति रूप को निवास सो हैं।
प्रगट प्रकास मेटैं जग दुख वृन्द के।
मेघ से समुन्दर से पारथ पुरन्दर से।
राते पति सुन्दर समान सूर चन्द के ॥ ३ ॥
जदपि नार सुन्दर सुधर दिपत न भूखन हीन।
त्यों न अलंकृति बिनु लसैं कबिता सरस प्रबीन ॥ ४ ॥
कीने रसमय रसिक कवि सरस बढ़ाय विवेक।
छाया लहि गिरिबान की भाषा ग्रन्थ अनेक ॥ ५ ॥
तदपि अलकृति ग्रन्थ कौ काहुँ कवि नहि कीन।
भाषा भूखन है जउ कहुँक लच्छन हीन ॥ ६ ॥
यातैं ताहि सुधारिकै देखे कुबलयानन्द।
अलंकार रत्नाकर सु किय कबि आनन्द कन्द ॥ ७ ॥
कहुँ कहुँ पहिले धरे उदाहरन सरसाय।
कहुँ नये करि कैं धरे लच्छन लच्छ जताय ॥ ८ ॥
अरथ कुबलयानन्द को बाढ्यो दलपतिराय।
बन्शीधर कवि पै धरें कहुँ कहुँ कबित बनाय ॥ ९ ॥

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० १४।

[2] वही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेदपाठ श्रीमाल कुल विप्र महाजन काय।
बासी अमदाबाद के बन्शी दलपति राय ॥ १० ॥

—अलंकार रत्नाकर

इन पंक्तियों को देखने से प्रतीत होता है कि दोनों उच्च कोटि के कवि थे। दोनों की छन्द और अलंकार-योजना उत्कृष्ट है। मिश्रबन्धुओं ने इन्हें पद्माकर की कक्षा का कवि मानकर इनकी कविता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अभिमतानुसार भी ये दोनों अच्छे कवि थे। पद्य-रचना की निपुणता के अतिरिक्त इनमें भावुकता और बुद्धिवैभव दोनों हैं।

केवलराम (ई० सन् १७००—१७८०)

कबीश्वर केवलराम जी का जन्म ई० स० १७०० में हुआ था। ये बीसनगरा नागर थे। इनके पिता का नाम केशवराम था। इन्होंने संस्कृत एवं ब्रजभाषा का अभ्यास किया था।

केवलराम ने 'बाबी विलास' नामक ऐतिहासिक काव्य लिखा है। ये अहमदाबाद के गोमतीपुर के समीप राजपुर में तुलसी की गली में रहते थे। इनको लुणावाड़ा के राजा का भी अच्छा आश्रय था।[1] लुणावाड़ा नरेश की उदारता के कई कवित्त भी इन्होंने लिखे हैं।

इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके कनिष्ट पुत्र आदितराम ने भी अच्छी कविता की है। आदितराम मानाजी गायकवाड़ के आश्रित थे। आदितराम के पश्चात इनके भाई शोभाराम के पुत्र नरोत्तमराम एवं इनके पुत्र उत्तमराम ने भी कविता का अभ्यास किया था। बाबी नवाबों के दिये हुए वर्षासन कवि उत्तमरामजी को मिलते और ये बाबीविलास में बाबीवंश की नई घटनाओं के विषय में लिखते जाते। उत्तमराम के बाद केवलराम के वंश में किसी ने कविता का अभ्यास नहीं किया है।

धीरो (ई० स० १७५३—१८२५)

गुजरात के सन्त कवियों में धीरा का अपना विशिष्ट स्थान है। ये बड़ौदा जिले की सावली तहसील के गोठड़ा गाँव के ब्रह्मभट्ट (भाट) थे। आरम्भ में ये वैष्णव थे पर बाद में उन्होंने वैराग्य ले लिया था। फिर भी कभी कभी ये वैष्णव मन्दिरों में जाते थे। हरिभक्ति एवं वेदान्त तो मानों उनको विरासत में मिला था। कई शास्त्रियों के पास बैठकर उन्होंने ज्ञान

---

[1] **गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो**—डाह्याभाई देरासरी, पृ० २९।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri Foundation, Chandigarh

संस्कार प्राप्त किये थे। साधुओं के संपर्क से इन्होंने बहुत कुछ पाया था। इनकी 'अबल वाणी' (ताने) कबीर, सुन्दर एवं अखा के समान ही हैं।[1] गुरु होना इन्हें अच्छा नहीं लगता था। फिर भी उनको कई शिष्य करने पड़े थे।

इनकी स्त्री जतनबा तामसी प्रकृति की थी। इनकी आर्थिक स्थिति संतोषकारक थी। किशोरावस्था में इनको शिक्षा नहीं मिली थी। पर तेरह चौदह वर्ष की आयु में ये एक संस्कार संपन्न साधु के सम्पर्क में आये थे। अपने कई पदों में इन्होंने गुरु-शिष्यों के धर्म विस्तार से लिखे हैं। ये संस्कृत नहीं जानते थे। इनका हिन्दी भाषा का ज्ञान भी साधारण ही था। ये योग से ज्ञान को अधिक महत्त्व देते थे।[2]

ब्रह्मज्ञानी और वेदांती होते हुए भी धीरो अखा की भाँति अस्पष्ट नहीं है। इनकी कविता साधारण पढ़ने वाला भी समझ सकता है। इनकी कविता वाणी प्रभावोत्पादक और सरस है।

धीरा ने हिन्दी सेवी अन्य गुजराती कवियों की तरह हिन्दी में भी पद एवं कुण्डलियाँ लिखी हैं। हिन्दी और गुजराती रचनाओं में विषय तो एक ही है—भक्ति, ज्ञान एवं वैराग्य। इनकी हिन्दी में गुजराती के अतिरिक्त कभी कभी पंजाबी के भी शब्द आ जाते हैं। धीरा की हिन्दी कविता भाव की दृष्टि से तो बहुत ही सुन्दर है। पर भाषा में इनकी कविता को हम बहुत सुन्दर नहीं कह सकते। बृहत्काव्यदोहन एवं प्राचीन काव्यमाला में इनके हिन्दी पद एवं कुण्डलियाँ भी संगृहीत हैं। इनके कई शिष्य थे, जिनमें बापुसाहेब गायकवाड़ मुख्य हैं।

प्रीतमदास

प्रीतमदास बावला गाँव का भाट था। बारह-पन्द्रह वर्ष की उम्र में वे रामानन्दी साधु की एक जमात में शामिल हो गये। जमात के महन्त भाईदास ने उन्हें मन्त्र दिया। महन्त के साथ वे चूड़ाराणपुर गये। थोड़े समय रहने के पश्चात वे संदेसर आये और वहीं भजन-कीर्त्तन करते हुये रहे। उनके काव्यों में जो ज्ञान एवं वर्णन मिलते हैं, उस पर से निश्चित होता है कि उन्होंने बहुत ही अध्ययन किया होगा।[3] भाईदास के अतिरिक्त बापूजी से तथा गोविन्दराम से उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया था।

---

१ गुजराती साहित्यनां मार्गसूचक स्तम्भो (दूसरा संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० १८८।

२ वही, पृ० १८९।

३ साहित्य प्रवेशिका—हिम्मतलाल ग० अंजरिया, पृ० ८१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रीतमदास अठारहवीं शताब्दी का भूषण है। इनकी मृत्यु ई० स० १७९८ में हुई थी। ऐसा माना जाता है कि वे ७२ या इससे अधिक वर्षो तक जीवित रहे थे। अतः इनका जन्म ई० स० १७२० से ई० स० १७२५ के बीच के समय में हुआ हो ऐसा मान सकते हैं।[1]

स्व० ईच्छाराम के अभिमतानुसार प्रीतमदास के पिता का नाम रघुनाथ दास था और धनवान होने से अपने इकलौते पुत्र का विवाह कम अवस्था में ही कर दिया था। पर प्रीतमदास के मन्दिर की पुरानी लिखित बहियाँ देखने से प्रतीत हुआ कि इनके पिता का नाम प्रतापसिंह तथा माता का नाम केकुंवर बा था। प्रीतमदास जन्म से नहीं तो बाल्यकाल से चक्षुरहित हो गये थे इस बात के कई आधार मिलते हैं।[2]

ये अपने पास चार भक्तों को अपने पद लिखा देने के लिए रखते थे। प्रीतम के पद लिख लेने वाले ये भक्त इनके उच्चारों को ठीक तरह से न समझ सकें और जैसे समझ लें वैसे ही देहाती भाषा में लिख लें यह तो स्वाभाविक ही है। अन्धे न होने पर, प्रीतमदास ऐसी अशुद्धियों को अवश्य दूर कर देते। इनके कई काव्यों में जो शुद्धि एवं संस्कारिता के दर्शन होते हैं इसे देखते हुए यह संभव नहीं है कि वे ऐसा अशुद्ध बोलें या लिखावें।

इनके निधन के पश्चात् कृष्णलीला के पदों के संग्रह के अतिरिक्त प्रायः इनकी सभी कविता की नकल एक ही प्रति में इनके शिष्य नारणदास ने अपने हाथ से की है। गुजराती साहित्य के उच्च कोटि के विद्वान् श्री ईच्छाराम देसाई एवं श्री कृष्णलाल झवेरी के अभिमतानुसार प्रीतमदास ने दो बार शादी की थी। पर जन्म से अन्ध एवं बाल्यकाल में ही दीक्षित होने वाले प्रीतमदास ने ब्याह ही नहीं किया था। तो पुत्र तथा पत्नियों के बारे में क्या चर्चा हो सकती है ? मूलं नास्ति कुतः शाखा।[3]

श्री ईच्छाराम देसाई एवं श्री कृष्णलाल झवेरी के अभिमत से गोविन्द राम प्रीतमदास के गुरु थे। पर प्रीतम के गुरु तो बापुजी थे इस बात की प्रतीति अग्रलिखित पंक्तियों से होगी :

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १८९।

२ श्री प्रीतमदासनी वाणी (दूसरा संस्करण)—महात्मा प्रीतमदास, सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० ३६।

३ वही पृ० ८७।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धन्य संगत्य धन्य रामजी, धन्य सीवदत्त गोविन्दराम ।
धन्य स्वामी जानराय ठाकोर, धन्य संदेसर गाम ॥
गुरु बापु जी करी क्रिपा, स्वामी आत्माराम ।
संत समागम प्रीतम पाम्या, हरि चर्ण कमल सुख धाम ॥[1]

इनके जीवन में कई चमत्कारिक घटनाएँ घटीं थीं । इन सबका वृत्तान्त सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद से प्रकाशित 'प्रीतमनी वाणी' ग्रन्थ में मिलता है । महात्मा रविदास प्रीतम के समकालीन ही थे । इन्होंने पद्य में प्रीतमदास को एक पत्र लिखा था । इससे पता चलता है कि प्रीतमदास उच्च कोटि के संत थे ।

अब तक प्रीतमदास के निम्नलिखित ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं— 'सरसगीता', 'ज्ञानकक्को', 'सोरठ रागना महिना', 'ज्ञान गीता' 'धरमगीता', 'साखी-ग्रन्थ', 'एकादशस्कंध', 'ज्ञान प्रकाश', 'ब्रह्मलीला', 'प्रेमप्रकाश', 'विनयदीनता', 'भगवद्गीता ।'

इन सबके अतिरिक्त भी उन्होंने 'सत्यभामानो गरबो', 'गुरु महिमा', 'भक्त नामावलि', 'नाम महिमा', 'कृष्णाष्टक', महिना, तिथि, वार, छप्पय, चौपाई, पद, घोल इत्यादि लिखे हैं । स्वर्गस्थ श्री ईच्छाराम देसाई के अभिमतानुसार उनके पदों की संख्या १५०० है । इनके पद दो प्रकार के हैं :—

१. ज्ञान, भक्ति, वैराग्य इत्यादि के पद;
२. शृङ्गार के पद ।

श्री ईच्छाराम देसाई के अभिमतानुसार इन्होंने अध्यात्मरामायण भी लिखी है एवं काव्य में श्रीमद्भागवत की रचना की है, ऐसा सुना है, पर ये ग्रन्थ देखने में नहीं आये ।

प्रीतमदास ने हिन्दी में साखियाँ लिखी हैं । शेष सब ग्रन्थ गुजराती में हैं । अपनी साखियों के आधार पर ये हिन्दी के अच्छे कवि प्रमाणित होते हैं । प्रीतमदास की साखियाँ निम्नलिखित २४ अंगों में विभक्त हैं—

(१) खल, (२) नाम माहात्म्य, (३) संत माहात्म्य, (४) गुरु महिमा, (५) विचार, (६) जोग, (७) ज्ञान, (८) भक्ति, (९) प्रेम, (१०) वैराग्य, (११) अनन्य, (१२) ब्रेह, (१३) तृष्णा, (१४) मन, (१५) स्मरण, (१६) माया, (१७) तत्त्वसांख्य, (१८) ब्रह्मस्वरूप, (१९) काम, (२०) नारीनिन्दा, (२१) भाव, (२२) जीवन्मुक्त, (२३) सज्जन, एवं (२४) सहज ।

---

१ श्री प्रीतमदासनी वाणी (द्वितीय संस्करण)—महात्मा प्रीतमदास, सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० ३७ ।
२ वही, पृ० ३५० ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इन साखियों की भाषा देखकर प्रतीत होता है कि इनकी वाणी बहुत ही प्रभावोत्पादक है।

सन्तों की प्रशंसा करते हुए कवि संतमाहात्म्य के अंग में कहते हैं[1]—

संत दीसा सें होत है, स्वांगे संत न होय।
कहे प्रीतम सोनामुखी, कुन्दन कहे न कोय॥ २०॥
संत विषय थी वर्जिता, नाहीं लोभ लगार।
कहे प्रीतम परमारथी, प्रेमे पर उपकार॥ २१॥

भक्ति अंग में कवि ने भक्ति की महत्ता बताई है और भक्ति करने से भगवान शत्रु को कैसे पराजित करते हैं वह बताया है[2]—

भक्ति प्रिय गोपाल कुं, ऐसो अबर न कोय।
कहे प्रीतम त्रिभुवनपति, भक्तन के वश होय॥ १०॥
भक्ति करी प्रह्लादजी, हरि धर्यो नरसिंह रूप।
कहे प्रीतम कर नख बड़े, हण्यो हिरणाकस भूप॥ ११॥

सज्जन के अंग में सज्जनों की प्रशंसा करते हुए कवि ने कहा है[3]—

सज्जन सद्गुण देत है, करे दुष्टता दूर।
कहे प्रीतम माने नहि, माया तणा मजूर॥ १७॥
सज्जन अंजन आँख के, मज्जन मुख के पान।
कहे प्रीतम क्युं छांडीए, सज्जन परम सुजाण॥ १८॥

इस तरह प्रत्येक अंग में कुछ-न-कुछ विशेषताएँ पाई जाती हैं। कवि की वाणी मधुर एवं प्रासादिक है। प्रीतमदास गुजराती भाषा के ही नहीं हिन्दी भाषा के भी महत्त्वपूर्ण कवि हैं।

खुमान बाई

रायगढ़ के समीप सान्दरणी गाँव के भट्ट—मेवाड़ा लालजी की पुत्री खुमान बाई ने भी हिन्दी में कई पद लिखे हैं। कविता में अपना नाम खुमान बाई न रखते हुए इन्होंने खुमान दास नाम रखा है।[4]

---

१ श्री प्रीतमदासनी वाणी, (द्वितीय संस्करण), प्र० सस्तुं० साहित्य, अहमदाबाद, पृ० १४०।
२ वही, पृ० १५३।
३ वही, पृ० १६०।
४ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ४१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप १२ वर्ष की थीं तब किसी के उपदेश सुनने से कौमार्यव्रत ग्रहण कर लिया था। इनकी १६ वर्ष की अवस्था हुई तब इनके माता-पिता ने विवाह के लिए बहुत कहा था। पर ये अपने निर्णय में दृढ़ रहीं। खुमान बाई की हिन्दी कविता बहुत कोमल एवं सरस है।[1]

भोजा भगत (ई० स० १७८५—१८५०)

भोजा अथवा भोजन भक्त सौराष्ट्र के अमरेली के समीप फतेहपुर गाँव के निवासी थे। इनके पूर्वज मूल गुजरात से वहाँ गये थे। वे जाति से कुणबी थे। इनका जन्म ई० स० १७८५ में एक अनपढ़ परिवार में हुआ था और वे स्वयं भी अनपढ़ ही रहे। वे लिखना बिलकुल नहीं जानते थे।[2] ये पद गाते थे और इनके शिष्य इन्हें लिख देते थे या वे स्वयं याद रखते थे और अपने शिष्यों तथा मित्रों को उनके कहने पर गाकर सुनाते थे। इस तरह इनके पद कर्णोपकर्ण, गुजरात, सौराष्ट्र के नगरों एवं देहातों में घूमने वाले भिक्षुओं के द्वारा अमर हो गए हैं।

बारह वर्ष की आयु तक तो केवल ये दूध ही पीते थे। तदनन्तर गिरनार के एक साधु के कहने से वह अन्न खाने लगे। इस साधु के सत्संग से भोजा भगत की भक्ति दृढ़ होती गई। भोजा ऐसे सुयोग्य शिष्य निकले कि सभी इन्हें सन्त की हैसियत से पूजने लगे।

थोड़े समय के पश्चात् वे अमरेली के समीप फतेपुर गाँव में गए और तप करने लगे। वे कई दिन तक अजपाजाप—सोहं सोहं अथवा सोहंः हंस का जाप करने लगे। कहते हैं कि इनकी तपश्चर्या बारह साल तक चलती रही। इसके बाद इन्होंने कई चमत्कार बताये।[3]

उत्तरावस्था में ये वीरपुर में रहते थे। वहाँ इनका मन्दिर है और इसमें इनके चरणों की पूजा होती है। इनके परिवारके लोग आज भी विद्यमान हैं। इन्होंने कबीर या सहजानन्द की तरह अलग सम्प्रदाय नहीं चलाया है। फिर भी इनके अनुयायी सौराष्ट्र में कई हैं।[4]

---

१ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ४१।

२ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० १९७।

३ वही, पृ० १९८।

४ वही, पृ० १९९।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुजराती साहित्य में जिस तरह सामल के छप्पय, दयाराम की गरबी, प्रीतम के पद, नरसिंह के प्रभातिये एवं धीरा भगत की काफी प्रसिद्ध हैं उसी तरह भोजा भगत के चाबखे प्रसिद्ध हैं।[1] ये मानते थे कि जिस तरह गलिया-घोड़ा चाबुक से ही चलता है उसी तरह गलित समाज भी चाबुक लगाने पर ही चलेगा। इसी न्याय से इन्होंने विलासिता में डूबे समाज की भजन रूपी चाबुकों से खूब खबर ली है। इन विशेषताओं के ही कारण भोजा भगत की वाणी 'चाबखा' नाम से प्रसिद्ध है।

भोजा भगत भी अनुभवी ज्ञानमार्गी सन्त कवि हैं।[2] उन्होंने 'सैलेया आख्यान', 'नानी भक्तमाल', 'ब्रह्म बोध', 'बावनाक्षर तथा कक्का' जैसी दीर्घ गुजराती रचनाओं के साथ-साथ कई पद भी गुजराती में लिखे हैं। पदों में इन्होंने प्रभातिये, सरवड़े, काफी, होरी तथा चाबखे लिखे हैं। इनके अतिरिक्त वार, तिथि तथा महीने भी लिखे हैं।

इनकी कविता व्यंग-प्रधान एवं वैराग्य की ओर ले जाने वाली है। इसीलिए गुजराती में एक उक्ति सुप्रसिद्ध है कि नरसिंह मेहता ग्रहस्थों के काम के कवि हैं और भोजो संन्यासियों के काम के कवि हैं।[3]

इनके कई हिन्दी पद भी प्राचीन काव्यमाला, भाग ५ (प्र० प्राच्य विद्या मन्दिर, बड़ौदा) में मिलते हैं। उनकी हिन्दी में अन्य हिन्दी सेवी गुजराती कवियों की तरह ही कई शब्द घुल-मिल गये हैं। कई जगह उन्होंने शब्दों को भी तोड़ा-मरोड़ा है। उनके कई पद इनकी भाषा के ही कारण समझ में नहीं आते। पर जहाँ भाषा आसान है या जहाँ शब्द तोड़े-मरोड़े नहीं गये, वहाँ इनके पद आसानी से समझ में आ जाते हैं। भोजा भगत का भी गुजराती के हिन्दी कवियों में अपना विशिष्ट स्थान अवश्य है।

मुक्तानन्द स्वामी (ई० स० १७६१–१८३०)

पूर्वाश्रम में इनका नाम मुकुन्ददास था। ये रामानन्द के मुख्य शिष्य थे। गुरु के आदेश का आदर करके आयु में छोटे ऐसे स्वामी सहजानन्द को गुरु मानकर अपनी भक्ति इनको समर्पित की थी। सहजानन्द स्वामी से प्रेरित होकर बड़ी उम्र में अध्ययन करके इन्होंने बहुत विद्वत्ता प्राप्त की थी। मृत्यु के

---

१ **गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)**—कृष्णलाल झवेरी, पृ० १९९।

२ **गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)**—अनन्तराय रावल, पृ० २००।

३ **प्राचीन काव्यमाला, भाग ५, प्र० प्राच्य विद्या मन्दिर, बड़ौदा,** पृ० १५१ से १५५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक दिन पहले भी यह लिखते रहे थे। इन्होंने 'मुकुन्दबावनी', 'उद्धवगीता' एवं 'सती गीता' नामक गुजराती ग्रन्थों का प्रणयन किया है। इनके अतिरिक्त भी इन्होंने 'धर्मामृत', 'प्रेमलीला', रामलीला एवं कई हजार स्फुट पदों की रचना गुजराती में की है। 'विवेक चिन्तामणि' और 'सत्संग शिरोमणि' उनकी हिन्दी रचनाएं हैं।[1] इनके पद संगीतात्मक होते हैं। कृष्णभक्ति के पदों के अतिरिक्त कवि ने ज्ञान-वैराग्य विषयक साखियों की भी रचना की है।

निष्कुलानन्द (ई० स० १७६६—१८४८)

निष्कुलानन्द कच्छ निवासी विश्वकर्मा ब्राह्मण थे। इन्होंने २० पदों एवं तीन हजार पदों की रचना की है।[2] पदों का मुख्य विषय वैराग्य है।[3] इनकी भाषा सरल एवं प्रभावोत्पादक है। गुजराती के अतिरिक्त इन्होंने हिन्दी में भी स्फुट पद लिखे हैं।

सहजानन्द स्वामी (ई० स० १७८१—१८२०)

सहजानन्द स्वामी ने स्वामी नारायण सम्प्रदाय की स्थापना की थी। इन्होंने स्वयं हिन्दी में बहुत कम लिखा है। पर ये अपने अनुयायियों को गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी लिखने के लिए प्रोत्साहित किया करते थे।

इनका जन्म ई० स० १७८१ में बिहार राज्य के चम्पारण के निकट छपैया गाँव में हुआ था। बाल्यकाल में इनका नाम घनश्याम था। केवल १२ वर्ष की उम्र में ये घर छोड़कर निकल पड़े थे। कई पुनीत धामों की यात्रा करते हुए अन्त में ये सन् १८०० में रामानन्द स्वामी के पास सौराष्ट्र में आये। स्वामी रामानन्द ने ई० स० १९०१ में इनको दीक्षित किया और उनका नाम सहजानन्द रखा गया।

इन्होंने गुजराती के निम्न श्रेणी के जाति के लोगों को प्रेम से अपना कर दीक्षा दी। इनका कार्यक्षेत्र गुजरात होने से हिन्दी-भाषी होते हुए भी अधिकतर इन्होंने गुजराती में ही लिखा है। इनके ग्रन्थ शिक्षापत्री, वचनामृत और 'वेदरहस्य' तथा साम्प्रदायिक निर्देश भी इसी भाषा में हैं। इनकी भाषा में हिन्दी और गुजराती का मिश्रण है। इनके कुछ उपदेश हिन्दी में भी मिलते हैं। सहजानन्द स्वामी द्वारा कथित सम्प्रदाय के ११ मुख्य नियम इनकी भाषा शैली के परिचय के लिए द्रष्टव्य हैं :

---

१ **गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो**—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ४७।

२ **गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)**—अनन्तराय रावल, पृ० २०६।

३ **वही**, पृ० २०७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिंसा न करनी जन्तु की, परत्रिया संग को त्याग ।
मांस न खावत मद्य को पीवत नहीं बड़ भाग ।।
विधवा को स्पर्शत नहीं, करत न आत्मघात ।
चोरी न करनी काहु की, कलंक कोऊ को लगात ।।
निन्दत नहीं कोऊ देव के, बिन खपतो नहीं खात ।
विमुख जीवके वदन से, क्या सुनी नहीं जात ।।[१]

ब्रह्मानन्द (ई० स० १७७२–१८४९)

सद्गुरु स्वामी श्री ब्रह्मानन्द पूर्वाश्रम में चारण थे ऐसा कवि चरित्र में लिखा हुआ है, परन्तु इनकी अबटंक बारोट होने से वे बारहट्ट (भाट) जाति के हों यह विशेष सम्भावित है । इनके पिता जी शम्भुदान गढवी डुङ्गरपुर प्रगणे के खाणगाम गाँव में रहते थे । शम्भुदान भोले, निष्कपटी, धार्मिक एवं श्रद्धालु थे । इनकी पत्नी लालबादेवी भी वैसी ही शुद्ध, सदाचारी, पतिपरायण साध्वी थीं ।

ब्रह्मानन्द का जन्म ई० स० १७७२ में हुआ था । पूर्वाश्रम में इनका नाम लाडु बारोट था ।[२] पुत्र के लक्षण पालने में से ही देखे जाते हैं—कहावत के अनुसार बाल्यकाल से ही इन्होंने खिलौने का त्याग किया और भगवद् भक्ति की ओर अपने हृदय का प्रवाह बहाया । इन्होंने कच्छ में पिंगल का अध्ययन किया था । तदनन्तर भुज की ब्रज की पाठशाला में आठ साल तक अध्ययन किया । इसके पश्चात् जोधपुर, जयपुर, बीकानेर इत्यादि रियासतों तथा जूनागढ़, जामनगर इत्यादि सौराष्ट्र की रियासतों के स्वागत एवं पारितोषिक प्राप्त किए । भुज के राजा ने भी इनका हार्दिक स्वागत किया था ।

इसी समय श्री स्वामी नारायण सहजानन्द से इनकी प्रथम भेंट हुई । यह प्रथम मिलन सम्वत् १८६० के लगभग हुआ था । स० १८६१ में श्री स्वामी नारायणजी ने इन्हें भागवती दीक्षा देकर श्रीरंगदास नाम दिया । अपने सन्तों को अकारण ही कष्ट होता देखकर सहजानन्द स्वामी ने शिखासूत्र के त्याग करने का आदेश दिया । 'दास' अन्त नाम वाले अपने भागवती दीक्षाधारी साधुओं को परमहंस की दीक्षा दी, जटा कौपीनादि का त्याग कराया और नाम बदलकर 'नन्द' अन्त में आये ऐसे नाम दिये । इसी समय पर श्री रंगदास नाम बदलकर ब्रह्मानन्द नाम रखा गया । सहजानन्द स्वामी और स्वामी नारायण

---

१ चौथी गुजराती साहित्य परिषद की रिपोर्ट, पृ० ९६ ।
२ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २०७ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भगवान की कृपा एवं अभूतपूर्व सहायता से एवं अपने पुरुषार्थ से कई जगह इन्होंने मन्दिर बनवाये। ई० स० १८४९ में इनकी मृत्यु हो गई।

इन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थ लिखे हैं—

'सम्प्रदाय प्रदीप', 'सुमति प्रकाश', 'नीति प्रकाश', 'चांद्रायण प्रारम्भ', 'धर्मवंश प्रकाश', 'विवेक चिन्तामणि', 'उपदेश चिन्तामणि', 'शिक्षापत्री', 'ब्रह्मविलास', एवं पद, गरबी, सुयोग कीर्तन तथा झुलणा, रेणकी इत्यादि छन्द जिनकी संख्या ८००० के लगभग है। इन ग्रन्थों में से 'सम्प्रदाय प्रदीप', 'सुमति प्रकाश', 'उपदेश चिन्तामणि' और 'ब्रह्मविलास' हिन्दी में हैं।

सम्प्रदाय प्रदीप—यह ग्रन्थ हिन्दी भाषा में पद्य में लिखा गया है। श्रीमद् उद्धव स्वामी श्री रामानुन का एवं इनके गुरु का वृत्तांत और गुरु परम्परा इसमें दिए गये हैं। यह ग्रन्थ सम्वत् १८७५ या इससे पहले लिखा गया है। साम्प्रदायिक दृष्टि से इस ग्रन्थ का महत्त्व है, पर साहित्यिक दृष्टि से यह सामान्य कोटि का ग्रन्थ है।

सुमति प्रकाश—यह ग्रन्थ भी हिन्दी भाषा में पद्य में लिखा गया है। फिर भी इसमें स्वामीजी की चारणी भाषा का प्रयोग अधिक मिलता है। आधी गुजराती एवं आधी हिन्दी पर मधुर एवं सुनने में आनन्द देने वाली भाषा के इस ग्रन्थ में २० विश्राम या अध्याय हैं। इसमें पंच वर्तमान के धर्म एवं गृहस्थ स्त्री तथा पुरुष के धर्म, प्रायश्चित इत्यादि विषयों पर लिखा गया है। यह ग्रन्थ सम्वत् १८७८ के महा सुदी ५ को बुधवार के दिन सम्पूर्ण हुआ था। अन्तिम दुहे से इस बात की प्रतीति होती है—

सम्वत् अष्टादश सही, वर्ष अठोतर जाण।
माह सुद पंचमी बार बुद्ध, पूरण ग्रन्थ प्रमाण॥
श्रीनगर शुभ शेहर में, नर नारायण पास।
तहाँ रही ब्रह्मानन्द कवि, किना सुमति प्रकाश॥

इस ग्रन्थ के प्रथम विश्राम में श्री बद्रिकाश्रम की शोभा एवं हिमालय की सुन्दरता का वर्णन तोटक छन्द में दिया गया है। द्वितीय विश्राम से पंचम विश्राम तक भक्तिधर्म, उद्धव आदि मुनिगणों के जन्म के कारण एवं इनके तथा श्रीहरि के अवतार का वर्णन है। श्रीहरि ने गृहत्याग किया एवं वन में विचरण किया और घूमते-घूमते भोजग्राम में आकर श्री मुक्तानन्द स्वामी को मिले इस वृत्तांत का वर्णन है। छठे में श्रीहरि (सहजानन्द स्वामी) के स्वरूप का वर्णन पद्धरी छन्द में किया है। इस विश्राम की भाषा अत्यन्त मनोहर है। सप्तम से द्वादश विश्राम तक निर्लोभ, निर्मान, निःस्पृह, निष्काय एवं निःस्वाद—

CC-0. Agamnigam Foundation. Chandigarh

इन पंच वर्तमानों का तथा प्रायश्चित के स्वरूप का वर्णन किया गया है। स्वामीजी मनुष्य की विषय प्राप्ति के रागों के लिए कहते हैं—

जेहि रीत कूप तृण हरित छात, मृग पशु मूढ़ तेही चहत खात।
सोइ घास वदन निज लहत नाहि, मर प्राण गये पर कुपमाहि ॥
तेही रीत जीव सुख विषे लाग, नर देह खोत अति मन्द भाग।
नहि विषे भोग नहि मिलत श्याम, भव कुप परत होय जय गुलाम ॥

हिंसा, चोरी, काम, मद्यपान इत्यादि अनर्थ बताते हुए स्वामीजी कहते हैं—

हिंसा अरु चोरी अनृत काम, अविश्वास दम्भ पद गरब ठाम।
परत्रिय अरु धूतहि मद्यपान, असुया अरु व्यसनहि क्रोध आन ॥

दसम विश्राम में रसनेन्द्रिय को जीतने का वर्णन है। एकादश विश्राम में स्वामीजी ने आत्मज्ञान के बारे में लिखा है। बारहवें में निर्मानत्व के विषय में तथा तेरहवें में स्त्रियों के धर्मों का वर्णन किया गया है। चतुर्दश विश्राम में गृहस्थ धर्म का निरूपण किया गया है तथा पन्द्रहवें में श्री अक्षरधाम का वर्णन है। सोलहवें तथा सत्रहवें सर्ग में नरककुण्ड एवं नरकयातना का निरूपण किया गया है। अठारहवें तथा उन्नीसवें विश्राम में प्रकट भगवान श्रीहरि सहजानन्द का वर्णन है। बीसवें विश्राम में बद्रिकाश्रम माहात्म्य और केदारनाथ, नारसिंही शिला, बराही शिला आदि के माहात्म्य का वर्णन किया गया है। सम्प्रदाय की दृष्टि से यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण होते हुए भी साहित्यिक दृष्टि से सामान्य कोटि का ही है। ब्रह्मानन्द का हिन्दी पर प्रभुत्व इस ग्रन्थ में देख सकते हैं।

ब्रह्म विलास—इस ग्रन्थ की रचना सन् १८२७ (सम्वत् १८८७) में हुई थी। इसमें कवि ने सवैया, मनहर, कुंडलियाँ, छप्पय इत्यादि छन्दों का प्रयोग किया है। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित २३ विषयों पर चर्चा की गई है :

१. श्री गुरुदेव को अंग
२. श्री उपदेश को अंग
३. श्री काल को अंग
४ श्री देह आत्मा विछोह को अंग
५. तृष्ण को अंग
६. अधैर्य्य को अंग
७. विश्वास को अंग
८. देहमलीन त्याग प्रकार को अंग
९. नारी निंदा को अंग
१०. दुष्ट को अंग
११. मन को अंग
१२. चानक को अंग
१३. विपरीत ज्ञानी को अंग
१४. वचन विवेक को अंग
१५. श्री उपासना को अंग
१६. पतिव्रता को अंग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१७. श्री विरहिनी को अंग
१८. श्री सुरमा को अंग
१९. श्री साधु को अंग
२०. श्री सांख्य को अंग
२१. श्री उपदेश को अंग
२२. श्री साधु को अंग
२३. श्री संत को अंग

श्री गुरुदेव को अंग में गुरु की महत्ता को बताते हुए कवि कहते हैं—

अहंता अनंग के प्रसंग सब किये नाश,
बैतन के रंग निज संगिन सुधार है।
कहत हैं ब्रह्मानन्द काय मन बानी करि,
ऐसे गुरुराज सो हमारे किरतार है ॥[1]

नारी निन्दा को अंग में इन्होंने नारी की बहुत ही भर्त्सना की है। वे नारी को विष का बीज, नर्क का द्वार और साक्षात् राक्षसी बताते हैं—

बीज प्रथम बोयो विष को अरु, सो विष भोमि लीयो तेहि झेली।
डार रु मूर अंकूर सबे विष, पत्र सुधा विष तें जुँ भरेली ॥
झूर रहे विष के फल फूलहि, विष तरु पर छाय के फैली।
ब्रह्ममुनि कहे कौक बच्यो नर, या विनता जगमें विष बेली ॥[2]

× × × ×

नारी से जमपुरि निकट, सबे निकट तन साज।
कुबुद्धि निपट अन्तर कुटिल, नखशिख कपट न लाज ॥
नखशिख कपट न लाज, झपट ले जात नरन कुं।
हिम्मत बल हर लेत, देत संताप जरन कुं ॥
दाखत ब्रह्मानन्द, बिबुध जन जुओ बिचारी।
सबे विकट तन साज, निकट जम पुरिसें नारी ॥[3]

× × × ×

दुष्ट अंग में दुष्टों की निन्दा की गई है। इस तरह प्रत्येक अंग में हम ब्रह्मानन्द की विशेषताएँ देख सकते हैं। निःसदेह ब्रह्मविलास भाषा, विषय तथा शैली की दृष्टि से उत्तम ग्रन्थ है।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त ब्रह्मानन्द ने ब्रजभाषा में कई मुक्तक छन्दों और पदों की भी रचना की है। इनके पदों में नरसिंह, मीरा एवं सूरदास के पदों

---

१ ब्रह्मानन्द काव्य में ब्रह्मविलास—ब्रह्मानन्द, पृ० ७०७।
२ वही, पृ० ७२६।
३ वही, पृ० ७२७, ७२८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसी मधुरता है। इन्होंने छन्दों में मोती दाम, भुजंगी, नाराच, कुंडलिया, छप्पय, झुलना, सवैया, चचेरी, अमृत ध्वनि, रेणकी इत्यादि का अधिक प्रयोग किया है। ब्रह्मानन्द ने हिन्दी साहित्य को विशिष्ट एवं उत्तम काव्य ग्रन्थ प्रदान किये हैं।

प्रेमानन्द स्वामी (प्रेम सखी) (ई० स० १७७९-१८४५)

ये सौराष्ट्र में स्वामी नारायण सम्प्रदाय के परम पुनीत धाम गढ़डा में रहते थे। इनको संगीत का बहुत अच्छा ज्ञान था और ये गाने-बजाने में भी निपुण थे। इन्होंने अपने को 'गोपी' और 'कृष्ण का रसिया' कहकर कृष्णलीला गाई है। अतः इन्हें 'प्रेमानन्द सखी' भी कहते हैं।[1] ये स्वामी नारायण सम्प्रदाय के संस्थापक सहजानन्द के साथ रहते थे। अपनी 'वियोग की गरबी' जब ये गाते तब श्रोतागण रोने लगते।

इनकी कविता में कृष्ण तथा सहजानन्द स्वामी के पद मुख्य हैं। प्रेमानन्द स्वामी के शृङ्गार, वैराग्य एवं भक्ति के पदों को देखकर हमें प्रतीत होता है कि ये भी नरसिंह एवं दयाराम की तरह उच्च श्रेणी के कवि हैं। इनकी भाषा शुद्ध और सरल है। इन्होंने गुजराती, हिन्दी एवं राजस्थानी में भी पद लिखे हैं। इन्होंने हिन्दी में लगभग ७००० पदों की रचना की है।[2] 'हो रसिया में तो शरण तिहारी', 'मैं तो बिरद भरोसे बहुनामी' एवं 'बिसर न जाजो मेरे मीत' इतने सुन्दर पद हैं कि गांधीजी की आश्रमभजनावलि में भी इनको स्थान मिला है।[3]

प्रेमानन्द स्वामी भक्ति साहित्य की दृष्टि से स्वामी नारायण पन्थ में महान् कवि हैं। इतना ही नहीं बल्किनरसिंह मेहता के बाद के मध्यकालीन साहित्य में यदि किसी के काव्यों में शुद्ध भक्ति का प्रकाश दिखाई देता है तो इस प्रेमानन्द में ही।[4]

गंजन

ये गुजराती गौड़ ब्राह्मण मुरलीधर के पुत्र थे। इनके पूर्वज गुजरात से

---

१ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० १९६।

२ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ४८।

३ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २०९।

४ मध्यकालनो साहित्यप्रवाह—कन्हैयालाल मुंशी, पृ० ३८७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काशी जा बसे थे। ये मुहम्मदशाह बादशाह के प्रधान मन्त्री एतमादुद्दौला कमरुद्दीनखाँ के आश्रित थे, जिससे इन्हें बहुत धन मिला।[1]

इन्होंने सम्वत् १७८६ में कमरुद्दीनखाँ हुलास नामक ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ के चतुर्थांश में एतमादुद्दौला वजीर कमरुद्दीनखाँ का यश वर्णित है और शेष में भाव-भेद एवं रस-भेद कहा गया है। गंजन ने षड्ऋतुओं का रूपकमय अच्छा वर्णन किया है और इनके किये गये वैभव के वर्णन से बात की पुष्टि होती है कि यह कवि अमीर आदमियों में रहा है। इसकी भाषा मधुर है। अन्य सुकवियों की भाँति उसमें मिलित वर्ण बहुत कम लाए गए हैं। इनको अनुप्रास इष्ट न था, परन्तु इनकी कविता में जहाँ-तहाँ अनुप्रास का कुछ-कुछ प्रयोग हो भी गया है। इस कविता में उत्कृष्ट छन्द बहुत देख पड़ते हैं। इनको हम पद्माकर के समकक्ष में रखेंगे। उदाहरणार्थ, इनके कुछ छन्द नीचे दिये जाते हैं :

मीना के महल जरबाफ दर परदा हैं
हलबी फनूसन में रोशनी चिराग की;
गुलगुली गिलम गरक आब पग होत,
जहाँ बिछी मसनद लालन के दाग की।
केती महताब मुखी खचित जवाहिरन,
गंजन सुकवि कहै बोरी अनुराग की;
एतमाद्दौला कमरुद्दीखां की मजलिस,
सिसिर में ग्रीषम बनाई बड़ भाग की ॥१॥
ऐल परी अलका में खलभल खलका में,
ऐतो बल कामैं जे रहत निज थान है।
गंजन सुकवि कहै माल मुलकनि तजि,
रज रजपूती तजि तजत गुमान हैं।
रानी तजि पानी तजि कर किरवानी तजि,
अति बिहबल मन आनत न आन हैं;
ह्ये करि किसान भूप भाजत दिसान जब,
कमरुद्दीखान जू के बाजत निसान हैं ॥२॥
काजर-से कारे औ दतारे भारे मतवारे,
ऊँचे अति बिंध हू ते सोहत सुकद है।

---

[1] खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास (दूसरा संस्करण)—ब्रजरत्नदास, पृ० १४७।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नबल नबाब मनि कमरुद्दीखान सुनि,
आपने बलन करैं ऐरावत रद हैं।
गंजन सुकवि कहै चलत डुलत मही,
सुंडन सों अलका की करत गरद हैं।
जाके मद-जल ही सों नदी नद उमड़त,
भादौं के जलद सम रावरे दुरद हैं।[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अभिमतानुसार 'कमरुद्दीनखां हुलास' श्रृंगार रस का ग्रन्थ है जिसमें कवि ने भावभेद, रसभेद के साथ षट्ऋतु का विस्तृत वर्णन किया है।.....इस पुस्तक में सच्ची भावुकता और प्रकृतिरंजन की शक्ति बहुत अल्प है। भाषा भी शिष्ट और प्रांजल नहीं।[2]

दयाराम (ई० स० १७७७-१८५२)

ये चाणोद के निवासी थे। ये साठोदरा नागर थे। इनके पिता का नाम प्रभुराम भट्ट था। दस वर्ष की उम्र में इनकी माता की मृत्यु हो गई थी। अतः तदनन्तर ये डभोई चले आये और यात्राओं के समय के अतिरिक्त ये डभोई में ही रहे थे। यौवन के उन्माद में माता-पिता की अनुपस्थिति में इन्होंने किसी सुनारिन का मटका फोड़ डाला था और बाद में ये इसके पति के क्रोध से बचने के लिए चांणोद चले गये थे ऐसा कहा जाता है। पर इसके साथ ही भक्तिरस में तल्लीन माता-पिता के संस्कारों का लाभ तथा वैष्णव कुल के संस्कारों का लाभ युवा दयाराम को मिला था। अतः बाल्यकाल से ही भजन की ओर ये आकर्षित हुए और धीरे-धीरे पद रचना करने लगे। इच्छाराम नामक महात्मा के सत्संग से इनकी भक्ति एवं काव्य शक्ति को बहुत ही उत्तेजन मिला। निर्धनता के कारण उन्हें आजीवन अपरिणीत रहना पड़ा था। ब्याह करने की उनकी विशेष इच्छा नहीं थी। फिर भी उनका जीवन पर्याप्त रूप से रसिक रहा।

बीस वर्ष से चालीस वर्ष तक का समय उन्होंने प्रवास में ही बिताया। बदरिकाश्रम, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर एवं द्वारिका—इन चारों धाम की यात्रा उन्होंने तीन-तीन बार की थी। उन्होंने श्रीनाथ द्वारा की यात्रा सात बार की थी और चार बार यमुना पान किया था। काशी से पतितपावनी गगा का

---

१ मिश्रबन्धु-विनोद (दूसरा भाग) (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ६०५-६०६।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास (ग्यारहवां संस्करण)—रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २५४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जल ले जाकर उन्होंने रामेश्वर महादेव को चढ़ाया था। प्रवास में उन्हें कई तरह के कष्ट पड़ने पर देशाटन के इस अनुभव एवं भारत की प्रकृति श्री ने उनके काव्यों को अनुपम शक्ति व प्रभाव दिया। उन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। उन्होंने गुजराती में ४८ और ब्रज भाषा में ४१ ग्रन्थ लिखे हैं। इनके अतिरिक्त इन्हाने गुजराती में सात हजार, ब्रज में बारह हजार, मराठी में दो सौ, पंजाबी में चालीस, संस्कृत में पन्द्रह एवं उर्दू में पचहत्तर पद लिखे हैं।[1] उनके गुजराती ग्रन्थ निम्नलिखित हैं :

'गीता माहात्म्य', 'रसिक वल्लभ', 'अजामिल आख्यान', 'वक्त्रासुर आख्यान', 'प्रेम रसगीता', 'प्रबोध बावनी', 'काल ज्ञान सार', 'प्रश्नोत्तर मालिका', 'श्रीकृष्णनाम', 'माहात्म्य मंजरी', 'श्रीकृष्णनाम माहात्म्य माधुरी', 'श्रीकृष्ण स्तवन चन्द्रिका', 'श्री हरिभक्त चन्द्रिका', 'श्री हरिभक्तमाला', 'श्री हरिनाम वेली', 'श्री गुरुदेव चन्द्रिका', 'प्रेम प्रशंसा', 'शिक्षा तथा परीक्षा', 'भक्तिपोषण', 'भक्ति दृढ़त्व', 'स्तवन माधुरी', 'सत्यभामा विवाह', 'रुक्मिणी विवाह', 'दशमलीला', 'रास पंचाध्यायी', 'भ्रान्ति भंजन', 'अन्यायमर्दन', 'मोह मर्दन', 'ईश्वर निरीक्षण', 'पुष्टिपन्थ रहस्य मणिदाय', 'चिंता चूर्णिका', 'प्रमेय पंचाव तथा स्वांतः करण समाधान', 'श्रीकृष्णनामामृतधारा', 'क्षमापराध षोडशी', 'षडऋतु वर्णन', 'बारमास', 'भक्तवेल', 'चौराशी वैष्णवनु धोल', 'ब्राह्मण भक्त विवाद नाटक', 'बाणा धरी अन्तरनिष्ट सम्वाद नाटक', 'मनमति सम्वाद', 'श्री पुरुषोत्तम पंचागं', 'श्री यमुना स्तवन', 'श्रीकृष्ण अष्टोत्तर शतनाम चिंतामणि', 'श्रीकृष्णनामावलि', 'विनय बत्रीशी', 'अष्ट पटराणी विवाह', 'ओखाहरण' एवं 'नरसिंह महेतानी हुण्डी'।[2]

दयाराम कृत हिन्दी के ग्रन्थों में दो चार को छोड़कर शेष अब तक प्रकाशित नहीं हुए हैं। इनके ग्रन्थों के नाम ये हैं :

'सतसैया', 'रसिक रंजन', 'वस्तुवृन्द दीपिका', 'ब्रजविलासामृत', 'पुष्टि भक्त रूपमालिका', 'हरिदास', 'मणिमाला', 'क्लेश कुठार', 'विज्ञप्ति विलास', 'श्रीकृष्णनाम चन्द्रिका', 'पुष्टि पद रहस्य', 'प्रस्ताविका पीयूष', 'स्वल्पापार प्रभाव', 'श्रीकृष्णनाम माहात्म्य मातैंड', 'श्रीकृष्णस्तवन चन्द्रिका', 'विश्वासामृत', 'वृन्दावन विलास', 'कौतुकरत्नावलि', 'दशम अनुक्रमणिका', 'श्री भागवत अनुक्रमणिका', 'श्री भागवत 'माहात्म्य', 'भक्त चरित्र चन्द्रिका', 'श्री कृष्णनाम

---

१ गुजराती साहित्यनां मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० २५५।

२ वही पृ० २५५-२५६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्न मालिका', 'श्रीकृष्ण अनन्य चन्द्रिका', 'प्रस्ताव चन्द्रिका', 'मंगलानन्द माला', 'चिंतामणि', 'पिंगलसार', 'श्रीकृष्णनामामृत', 'श्रीकृष्ण स्तवनामृत', 'स्तवन पीयूष', 'चतुर चित्र विलास', 'श्री हरिस्वप्न सत्यता', 'अनुभव मंजरी', 'गुरु पूर्वार्ध', 'बहु शिष्य उत्तरार्ध', 'माया मत खंडन', 'भागवद् भक्तोत्कर्षता', 'ईश्वरता प्रतिपादन', 'भगवद् इच्छोत्कर्षता', 'मूर्ख लक्षणाबलि', 'श्रीकृष्णनाम माहात्म्य', 'शुद्धाद्वैत प्रतिपादन'।

इन ग्रन्थों में से अधिक ग्रन्थ वल्लभीय विचारधारा को व्यक्त करते हैं। कई ग्रन्थों में महाप्रभुओं के माहात्म्य का गुणगान है तो कई ग्रन्थों में सम्प्रदायों के सिद्धान्तों की चर्चा है। साहित्यिक दृष्टि से ऐसे ग्रन्थ अधिक महत्त्व के नहीं हैं। साहित्यिक दृष्टि से 'सतसैया', 'रसिकरंजन' और 'वस्तुवृन्द दीपिका' उच्चकोटि की रचनाएँ हैं। इनके अतिरिक्त 'क्लेश कुठार', 'वृन्दावन विलास', 'श्री भागवत की अनुक्रमणिका' भी सुन्दर रचनाएँ हैं। दयाराम की प्रमुख रचनाओं का संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जाता है।

सतसैया—इनकी हिन्दी कृतियों में सतसैया सर्वोत्तम है। यह ग्रन्थ सम्वत् १८७२ में लिखा गया था। कवि ने इस ग्रन्थ की रचना श्रीकृष्ण को रिझाने के लिए की थी, किसी राजा को रिझाने के लिए नहीं। इस ग्रन्थ में कुल ७३१ दोहे हैं। ग्रन्थ का मुख्य विषय कृष्ण भक्ति और पुष्टि मार्गीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। फिर भी इसका साहित्यिक मूल्य कम नहीं है।

सतसैया में भक्ति और जाति के अतिरिक्त शृङ्गार, प्रेम, काव्य चातुर्य आदि के सुन्दर उदाहरण हैं। इसमें नायिका-भेद, अलंकार योजना, वैराग्य सब कुछ हैं। यह ग्रन्थ निम्नलिखित १५ प्रकरणों में विभक्त है—(१) मंगलाचरण, (२) भगवद्स्तुति, (३) प्रेम वर्णन, (४) नायिका वर्णन, (५) रूप वर्णन, (६) संगवर्णन, (७) भक्ति प्रकरण, (८) वाद प्रकरण, (९) नाम माहात्म्य प्रकरण, (१०) आश्रय प्रकरण, (११) विवेक शिक्षा प्रकरण, (१२) शिक्षा विवेक प्रकरण, (१३) प्रस्ताव प्रकरण, (१४) काठिन्यार्थ प्रकरण, एवं (१५) काव्य-चातुर्य प्रकरण।

इस कृति के मंगलाचरण में कवि ने वल्लभाचार्य और श्रीकृष्ण की वन्दना की है। तदनन्तर रीतिकालीन महाकवि, बिहारी की ही तरह इन्होंने राधानागरि की स्तुति की है। प्रेमवर्णन में कवि ने प्रेम की महिमा का सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक वर्णन प्रस्तुत किया है। नायिका वर्णन में कवि ने नायिकाओं का सुन्दर और सूक्ष्म निरूपण किया है। रूप वर्णन में कवि ने राधाकृष्ण के सौंदर्य का वर्णन किया है। अग्रलिखित दोहे में भाव और अलंकार का सुयोग द्रष्टव्य है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हरि[1] कुं सो मुख नयन हरि, कच कुच कटि कम पाय ।
हरि सुवरन गति बेनि छब, राधा हरि सुखदाय ।। २५७ ।।

संगवर्णन में कवि ने सत्संग के महत्त्व और कुसंग के दुष्परिणामों पर लिखा है । भक्ति प्रकरण में दयाराम ने अनेक उदाहरणों और दृष्टान्तों से ज्ञान से भक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध की है । कवि कहता है कि ज्ञानी बड़ा बेटा है, समझदार है । भक्त अबोध शिशु है । छोटी संतान पर भगवान का अधिक प्यार और वात्सल्य होना स्वाभाविक ही है ।

वाद प्रकरण के अन्तर्गत कवि ने परमात्मा को साकार सिद्ध करने का प्रयास किया है ।[2] नाम माहात्म्य में कवि ने नाम की महिमा पर प्रकाश डाला है । जीवन में एक बार भी यदि सच्चे हृदय से हरिनाम ले लिया जाय तो सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।[3] आश्रय प्रकरण में कवि ने पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों को व्यक्त किया है । विवेक शिक्षण और शिक्षा विवेक प्रकरण में कवि ने ज्ञान और नीति विषयक सुन्दर दोहे लिखे हैं ।

प्रस्ताव प्रकरण में कवि पुनः अपने आराध्य देव की महिमा से अभिभूत होकर अपनी श्रद्धा-भक्ति प्रकट करता है । काठिन्यार्ग प्रकरण में कवि ने जान-बूझ कर क्लिष्ट अर्थ वाले दोहे लिखे हैं । काव्य चातुर्य प्रकरण में कवि ने कपाटबन्ध, अश्वगति, कमल बंधहार इत्यादि चित्रकाव्य दिये हैं ।

निःसन्देह दयाराम की रचनाओं में सतसैया सर्वोत्तम कृति है ।

रसिकरंजन—हिन्दी में लिखा हुआ इनका दूसरा महाग्रन्थ रसिकरंजन है । रसिकरंजन निःसंशय रसिक पुरुषों का रंजन करने वाला ग्रन्थ है । इसमें अनन्यता, भगवदाश्रय, दीनता; कृपा, अतः पर ईश्वरता, भगवदिका, विज्ञप्ति प्रार्थना, स्तुति, हरिनामोत्कर्षता, चिंताहरण, भक्ति प्रेमात्कर्षता, भक्तोत्कर्षता, शृङ्गार रहस्य, अभिलाखा, उरांनो, शिक्षा, मायामतखण्डन नामक सत्रह प्रकरण हैं ।

दयाराम की शैली इतनी उत्कृष्ट है कि अपने विषय में ये काव्य सर्वोत्तम माने जा सकते हैं । कवि को भगवान में दृढ़ विश्वास है । अपनी भक्ति के बल से भगवान को भी उलाहना देने के लिए वे समर्थ हैं :

---

१ इस दोहे में हरि शब्द के दस भिन्न-भिन्न अर्थ हैं—१. चन्द्रमा, २. हिरन, ३. भ्रमर, ४. पर्वत, ५. सिंह, ६. कमल, ७. स्वर्ग, ८. सर्प, ९. गज, १०. कामदेव ।

२ सतसैया, दोहा न० ३३० ।

३ सतसैया, दोहा न० ३४१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पतित के पावन हो अधम उद्धारन हो,
हरि बिट्ठल बर्द हेतु नर्क कैसे पाऊँगा।
सुधो कबु होत तो काहे कु में शरनो लेतो,
अब चहाओ साधन नाथ कहो कहाँ से लाउँगो।
घर को गुलाम क्यों तोहु रहे कर्म भोग,
परमानन्द स्वामि द्वार दास दुःख पाउंगो।
रंक जानी दया कुं डुबाओगे जो दयानाथ,
अकेलो नहि डुलुं केते—बर्दकुं डुबाउंगो ॥ १ ॥

—प्रकरण—२ भगवदाश्रय

तदनंतर कवि अपने मन को उपदेश देते हैं—

रे मन पस्तात काहे कियो तेरो होत कहा,
तुं करता बेसो जेसो शकट खेंचे श्वान है ॥
दारुदार यंत्र तोता कवि बाल पराधीन,
त्यों हि सब जरत हरिहाथ श्रुति गान है ॥
जाकुं जब जेसो करे सो ता क्षणु तेसो होय,
प्रति कृष्णपानि ज्ञानि ना को ना अज्ञान है ॥
कछु कह्यो जात नाहि चाहे सो हि करे दया,
तु रहे निश्चिन्त शिश समर्थ भगवान है ॥ ४ ॥

—प्रकरण—२, भगवदाश्रय

दृढ़ भगवदाश्रय का कितना सामर्थ्य है। कवि जैसे दृढ़ निश्चयी भक्त बहुत कम ही होंगे। प्रभु सर्व-शक्तिमान, सर्व कर्त्ता, सर्वेश्वर, सर्व नियन्ता है। प्रभु की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता। सुख-दुख भगवान के अधीन है। सुख-दुख यदि मनुष्य के ही वश में होते तो जगत् में कोई भी दुखी न होता। कवि दयाराम कहते हैं—

तेरो कीयो होत तो तू अपनो कयों बुरो करे।
बुरो होय बीना चले चित्त तों न चाहिये ॥

पर यह सब प्रभु की इच्छा के अनुसार ही होता है। भगवद्इच्छा तो अकलित ही है। इसलिए भगवान की इच्छा के अनुसार ही होगा ऐसा जानकर सन्तोष से रहने का उपदेश दयाराम बार-बार करता है। यह संसार बाजीगर के खेल जैसा है और बाजीगर की बाजी यह भगवान की इच्छा है। पासे जैसे गिरते हैं वैसा ही फल मिलता है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साधारन अरु सुधर को हरि कर हे सब हित,
ज्यों चोपट के खेल में, पासा के कर जीत।
पासा के कर जीत कृष्ण इच्छा सो हि पास ॥ २१ ॥

—प्रकरण ६, भगवदिच्छा

यह दयाराम का सिद्धान्त है। इस ग्रन्थ में अनेक दृष्टान्त देकर कवि ने यह बात दृढ़ता से सिद्ध की है।

अनेक रीति से कवि ईश्वर का अनुग्रह चाहता है। इनके ऐसे वर्णन रसशास्त्र की दृष्टि से उत्तम हैं :

जो मुख सों बांसुरी बजाइ रास मण्डल में,
जो मुख अधरामृत सर्वस्व गोपी केरो है।
जो मुख सो गुह्य बात करो राधा प्यारो संग,
जो मुख रसपान रसिक जनके घनेरो है।
जो मुख में विश्व रूप माता कुं दिखायो नाथ,
जो मुख वरदान दीनो सतत आप चेरो है,
सो मुखारविन्द सों श्री कृष्णचन्द्र एक बेर,
करुना करी कहिये प्रभो दास दयो मेरो है ॥ ४ ॥

—प्रकरण ७, विज्ञप्ति प्रार्थना

भगवत्कृपा याचने में कवि हाथी का उदाहरण देता है। जिस तरह हाथी के मुँह में से खाते-खाते थोड़ा-बहुत जो नीचे गिरता है इसी से चींटाओं का परिवार जीवित रहता है और हाथी को भी कुछ कम नहीं पड़ता। इसी तरह कवि भगवान से प्रार्थना करते हैं कि—

करो तुंड गिरे कत्र चेंटी परिवार जीवे,
रंच स्हां में देखो मेरी सबी पीडा जावेगी,
मो पे कृपादृष्टि किये कहा खोट आवेगी ॥ १२ ॥

—प्रकरण ७, विज्ञप्ति प्रार्थना

राधाकृष्ण के अतिरिक्त कवि की दृष्टि में और कुछ है ही नहीं। निम्न-लिखित पंक्तियों में राधा के रूप-लावण्य का वर्णन दृष्टव्य है—

कटी की कसर सो तो आइ उरोज भानु,
उदर की पीनता नितंब जाय वसी है;
चरन की चंचलता नेन में निकेत कीनो,
बेनन की फूता सों लाज ही में लसी है;

CC-0. Agamnigam Foundation. Prevenimo Publication. Digitized by eGangotri

हास्य की मोहनता सों जाय भीली मान भानु,
बाल केली आतुरता लालकेली कसी है;
जोबन के आये राधे बस्त अस्त व्यस्त भइ,
तु हूँ दया प्रभु नेन ही ते हीये वसी है ॥ १ ॥

—प्रकरण १३, शृङ्गाररस

भगवान की कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं शक्ति का भी सर्वाङ्ग सुन्दर वर्णन कवि ने दिया है—

उदधि अवास करे, ये न जहाँ अम्भ भरे,
तृण को कुलीश, ब्रज तृण को बनाय दे,
रज को बनावे शैल, गिरि चाहे रेनू करे,
बन्हि में दिखावे शीत, हीम आग लाय दे;
करतुं अकर्तुं है, समर्थ अन्यथा कर्तुं,
अनहोनी होनी, होनी होय सो बहाय दे;
ऐसे हैं श्रीकृष्ण दया, आसरो अखंड राख,
नित्य नमस्कार दान चित युग्म पाय दे ॥१॥

—प्रकरण ५, अतः पर ईश्वरता

कवि चाहते हैं कि सब बाधक विषय साधक हो जायँ—

मदन मदन गोपाल, मन्धु, मन्धु पर जागे,
लोभ भजन पर, मोह विश्वमोहन पर लागे;
गर्व भ्रत्य मात्सर्य छहुं पर आलस दुष्कृति,
द्वेष रही दुःसंग, विषय रहुँ क्लेश क्लेश अति;
भय अन्याश्र यरु असमर्पित, बियोग संसृति मति अधम,
सब बाधक साधक बनी, दयो कहे गुरु करुना, करिय मम ॥३॥

—प्रकरण ७, विज्ञप्ति प्रार्थना

इस ग्रन्थ की प्रस्तावना में निम्नलिखित षटपदों में कवि ने ११ भाषाओं का प्रयोग किया है—

गिरिधर भुंज्यो[1] प्राण,[2] तु ही सामलडा प्यारा,
मादर पिदर बिरादर,[3] दुशमन खलक बिसारो,[4]
माटा मंची विनीपू[5] स्वामी इकटहारा,[6]
जानी जियकी पीर,[7] मनोरथ पूर्या मारा,[8]

---

[1] कच्छी, [2] पंजाबी, [3] फारसी, [4] उर्दू, [5] तेलुगु, [6] तामिल, [7] हिन्दी, [8] गुजराती ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हरि न को कोणा चा प्रेम[1], वै त्वमेव स्वामि निरन्तर[2],
नन्द मेहेर के पुतवा दया प्रभु, थांकी दासी माके कांइ[3] डर।

इस काव्य के सम्बन्ध में, इसके छन्दों के सम्बन्ध में एवं अपने सम्बन्ध में दयाराम काव्य के अन्त में कहते हैं—

ग्रन्थ रसिक रंजन, भवभय भ्रम अघ दुख भंजन,
भक्ति पक्ष पोषक श्रुतिमत सज्जन मन भंजन;
प्रकरन दस अरु सात, छन्दयों अति अभिरामा,
कवित्त छपैं मत्तगयन्द कुंडलिया या नामा,
पुरि चंडि नर्मदा तट जहाँ, श्री शेषशाई धाम है,
शुभ शान्ति विप्र साठोदरो दयाराम कवि नाम है ॥

दोहा

इकसत इक तिसु कवित्त है, कूंडलिए चालीस।
मत्तगयन्द तहुतेर है, अरु छपै छत्तीस ॥

इस तरह हमें प्रतीत होता है कि रसिक रंजन की गणना दयाराम की श्रेष्ठ साहित्यिक रचनाओं में की जा सकती है। भक्तिपरक होते हुए भी यह रचना रस, पिंगल, और अलंकार योजना की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

क्लेश कुठार—दयाराम ने इस ग्रन्थ को मानसिक क्लेश दूर करने के लिए लिखा है। यह ग्रन्थ १५५ दोहों और लगभग २५ छप्पय, मत्तगयन्द, कुंडलिया आदि छन्दों में लिखा गया है।

वस्तुवृन्द दीपिका—इस ग्रन्थ में कवि ने १ से लेकर १०८ तक प्रत्येक अंक से सम्बन्धित वस्तुओं के नाम ऐसी सुन्दरता के साथ गिनाए हैं कि प्रत्येक का सम्बन्ध श्रीकृष्ण से स्थापित हो गया है। साहित्यिक दृष्टि से इस ग्रन्थ का अधिक मूल्य नहीं है। ज्ञान कोष के रूप में यह ग्रन्थ निःसंदेह उच्च-कोटि का माना जा सकता है।

श्री अक्ल चरित्र चन्द्रिका—इस ग्रन्थ में भगवान के अकलित चरित्रों का वर्णन अत्यन्त सुन्दर शैली में किया गया है।[5] भगवान की महिमा अत्यन्त गहन एवं गूढ़ है। उनका स्वरूप समझ में नहीं आता कि वे शान्त हैं या क्रोधी,

---

[1] मराठी, [2] संस्कृत; [3] पूर्वी, [4] मारवाड़ी।

[5] **दयाराम काव्यसुधा में कवि श्री दयाराम**—सं० प्राणशंकर वैजनाथ व्यास, पृष्ठ २९।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धीर हैं या अधीर, न्यायी हैं या अन्यायी। इसका कारण यही है कि इनके चरित्रों में अन्योन्य से विरोध है। अतः भगवद्लीला अगम्य है। कवि स्वयं कहते हैं कि—

विरुद्ध धर्माश्रय चरित्र, श्रीकृष्णचन्द्र के कहीये,
कछुहु न कहत बने ईश्वर को बेर-बेर शिर नैये ॥

एक और उदाहरण देखिए—

काल-काल महादेव अजित हरि तुम जीते छिनमांही।
काल यवन तें भजे धीराधार कहत बनत कछु वाही ॥
ब्रह्मचारी क्यों कहे गोपिका कान्त खरे गोपाल।
कामी होउ तो कालिन्दी क्यौं माग देत ब्रजबाल ॥
किंकरी कुबजा कान्त करी हरी निर्दय हम क्यों कहिये।
ब्रजबासी तरसाये दयालु, कहत हु शंका पैये।
× × × ×
जननी सहोदर आदि हते तहु भृगुपति दोष न भीने।
राम पुरन संग्राम हत्यो रिपु, रावन हयमख कीने ॥
किंचित काल दोष तें दितिसुत असुर अखिल जग त्रासा।
ठिमर कन्या भोगी पराशर मछगन्धा सुत व्यास।

इस तरह पुराणों से उदाहरण देकर प्रभु के अगम्य चरित्र का वर्णन कवि ने किया है। इन तेजस्वी एवं प्रभावोत्पादक चरित्रों में कई प्राकृतिक वस्तुओं के भी सुन्दर उदाहरण कवि ने दिये हैं—

तेजस्वी दीपक तें कज्जल श्याम प्रकट प्रभु कीनो।
नाथ नाग शिर मनि उपजायो रूप-रश्मि रस भीनो ॥२५॥

तेजस्वी दिये में से काला काजल बनाया और काले विषधर नाग के मस्तक पर प्रकाशित मणि बनाया। यह कितना आश्चर्य! एक और उदाहरण—

लोह उगायो कनक जरायो गिरि तारे ज्यों तरनि।
धर्म अधर्म अधर्म धर्म तुम करो अकरनी करनी ॥४७॥

यादवास्थली के समय पर लोहा उगाया, लंका जलाई तब सोना भी जला दिया और जब सेतु बाँधा तब बड़े-बड़े पत्थरों को नाव की तरह तैराया था। धर्म को अधर्म, अधर्म को धर्म और असम्भावित वस्तु की सम्भावित करने के लिए भी प्रभु समर्थ हैं। परमात्मा की लीला अनिर्वचनीय है। कोई इसको समझ नहीं सकता। अतः दीन भाव से कवि अन्त में कहता है कि—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Research Foundation, Chandigarh

जेसे हो तेसे तुम मम प्रभु कृष्ण करूँ प्रणामा।
जेसो हुँ तेसो मोही पालो महाप्रभु सुन्दर श्यामा ॥६१॥

कृष्ण कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ हैं। इनकी इच्छा के विरुद्ध भगवान शंकर या ब्रह्म भी कुछ नहीं कर सकते—

कृष्ण तुमारे करनों हैं सो, रोकी शके नहीं कोइ।
नहीं मरजी सो हर बह्मा सों कबु क्योंहु नहीं होई॥

इस तरह सारा ग्रन्थ भगवान के चरित्रों से पूर्ण है। साहित्यिक दृष्टि से भी यह उत्तम कोटि का ग्रन्थ है।

गेय पद—इन कृतियों के अतिरिक्त दयाराम ने ब्रज, मारवाड़ी, उर्दू, पंजाबी आदि भाषाओं में अनेक संगीतात्मक पदों की रचना की है। दयाराम की रचनाओं पर रीतिकाल का पर्याप्त प्रभाव है। भक्त होने के साथ-साथ ये रसिक और भावुक भी थे। रीति-काल के साहित्य के अनुकरण का यह भी कारण हो सकता है कि वे गुजराती लोगों को ब्रज-भाषा साहित्य की विशेषताओं से परिचित कराना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने विविध प्रकार की काव्य-पद्धतियों का और भाषा शैलियों का अनुसरण किया है।

इनकी जो हिन्दी रचनाएँ गुजराती लिपि में प्रकाशित हुई हैं उनमें भाषा की अनेक भूलें दिखाई देती हैं, जैसे कि तू के लिए तुं और मैं के लिए में का प्रयोग किया गया है। हैं और है के लिए हमेशा है और हैं का प्रयोग हुआ है। अनेक प्रचलित शब्दों के रूप स्थिर नहीं हैं। ह्रस्व-दीर्घ और मात्राओं की भूलें कई जगह पाई जाती हैं। किन्तु ये इनकी भूलें नहीं हो सकतीं। संभवतः ये भूलें प्रतिलिपिकारों तथा संपादकों की है।

दयाराम ने हिन्दी भाषा में विपुल साहित्य की रचना की है। सतसैया और रसिकरंजन जैसी कृतियों के आधार पर हिन्दी के उच्च कवियों की कोटि में दयाराम रखे जा सकते हैं।

गिरिधर (ई० स० १७८७-१८५२)

गुजराती में लोकप्रिय रामायण लिखने वाले गिरिधर बड़ौदा के मासर गाँव का दशालाड़ बनिया था। इनके पिता गाँव के पटवारी थे। इनका जन्म ई० स० १७८७ में एवं मृत्यु ई० स० १८५२ में हुई थी।[1] इन्होंने बल्लभ विजय नामक पुरोहित से संस्कृत एवं हिन्दी का अभ्यास करके अपने गुजराती

---

१ **गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)**—अनन्तराय रावल, पृ० २०३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के ज्ञान को बढ़ाया था। थोड़े समय के बाद ये वैष्णव महाराज पुरुषोत्तम जी के संसर्ग में आये और इनसे पिंगल का ज्ञान प्राप्त किया। पुरुषोत्तम महाराज से ये वैष्णव धर्म में दीक्षित हुए और उन्हीं की प्रेरणा से व्रजभाषा में लिखने लगे।

रंगीलाल नामक महाराज के साथ ये यात्रा करने के लिए गये। यात्रा में लौटते समय श्रीनाथजी के दर्शन करने की इनकी इच्छा हुई। पर रंगीलाल जी महाराज राधावल्लभी संप्रदाय के थे। अतः उनको दर्शन करने की अनुमति नहीं दी। इस निषेध से इनको बहुत ही बुरा लगा और वहीं थोड़े समय के बाद प्राण त्याग किया।

गिरिधर ने हिन्दी (ब्रज) और गुजराती दोनों भाषाओं में कविता की है। इन्होंने लगभग ११ ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें से ६ हिन्दी में हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने हिन्दी में स्फुट भजन, पद, साखियाँ आदि भी लिखी हैं। इनकी भाषा पर गुजराती का पर्याप्त प्रभाव है।

गिरिधर की लिखी ११ कृतियों में से दाणलीला, श्रीकृष्ण जन्म वर्णन, राधाकृष्णनो रास, ग्रीष्म ऋतुनी लीला, जन्माष्टमीनो सोरलो तथा नृसिंह चतुर्दशीनी बधाई—हिन्दी की रचनाएँ हैं। शेष रचनाएँ गुजराती में हैं। दाणलीला अप्रकाशित हिन्दी काव्य है। इसमें राधा और कृष्ण के बीच के वाद-विवाद का वर्णन है। राधा अपनी सखियों के साथ शृंगार करके दही बेचने के लिए जाती है तब सामने से श्रीकृष्ण अपने साथी गोपों के साथ आकर दान माँगते हैं। राधा इन्कार करती है। इस पर दोनों के बीच वाद-विवाद होने लगता है। अंत में दान के रूप में राधा गोरस देती है। दाण-लीला काव्य छोटा और साधारण कोटि का है।

'श्रीकृष्ण जन्म वर्णन' में कवि ने भागवत के आधार पर श्रीकृष्ण जन्म पर गोकुल वासियों के उल्लास का वर्णन किया है। 'राधा-कृष्ण के रास' में गिरिधर ने श्रीकृष्ण भगवान के प्रति गोपियों के प्रेम और आकर्षण का वर्णन किया है। 'ग्रीष्म ऋतुनी लीला' में श्रीकृष्ण के ग्रीष्म ऋतु के वन-विहार का वर्णन किया गया है। 'जन्माष्टमी नो सोरलो' काव्य का विषय भी श्रीकृष्ण जन्म ही है। नृसिंह चतुर्दशी नी बधाई में प्रह्लाद की भक्ति भावना से प्रसन्न होकर नृसिंह रूप में अवतरित भगवान का वर्णन है। इन रचनाओं के अतिरिक्त इनके रामायण और कृष्ण चरित्र नामक गुजराती ग्रन्थों में भी हिन्दी रचनाएँ मिलती हैं। इन काव्यों के अतिरिक्त गिरिधर की स्फुट रचनाएँ भी मिलती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मनोहरस्वामी 'सच्चिदानन्द' (ई० स० १७८८-१८४५)

मनोहर स्वामी का जन्म ई० स० १७८८ में जूनागढ़ के नागर परिवार में हुआ था और मृत्यु ई० स० १८४५ में हुई।[1] बड़े होकर कुछ समय तक मुखत्यारी और वकालत की। ये संस्कृत एवं फारसी में बहुत ही निपुण थे। अकबर के समय में किये गये एक उपनिषद के भाषान्तर की सहायता से इन्होंने उपनिषदों का अध्ययन किया था। कई शतकों से जूनागढ़ वैष्णवों एवं स्मार्तों के झगड़े का केन्द्र माना जाता था। इस कलह की वजह से इनको दोनों सम्प्रदायों पर अविश्वास हो गया। अतः ई० स० १८३८ में इन्होंने संन्यास धारण कर लिया और भावनगर के नीलकंठ महादेव में 'सच्चिदानन्द' नाम धारण करके रहने लगे और बाद में गौरीशंकर ओझा के गुरु हुए।[2] इन्होंने भगवद्-गीता एवं रामगीता पर टीका लिखी हैं और गुजराती का व्याकरण लिखा है। वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय के विरुद्ध इन्होंने संस्कृत एवं गुजराती में कविता लिखी है।

मूर्तिपूजकों का वे तिरस्कार करते थे। तीर्थयात्रा करने से कुछ पुण्य होता है ऐसी इनकी मान्यता नहीं थी। ये मानते थे कि स्वयं को पहिचानने से, स्वरूप का बोध होने से ही मोक्ष मिलता है। इनके कई पद सरल एवं कई पद दुर्बोध तत्त्वज्ञान से सुशोभित हैं। अन्य सन्त कवियों की तरह इन्होंने भी गुरु की प्रशंसा की है और मानते हैं कि सद्गुरु के बिना मोक्ष नहीं है। गुजराती के अतिरिक्त हिन्दी में भी इनकी रचनाएँ मिलती हैं।[3] इनके पद बहुत ही मार्मिक हैं। इनकी हिन्दी कविता सरल एवं सचोट है। इनकी हिन्दी पर फारसी का प्रभाव है। इनके गुजराती एवं हिन्दी पद 'मनहरपद' में संगृहीत हैं।

किशनदास

किशनदास लोकागच्छ (गुजरात) के जैन कवि थे। अपनी बहन रतन बाई के निधन पर संवत् १७६७ के आश्विन शुक्ल १० के दिन किशनदास ने 'किशन बावनी' नामक छोटा काव्य बनाया है।[4] कवि की जाति आदि के विषय में कई किंवदन्तियाँ हैं। बाल्यावस्था से ही अहमदाबाद के लोकागच्छ

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन) —अनन्तराय रावल, पृ० २०३।

२ गुजराती साहित्यना मार्गसूचक स्तम्भो (द्वितीय संस्करण)—कृष्णलाल झवेरी, पृ० २०३।

३ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २०३।

४ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० २४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के श्रीपूज के गुरुभाई संघराजजी ने इनको पढ़ाया था और कविता करने की शिक्षा दी थी। कवि ने काव्य का नाम तो 'उपदेशबावनी' रखा है पर 'किशन बावनी' नाम से ही यह काव्य प्रसिद्ध है।[1] काव्य के विषय में कवि कहते हैं कि 'यह काव्य मैंने जैन मतानुसार न करके वेदान्त मतानुसार रचा है। इस काव्य में प्रारम्भ में कवि ने प्रथम जैन-सूत्रै 'ऊं नमः सिद्धम्' के अक्षरों के क्रम से अ से ज्ञ तक कवित्त लिखे हैं। इस काव्य की वाणी हृदयहारि एवं आकर्षक है। पुराने समय में बहुत लोग इस किशन बावनी का रोज पाठ करते थे।

कवि ने अन्तिम कवित्त में अपने निवासस्थान, रचना, संवत आदि का उल्लेख किया है—

शिरी संघे राज लोका गच्छ सिरताज आज।
तिन की कृपाजू कविताई पाई पावनी।
सम्वत सत्तर सतसठ विजै दशई की,
ग्रन्थ की समापति भई है मन भावनी॥
साधवी सुलानी मा की जाई श्री रतन बाई,
तजी देह तापर रची है विगतावनी।
मन की मति लीनी तत्त्व ही में रुचि दीनी,
बाचक किसन कीनी उपदेश बावनी॥६२॥

हर्षदास या हरखजी मेहता

इनका जन्म भावनगर के सिहोर गाँव में एक वणिक परिवार में ई० स० १७६१ में हुआ था। इनके पिता दामजी महेता भावनगर के संस्थापक श्री भावसिंह जी के कामदार थे। पिता की मृत्यु के बाद श्री हरखजी महेता को भी ठाकुर साहब तख्तसिंह जी के कारभारी का पद मिला था।

हर्षदास पुष्टिमार्गीय भक्त थे। ये वैष्णव धर्म के प्रसिद्ध आचार्य माधवरावजी कोटावाले के शिष्य थे। उन्होंने दो ग्रन्थ हिन्दी में लिखे हैं—

१. भक्त मुकुट मणि
२. तीर्थ आज्ञा प्रबन्ध

इसके अलावा इनके फुटकर पदों का एक संग्रह महेता हर्षदास कृत पदसंग्रह के नाम से प्रकाशित है।

---

[1] गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० २४।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उन्होंने हिन्दी भाषी प्रदेश की कई बार यात्रा की थी और पुष्टिमार्गीय ग्रन्थों का अच्छा अध्ययन किया था। उन्होंने भ्रमरगीत एवं बाललीला के बहुत सुन्दर पद लिखे हैं।

निरान्त

एक मान्यता के अनुसार निरान्त ई० सन् १७७० से १८४६ तक विद्यमान थे।[1] इनके सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार इनका जीवन काल ई० सन् १७४७ से १८५२ तक माना गया है। आप देवाण (करजण तहसील) के तलपदा पाटीदार थे। दूसरी मान्यता के अनुसार आप राजपूत थे। शुरू में ये वैष्णव थे तथा प्रत्येक पूर्णिमा को हाथ में तुलसी लेकर डाकेर के मन्दिर में दर्शन करने के लिए जाते थे। पर एक दिन एक ज्ञानी मुसलमान ने इन्हें एकेश्वरवाद का रहस्य समझाया। फलतः आप निर्गुण के उपासक हो गये ऐसा माना जाता है।[2] पर इस कथा को साम्प्रदायिक आधार नहीं मिला है।

गुजराती साहित्य के निर्गुण कवियों में निरान्त का विशिष्ट स्थान है। ये एक ध्यान से सोऽहं मन्त्र का उच्चारण किया करते थे। इनके कई शिष्य थे जिनमें दयालदास, गणपत एवं बापु साहब गायकवाड़ मुख्य हैं। निरान्त ने साखियाँ, कुंडलिया, झूलणा नाम से अभिहित पद, धोल, छप्पय, एवं काफी छन्द में रचना की है।

हिन्दी में काव्य लिखने वाले और गुजराती कवियों की तरह निरान्त ने भी दोनों भाषाओं में काव्य रचना की है। अन्य सन्त कवियों की तरह काव्य का विषय भक्ति, गुरु-महिमा, आत्मज्ञान, वैराग्य इत्यादि है। उनकी भाषा अधिक परिमार्जित एवं सुश्लिष्ट नहीं है। विभिन्न राग-रागनियों एवं तालों में उन्होंने काव्य रचना की है। इस ज्ञानी कवि ने हिन्दी में भी कई पद लिखे हैं। इनके पद इनके शिष्य मण्डल एवं अनुयायियों में आज भी आदर के साथ पढ़े जाते हैं।[3]

भाणदास (१६९८-१७५५)

आप गुजरात के कबीरपंथी संतों में प्रथम और प्रमुख संत हैं। आपका जीवन काल ई० १६९८ से १७५५ ई० तक माना जाता है।[4] ऐसा प्रसिद्ध

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० १९७।

२ वही।

३ वही, पृ० १९८।

४ वही पृ० २११।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है कि ई० सन् १७५५ में इन्होंने जीते जी समाधि ली थी। पूर्वाश्रम में आप लोहाणा थे। आंबा छड्डा नामक एक गोपाल से ज्ञान प्राप्त होने पर वे गृहस्थ होते हुए भी विरक्त हो गए। इनके कई शिष्य थे। लगभग ४० शिष्यों के साथ वे गुजरात और सौराष्ट्र में उपदेश देने के लिए घूमा करते थे। उनके पदों में विशेषतः गुरु महिमा के पद एवं चेतावनी बोधक पद अधिक सुन्दर एवं लोकप्रिय हैं। गुजराती के अतिरिक्त हिन्दी में भी इनके पद मिलते हैं।[1] इनके पुत्र खीमदास तथा शिष्य रविदास ने कई पदों में अपने गुरु भाण साहब का आदर के साथ उल्लेख किया है।

रवि साहब

अपने पदों में ये 'रविराम' या 'रविदास' शब्द से अपना नामोल्लेख करते हैं। आप तणछा गाँव के बनिये थे। भाणदास जैसे गुरु के सत्संग से पूर्वाश्रम के खाजी वणिक को ज्ञान प्राप्त हुआ था। ये ई० १८वीं शती के उत्तरार्द्ध में वर्तमान थे। उन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी सर्वाङ्ग सुन्दर पद लिखे हैं।[2] पदों का विषय भक्ति एवं ज्ञान है। अपने पदों में अपने गुरु भाण साहब को वे हमेशा श्रद्धा एवं आदर के साथ याद करते हैं। गुरु परम्परा के अनुसार अपने पदों एवं भजनों में इन्होंने भी वाह्याचारों का खंडन एवं आत्म चिंतन का मंडन किया है। उनका 'संतो रमता राम हमारा' पद बहुत ही प्रसिद्ध है।[3]

खीम साहब

भाणदास के सुपुत्र एवं शिष्य खेम या खेमसाहब ने भी अपने पिता एवं गुरु की तरह सुन्दर भजनों और ज्ञान-वैराग्य का उपदेश देने वाले पदों की रचना की है। ये अपने गुरु भाई रवि साहब के समकालीन थे। भगवान की स्तुति से जीवन को सफल बनाने का उपदेश उनके पदों में मिलता है।

त्रिकम साहब

ये खीम साहब के शिष्य थे। ये अस्पृश्य गरोड़ा जाति के थे। ऐसा प्रसिद्ध है कि उन्होंने भी जीवित समाधि ली थी। उन्होंने ज्ञान एवं वैराग्य का बोध कराने वाले कई पद हिन्दी में लिखे हैं। उनकी भाषा में गुजरातीपन अधिक है।

---

१ भजनसागर, भाग २, प्र० सस्तु साहित्य, अहमदाबाद, पृ० ५२७।

२ वही, पृ० ६५०; गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१२।

३ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१२।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मोरार साहब

ये रविसाहब के शिष्य थे।[1] इन्होंने ई० स० १८४९ में जीवित समाधि ली थी। ये मारवाड़ के थराद के राजपूत थे और रविदास की वाणी के प्रभाव से विरक्त होकर जामनगर जाकर दीक्षा ली थी।[2] हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं में उनके पद मिलते हैं। दूसरे सन्त कवियों की तरह उनके काव्यों में भी ज्ञान एवं वैराग्य का पुट मिलता है। "मैया मेरो मनवो भयो वेरागी मारी लेह तो भजनमां लागी,' 'हर मेरे हंसा चलो निज देशा जहाँ अमर पुरुष अस्थाना रे।' 'मेरे प्रीतम चले परदेश जीवन में कैसे जीऊं' जैसे उनके पदों में इनके भक्ति-ज्ञान-वैराग्य एवं कवित्व के दर्शन होने हैं।[3]

मूलदास

मूलदास का निवासस्थान अमरेली था। इन्होंने भी गुजराती के साथ साथ हिन्दी में कविता की हैं। उनकी हिन्दी रचनाएँ भजनसागर भाग २ (प्र० सस्तु० साहित्य, अहमदाबाद) में देखी जा सकती हैं।

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१२।

२ वही।

३ वही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सातवां प्रकरण

गुजरात के उन्नीसवीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

उन्नीसवीं शताब्दी में भी बहुत से कवि हुए हैं जिन्होंने हिन्दी काव्य साहित्य को अपनी महामूल्य रचनाओं से समृद्ध एवं समलंकृत किया है। इन गुजराती कवियों में से गोविन्द गिल्लाभाई, राजा साहब, रणमल्ल सिंह जी, दलपतराम डाह्याभाई कवि, कल्याण एवं भाण से एवं इनकी कृतियों से हिन्दी साहित्य के अध्येता थोड़े-बहुत परिचित हैं ही। पर इनके अतिरिक्त जिन-जिन कवियों एवं कृतियों की समीक्षा की गई है वह प्रथम बार ही हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत हैं। गुजरात में प्राचीन काल से ही कवि लोगों की प्रीति अपनी भाषा के अतिरिक्त ब्रजभाषा (हिन्दी) पर भी रही है। फलस्वरूप इन कवियों ने प्रत्येक शताब्दी में गुजराती के अतिरिक्त ब्रजभाषा (हिन्दी) में उत्तम ग्रंथों की रचना की है। पर आश्चर्य एवं दुख की बात है कि ऐसी रचनाओं के प्रति गुजराती के एवं हिन्दी के विद्वानों की उपेक्षा ही रही। हिन्दी रचना होने से गुजराती के विद्वान इनकी ओर आकर्षित न हों यह स्वाभाविक ही है। इसी तरह हिन्दी प्रदेश से कई मील दूर तथा गुजराती लिपि के आवरण के नीचे छिपी होने से हिन्दी के उच्च कोटि के विद्वान भी ऐसी कृतियों से बिलकुल अनभिज्ञ ही रहे।

इस शताब्दी के कवियों में उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त राजा साहब अमरसिंह जी, हीराचन्द कानजी कवि, नभुलाल, बालाशंकर, राधाबाई, जामसुता

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाड़ेजी श्री प्रताप बाला, बजमलजी महेडु, होथी साहब, जीवण दास; सविता नारायण, नृसिंहाचार्य, अरजुन भगत, छांटम, एवं महात्मा हरिदास मुख्य हैं। राजा साहब अमरसिंह जी, राजा साहब मानसिंह जी एवं जामसुता जाड़ेजी, श्री प्रताप बाला सौराष्ट्र के प्रसिद्ध राजघराने के थे। बजमलजी महेडु पिंगल सिंह गढवी सौराष्ट्र के राजाओं के आश्रित कवि थे। होथी साहब, जीवण दास, नृसिंहाचार्य, अरजुन भगत एवं महात्मा हरिदास सन्तमत के कवि थे। इन सभी कवियों का विस्तृत आलोचनात्मक अध्ययन अब दिया जाता है।

नभुलाल धानतराय जी द्विवेदी (ई० स० १८०२-१८७२)

नभुलाल द्विवेदी नडियाद के साठोदरा नागर थे। इनका जन्म ई० सन् १८०२ में और मृत्यु ई० सन् १८७२ में हुई।[1] इनके पिता धानतराय जी शक्ति के उपासक थे और कहा जाता है कि जगदम्बा के आशीर्वाद के फलस्वरूप ही नभुलाल का जन्म हुआ था।

बाल्यकाल से ही इनको संगीत और कविता का शौक था। ये कृष्ण और देवी के अनन्य भक्त थे। ये आशु कवि भी थे। ऐसा प्रसिद्ध है कि सौराष्ट्र के एक भक्त ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक कोई उसके १७००० पदों का जबाब पदों में न देगा, वह घर नहीं लौटेगा। कहते हैं कि नभुलाल ने पदों का जवाब देकर इसका संकल्प पूरा किया था।

नभुलाल ने संस्कृत, गुजराती, हिन्दी, उर्दू इत्यादि भाषाओं में कविता की हैं। इनकी भाषा में राजस्थानी और पंजाबी का भी प्रभाव दिखाई पड़ता है।[2] इनके शिष्य भट्ट निर्भयराम प्राणशंकर गोगा ने नभुवाणी नाम से इनकी कविता का एक संग्रह सन् १९०३ में गुजराती प्रेस, बम्बई से प्रकाशित किया है।

काव्य प्रदेश में नभुलाल कवि दयाराम का अनुकरण करते हैं। इनके पदों में दयाराम के पदों के समान लालित्य एवं मधुरता है। गुजराती में इन्होंने कृष्ण की बाल लीला के सुन्दर पद लिखे हैं। इन्होंने हिन्दी पदों में काफी विलापल, भैरव, आसावरी, सोरठ, मल्हार, ललित, भैरवी आदि राग-रागनियों का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त संस्कृत के छन्दों का प्रयोग भी इनकी कविता में मिलता है। इनकी रचना का एक उदाहरण देखिए—

मारे बरछी कलम की लगे कोश हजार।
दुनिया धा देखे नहीं, बडा कलम का मार॥

---

[1] अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम्, पृ० ४९५।

[2] शिक्षण अने साहित्य, अक्टूबर १९५१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बडा कलम का मार, रूदे का घाव न रूझे।
अक्कल के मेदान ढाल कागद से झूझे॥
कहे नभू गुन जान, इनुसें सबही हारे।
लगे कोश हजार कलम की बरछी मारे॥[१]

छोटम (ई० स० १८१२–१८८५)

कवि छोटम का जन्म पेटलाद तहसील के मलातज गाँव में सन् १८१२ में हुआ था और इनकी मृत्यु सन् १८८५ में हुई थी। ये साठोदरा नागर थे। इनके पिता का नाम कालीदास था। इनके हीराभाई, शम्भुप्रसाद और ब्रजलाल नाम के तीन छोटे भाई थे। ये तीनों भाई विद्वान थे और क्रमशः ज्योतिष, कर्म मीमांसा और धर्मशास्त्र में निपुण थे।

महात्मा छोटम आजीवन ब्रह्मचारी रहे। इन्होंने नर्मदा नदी के तट पर पुरुषोत्तम आचार्य नामक सिद्ध योगी से दीक्षा ली। दीक्षा देते समय छोटम के गुरु ने पाखंडियों के पन्थ का खंडन करके समाज में नीति तथा धर्म की स्थापना के लिए लोगों को उपदेश देने का आदेश दिया था। गुरु का आदेश सुनकर अध्यात्म प्रेमी छोटम अन्तर्मुखी हो गये। आत्म-बोध होने पर वे बहुजन-हिताय ग्रन्थ रचना करने लगे। इन्होंने गुजराती में लगभग ४३ ग्रन्थ लिखे हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में "बोधसुधा" नामक एक बृहद् हिन्दी ग्रन्थ भी लिखा था। इसकी हस्तलिपि लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति मन्दिर, अहमदाबाद के विद्वान प्राध्यापक डा० हरिप्रसाद शास्त्री के पास है। "बोधसुधा" पर माननीय लेख डॉ० शास्त्री ने अहमदाबाद से प्रकाशित "राष्ट्रवीणा" पत्रिका में लिखा है।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त महात्मा छोटम ने हिन्दी में बहुत से पद और साखियाँ भी लिखी हैं जो 'छोटमनी वाणी,' 'परिचित पद संग्रह' एवं अन्यान्य ग्रन्थों में प्रकाशित हुई हैं।

अध्यात्मवादी छोटम बहुत ही सरल प्रकृति के थे। ये शान्त, मितभाषी और तपोनिष्ठ व्यक्ति थे। दूसरे सन्त-कवियों की तरह इन्हें भी कवि कहलाने या लोकेषणा का लोभ नहीं था। इनकी रचनाओं में बाह्य दृष्टि से छन्द, मात्रा, लघु-गुरु इत्यादि की अशुद्धियाँ अवश्य पाई जाती हैं पर उसमें निहित भावों का अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि वह गहन, गम्भीर, बोधप्रद और ऊँचे घाट का है।

---

[१] अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम, पृ० ४९६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने अपने गुरु के आदेशानुसार पाखंडियों को खूब फटकारा है। मतमतान्तर और जातिपाँति को व्यर्थ बताकर उन्होंने अपने ग्रन्थों में उपनिषदों का दोहन करके रखा है। अन्य सन्त कवियों की तरह महात्मा छोटम ने भी गुरु की बहुत ही प्रशंसा की है। उन्होंने सज्जनों की प्रशंसा एवं दुर्जनों की निन्दा भी की है। उन्होंने नीति-विषयक सुन्दर साखियाँ भी लिखी हैं।

इनकी वेदान्त विषयक दो रचनाएँ दृष्टव्य हैं—

१५

कोई देखो रे आ घटको खेल,
जामे दीप जले बिन बत्ती तेल।
जी हाँ अनहद नाद, बजे अपार, माँही मुरली मृदंग ने सींगी सार,
खटचक्रमां बाजत प्रणवतार। कोई देखो०
जहाँ सोहं-हँसो रमत रंग, लिए पाँच-पचीस प्रकृति संग,
जाके रूप नहीं, आकार, अंग। कोई देखो०
सब देव करत है रंगराग, कोई गुरुमुखी, समझे गुरु को भाग,
तहाँ कल्पवृक्ष की बनी है बाग। कोई देखो०
जहाँ शिव-सनकादिक धरत ध्यान, अति प्रेम सुधारस करत पान,
कहे छोटम ए सद्गुरु की सान। कोई देखो०[1]

१७

खेले पिया गेब गगन में होरी, कहा जानी सके मति मोरी। टेक
आप अरूप रूप बहु सरजे, अन्ड अनन्त करो री,
अखिल जीव कुं नाच नचावे, जाके हाथ में डोरी। खेले०
रूप रंग बहु भाँति-भाँति के, जुगल-नारी नर जोरी,
काहू की सूरत एक सी न आवे, अद्भुत चातुरी तोरी। खेले०
खेलन हार नजर में न आवे, सबकी मति भई भोरी,
सोहं-सोहं शब्द होत है, गुरु गये जात ग्रह्योरी। खेले०
नेति नेति कही निगम पोकारे, विनय करत कर जोर,
छोटम ऐसे प्रभु कुं न जाने, ताकी मति अति थोरी। खेले०[2]

---

१ परिचित पदसंग्रह (तृतीय संस्करण), प्र० सस्तुं० साहित्य, अहमदाबाद; पृ० १०४।

२ वही, पृ० १०५।

CC-0. Agamnigam Foundation. Digitized by eGangotri

१८

गुरु गम से खेलो होरी, मीटे मिलन वासना तोरी । टेक
आसन मारी, सुरत दृढ़ धारी, त्रिकुटी ध्यान धरो री,
सास-उसास शाम संग खेलो, नैन अचल चित्त जोरी;
गगन धर जाई बसोरी ।। गुरु०
अनहद नाद मृदंग मोरली, सुनके सूरत चली मोरी,
कोटि अनंग अंग प्रति सोहे, ऐसे किशोर किशोरी,
संग सखियन की टोरी । गुरु०
झलहल ज्योत उद्योत कोटि रवि, अद्भुत खेल भचोरी,
निरख स्वरूप देव सब मोहे, विनय करत कर जोरी,
निगम जश गात बरौरी । गुरु०
पार-अवार नहि है जाको, गुरुगम जात ग्रह्योरी;
जन छोटम सद्गुरु करुणा से, सो प्रभु दरस भयो री,
देह दोष गयो री । गुरु०[1]

दलपतराम डाह्याभाई कवि (ई० स० १८२०-१८९८)

ये सौराष्ट्र में वढ़वाण के निवासी थे । इनका जन्म सन् १८२० ई० में और मृत्यु १८९८ में हुई ।[2] दलपतराम ने देहात के स्कूल में ही ज्ञान प्राप्त किया था । तदनन्तर उन्होंने कच्छ भुज की ब्रजभाषा पाठशाला[3] में काव्य और पिङ्गल का अभ्यास किया और स्वामी नारायण सम्प्रदाय में दीक्षित हुए । इनके धर्मगुरु स्वामी भूमानन्द एवं शिक्षागुरु देवानन्द स्वामी थे । फार्बस साहब के साथ सारे गुजरात एवं सौराष्ट्र में घूम-घूम कर 'रासमाला' लिखने में सहायता की । ई० स० १८४८ में फार्बस की सूचना से सरकारी नौकरी छोड़ी थी और गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी के मन्त्री बने । दलपतराम ई० स० १८७७ तक दत्तचित्त होकर इस संस्था का कार्य करते रहे ।

गुजराती में इन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थों की रचना की है :

काव्य—फार्बसविलास, विजयक्षमा, गमार बावनी, हंस काव्य शतक, ऋतु-वर्णन, गरबावली, फार्बसविरह, दलपत पिङ्गल, काव्यदोहन ।

---

१ **परिचित पद संग्रह (तृतीय संस्करण)** प्र० सस्तुं साहित्य, अहमदाबाद, पृ० १०६ ।

२ **फरदर माइलस्टोन्स इन गुजराती लिट्रेचर**, के० एम० झवेरी, पृ०२१ ।

३ **गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो**—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ५३ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाटक—लक्ष्मी, मिथ्याभिमान

हिन्दी में इन्होंने ज्ञान चातुरी, ब्रज चातुरी, पुरुषोत्तम चरित्र और श्रवणाख्यान नामक सुन्दर ग्रन्थों और अनेक स्फुट पदों की रचना की है। इनके अतिरिक्त महेरामणसिंह जी विरचित 'प्रवीणसागर' की अन्तिम १२ लहरें इन्होंने ही लिखी थीं।

श्रवणाख्यान—यह इनकी सर्वोत्तम हिन्दी रचना है। इसमें ९ सर्ग हैं। सम्वत् १९२४ की मकर संक्रान्ति के दिन यह ग्रन्थ पूर्ण हुआ। यह काव्य दलपतराम ने बलरामपुर के महाराजा दिग्विजयसिंह को प्रसन्न करने के लिए लिखा था।[1] यह काव्य महाराजा को ही अर्पित किया गया है। इनकी ब्रज की कविता एवं श्रवणाख्यान के विषय में कवि गोकुल का निम्नलिखित अभिमत सर्वथा उचित ही है—

शुभग अर्थ गुन भरे, सलिल शुभ ताप पाप हर।
छन्द अनेकन भाँति, बिराजत सोइ जलचर॥
मात पिता की भक्ति, प्रेम दृढ़ नेम अछै वर।
परमहंस मुनि महत, परस्पर पच्छपात कर॥
लही वेव पुरान अनेक मत, सत संगति शुचि विमल मति।
वृज दरशि सतगति लहै, श्वोन कथा तीरथ नृपति॥१॥

'दण्डक'

छन्द परबन्ध रीति जलचर जीव जामें,
मात औ पिता की भक्ति बारी अभिराम की।
चारु चित्र भुषन तरल है तरंग तुङ्ग,
भ्रमत भवर भूरि धुनि है विराम की॥
राजै गुनबीज गहीराई है गम्भीरताई,
नव परभाव भावै घाट विसराम की।
सविता सुतासी वृज पावन करन इत,
आई कविताई कवि दलपति राम की॥२॥

श्रवणाख्यान शान्त और करुणरस का काव्य है। इस काव्य में कवि ने पितृ-भक्ति की महिमा गाई है।

---

१ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी, पृ० ५३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रवणाख्यान काव्य में से थोड़े उदाहरण देखिए :

१. श्रवन कहै तब पितु घर ठरनां, तब मम पितरन का गति करना ।
सुनि सावित्रि कहै सिर नामी, क्षमा करहू सुनि मम वच स्वामी ॥१०३॥
जब वय वृद्ध पितर निज पावै, सुपुत तबे तिन स्वर्ग पठावै ।
काशी के करवतैं कटावै, अरु गंगाजल माँहि बहावै ॥१०४॥
गंगा सम सरयू गति दाई, बेद पुरान कहत गुन गाई ।
सर्जु में ह्रद यहै अगाधा, बहुत पुनित हरहिं भव बाधा ॥१०५॥
जल प्रवेश तव पितरन करनां, सुपुत्रता को यश शिर धरनां ।
कर ही पितु मातुन कल्याना, ताके सम सुत कौन सयाना ॥१०६॥
में मन क्रम से दासी तुम्हारी, सासु उठाई लहौं सिर धारी ।
तुम निज तात कुं योंहि उठाओ, उक्त प्रमान स्वरग पहुँचायो ॥१०७॥

२. मनहू तें मायर की ममता न मूकै कबु,
अन्तर में अल्प बोज राखे नहि अन्य का ।
सौध तजि कैसे मन मानै पेखी पुर्नकुटी,
नागरिकों कैसे रुचै आश्रम अरन्य का ॥
विविध वसन तजी कैसे रुचै बल्ल कल,
धिक अवतार होत अवतार धन्य का ॥
मेरी सीख सीखो तो सिखामन या सीखी लैना,
निर्धन न लेना कबु धनी की सुकन्या का ॥१२॥

३. अन्ध्रीन को चलनो अटक्यो घटकों दुख संघट आइकें घेर्यो ।
दृष्टिन दैवत दूरि गयो अब आदित्य टारि शकै न अन्धेरो ॥
दांत की पांत परी भुज को बल भाग गयो श्रुति के बल मेरो ।
रे विधि वृद्धपनो पसर्यो बहु जोबन जोर गयो कित मेरो ॥१७॥

४. ग्रीषम भीषम ताप तपै वसुधा, भई वीषम बारि बिना की ।
वानर को सिर फाटी परै तो कह्या नर की रही बात कह्याकी ॥
वात सहात निवास विषै न प्रवास विषै कहुँ क्या प्रसर्या की ।
राह नहीं पुनि दाह लगै श्नौन कियो अवगाह एकाकी ॥
घेरी रही घनघोर घटा चपला की छटा चमकै बहु पासै ।
मोर करे तरु के पर तांडव खांडीव सी बन की भुवि भासै ॥
कुंज समान कहै दलपति बड़े अरविन्दन वुन्द विकासै ।
आतुरता सें रहे विरहातुर चातुर का चित्त चातुर भासैं ।

५. कावरी तुला तुल्य खगोल भूगोल नांहि,
परम पुनीत मोछ पदवी की पायरी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रिबेनी को तत्त्व ताकी त्रिरज्जु के तुलनाहिं,
कैन गिनती में गंगा गोमती गोदावरी ।
कावरी को दण्ड यमदण्ड कों विखण्ड कारी,
कावरी नहि है भव निधि की है नावरी ॥
कावेरी-कावेरी कहा करत हों कृपानाथ,
कावेरी कों कृतारथ कारी तोरी कावरी ।।२२॥

यह बहुत ही आश्चर्य की बात है कि मिश्रबन्धु इस कवि की कविताओं को सामान्य कक्षा में रखते हैं। समस्यापूर्ति के लिए लिखी हुई निम्नलिखित पंक्तियों से कवि को शृङ्गारिक कविता की सुन्दरता का ख्याल आएगा। समस्यापूर्ति में इनकी कविता ही सभी से उत्कृष्ट मानी गई थी :[1]

भ्रमर कुटिलाकार, नैन बिन्दु मध्य धार,
माहु ओंकार के आकार आवे-आवे है।
हिय हुपें हेमहार जन्त्र के आकार जानो,
बिच कुच कुम्भ धार इष्ट को अराधे है।
किन्हें बश घनश्याम कहैं दलपति राम,
गोप सुता गोप्य गुन तो हि में अगाधे है।
आधे आधे आखर कों बोली खोली नन आधे,
राधे आधे बैन सें अगाधे मंत्र साधे हैं ।। १ ।।[2]

गुजराती भाषा एवं साहित्य के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य की देन में दलपतराम का योग प्रधान, महत्त्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय है।

गोबिन्द गिल्लाभाई (ई० स० १८४८—१९२५)

इनका जन्म सिहोर[3] (सौराष्ट्र) में सन् १८४८ में हुआ था और निधन सन् १९२५ में हुआ। इनके पिता का नाम गिल्लाभाई और माता का नाम सावित्री बाई था। ये चौहाण राजपूत थे। इनके पूर्वज पीपलाद (मारवाड़) में रहते थे। आपस के कलह की वजह से वे सिहोर (सौराष्ट्र) में चले गये थे।

गोविन्द को स्कूली शिक्षा ज्यादा नहीं मिल पाई। बचपन से ही भाट-चारणों के सत्संग के कारण इनमें वीर रस और शृङ्गार रस की कविताओं के

---

१ गुजराती ओए हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो—डाह्याभाई देरासरी पृ० ५६।
२ वही, पृ० ५६।
३ वही, पृ० ५२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संस्कार पड़े। इन सब भाट-चारणों की भाषा में ब्रज भाषा का अनुपात भी डिंगल की तरह प्रचुर मात्रा में था ही। इतिहास, पुराण, उपन्यास, नाटक चरित्र कथा की ओर भी इन दिनों रुचि हुई, ऐसा श्री गोविन्द कवि लिखते हैं। मित्रों को पत्र लिखते समय काम आये उस दृष्टि से फुटकर दृष्टान्तिक और गूढ़ कूट तथा समस्या पहेली आदि कविताओं का संग्रह करना शुरू किया। दैव योग से उसी समय जैन साधु पानाचन्द जी से परिचय हुआ। पानाचन्द जी से पिंगलशास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया। फलस्वरूप स्वयं कविता करने की वृत्ति हुई। गुजराती में 'विश्वदर्पण', 'कुधारा पर सुधारा की चढ़ाई' और 'कविसार निषेध बावनी' ऐसे तीन ग्रन्थों की रचना की।[1] मित्रों ने काव्यशास्त्र के लक्षण ग्रन्थ पढ़ने की सलाह दी। गुजराती भाषा के अतिरिक्त इस विषय के हिन्दी के मुख्य ग्रन्थों का भी इन्होंने गहन अध्ययन किया। उन्होंने दरिद्रावस्था में भी ब्रज भाषा के काव्यों का इतना बड़ा संग्रह किया कि रामचन्द्र शुक्ल जी ने भी अपने इतिहास में इसका उल्लेख किया है।[2]

हिन्दी में लिखने वाले सभी गुजराती कवियों की तरह ये भी हिन्दी एवं गुजराती दोनों में कविता करते थे। इन्होंने लगभग ३२ ग्रन्थ हिन्दी में लिखे हैं। इनकी रचनाओं के नाम ये हैं :[3]

१. नीति विनोद
२. श्रृङ्गार सरोजिनी
३. षट् ऋतु
४. पावस पयोनिधि
५. समस्यापूर्ति प्रदीप
६. वक्रोक्ति विनोद
७. श्लेष चन्द्रिका
८. गोविन्द ज्ञान बावनी
९. प्रवीण सागर की बारह लहरों
१०. गोविन्द हजारा संग्रह
११. विवेक विलास
१२. लक्षण बतीसी
१३. विष्णु विनय पचीसी
१४. पर ब्रह्म पचीसी
१५. शील नख चन्द्रिका
१६. प्रबोध पचीसी
१७. राधा रूप मंजरी
१८. भूषण मंजरी
१९. श्रृङ्गार षोडषी
२०. भक्ति कल्पद्रुम
२१. राधामुख षोडसी
२२. पयोधर पचीसी

---

१ हिन्दी अनुशीलन, वर्ष ११ : अंक १ में जयेन्द्र त्रिवेदी का लेख, 'गोविन्द गिल्लाभाई, पृ० ५९।

२ वही, पृ० ५९।

३ मिश्रबन्धु विनोद (तृतीय भाग) द्वितीय संस्करण—मिश्रबन्धु, पृ० १२०१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

२३. नैन मंजरी
२४. छवि सरोजनी
२५. साहित्य चिन्तामणि
२६. रत्नावली रहस्य
२७. बोध बत्तीसी
२८. शब्द विभूषण
२९. अन्योक्ति विनोद
३०. अलंकार अंबुधि (अपूर्ण)
३१. प्रेम पचीसी
३२. प्रेम प्रभाकर (अपूर्ण)

इनमें से प्रथम दस प्रकाशित हो चुके हैं।[1]

गोविन्द कवि ने अपनी पुस्तकों में और अन्य जगह अपनी तमाम पुस्तकों के विज्ञापन दिए हैं और मूल्य भी दिया है। इसलिए शायद ये छपी भी होंगी। इन विज्ञापनों में गोविन्द ग्रन्थमाला भाग १, २ के उपरान्त साहित्य चिन्तमणि, गोविन्द हजारा, नवरस हजारा, प्रेम प्रभाकर, किशन बावनी, गोबिन्द ज्ञान बावनी, शिवराज शतक और अमृतधारा वगैरह का उल्लेख है। उनमें से पहली चार में ब्रजभाषा की उत्तम कविताओं का संग्रह है, बाद की तीन रचनाओं में गुजराती टीका भी है और अन्तिम 'अमृतधारा' भगवानदास निरंजनी कृत है जिसका उन्होंने सम्पादन मात्र किया है।[2] इसके अतिरिक्त भूषण कवि की कविता का सम्पादन एवं प्रकाशन करके इन्होंने हिन्दी भाषा एवं साहित्य की महती सेवा की है।

उनकी मृत्यु तक उनके पौत्रों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी, इसलिए कवि ने तो अपनी जिन्दगी गरीबी में ही बिताई।[3]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, मिश्र बन्धुओं एवं हिन्दी के अन्य इतिहासकारों ने इनकी बहुत ही प्रशंसा की है।

नृसिंहाचार्य (ई० स० १८५४–१८९७)

उनका जन्म सूरत जिले के कडोद गाँव में ई० सन् १८५४ में तथा निधन १८९७ ई० में हुआ। ये विसलनगरा नागर थे। उनके पिता का नाम दुर्लभराज और माता का नाम महालक्ष्मी था। ये शुरू से ही सन्तों के सम्पर्क में रहते थे और आध्यात्मिक विचार रखते थे। थोड़े समय के लिए शिक्षक का व्यवसाय करने के बाद ये बिलकुल विरक्त हो गये। बड़ौदा में उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के प्रसार के लिए श्रेयस्साधक मंडल नामक एक संस्था की स्थापना की जो आज भी उत्तम प्रकार का काम कर रही है। आप संगीत के भी अच्छे

---

[1] मिश्रबन्धु विनोद (तृतीय भाग), द्वितीय संस्करण—मिश्रबन्धु, पृ० १२०१।

[2] हिन्दी अनुशीलन, वर्ष ११ : अंक १ में जयेन्द्र त्रिवेदी का लेख, 'गोबिन्द गिल्लाभाई', पृ० ६२-६३।

[3] वही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञाता थे। गुजराती के साथ-साथ श्री मन्नृसिंहाचार्य जी ने हिन्दी में भी कविता की है।[1] श्री मन्नृसिंहाचार्य जी की वाणी जैसे हिन्दी में विकसित हुई है वैसे गुजराती में नहीं हुई है।[2] निम्नलिखित उदाहरण दृष्टव्य हैं—

कोहु चलियो रे चलनार, देश में चलियो रे चलनार।
यही देश की राह विकट है, शूर होय सो जाई।
कायर जन को संग न चाहिये, अध बीच लेवे लुटाइ।
शीर्ष रहित जो होयगा करियो संग हमार॥[3]

उनके पद आज भी बहुत लोकप्रिय हैं।

अरजुन भगत (लगभग १८५० से १९००)

अरजुन भगत जाति के कोली थे। उनका जन्म भड़ौच जिले की अंकलेश्वर तहसील के एक छोटे गाँव में हुआ था। ऐसा माना जाता है कि वे सन् १८९४ तक जीवित थे।[4] उनके जन्म एवं मृत्यु के समय के बारे में निश्चित जानकारी नहीं है। 'अर्वाचीन कविता' के लेखक सुन्दरम् के अभिमतानुसार उनका समय सामान्यतः ई० स० १८५० से ई० स० १९०० तक मान सकते हैं।[5] उन्होंने निरांत के शिष्य रणछाड़ से दीक्षा ली थी। गुरु की कृपा से हृदय में भक्ति-भावना का प्रादुर्भाव हुआ तथा ज्ञान का प्रकाश फैला। फलत : हृदय की गहन अनुभूतियाँ बरबस वाणी के माध्यम से निकल पड़ीं। अरजुन भगत पर पूर्वगामी भक्त कवियों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। अरजुन ने ब्रजरीति की शिष्ट पद्धति से काव्य लिखे हैं जिनमें साहजिकता कम है तथा सौंदर्य विवर्ण है। फिर भी वहाँ भी कई बार बहुत ही सफलता मिली है। उनकी मुक्तक रचनाओं का उदाहरण दृष्टव्य है—

मैं पंखी बिन पाँख के पर हे सतगुरु ज्ञान।
मत्र पवन के आसरे अरजुन उड़ुं ज्ञान॥
भंबब भंबब बाजत ढोलक ढोल न जानत कोन बजावे।
ज्ञान पिछान चडी असमान पतंग न जानत कौन चगावे॥
नीर में नाव डुबे कदी दाव ज, नाव न जानत कौन डुबावे।
अर्जुन ज्ञाति न जानत रानि, आ कायाकुं कौन चलावे हिलावे॥[6]

---

१ नृसिंह वाणी विलास और श्रीमान् नृसिंहाचार्य जी शताब्दी स्मृति ग्रंथ।
२ अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम्, पृ० ५११।
३ वही, पृ० ५१२।
४ अरजुन वाणी, सं० महादेव देसाई।
५ अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम्, पृ० ४९९।
६ वही, पृ० ५०१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनके हिन्दी पदों में अन्य गुजराती कवियों की तरह ही गुजराती शब्द इधर-उधर पाये जाते हैं।

बालाशंकर उल्लासराम कंथारीआ (ई० स० १८५६–१८९८)

इनका जन्म नडियाद में सन् १८५६ में हुआ और मृत्यु सन् १८९८ में हुई।[1] ये साठोदरा नागर थे। इन्होंने दलपतराम से काव्य शिक्षा ग्रहण की।[2] इन्होंने गुजराती साहित्य की अनन्य सेवा की है। बालाशंकर कंथारीआ कवि, लेखक, पत्रकार, इतिहासविद तथा पुरातत्त्ववेत्ता थे। ये अरबी, फारसी, संस्कृत अंग्रेजी और ब्रज भाषा में बहुत ही निपुण थे। इन सभी भाषाओं से साहित्य सौरभ का संचयन करके इन्होंने गुजराती भाषा एवं साहित्य को अपना विशिष्ट योग प्रदान किया।

बालाशंकर ने भारती भूषण, इतिहासमाला इत्यादि सामयिकों का सफल संपादन किया। भारती भूषण में ये गुजराती और ब्रज के प्राचीन अप्रकाशित कार्यों को प्रकाशित किया करते थे। कर्पूर मंजरी तथा मृच्छकटिक जैसे नाटकों का इन्होंने गुजराती में अनुवाद किया है।[3] 'साहित्य दर्पण' एवं 'नारदभक्ति सूत्र' जैसे गद्य ग्रन्थों का भी इन्होंने गुजराती अनुवाद किया था। फारसी में से हाफिझ की गजलों का अनुकरण करके बहुत सी गजलें इन्होंने लिखी हैं। ये गुजराती साहित्य के हाफिझ माने जाते हैं।

गुजरात में ब्रजभाषा में लिखित 'प्रवीणसागर' के समान एक महान कृति 'साहित्यसिन्धु' नामक काव्य शास्त्र के ग्रन्थ के संपादन का कार्य इन्होंने शुरू किया था। रस एवं अलंकारों के दृष्टांत देने के लिए अपने बनाये हुए कई पद एवं कवित्त उन्होंने इस ग्रन्थ में जोड़े थे। इस ग्रन्थ में हिन्दी के कई अन्य कवियों की कविता से भी उन्होंने उदाहरण दिये हैं। दलपतराम एवं बालाशंकर की ब्रजभाषा की कविता की तुलना करने पर दोनों की सजीव शक्ति की विभिन्नता प्रतीत होती है। गुजराती की अपेक्षा ब्रजभाषा में दलपतराम की सर्जक शक्ति शुद्ध काव्य के स्वरूप में विशेष प्रकट हुई है। फिर भी इनका काव्य तत्कालीन भाषा कविता में प्रचलित शब्दार्थ चमत्कृतिमय बाह्य कौशल से अधिक गहरा नहीं प्रतीत होता, पर बालाशंकर की रचनाएँ केशव एवं रसखान की तरह अनुभूति की गहराई तथा कल्पना की सर्जकता से सुशोभित हैं; जैसे—

---

१ साहित्य प्रवेशिका—हि० ग० अंजारिया, पृ० ५०।

२ अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम् पृ० १५८।

३ वही, पृ० १७०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आंखि नहीं बरखा बदरा यह आंसु नहीं जग जीवन धारा।
धार चलीं यह नाहीं कपोल यही वृजधार सों भींजी सुधारा॥
आंखों की मेखोनमेख नहीं पेचहु चपला चहुकी हैं अपारा।
आंसु से भींज गये पिय आखर नाथ ही मत्त मयूरन हारा॥[1]

श्री उमाशंकर जोषी जी ने 'क्लांत कवि' नामक पुस्तक में इस कवि का सम्यक् मूल्याङ्कन किया है।

राजा साहब अमरसिंह जी

ध्रांगध्रा के झाला राजाओं ने भी स्वयं हिन्दी में काव्य रचना करके एवं हिन्दी कवियों को आश्रय देकर सरस्वती देवी की महती साधना की है।

राजा साहब अमरसिंह जी ने ध्रांगध्रा की गद्दी पर ई० सन् १८०४ से १८४८ तक राज्य किया। इनको साहित्य में बहुत ही रुचि थी। ये प्रायः भक्ति भाव में तल्लीन होकर गुजराती में स्तुति, भजन इत्यादि रचा करते थे ऐसा कहा जाता है। इनकी रचनाएँ मुख्यतया गुजराती में ही हैं। पर इनकी रचनाओं में हिन्दी का पुट भी पाया जाता है। साहित्यिक दृष्टि से इनकी रचनाओं का अधिक मूल्य नहीं है।

राजा साहब रणमल्ल सिंह जी

ये राजा साहब अमरसिंह जी के कुमार थे। अमर सिंह सन् १८४८ में स्वर्गवासी हो गए। तदनंतर रणमल्लसिंह जी ३२ वर्ष की आयु में गद्दी पर बैठे एवं सन् १८६९ में २६ वर्ष राज्य करके स्वर्गवासी हुए। राजा साहब अच्छे विद्वान थे।[2] इन्होंने भक्ति, नीति एवं शृङ्गार विषयक कई पद हिन्दी में लिखे हैं। इनके पदों का माधुर्य एवं लालित्य इनको उच्च पंक्ति के कवि का स्थान देने में समर्थ है।

राजा साहब मानसिंह जी

ध्रांगध्रा के राजा साहब रणमल्ल सिंह जी की मृत्यु के बाद इनके ज्येष्ठ राजकुमार मानसिंह जी गद्दी पर बैठे। वंश-परम्परा से ही इनको साहित्यिक अभिरुचि प्राप्त हुई थी। संस्कृत, फारसी तथा ब्रजभाषा में इनकी बहुत ही योग्यता थी। इनको अलंकार शास्त्र का भी अच्छा ज्ञान था और इनकी रचनाओं में सभी रस पाये जाते हैं। फिर भी इनकी कविता का मुख्य रस शृङ्गार है। इन्होंने ब्रजभाषा में कई पदों की रचना की है।

---

[1] अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)—सुन्दरम्, पृ० १६०-१६१।
[2] मिश्रबन्धु विनोद, तृतीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ११७०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिंगल सिंह पाताभाई गढवी

पिंगल सिंह भावनगर के महाराजा भावसिंह जी के राज कवि थे। इन्होंने ई० सन्० १८७७ में 'तख्त प्रकाश' और ई० सन् १८९९ में महाराज भाव सिंह जी की प्रशस्ति में 'भावभूषण' नामक सुन्दर ग्रन्थ का प्रणयन किया है। ये जाति के चारण थे। इनकी कई पीढ़ियाँ इसी राज्य के आश्रय में बीती थीं। इनके पिता पाताभाई गढवी भी ब्रजभाषा में कविता किया करते थे। पाता भाई ने 'जसविलास' नामक एक सुन्दर ग्रन्थ ब्रजभाषा में लिखा है।

पिंगलसिंह गढवी की रचनाओं में 'भावभूषण' ग्रन्थ सर्वोत्तम है। कवि ने इस ग्रन्थ की रचना संवत् १८५५ में की थी। कवि ने इस ग्रन्थ के दो भाग किये हैं। प्रथम भाग में कवि ने लगभग १९० पृष्ठों में महाराज भावसिंह जी के राजवंश का विस्तृत परिचय दिया है। द्वितीय भाग में कवि ने ११० अलंकारों के लक्षण उदाहरण सहित दिये हैं। प्रत्येक अलंकार के उदाहरण में महाराजा भावसिंह जी की प्रशंसा की गई है। 'भाव भूषण' हिन्दी साहित्य के उत्कृष्ट ग्रन्थों में अवश्य ही मूर्धन्य स्थान ले सकता है।

हीराचन्द कानजी कवि

ये मोरबी (सौराष्ट्र) के निवासी थे और दलपतराम एवं नर्मद के समकालीन थे। ब्रजभाषा में इनकी बहुत ही योग्यता थी। उनके 'पिंगलादर्श', 'हीरा शृंगार' एवं 'सुन्दर शृङ्गार' नाम के ब्रजभाषा के ग्रन्थ बहुत ही प्रसिद्ध हैं।

पिंगलादर्श में इन्होंने प्रारम्भ में कवि तथा कविता के विषय में लिखा है। बाद में ४०० छन्दों के लक्षण और उदाहरण उन्हीं छन्दों में दिये हैं तथा उनका अर्थ गुजराती में समझाया है। पिंगलादर्श को तैयार करने के लिए कवि ने अनेक संस्कृत एवं ब्रजभाषा के ग्रन्थों का अध्ययन किया था।

इनके 'हीरा शृङ्गार' तथा 'सुन्दर शृङ्गार' दोनों ग्रन्थ शृङ्गार विषयक है। गुजरात में ब्रजभाषा का अध्ययन करने वाले इन ग्रन्थों का अध्ययन अवश्य करते थे।

इनकी कविता मधुर एवं प्रभावोत्पादक है।

राधाबाई

ई० स० १८३४ में इन्होंने रामनाथ महादेव (बड़ौदा) में एक अवधूत से दीक्षा ली थी और शेष जीवन उन्हीं के साथ रहकर ईश्वर भक्ति में व्यतीत किया था।[1]

ये कृष्ण की भक्त थीं। आकर्षक व्यक्तित्व होने से सब जगह इनका

---

[1] प्राचीन काव्य माला भाग ६, प्र० प्राच्य विद्या मन्दिर, बड़ौदा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सत्कार किया जाता था। राधाबाई का जीवन सामान्यतः बड़ौदा में ही बीता। इन्होंने अवधूत बाबा के साथ तीर्थयात्रा भी की थी। ये अपने गुरु का बहुत ही आदर करती थीं। गुरु के सम्पर्क से एवं देशाटन से राधाबाई कई भाषाएँ जानती थीं। इनकी शब्द योजना बड़ी विचित्र और मनमानी है। इन्होंने हिन्दी में स्फुट पद रचना की है।

जामसुता जाडेजी श्री प्रतापबाला

ये जामनगर के महाराजा रिडमलजी की पुत्री तथा जोधपुर के महाराज श्री तख्तसिंह जी की महारानी थीं। इनका जन्म सम्वत् १८६१ (ई० स० १८३५ में) और विवाह सम्वत् १९०८ (ई० सन् १८५२) में हुआ था। ये दयालु, प्रजावत्सल और स्वधर्म पर श्रद्धा रखने वाली विदुषी थीं। इन्हें कविता करने का शौक था। इनके पद 'प्रताप कुंवरी रत्नावली' में प्रकाशित हुए हैं। इनकी रचनाएँ बहुत ही सरस और भक्ति-भावना से ओतप्रोत हैं।

वजमलजी महेडु

सौराष्ट्र के बारोट वजमलजी परवत जी महेडु ने जामनगर के जाम विभाजी के आश्रय में 'विभाविलास' नामक बृहत् ऐतिहासिक काव्य लिखा है। यह काव्य ई० स० १८७६ में लिखा गया है। भाषा और भाव की दृष्टि से यह काव्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

उद्धव उपनाम औघड़

इस कवि का उल्लेख मिश्रबन्धु विनोद में इस प्रकार मिलता है[1] :

नाम—१९१४/१ : उद्धव उपनाम औघड़

ग्रन्थ—कर्णजक्तमणि २, कुकवि कुगर

कविता काल—१९०० के पूर्व

विवरण—लखतर काठियावाड़ वासी औदीच्य ब्राह्मण थे।

इनका जन्म सन् १८४१ में हुआ। ई० स० १८६९ के लगभग इन्होंने लखतर दरबार में रहकर श्री करणसिंह जी के नाम से कर्णजक्तमणि नामक ग्रन्थ बनाया। इनका ब्रजभाषा पर अच्छा अधिकार था।

होथी साहब

होथी साहब जाति के मुसलमान थे और मोरार साहब के शिष्य थे।[2] मोरार साहब की वाणी से प्रभावित होकर वे घर से निकल पड़े थे। उन्होंने भी गुरु-परम्परा के अनुसार हिन्दी एवं गुजराती में पद रचना की है। उनके पद भजन सागर में संगृहीत हैं।

---

१ मिश्रबन्धु विनोद (द्वितीय आवृति) तृतीय भाग—मिश्रबन्धु, पृ० १०७६।
२ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीवणदास

आप मध्य सौराष्ट्र के निवासी थे और जाति के चमार थे। आप विक्रम साहब के शिष्य भीम के शिष्य थे। प्रत्येक पद की अन्तिम पंक्ति में उन्होंने दासी जीवन की छाप लगा दी है।[1] गुरु-परम्परा के अनुसार उन्होंने भी गुजराती के अतिरिक्त हिन्दी में पद लिखे हैं। सन्तों को हरिस्वरूप मानकर अनेक पदों में उन्होंने अपने आपकों सन्तों की भी दासी कहा है। उनकी कविता का एक उदाहरण देखिए—

राम समर मन राम समर ले, अरे मूर्ख क्यों मन सूता। टेक
जाग्रत नगरी चोर न लूटे, जख मारेगा जमदूता ॥ राम०
जप कर तप कर कोटि यज्ञ कर, काशी जब करवत लेता।
मूआ पछी मुक्ति नहीं होवे, रण में सरजे जमदूता ॥ राम०
जोगी होकर जटा बढ़ावे, अंग लगावे भवभूता।
दुमडी कारण देहि जलावे, सो जोगी नहि जमदूता ॥ राम०
जोगी होय सो जंगम रहेवे, कम क्रोधकुं दे दंडा।
अधर तख्त पर आप विराजे, सो जोगी हय अवधूता ॥ राम०
सूता सो नर गया चोराशी, जाग्या सो निरभे होता।
दास जीवण गुरु भीमने चरणे, अनुभवी अनुभव लेता ॥ राम०[2]

दीन दरवेश

दीन दरवेश १९वीं शती के पूर्वार्ध में विद्यमान थे। मिश्रबन्धुओं ने इन्हें सौराष्ट्र और मेनारिया जी ने मेवाड़ का सिद्ध करने की कोशिश की है। दीन दरवेश ने पालनपुर के नवाब शेरखां और बड़ौदा के महाराज फतेसिंहराव के निधन पर जो कुंडलियाँ लिखी हैं, उनसे अनुमान किया जा सकता है कि वे गुजरात के ही होंगे। गिरनार के बालगिरि जी से इन्होंने दीक्षा ली थी।

पूर्वाश्रम में आप ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेवा में मिस्त्री का काम करते थे। युद्ध में एक हाथ कट जाने पर आप काम-काज छोड़कर फकीर बन गये और देशाटन करने लगे। ज्ञान-प्राप्ति करने के पश्चात् ये घूम-घूमकर उपदेश देने लगे। दीन दरवेश वृद्धावस्था में वाराणसी चले गये थे तथा वहीं इनका निधन हुआ। उन्होंने स्वतन्त्र जीवन, विश्वप्रेम, परोपकार, ईश्वरभक्ति, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य एवं ज्ञान-वैराग्य के विभिन्न पहलुओं पर कुंडलियाँ लिखी हैं।

---

१ गुजराती साहित्य (मध्यकालीन)—अनन्तराय रावल, पृ० २१३।
२ श्री भजन सागर, प्र० सस्तु साहित्य, अहमदाबाद, पृ० २१२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहान

आप सिद्धपुर के निवासी थे।[1] आप प्रसिद्ध सन्त दीन दरवेश के समकालीन थे। उन्होंने सन् १८१९ के लगभग कुछ कुंडलियाँ लिखी हैं। कहते हैं कि सिद्धपुर के मेले में इनका दीन दरवेश से एक कुंडलिया की रचना पर वादविवाद हुआ था।[2]

कल्याण

आप डाकोर (गुजरात) के थे। उनका कविताकाल ई० सन् १८४५ तक कहा जाता है। उन्होंने हिन्दी में छन्दभास्कर एवं रस-चन्द्र नामक दो ग्रन्थों की रचना की है। इनका अखाड़ा अभी तक डाकोर में है।[3]

भाण

भाण मांडवी के निवासी गिरनारा ब्राह्मण मानजी के पुत्र थे। १८४४ ई० के पूर्व इन्होंने भाण-विलास और भाण-बावनी नामक ग्रन्थों की रचना की है।[4] उनकी रचनाओं में बाह्याडम्बरों का त्याग कर आत्मा को पहचानने का उपदेश है।

सवितानारायण

इनका जन्म ई० सन् १८४० में सुरत में हुआ था। ये बड़नगरे नागर थे और शिक्षक थे। इन्होंने विश्वेश्वरनाथ नामक एक ब्राह्मण पंडित से पिंगल एवं अलंकार शास्त्र का अभ्यास किया। ये ब्रज भाषा और गुजराती दोनों में कविता करते थे।

इनकी हिन्दी कृतियाँ अभी तक प्रकाशित नहीं हुई हैं। इन्होंने कई संस्कृत एवं ब्रजभाषा के ग्रन्थों के गुजराती अनुवाद किये। इन्होंने अनेक काव्य ग्रन्थों की टीका लिखकर गुजराती भाषा को समृद्ध करने तथा गुजराती एवं हिन्दी को एक दूसरे के निकट लाने की कोशिश की है। नीति सुधा तरंगिनी, सप्ता संवरण, विहारी सतसई, कविप्रिया, श्रीकृष्ण प्रेमामृत रसायण आदि हिन्दी रचनाओं का उन्होंने गुजराती में अनुवाद और सटीक संपादन किया है।

महात्मा हरिदास

ये सौराष्ट्र के कुंतलपुर के रहने वाले थे। उनके पिता का नाम भाणजी था। ये गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी कविता कर लेते थे। यह निश्चय

---

[1] मिश्रबन्धु विनोद, भाग २ (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० ८९४।

[2] वही, पृ०।

[3] वही, पृ० ८२७।

[4] मिश्रबन्धु विनोद, तृतीय भाग (द्वितीय संस्करण)—मिश्रबन्धु, पृ० १०७९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि उनका जन्म कब हुआ। पर ये ई० सन् १८३४ में वर्तमान थे ही।[1] वे बहुत कम पढ़े-लिखे थे। पर सत्संग से और अनुभव से उन्होंने बहुत ही ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सौराष्ट्र के दीवान रणछोड़ जी उनका बहुत ही आदर करते थे। उनके सम्पर्क से शुरू में ये शिव-भक्ति के पदों की रचना करते थे। पर बाद में उनकी कविता से साम्प्रदायिकता दूर हो गई। उन्होंने भी गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी काव्य रचना की है। उनकी कविताओं का संग्रह हरिदास काव्य नाम से प्रकट हुआ था।[2]

---

१ हरिदास काव्य, सं० दामोदर हीरजी जगड़।

२ वही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आठवां प्रकरण

गुजरात के वीसवीं शती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य को देन

प्रत्येक शती के गुजराती कवियों और उनकी कृतियों से हम परिचित हो रहे हैं। आरम्भ से लेकर उन्नीसवीं शती तक गुजरात के कवियों ने किस तरह हिन्दी काव्य साहित्य को समृद्ध बनाया यह हम देखते आये हैं। अन्य शताब्दीयों की तरह इस वर्तमान शताब्दी में भी हिन्दी गुजरात में काफी लोकप्रिय रही। हिन्दी के लिए आर्य समाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती एवं बड़ौदा के राजा सयाजीराव गायकवाड़ ने जो किया वह सभी भारतवासी जानते ही हैं। इन दो महापुरुषों के शुभ प्रयास से गुजरात में हिन्दी को बहुत ही प्रोत्साहन मिला। तदनन्तर महात्मा गांधी जी के प्रयासों से भारत के अन्य प्रदेशों की तरह गुजरात में भी राष्ट्रभाषा प्रचार जोर-शोर से होने लगा। गुजरात अन्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों की तुलना में हिन्दी को अपनाने में आगे रहा है यह कहने में अत्युक्ति नहीं है। सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक कारणों से ब्रजभाषा (हिन्दी) हमेशा गुजरात में लोकप्रिय रही है यह तो हम देख ही चुके है। पर इस शताब्दी में हिन्दी गुजरात में बहुत ही लोकप्रिय हो रही है और विद्यालयों एव महाविद्यालयों में अब हिन्दी के उचित शिक्षण का भी प्रबन्ध हो गया है। अतः गुजरात जैसे अहिन्दी प्रदेश से 'प्रसाद' या 'पन्त' की कविताओं के समकक्ष हिन्दी काव्य का सर्जन करने वाला कोई कवि पैदा भी हो तो उसमें आश्चर्य नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस शताब्दी के केवल ६३ वर्ष बीत चुके है। ३७ वर्ष अभी शेष हैं। अतः इस शती के कवियों एवं काव्यों के विषय में समीक्षा करने में बहुत ही कठिनाई है। फिर भी इस प्रकरण में इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में लिखे गये काव्यों की आलोचना करने की कोशिश की जायेगी।

इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध के कवियों में अविनाशानन्द, काजी अनवरमियां 'ज्ञानी', दूलेराम काराणी, कुंवरजी नथु वैद्य, दूला भाया काग, रंग अवधूत महाराज, मूलदास एवं सौ० इन्दुमती ह० देसाई जी मुख्य हैं। इनमें से दूला भाया काग, रंग अवधूत महाराज, मूलदास एवं सौ० इन्दुमती ह० देसाई जी तो अब भी अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से गुजराती काव्य साहित्य के साथ-साथ हिन्दी काव्य साहित्य को भी अपनी उत्कृष्ट रचनाओं से अधिक समृद्ध कर रहे हैं। इन सभी की रचनाओं की ओर हिन्दी प्रदेश के विद्वानों का ध्यान आकर्षित होना ही चाहिए, तभी ये उनकी समुचित प्रशंसा करने में समर्थ होंगे।

इन कवियों के अतिरिक्त भी गुजराती साहित्य के प्रमुख कवियों में से उमाशंकर जोषी, सुन्दरम्, प्रियकान्त मनियार, राजेन्द्र शाह एवं कई अन्यों ने कई सर्वोत्कृष्ट हिन्दी गीतों की रचना की है। इन सभी कवियों से हिन्दी काव्य साहित्य को अधिक संवर्धन एवं बल मिलेगा ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है। अब इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध के कवियों एवं इनकी कृतियों का अध्ययन करेंगे।

श्री अविनाशानन्द जी

इनका जन्म संवत् १८९० में वीरमगाम (गुजरात) में हुआ था। ये विसलनगरा नागर थे। इनके पिता का नाम भवानी शंकर तथा माता का नाम यमुनाबाई था। इनका मूल नाम मोती लाल था। इन्होंने खाडीआ (अहमदाबाद) के पास रहने वाले बापु शास्त्री से संस्कृत का अध्ययन किया था। ये अपने पिता के साथ सारंगपुर में खमार की गली (अहमदाबाद) में रहते थे। इनके बड़े भाई बापालाल तथा इनकी भाभी भी साथ ही रहते थे। कहते हैं कि ये अपनी भाभी का बनाया हुआ खाना खाते थे। एक दिन जाति भोज का निमंत्रण आने पर भी कवि वहाँ खाना खाने के लिए नहीं गये और घर में ही खिचड़ी बनाकर भोजन करने की तैयारी की। भाभी ने अपने श्वसुर से इसकी फरियाद की तो श्वसुर ने खिचड़ीवाली थाली खींच ली। इस घटना से कवि का संसार से रस उड़ गया। ये क्रुद्ध होकर जेंतलपुर में मन्दिर में आनन्द-स्वामी के पास जाकर रहे। उस गाँव में यमुना बाई की काकी गंगामा रहती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

थी और इस समय यमुनाबाई अपनी काकी की सेवा कर रही थी। कवि जेतलपुर में आनन्दानन्द स्वामी के पास केवल दस ही दिन रहे। इस समय में ही इनको तीव्र वैराग्य हुआ। यमुनाबाई अपने पुत्र को लेकर अहमदाबाद आई और थोड़े समय के बाद इनका यज्ञोपवीत संस्कार किया। उसी समय ही इन्होंने ब्याह करने से स्पष्ट इनकार कर दिया। तब शीघ्र ही इनको अहमदाबाद के स्वामी नारायण मन्दिर में ले गये और श्री अयोध्या प्रसाद जी महाराज की निगरानी में रखे गये। अयोध्या प्रसाद जी ने फिर इनको वासुदेवानन्द स्वामी को सौंपा। इन दोनों महापुरुषों का कवि पर अनुग्रह था। थोड़े समय के बाद दीक्षा देकर आचार्य श्री ने इनका नाम अविनाशानन्द रखा। इनकी कविता की रुचि को देखते हुए आचार्य श्री ने इनको भुज (कच्छ) की प्रसिद्ध काव्यशाला में भेजा। वहाँ कई वर्षों तक इन्होंने काव्य, रस, पिंगल आदि का अध्ययन किया। वहाँ से वे काव्य रचना किया करते थे। तत्पश्चात् आचार्य अयोध्या प्रसाद जी ने इन्हें बुला लिया तथा अपने साथ छपैया ले गये।

अविनाशानन्द का जीवन अत्यन्त धार्मिक तथा प्रभुपरायण था। ये माणसा के मन्दिर के महन्त भी रहे थे ऐसा कहा जाता है पर इनकी उग्र प्रकृति के कारण माणसा के भक्तराज नरसीभाई के साथ इनका झगड़ा हो गया। इसलिए वहाँ का काम छोड़कर ये मकाखाड में रहने लगे।

कवि के भतीजे रा० चुनीलाल केशवलाल के मत से इनकी मृत्यु संवत् १९३९ के मार्गशीर्ष वद ३ के दिन वरसोडा गाँव में हुई थी।

इन्होंने बासुदेव माहात्म्य, निष्काम शुद्धि, भाषा भूषण, कविप्रिया, भाषा व्याकरण, काव्य कुलोल, रसरहस्य, हरिरस पिंगल, भगवत पिंगल, वेदांतचूर्ण आदि ग्रन्थों की रचना की है।[1]

अविनाशानन्द काव्य में इनके स्फुट पदों का संग्रह किया गया है। इसमें संतों के लक्षण, सत्संगी कुसंगी के लक्षण, पतिव्रता एवं शंखिनी नारी के लक्षण, असंत के लक्षण, श्रीजी की बाल लीला, दानलीला, एवं अन्यान्य विषयों पर सुन्दर काव्य हिन्दी भाषा में मिलते हैं। इनकी भाषा प्रासादिक एवं मधुर है।

इनकी शैली एवं रस के लिए निम्नलिखित शृंगारिक पद दृष्टव्य हैं—

छेल छुवो न छतियां हमार, फटिगो मेरे अंचरवा।
लाख टके की लीनी सारी बिहारी नागर नन्द कुमार॥

---

[1] अविनाशानन्द काव्य, पृ० ९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उरज उतंग नहीं शाम चतुर पिया, नाजुक नवीन लगार।
लोक नगर के देखे डगर में ठाडे सब नरनार।।
अविनाशानन्द कु जेल न कीजो, छोटी में अति सुकुमार।।[1]

काजी अनवर मियां 'ज्ञानी' (१८४३-१९१६)

काजी अनवर मियां 'ज्ञानी' के पूर्वज अरब के निवासी थे।[2] वे कुरेशी वंश में पैदा हुए थे और इसी वंश में मुस्लिमों के महान पैगम्बर हजरत मुहम्मद भी पैदा हुए थे। मुस्लिमों का भारत में राज्य होने पर धर्म के सुधार के लिए उनके पूर्वज भारतवर्ष में आकर दिल्ली में रहे थे। तदनंतर गुजरात में मुसलमानों के राज्य होने के समय पर गुजरात के पाटण शहर में उनके पूर्वज आये थे।[3] इनके पूर्वजों का काजी (न्यायाधीश) का काम दिया गया था और वीसनगर में उनको जागीर दी गई थी।

काजी अनवर मियां का जन्म वीसनगर में विक्रमार्क १८९९ के वैशाख वद ७ शुक्रवार के दिन हुआ था। उनके पिता का नाम आजामियां अनुमियां था। बचपन से ही ये सत्संग एवं एकान्त चिन्तन के प्रेमी थे। ईश्वर की ओर उनकी प्रीति बढ़ती गई और संसार नीरस प्रतीत होने लगा। अतः संत, साधु, संन्यासी, यति, फकीर, पीर इत्यादि वैरागी पुरुषों से उनका संपर्क बढ़ता गया। फलतः हृदय के ईश्वर प्रेम के आवेश से वे एकान्त में रहने लगे।

ये अपनी युवावस्था में आत्म कल्याण के लिए जंगल में और कब्रिस्तान में पीर की कब्रों के पास एकान्तता से रहते और अनेक कष्ट सहन करते। इस तरह कई बार वे जंगल और कब्रिस्तान में चले जाया करते। अन्त में महासुख भाई के अग्रज हठीसंग चुनीलाल के कहने से शहर में ही मस्जिद में रहकर प्रभुभक्ति करने लगे।[4]

सामान्यतः इनका स्वास्थ्य ठीक रहता था। संवत् १९७२ के कार्तिक मास में स्वास्थ्य बिगड़ने से ये पालनपुर गये। थोड़े समय की बीमारी के बाद संवत् १९७२ के पोस वद २ दिनांक २२-१-१९१६ ई० शनिवार हिजरी

---

१ **अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)**—सुन्दरम्, पृ० ५२४।

२ **मुहर्रम महात्मा ज्ञानी काजी अनवर मियांनु जीवन चरित्र**—अनवर काव्य की भूमिका में, महासुखभाई चुनीलाल पृ० ११।

३ **वही।**

४ **वही, पृ० १३।**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सन् १३३४ माहे रबीउल अव्वल की १६ तारीख के दिन मध्यान्ह २॥ बजे ७३ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हो गया।[1]

उनके निधन के पश्चात् उनके शिष्य हठीसिंह चुनीलाल तथा महासुखलाल चुनीलाल ने 'अनवर काव्य' नाम से उनके काव्य का एक संग्रह प्रकट किया। इस संग्रह में उनकी गरबियां, भजन, पद, गजल, नसीहत इत्यादि मिलते हैं। आपने खड़ी बोली में ही अधिक लिखा है।

उनके काव्य में विजय ज्ञान, वैराग्य एवं आत्मबोध है। पदों के अन्त में इन्होंने अपना नाम 'ज्ञानी' लिखा है। उनकी रचनाएं गुजरात में बहुत ही लोकप्रिय हैं।

उनकी वाणी में चमत्कृति अपने आप आ जाती है। कबीर इत्यादि संतों का लाघव, सुन्दर उक्तियाँ एवं बल उनकी वाणी में है।[2] हिन्दी पदों में कई उत्तम संगीत क्षम सुन्दर चीज भी उन्होंने दी हैं। सम्प्रदायवादी मुसलमानों को उन्होंने खूब फटकारा है। हमारे थोड़े संत कवियों में अनवर 'ज्ञानी' को मानार्ह एवं आग्रम स्थान मिलता है।[3]

दूलेराय काराणी

दूलेराय काराणी कच्छ भुज के सहायक शिक्षणाधिकारी थे। इन्होंने भी ब्रजभाषा में कविता की हैं। इन्होंने गांधी बावनी नामक १९४८ में प्रकाशित ग्रंथ में गांधी जी की महत्ता का वर्णन कविता में किया है। इनकी भाषा मधुर एवं प्रासादिक है। इनकी हिन्दी कविता का उदाहरण देखिए—

काहे को तू योगी भयो, काहे को वैराग्य ग्रह्यो।
काहे को तपस्वी बन तन को तपायो है।
काहे को वस्त्रालंकार सुन्दर शृङ्गार तज्यो,
काहे को कोपीन एक, अंग पे लगायो है॥
काहे को अमीरी छोड़ी काहे को फकीरी भयो,
काहे को मधुर तर भोजन भायो है।
काराणी कहत लीनो, काहे को कठिन पथ,
भारत के योगी योग काहे को, जगायो है॥

—गांधी बावनी

---

१ मर्हुम महात्मा ज्ञानी काजी अनवर मियांनु जीवन चरित्र, अनवर काव्य की भूमिका में महासुखभाई चुन्नीलाल, पृ० १५-१६।

२ अर्वाचीन कविता (बीजी आवृत्ति)—सुन्दरम्, पृ० ४९८।

३ वही, पृ० ४९९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुंवरजी नथुं वैद्य

इनका जन्म सम्वत् १९०४ के आषाढ़ वदी ४ के दिन और निधन सम्वत् १९४६ के वैसाख वदी ८ के दिन हुआ था।[1] ये साधु चरित एवं परोपकारी थे। इनके कीर्तन एवं भजनों का संग्रह इनके देहान्त के बाद इनके सुपुत्र अमृतलाल कुंवरजी वैद्य ने 'कुँवर जी कीर्तन संग्रह अने भक्ति विवेक' नाम से प्रकाशित करवाया था।

इनके भजनों में प्रसाद है। भक्ति की थोड़ी झलक भी है। गुजराती रचना की तुलना में इनकी हिन्दी रचनाएँ अधिक सुन्दर हैं।[2] इनकी हिन्दी कविता के उदाहरण देखिए :

(१)

पिया बिनु कोन कटेजी मोरी रतियाँ,
पिया परदेशी मेरो शाम बिनु फट गइ छतियाँ।
दे दे सन्देशा मैंने पिया कु बोलाया,
मेरा कर थक गया लिखी लिखी पतियाँ।
कुंवरजीनो रे कन्थ हठीलो,
स्नेह दीपन की झाइ गई बतियाँ।[3]

(२)

ऐसी राधे गोरटी रे, चोरटी आहिर की।
कसुम्बा को रंग चोर्यो, चन्द्र को बदन चोर्यो॥
कोकिला को कंठ चोर्यो, नासा चोरी कीर की॥ ऐसी० १
गज केरी चाल चोरी, इन्द्र को गुमान चोर्यो।
केसरी को लंक चोरी, दामनी शरीर की॥ ऐसी० २
नाग की नागनीयाँ चोरी, दाडिम की कलियाँ चोरी।
मृग केराँ नेनाँ चोर्यो, छल बल मीन की॥ ऐसी० ३
रती-रती सब को चोर्यो, सामरा कों चित्त चोर्यो।
सुर कहे दरशन दीजे, ठाड़ो जमुना तीर को॥[4] ऐसी० ४

---

१ **कुंवरजी कीर्तनसंग्रह की प्रस्तावना**, प्र० अमृतलाल कुंवर जी वैद्य, पृ० ५।

२ **अर्वाचीन कविता (द्वितीय संस्करण)**—सुन्दरम्, पृ० ५२१।

३ **वही**।

४ **कुंवरजी कीर्तन संग्रह**, प्र० अमृतलाल कुंवरजी वैद्य, पृ० ४३।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(३)

सदा विहरत रहुँ वृन्दावन में,
नाम करण अवसर शीर नायो।
आशिष पाइ मगन भए मन में ।। सदा विहरत० १
गोवरधन वन उपवन फिरहुँ,
करहुँ अलौकिक काल कुंजन में ।। सदा विहरत० २
गोप गोवालनी के ऊपर बसहुँ,
नेह लगाई नये व्रज वन में ।। सदा विहरत० ३
कुंवरजी मनमोहन रसिया,
युगल बीच रहुँ नन्द अंगन में ।।[1] सदा विहरत० ४

इन उदाहरणों से प्रतीत होता है कि ब्रजभाषा पर इनका काफी प्रभुत्व था। आधुनिक काल के हिन्दी सेवी गुजराती कवियों में इनका प्रदान विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण है। गुजरात में कीर्तन करने वाली मन्डलियों में तथा भक्तों में कुंवरजी के पद बहुत ही प्रसिद्ध हैं।

दूला भाया काग (जन्म ई० १९०३)

इनका जन्म भावनगर के मजादर गाँव में सन् १९०३ में हुआ। वंश परम्परा से कृषि का व्यवसाय होते हुए भी ये लोक सेवा एवं साहित्य में बाल्य काल से ही रस लेने लगे। बाल्यकाल से ही रामायण-महाभारत जैसे महाकाव्य एवं चारणी साहित्य के प्रति ये आकर्षित हुए। दूला काग को स्वामी मुक्तानन्द जी से कविता करने की प्रेरणा मिली थी। गुजरात के चारण कवियों में इनका मूर्धन्य स्थान है। गुजराती के साथ-साथ इन्होंने हिन्दी में भी कविता की है।

इनकी रचनाएँ कागवाणी (तीन भाग) नाम से प्रकाशित हुई हैं। चारण होने से इनको हिन्दी में काव्य रचना करने का बहुत ही उत्साह है। इन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी दोहे, छप्पय, भजन, गीत इत्यादि की रचना की है। छन्द और भाषा पर इनका प्रभुत्व इनकी रचनाओं को सफल एवं चिरंजीवी बनाने में योग देता है। इनकी साहित्य सेवाओं एवं सामाजिक कार्य की सराहना करते हुए भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मश्री' उपाधि से विभूषित किया है। इनकी हिन्दी रचना के उदाहरण देखिए :

---

[1] **कुंवरजी कीर्तन संग्रह**, प्र० अमृतलाल कुंवरजी वैद्य, पृ० १३१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(१)

भाव नगर के राम राज्य में, कोउ न भुखे पेट रहे।
सब रैयत पर सब भावों से राज्य की नैयत एक रहे ॥
भरे तालाब राज्य आग्रन सें, नदियों का जल रूक रहे।
खेती कुंज लहराती रहे और, सबके घर में धान्य रहे ॥ १ ॥
घर की गौंवां, घर के बछड़े, घर की घर में खेती रहे।
घर के राजा घर की रैयत, घर-घर में नव क्लेश रहे ॥ २ ॥
नहीं जुल्म से व्यापारों से, वैश्य सदा धनवान रहे।
विद्या औषध ग्राम्य जनों पर शहेरी गृहस्थ उदार रहे ॥ ३ ॥
रक्षणहार बने नहीं भक्षक नृप की कायम नजर रहे।
सबके कारन निलम्बाग के कायम खुल्ले द्वार रहे ॥ ४ ॥
प्रजा संघ अरु राज्य दण्ड सें अबल सबल सब अभय रहे।
युवान का उत्साह रहे और वृद्धों की सलाह रहे ॥ ५ ॥
राजपूतों के वीर धर्म से निर्मल गौवा पाल रहे।
विजय कुमारी राज्यमात का सदा अखण्ड सुहाग रहे ॥ ६ ॥
शरीर सुदृढ़ करने के कारण वीरभद्र की गेम्स रहे।
काग हमारे कृष्ण भूप पर माता जी की महेर रहे[1] ॥ ७ ॥

(२)

कैसी सेवा रही हमारी वो सब हाल सुनाती हूँ।
गोकुल वाले कृष्ण गह अब कृष्ण से ध्यान लगाती हूँ ॥
लाल हमारे सुख-सुख लकड़ी देखी-देखी दुख पाती हूँ।
सारे वर्ष मंह एक दिवस में पेट भरी नहीं खाती हूँ ॥ १ ॥
दूध हमारे जल से पतले हाड भींतर से लाती हूँ।
माताजी कहने वालों का पूजन से घबराती हूँ ॥ २ ॥
पेट में मुख, आँसु अंखियाँ में, रो रो दिखलाती हूँ।
मेरे दूध में सार नहीं है, सुभ के संकट पाती हूँ ॥ ३ ॥
एठे जुठे घास मिले में वोही सें प्रान बचाती हूँ।
मेरे पुत की मेहनत का मैं न्याय कदी नहीं पाती हूँ ॥ ४ ॥
भावनगर में आके देखो, कामधेनु दरशाती हूँ।
गोब्रमन प्रतिपाल भूप का जय जयकार सुनाती हूँ ॥ ५ ॥

---

१ कागवाणी (भागत्री जी)—कवि दूला भाया काग, पृ० ३१२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निर्मल की निर्मल सेवा से, मंगल भोजन पाती हूँ।
काग हर्ष धरी रात दिवस में कृष्ण के मंगल गाती हूँ[1] ।। ६ ।।

अन्य गुजराती कवियों की तरह इनकी हिन्दी रचनाओं में भी कभी-कभी गुजराती शब्द आ जाते हैं। फिर भी इतना अवश्य ही कहा जा सकता है कि इनके हिन्दी काव्य भी उच्च कोटि के ही हैं।

सौ० इन्दुमती ह० देसाईजी

आपका परिवार गुजरात में बहुत ही प्रसिद्ध है। 'देसाईजी-भड़ोच' कहने से सभी इस परिवार को एवं इस परिवार के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक योगदान को पहिचान लेते हैं। इनके पिता स्व० माणेकलाल साकरलाल देसाई पहले बड़ौदा रियासत में रेवन्यु विभाग में दीवान (सरसुबा) थे। वहीं से निवृत्त होने के बाद लूणावाड़ा (गुजरात) रियासत के दीवान हुए थे। इनके चाचा दि० ब० अम्बालाल साकरलाल देसाई बड़ौदा में मुख्य न्यायाधीश के पद पर थे। सारे गुजरात में दि० ब० अंबालाल का सुयश अब भी फैला हुआ है। बहुत वर्ष पहले इनके श्वशुर के परिवार में एक महिला सती हुई थी जिनके विषय में 'सती चुनी (देसाई जी)' नामक पुस्तिका में श्री गोवर्धनराम त्रिपाठी ने विस्तार से लिखा है। इनको धर्म एवं कृष्णभक्ति के संस्कार मातृपक्ष एवं श्वशुर पक्ष—दोनों से—विरासत में मिले हैं।

इनका जन्म संवत् १९५१ में पेटलाद में स्व० मणीभाई जराभाई के घर में ब्रह्मक्षत्रिय परिवार में हुआ था। इनकी माता का नाम अतिलक्ष्मी बहन था। इन्होंने अंग्रेजी का १०वीं कक्षा तक अध्ययन किया है। साहित्य में अभिरुचि होने से इन्होंने गुजराती एवं संस्कृत साहित्य का पर्याप्त परिशीलन किया है। साहित्य के अतिरिक्त 'नर्सिंग' तथा 'होम हाइजीन' में इनकी बहुत रुचि है।

साहित्य के प्रति अभिरुचि तो आरम्भ से ही थी। पर ई० स० १९३३ से भागवत प्रेरणा से एवं अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से लेखन प्रवृत्ति का अत्यधिक विकास होता गया। इनके काव्य संग्रह श्री कृष्ण मंजरी (दो माला) के दो भाग प्रकट हो चुके हैं। प्रत्येक भाग (माला) में १०८ काव्य हैं। दो माला प्रकट हो सकें उतने काव्य लेखिका के पास पांडुलिपि में पड़े हुए हैं। इन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी भाषा में भी कई उत्तम काव्य लिखे हैं। गुजराती साहित्य के प्रसिद्ध लेखक श्री रमणलाल देसाई एवं अन्य साहित्यिकों ने इनकी कृतियों की बहुत ही प्रशंसा की है। इनके काव्यों की भाषा प्रासादिक

---

[1] कागवाणी (भागत्री जी)—कवि दूला भाया काग, पृ० ३१३-३१४।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एवं मधुर है। इनके काव्य में हम मीरा एवं महादेवी के काव्य जैसी हृदय के भावों की अनुभूति देख सकते हैं। आज भी गुजराती एवं हिन्दी काव्य प्रेमियों को इनसे बहुत ही आशाएँ हैं। इनकी अनुमति से इनके कई काव्य परिशिष्ट में दिये गये हैं जिन्हें पढ़ने से पाठक स्वयं इनका मूल्याङ्कन कर सकते हैं।

रंग अवधूत महाराज

आपका जन्म ई० स० १८९८ में गोधरा में हुआ था।[1] आपके पिताजी का नाम विट्ठल था एवं माताजी का नाम रुक्मिणी है। पूर्वाश्रम में आपका नाम पांडुरंग था। जब पांडुरंगजी करीब पाँच साल के थे, तभी इनके पिता की मृत्यु हो गई थी। इस तरह की आपत्ति में परमात्मा के सिवा और किसी का सहारा नहीं था। परिवार की आर्थिक स्थिति भी बिलकुल सामान्य थी। फिर भी माताजी ने परम श्रद्धा एवं धैर्य से अग्रज पांडुरंग एवं इनके लघु भ्राता नारायण से आश्वासन प्राप्त किया। आठ वर्ष की आयु में ननिहाल में इनका यज्ञोपवंत संस्कार किया गया। तदनन्तर पुत्र को लेकर माताजी नरसोबावाडी के दर्शन के लिए गईं। भगवान दत्तात्रेय के अंशावतार के समान पूज्य वासुदेवानन्द सरस्वती स्वामी महाराज वहीं बिराजते थे। पांडुरंग को देखते ही स्वामी महाराज ने कहा, "यह बच्चा तो हमारा है।" पांडुरंग भी मानो अपने गुरु को पहचान गये हों इस तरह महाराज के पास दौड़ गये। उस समय तो उनको रोका गया। पर उस क्षण से ही उनको स्वामी महाराज का आशीर्वाद एवं अनुग्रह मिल गये थे।[2]

बाल्यावस्था से ही अति बुद्धिमान पांडुरंग वलामे भविष्य में प्रतिभा-सम्पन्न बेरिस्टर या अग्रणी बनेंगे ऐसी आशा बहुत लोगों को थी। पर गत जन्म के संस्कार और विशेष रूप से स्वामी महाराज के आशीर्वाद एवं अनुग्रह से विद्यार्थी अवस्था से ही पाडुरंग में आत्मसाक्षात्कार की उत्कट इच्छा जाग्रत हुई थी। महात्मा गांधीजी के असहयोग आन्दोलन से भी वे बहुत प्रभावित हुए थे और इसमें सम्मिलित भी हुए थे। इनके कई ग्रन्थ भी प्रकाशित हुए थे जिनमें 'गीर्वाण भाषा प्रवेश', 'उपनिषदनी वातो,' एवं 'टॉल्स्टोय अने शिक्षण' मुख्य हैं। इन सभी प्रवृत्तियों के साथ-साथ आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने की इनकी साधना तो चल ही रही थी। प्रारम्भ में उन्होंने शिक्षक का व्यवसाय अपनाया था। वि० सं० १९८१ में आपने एकांत पर भयंकर स्थान नारेश्वर में दत्तपुराण के

---

१ नारेश्वरनो संत—अश्विन कुमार कां, ढेबर पृ० ९७।

२ वही, पृ० २०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१०८ पारायण पूर्ण करने के बाद और वासुदेवानन्द सरस्वती स्वामी महाराज के कृपापात्र गांडा महाराज से मिले। 'गांडा महाराज' ने अपने मराठी ग्रन्थ 'गुरु मूर्ति चरित्र' का संशोधन पांडुरंग को सौंपा था। तदनन्तर पतितपावनी नर्मदा मैया की परिक्रमा पूरी करने के बाद उन्होंने नारेश्वर में कठोर तपश्चर्या का प्रारम्भ किया और यही इनकी साधना और साक्षात्कार की भूमि बनी। आज भी रंग अवधूत उसी स्थान में रहकर चिन्तन, मनन एवं निदिध्यासन करते हुए भक्तिमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अपनी माताजी की सेवा करने के लिए ही अवधूतजी इसी स्थान में रहते हैं। एक समय का भयंकर स्थान आज तो बहुत ही रमणीय हो गया है।

पूर्वाश्रम के श्री पांडुरंग वलामे एक महाराष्ट्र के विद्वान अवधूत होकर नर्मदा के तीर पर (नारेश्वर में) रहते हैं और इनके गुजरात एवं महाराष्ट्र में बहुत अनुयायी हैं। अभेदमार्ग के यह प्रवासी ईश्वर को दत्त के स्वरूप में भजते हैं। ये संस्कृत एवं मराठी के अच्छे विद्वान् हैं और गुजराती पर भी मातृभाषा के समान ही प्रभुत्व है। 'ऊभो अवधूत' के भजनों में श्री रंग अवधूत की हिन्दू धर्म की उदार धर्मभावना के अतिरिक्त गहन अनुभूति, ज्ञान एवं अनुभव प्रकट होते हैं। कई भजन (उदाहरण के लिए नं० १०, १२) भोजो एवं धीरा की याद दिलाते हैं। इनकी कृति 'पत्रगीता' (१६ चित्रकाव्य) ओवी छंद में है। इस ग्रंथ में श्रीमद्भगीद्गीता के सर्वोत्तम सोलह श्लोकों का रहस्य व्याख्या द्वारा समझाया गया है। 'रंग स्तवन' में श्री रंग अवधूत के अनुयायियों द्वारा रचित इनके स्तवन हैं। संतों की प्राचीन परम्परा अब भी जीवित है एवं भारतीय संस्कृति को पुष्ट करने का प्रयास चलता रहता है यह ऐसे ग्रंथों से देख सकते हैं और इससे हृदय को हर्ष होता है।[1]

'अवधूती मौज' में इनकी हिन्दी रचनाएँ संगृहीत हैं। जनम-जनम के सुप्त सुसंस्कार 'गुरुशावद' से जाग्रत होते हैं। शिष्य को 'बिना तेल जले जहाँ ज्योति,' वहाँ पहुँचने का सीधा रास्ता मिलता है। इतना ही नहीं, गुरुदेव शिष्य का 'सलुना दस्त' पकड़ कर अपने आप 'अगमघाट' चढ़ाते हैं। इस प्रकार गुरु की अगाध महिमा गाते इन भजनों में स्वाभाविक ही 'जहाँ सांई का थाना' वहाँ जाने का रास्ता, नीति नियम, सच्चे और ढोंगी गुरु के भेद, आत्मानंद की अनुभूतिपूर्वक मौज और सांकेतिक भाषा द्वारा और प्रतीकों एवं अन्योक्तियों द्वारा अगम्य स्थान का अवर्णनीय ज्ञान मिलता है। इन सबके जरिये

---

[1] ओगणचालीसमुं ग्रन्थस्य वाङ्मय, प्र० गु० सा स०भा अहमदाबाद पृ० ३३-३४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहस्यवाद के उपरान्त कभी-कभी पलायनवाद रहित छायावाद का दर्शन भी होता है।[1] उदाहरणार्थ, "सुन-सुन तपसी, ज्ञान सुनावूं, फिर ध्यान लगाव; मन चले तो चलन दे, पर तन न जाय लगार ऐसी भीतर सुरत चलाव," "कर सत्संगत साधन सुमिरन, साधन बिन अँधारो है; रागद्वेष न छूटे तबहूँ ज्ञान पेट गुजारो है," "परनिंदानें गूंगा बहिरा, परसी षंढा बाल; हाथ कटा पर धन लेने में मूक दीनदुखहार।" इनमें मार्ग दिखलाकर नियम भी सूचित हैं। "नाते गोते सब स्वारथ के निःस्वारथ, गुरुराना; आप समान करे शिष्यन को देवे पद निरबाना," "बांचत निशदिन पंडित पोथी, दिल धोत्ती में बिगरो है" ऐसी पंक्तियाँ गुरु रहस्य खोलती हैं। "धरती का तो बना सिंहासन, छत बादल तरु फैला; मारुत मंदा चमर डुलावे; बैठे बादशाहा रंग अजब दिखाये" ऐसी पंक्तियाँ अवधूनी मौज की झाँकी कराती हैं। "वीचि समुन्दर उठ पल में, आप समुन्दर होई, कौन कहे जो बीती वाको ? होने से समुझाई," "नित-नित नूतन भोग-भोग के ब्रह्मचारी कहलाता; नारी नर के वस्त्र खींच के दिव्य तनु दिखलाता," "पूर्णानंद गजर लियो, पनुघट को पंथ धरो; रंग चुनरी फेंक भयो, सोहं गगन घेरो !" इनमें संकेत एवं प्रतीक और अन्योक्ति द्वारा अवर्णनीय का वर्णन करने का हूबहू चित्र है। इस प्रकार इन भजन पक्तियों में उपर्युक्त बातें स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं। श्री रंग अवधूत महाराज की रचनाएँ गुजराती, मराठी, हिन्दी एवं संस्कृत में उपलब्ध हैं। रंग अवधूत जी कवियशःप्रार्थी न होने पर भी हमें प्रतीत होता है कि ये प्रथम पंक्ति के कवियों में मूर्धन्य स्थान प्राप्त करने के अधिकारी हैं।

राजकवि मूलदास मोनदास नीमावत

जामनगर से ८-१० कोस की दूरी पर खीलोस के पास फला नामक छोटा-सा गाँव है। आप उस गाँव के ठाकुरजी के मन्दिर के पुजारी हैं और ब्रजभाषा के अच्छे अभ्यासी हैं। आपने कई वर्ष तक गुजराती स्कूल में शिक्षण का कार्य भी किया। आप कविताएँ लिखते और कभी-कभी लोगों को सुनाते, पर सामान्यतः तो लिखकर छिपा देते। चारणों की तरह ऐतिहासिक बातें करने में और रस के साथ लोक कथाओं को सुनाने में आप प्रवीण हैं। इसकी प्रतीति सदानन्दी जैन मुनि छोटालाल जी को हो गई।[2] संवत् १९७७ से छोटालाल जी आपसे परिचित थे। संवत् १९९८ के चातुर्मास में जामनगर के महाराजा श्री दिग्विजयसिंह जी एवं

---

१ अवधूती मौज, (निवेदन)—प्रकाशक, पृ० ६-८।

२ श्री वीरायण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
महारानी श्री गुलाब कुंवर बा ने आपकी शक्ति की कद्र की और जैन मुनि छोटालाल जी की प्रेरणा से इनके लिए वर्षासन निश्चित कर दिया तथा जामनगर के 'राजकवि' का पद दिया। वर्षासन अब भी चल रहा है। कवि मूलदास द्वारा गुजराती में लिखी हुई 'कर्ज कंपारी अने हिन्दी हालत', 'उपदेश बिन्दु' इत्यादि पुस्तिकाएँ जनसमुदाय में बहुत ही प्रिय हुई हैं।[1]

'श्री वीरायण' महावीर जैन के जीवन पर आधारित सात कांडों का महाकाव्य है। जामनगर के राजकवि श्री केशवलाल भाई, लींवडी के राजकवि श्री शंकरदान जी एवं कवि दूला भाया 'काग' ने इस महाकाव्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।[2]

'श्री वीरायण' 'दोहरा' एवं 'चौपाई' छन्द में लिखा गया है। कवि ने अपने गुरु श्री लाधाजी स्वामी को हिन्दी में लिखा हुआ यह महाकाव्य समर्पित किया है।

श्री वीरायण के अध्ययन, अध्यापन एवं अनुसन्धान की ओर हिन्दी विद्वानों का ध्यान आकृष्ट होना ही चाहिए। गुजरात के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य की देन में 'श्री वीरायण' महाकाव्य का विशिष्ट एवं उच्च स्थान है।

---

१ श्री वीरायण।

२ वही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकरण नवां

उपसंहार

गुजरात के कवियों की हिन्दी रचनाओं का विस्तृत रूप से अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर अवश्य ही पहुँच सकते हैं कि हिन्दी का प्रचार गुजरात में कई कारणों से था। इन कारणों में धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं व्यापारिक कारण मुख्य हैं। गुजरात में ही नहीं, सारे भारतवर्ष में हिन्दी आसानी से समझी जाती थी और गुजरात की तरह महाराष्ट्र, बंगाल, पंजाब एवं अन्य प्रदेश के कवियों ने हिन्दी भाषा में उत्कृष्ट रचनाएँ की हैं। इतना ही नहीं नेपाल के कई कवियों ने हिन्दी भाषा में कई सर्वोत्तम रचनाएँ को हैं और लखनऊ विश्वविद्यालय के एक अनुसंधित्सु ने इन कवियों पर एक प्रबन्ध भी प्रस्तुत किया है। इस तरह हिन्दी के प्रारम्भ से लेकर आज तक अहिन्दी भाषी प्रदेशों के कई कवियों ने हिन्दी काव्य-साहित्य को अपनी विशिष्ट देन दी है।

अहिन्दी भाषियों की हिन्दी काव्य-साहित्य की देन में गुजरात का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। गुजरातियों के हाथों हिन्दी भाषा की जो सेवा हुई है वह मूक होते हुए भी महान है। इसमें सूर्य के प्रकाश की प्रखरता या नयनों में चकाचौंध पैदा करने वाली विद्युत की चमक नहीं है। पर दीपक की उपयोगिता अवश्य है। इसमें दानेश्वरी का दमाम या रसेश्वरी का जादू नहीं है। पर यह बड़ी बहन की ओर से छोटी पर अधिक सौभाग्यशाली बहन के प्रति प्रकट की गई ममता है। यह ममतापूर्ण सेवा हिन्दी के विकास में इतनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
उपयोगी सिद्ध हुई है कि अहिन्दी भाषा-भाषी लोगों ने हिन्दी की जो सेवा की है यदि उसका लेखा-जोखा किया जाय तो सम्भवतः गुजरातियों का क्रम उसमें पहला रहे ।[1]

इस प्रबन्ध में गुजराती के कवियों की हिन्दी काव्य साहित्य की देन पर विचार किया गया है । एक अहिन्दी भाषी प्रदेश में ९० से अधिक कवियों द्वारा लिखे गये अनेक ग्रन्थों के प्रकाश में आने से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुजरात के कवियों ने हिन्दी काव्य साहित्य को जो प्रदान किया है, वह मूक होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है ।

गुजरात के जैन भण्डारों में राजाओं के अपने-अपने संग्रहालयों में और चारण कवियों के वंशजों के पास अब भी विपुल मात्रा में अप्रकाशित साहित्य रखा हुआ है । इसकी ओर विद्वानों एवं विश्वविद्यालयों का ध्यान शीघ्रातिशीघ्र जाना ही चाहिए । अन्यथा, कई कारणों से इनका विनाश होगा और साहित्य की महान क्षति होगी ।

"गुजरात की हिन्दी सेवा" पर डॉ श्री अम्बाशंकर नागर का राजस्थान विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० के लिए प्रबन्ध स्वीकृत हो चुका हैं । वल्लभ विद्यानगर (गुजरात) के महावीरसिंह चौहाण ने 'गुजरात के कवि दयाराम और उनकी हिन्दी कविता' पर प्रबन्ध प्रस्तुत किया है । फिर भी विषय की गहनता एवं कवियों की विपुल संख्या को देखते हुए यही प्रतीत होता है कि इस विषय का और भी सूक्ष्म अध्ययन अवश्य होना चाहिए । आशा है कि 'अनाघ्रातं पुष्पं' जैसे इस विषय की ओर हिन्दी के विद्वान् एवं अनुसंधित्सु आकर्षित होंगे ।

---

[1] शिक्षण अने साहित्य गुजराती(मासिक) , जुलाई १९५१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट

१

गुजरात के हिन्दी कवियों की कविताओं से संकलन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(अ) स्वामी नारायण सम्प्रदाय के कवियों की कविताओं से संकलन

शिवानन्द

गणपतिस्तवन

पद १—राग गोडी

आध नमुं एक देव,
शंकरतनुज अंबाजी को अर्भक, सकल दुःख दारिद्र हरणं ॥ आ०
वक्रतुंड लड्डु का भक्षण, मुषक वाहन अंगीकरणं ।
अंकुश फरसी मोदिक करमां, वरदा भय आयुध धरणं ॥ आ०
मद गलित कर्ण कपोले, भाले चन्द्रकला धरणं ।
सुध बुध सुन्दर उतर दक्षिण, लक्ष लाभ उसंग धरणं ॥ आ०
सौभाग्य चन्दन हृदये वदने, द्रुवा माला कण्ठा मरणं ।
शिवानन्द कहे शम्भु कुंवर, सकल मनोरथ पूरण करणं ॥ आ०

—बृहत्काव्य दोहन, भा० ३, द्वि० सं०, पृ० ७६७

पद २

कुंजर वदन अघ हरणं
याही रूप करत निगम दरताप त्रिविध को भय हरणं ।
कुंजर बदन जग अघ हरणं ।
शीश मुकुट प्रगट रवि छादि तन, गमाअु झलकत अलक किरणं ।
भाल विराजित तिलक मानु, इन्दु विन्दु कृशानु भो भयणं ॥ कुंजर०
कनक नग मध दोउ मिल, अर्क शीश रुचिर युग सदनं ।
मोरे धनुष पर अनंग सर धरैं, नैन भुवन जय करणं ॥ कुंजर०
अधर युग रक्त बिंब सम, रसन निरज दल एक रदनं ।
परिध युग दोउ भुज विराजित, याहि दितीज कुल दरणं ॥ कुंजर०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नव कंज माल कण्ठ लिसित मानु, भुवन कंज कोश उर धरणं।
पीत पट कटि तट वसन, चारु मानुज धन युग सधनं ॥ कुंजर०
पद युग कोक नद ललितघुंगरुं, नाद विमोहित सुर ललनं।
प्रमथ पति नन्दन सिद्धि को सदन, शिवानन्द प्रभु भव भय हरणं ॥ कुंजर०

—वही पृ० ७६८

पद ३

प्रथम प्रणमुं जग वदनं।
शिवजी कौ सुत उमयाजी को नन्दन, वन्दन विश्व विघ्न हरणं। प्रथम०
मोदिक अहार सिंदूर विलेपन, श्वेत पुष्प चर्चित चरणं। प्रथम०
एक दन्त, श्रवण दोउ कुण्डल, मुपिक वाहन फरसि धरणं। प्रथम०
सुध बुध सुन्दर वर दोउ श्यामा, लक्ष लाभ अतुली वरणं। प्रथम०
वर्ण एक के प्रभु वांछित दाता, सुख सम्पत शुभ मति करणं। प्रथम०

—वही, पृ० ७६८

पद ४—आरती

जय देव जय देव, जय जय गज वदना, जय मूषिक वरना।
आरती ओवारूँ, आरती ओवारूँ, सुन्दर कटि रसना ॥ जय०
हर हर शम्भु वधु कमला सम, विष्णु शशि शमदा।
चरण कमल मद जीवन, मत्तालि प्रमदा ॥ जय०
हर हर जय यामीकर, कुण्डल मण्डित श्रवणे एक रदना।
जय कुम्भस्थल शोभित वरकर, पुष्कर घृत भवना ॥ जय०
जय जय कोटि सुधाकर, सीतल जय फरसीधरना।
सुध बुध सुन्दर उत्तर दक्षिण, जय जय वर वदना ॥ जय०
हर हर जय भुर्जगीत शोभित, अहिवर उपवित धरना।
जय जय भगवतिमान शशीधर, सिंदूर तनु रचना ॥ जय०
पूरव छेदन निरजन पुर रिपु, पूजित पद सदना।
जय पुरभंजन प्रमुदित सुर वधू, जय जय कृत भवना ॥ जय०
हर हर जय नीरज मुख वधु, पद्माकर धवलित त्रिदशना।
जय जय मधुमणि हीरक खंचित, किंकिणी कटि रसना ॥ जय०
हर हर जय शरणागत वत्सल, पा श्री जय नीरज नयना।
जय लम्बोदर मोदिक वर कर, पुष्कल धृत भुवना ॥ जय०
हर हर सिंदुर चर्चित अंगे, सकल कर जय पाशी ललना।
त्रिदश वधुकर चामर त्रिजित, दूरि कर समना ॥ जय०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हर हर जय जय खण्ड निशापति, भाले जय लोचन ज्ववना ।
जय जय भक्त मनोरथ पूरणा, शिवानन्द शरणा ।। जय०

—वही, पृ० ७६९

शिव वृषभ स्तवन

पद ६—राग आशावरी (हिन्दुस्थानी)

शिलादिनन्दन गयो शङ्कर द्वार ।
रत्न खचित कर वेगाज सोरे, सुर मुकुट धरावन हार ।। शिलादि०
अयुत दिनमणि अवर सोहे, ऐसो तनु अतिसार ।
जाके शिर पर छत्र विराजे, भक्तना ताप निवार ।। शिलादि०
सुरवर जाके चर्ण कमल पर, छोरत मुकुट श्रृंगार ।
रीझत तापर तत्क्षण शिव गण, निरखत वे त्रिपुरार ।। शिलादि०
जाको महिमा निगम वखाणे, दुर पावत जा सों काल ।
शिवानन्द प्रभु निकट बरति, सोऊ उतारे पार ।। शिलादि०

—वही, पृ० ७६९

पद ९—राग केदारो

शिव शिव हर हर गौरी रमणं, गौरी रमणं गिरिजा रमणं ।। शिव शिव०
अमर तरंगिणी रुचिरा भरणं, भाल सुधाकर अमृत झरणं ।। शिव शिव०
भुजङ्ग वराधिप कुण्डल करणं, हिमगिरि तनया कृत कर गृहणं ।। शिव शिव०
पशुपति शङ्कर भव भय हरणं, सुर प्रथमाधिप वन्दित चरणं ।। शिव शिव०
भज मन शङ्कर पदयुग शरणं, शिवानन्द के भव जल तरणं ।। शिव शिव०

वही, पृ० ७७१

गिरिजा के कीर्तन

पद १४—राग मारू

मंगलदायनी रे, मंगलमा तेथे जाणुं ।
विषय रसोदधिक्ष मायामां भूत्यो, गिरिनन्दनी मन आणं ।। मंगल०
सुमनस गुच्छा कुन्तल चलके, घन मध्य चन्चल चटके ।
खण्ड निशापति भाले विराजित, राशि हीरक जल के ।। मंगल०
मणिधर खञ्चित दामिनी सोरे, रुचि कूर सोरे ।
वदन कमल मकरन्दनी लोभी, शङ्कर मधुकर मोहे ।। मंगल०
श्रवणे कुण्डल अलि रवि लोचन, भगवति गिरिजा भासे ।
नेपुर घुघुरू बसन पदांवुज, भमर शिवानन्द आसे ।। मंगल०

—वही, पृ० ७७३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वसन्त पूजा

पद २२

बिरहे निदान वाण जब लाग्यो, सुध तनकी तब भूल।
कोण करे यह औषट, सुर तट निरुभ कूल ॥ बिरहे०
जडपें चैतन विनहुय थयो, प्रगट्यो वसन्त ऋतु मूल।
यहे विनोद देखन हित शंभू, चले गृही तब शूल ॥ बिरहे०
शिश झटा जूट तापर झल के, ललके धुनि शिशफूल।
मानहु मनक कंकण शोभे, ललित मौक्तिक जूल ॥ बिरहे०
बामा अम अंग दरी दोरु, कर कपाल कुरंग।
श्वेत वरण गजाम्बर चंदन, वींट्यो कृष्ण भुजंग ॥ बिरहे०
खेल मच्यो भत्यो सब सुरगण, बाजे घोर मृदंग।
शिवानंद प्रभु घन मंडलमा, नाचत रंग सुरंग ॥ बिरहे०

—वही, पृ० ७७५

पद २१

मन्मथ मंथन त्रिपुर गंजन, कहे वसंत कुरंग।
कुसुमावली से नकी पदअंबुज, मागे अनंग नुं अंग ॥ मन्मथ०
दीन वचन ऋतुराज सुनी, शिव थयो मन उमंग।
मनसिज नाम धरूं करुणानिधि, ते करे भुवन भंग ॥ मन्मथ०
चारु जटाधर लटकट शीशे, सोंहत झल मृकंग।
त्रिलोचन जगमोहन शंभू, शिवानंद पद भृंग ॥ मन्मथ०

—वही, पृ० ७७५

पद १३

गिरिजावर शिवशेखर शंभू खेलत ऋतु मातंग।
विधि विधि नग गण बन वन फूल्यो, फूलत मन्मथ अंग ॥ गिरि०
शीश मुकुट छबि अटपति सोहे, झलकत रुचिर मृकंग।
मानहु कनकाचल शेखर पर, उदीत कोटि पतंग ॥ गिरि०
उरवत अबील गुलाल अमरगण, वाजत रुचिर मृदंग।
रीझत शिवानन्द प्रभु शंभू, बेठौ वसंत सुरंग ॥ गिरि०

—वही, पृ० ७७६

पद २५

नटवर रंग ऋतुध्वज वनमो, अजुरी सुमनरा सोरे।
कदली दल पर करी त्रटि मदमो, त्रिदश वधू मन मोरे ॥ नटवर०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रवणे कर्णिका कुंडल सोहे, अलिमृत पंक्त शीश।
फुलत माकद पाघ बन्यो है, तापर कुसुम सरोश ॥ नटवर०
बरखा ऋतुकर मृदंग गाजे, बाजे शिशिर करताल।
शरद विणाधर ऊधरे हेमंत, बंसि रुचिर बिशाल ॥ नटवर०
मालती घुघुरु पद पंकज मो, ग्रीष्म बदत थेइकार।
मदन करत निरांजन ऋतुपर, विधि विधि सुमनस भार ॥ नटवर०
श्री पंचमी माघ मनोहर, प्रगट्यो वसंत विसाल।
शिवानंद प्रभु खेले गिरिजा, अद्भुत पामे विभास ॥ नटवर०

—वही, पृ० ७७६

पद २६

उदग अदन विकसन देखी, उन्मत्त भयो बसत।
अत रेमंत अंतर अब पायो, निकस्यो पुष्प बसत ॥ उदग०
व्युंजुरी माकंद वटपद मोरे, सोहे पर ब्रह्म कुंज।
वन वन में कुसुम भर देखि, गई सबन की सूज ॥ उदग०
शीश जटा जूट तापर झलके, ललके धुनि शिश फूल।
मानु कनक कंकण सोहे, ललित मौविनक झूल ॥ उदग०
उडवत अबील गुलाल अमरगण, बाजत चंग मृदंग।
शिवानंद प्रभु गण मंडल मां, भयो मन ऊमंग ॥ उदग०

—वही, पृ० ७७७

पद २७

गंगा धारि खेलत बसंत, मोरो शंभुनाथ खेलत बसंत।
इतथें आई गिरिजा सुन्दरी, कोटि सखि लेइ साथ।
उतथें आये मणिभद्र मणिग्रिव, बाणभद्र शिव नाथ ॥ गंगाधारि०
एक पलाश कुसुम रंग छिरकत, एके अबील गुलाल।
वाजत चंग मृदंग भेर धुनि, गावत गीत रसाल ॥ गंगाधारि०
उलटी सखि शंकर पर धावत, गिरिजा संग सुराये।
पकरे गंगाधर शंकर कुं, सब गण हार मिलाये ॥ गंगाधारि०
कि फगुआ दो हो हम शंकर, करत कहा मुज काम।
छूट न पाओ अब गंगाधर, मोरि गिरिजा को शिरनाम ॥ गंगाधारि०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खेली फाग प्रेम सुं शंकर, फगुआ दियो हो मगाय।
भूषण बसन बिविध सबयनकुं, शिवानन्द बलि जाय ॥ गगाधारि०

—वही, पृ० ७७७

पद २८—काफी

गिरिनंदनी शिव फाग, खेले गौतम गौरी।
सुर तरंगिणी जूट जटा मध्य, कुंतल होरहक होरी ॥ खेले०
शशधर विवज कला त्रिपुंगक, मृग मद चंदक भाल।
दिनमणि वन्हि शशि रवि लोचन, नीरज दल विशाल। खेले०
रुचिर टंगवर सूर शिरोधर, कंठे मौक्तिक माल।
प्रभू शिवानन्द सोम सदा शिव, निरखो अंतक कारु ॥ खेले०

—वही, पृ० ७७७

पद २९

गंगाधर खेले फाग, रस रंग भरे।
संग खेले गिरिराज सुता, गज मौक्तिन की उर माल ॥ रस रंग०
चोदश गण मत बारे दोडे, गणपति पुत्र कुमार।
हसत हसावत बीण वजावत, गावत गीत रसाल ॥ रस रंग०
केशर भर छिरकत पिचकारी, सरस सुगंध गुलाब।
तेल फुलेल भे मुख रोलत, उडत अबील गुलाल ॥ रस रंग०
द्वादश बन ऋतु मारे फूले, बकुल मालती जाय।
ता बीच होरी खेलत शंकर, शिवानंद बल जाय ॥ रस रंग०

—वही, पृ० ७७७

पद ३०

ने नो नेह भरे, मुसकात, करंग धरे।
रंग मच्यो गिरिराज सुता, अब खेले बसंत की रात। करंग०
सखी अली सब निकट आइ, सप्त स्वरन मिलि गात।
दल कमल मध्य करणिका, जाति शतारत सुतात ॥ करंग०
अबील गुलाल की मूव पडत धन, गरजे मृदंग प्रमात।
सत्वर जो गुण युद्ध करे तम, देखि आगे धरे अब घात ॥ करंग०
पशु पक्षी वन थकित भये, कहि न परि यह बात।
शिवानंद प्रभु मच्यो फरि, फगुआ दे संग तात ॥ करंग०

—वही, पृ० ७७८

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ३१—राग वसंत

आनन्द भर शिव खेलत होरी ।
प्रथम गण संग मुदित शंकर प्रभू, दोरत बाहे परस्पर जोरी ।। आनन्द०
बाजत ताल मृदंग धिधिकटन, तथेइ ततथेइकारी ।
गावत राग वसंत सरस गति रह्यो रंग अति भारी ।। आनंद०
छपन कोटि सखि रिय खेलन, गिरिजा शिव पे आई ।
अबील गुलाल भर शंकर प्रभू, रिझि रिझि मुशकाई ।। आनंद०
यन्द्रादिक ब्रह्मादिक सुर मुनो, पुष्प वृष्टि कराइ ।
शिवानन्द प्रभु असे बिराजीत यह सुख बरणि न जाइ ।। आनंद०

—वही, पृ० ७७८

पद ३२—काफीनो राग

शिव निरखो नेन रसाल, ऋतुराज बने शिव ।
कमल शीशे हंस बिराजे, गरजत मेघ विशाल ।। ऋतुराज०
जाके शिश कला निधि सोहे, रुचिर बास शोभाल ।
करुणा सरित मान उलटी हित मों, झाले कोहि मराल ।। ऋतुराज०
ज्वलन लोचन परहुं वारुं, दिन मणि कोटि प्रकाश ।
स्वर्ग तरंगिणी बिच में सोहे, मानु कोक नंद की भास ।। ऋतुराज०
तुहि मायलेजा सन्मुख खेले, विधि विधि बसंत बिलाश ।
शारद धनमां दांमिनि दमके, विजया जया कर पाश ।। ऋतुराज०
फाग मच्यो जय शब्द उच्चो, सुरगण किन्नर साथ ।
अबिल परत शिवानंद प्रभूपर, बरखे घन जिए पाथ ।। ऋतुराज०

पद ३३

मन उलट भरे मच्यो है फाग ।
क्षीर पयोनिधि पुनम चंदे, उदत तरंग बड़भाग ।। मन०
नेह का ओढ़ सब ओबर, भइ भई केशर मारे गुलाल ।
रजता चलमां तुं मेरु, बिचे भारती बरत विशाल ।। मन०
नेननि मूद सब उकलाई, देखे नाहि विचार ।
उअ सुधाकर किरन परत मानु, मूरज कंज निहार ।। मन०
बीणा बंसी मृदंग बाजत, उपजत घोर निनाद ।
शीत पयोनिधि एक ठोर भये मानु, गरजत शब्द अनाद ।। मन०
उलटो आनंद मानु भाग वन्यो, रस रंग कह्यो न जाय ।
सोम सदाशिव फाग बने मनु, शिवानंद बल जाय ।। मनु०

—वही, पृ० ७७९

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद ३४

अब फाग खेलत शिवनाथ, मनमोद भरे।
लाज की ठोर सबे अब गइ, खेल रच्यो गण साथ। मन मोद भरे०
त्रिदश वधु संग गिरिजा आई, आठ भरी है गुलाल।
मोतिन माल विच मध्य नायक, झलकत जोति का जाल ॥ मन मोद भरे०
केशर रस पिचकारी मारे, उडे अबील गुलाल।
मान सरोवर मध्यमों फूली, कोक नदकी माल ॥ मन मोद भरे०
फगुआ देत बोलात शिव कु, बाजत चंग रसाल।
शिवानंद प्रभू ऐसे विराजे, सुर वजे पुष्प रसाल ॥ मन मोद भरे०

—वही, पृ० ७७९

पद ३५

रस बढ़त बसंत विलास, त्रिपुरारी रमे।
विविध लता संग द्रुम वर खेले, ठोर ही ठोर प्रकाश ॥ त्रिपुरारी रमे०
करिभे करि लग ररी वन मो, कुतंग मृगि तजी घास।
विजय विनोद कीडा रस लपट, कोकिला माकंद पास ॥ त्रिपुरारी रमे०
झोंक परी अब अबिल गुलाल की, बाजत मृदंग विकाश।
शिवानंद प्रभू खेलत बन बन, मानु प्रगट्यौ मन्मथ रास ॥ त्रिपुरारी रमे०

—वही, पृ० ७७९

पद ३६—राग केदारी

शंभु खेले रंग हो हो होरी।
संग सोहे गिरिजा गोरी, शंभु खेले रंग हो हो होरी ॥
त्रिदश गण सब मिलि आये, गावे राग तो टोरी।
शंख मृदंग वीणा चंग बाजे, बरखे सजल घनघोरी ॥ शंभु०
मृग मद केशर छरकत अंगे, उडवत अबील की झोरी।
यह शोभा को पार न पाइए, बरणो कोई जोरी ॥ शंभु०
पशु पंखी द्रुम वेली मध्यमो, चेतना नारी जो थोरी।
शिवानन्द प्रभु रंग सुरग तोडन पें, अबे मुद धोरी ॥ शंभु०

—वही, पृ० ७८०

पद ३७—राग जैजैवंती

हर हिमनंदनी अब खेले हो होरी।
जाके रंग सुर वधू देखत, थकित भइ बेली ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाको रंग सुर वधु देखत थकित भइ बेली ।
द्रुम सब रंजी जगति थोरि हो ।। हर हिमनंदनी०
अलि विलोचन मृगंक गंग रंग, विशेष कस वही उपमा छोरी ।
पद युग घुघरुं नूपुर वाजे, छंद भर शिवानन्द भव तटि होरी ।।
हर हिमनन्दनी०
—वही, पृ० ७८०

हिंडोलना पद

आंदोलाश्रित गिरिजा वल्लभ, सुर सेवित पद कंजे ।
मत्त मनोले विहर मदालस, निगम मधुव्रत खंजे ।। आंदोलाश्रित०
नख मणिचंद्र मयूख विदारित, जन्मना पाप तमोहे ।
अमृत पयोधर धारा शीश पर, संचित भक्त समूह ।। आंदोलाश्रित०
विष्णु विरंचि शचिपति मानस, पंकज कर्णिका वासे ।
प्रेम सरोवर मग्न शिवानंद, परिपूरित निखिलाशे ।। आंदोलाश्रित०
—वही, पृ० ७८०

पद ४५

प्रेम सुवापी पंकज परिमल, जन सुखदान सरागे ।
कुमुदनि नादक खंड सुधाकर, परि संप्लुत पर भागे ।। प्रेम सुवापी०
विद्युत पुंज कपर्द कलाप, सुमंडित मौक्ति भाले ।
अलिक विलोचन सज्वलितानल, कीलज्वालित भाले ।। प्रेम सुवापी०
चित्त निवेशयं धी ममला मिति, सुर धुमि हीरक झाले ।
संसारानल तप्त शिवानन्द, पयोधर धारा सारे ।। प्रेम सुवापी०
—वही, पृ० ७८२

पद ५२—राग केदारो

विलसित शंभु शैल कुमारी ।
हां रे हिंडोले विलसित शंभू शैल कुमारी ।। टेक
उदित राकापति नारी, नारद तुंबरु धारी ।
ताल तेत्रीस स्वर भारी, सोहत किन्नर कारी ।। हां रे०
सुरपति रमणि, संगित स्वर मणि ।
उपजत नाद गहनि, माहित मृग नयनी ।। हां रे०
शुक्ल शीश धारि, भव ताप निवारीं ।
जय जय स्वर धारि, शिवानन्द बलिहारी ।। हां रे०
—वही, पृ० ७८४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ५३

बनत श्री गंगाधारी ।
हां रे हिंडोले बनत श्री गंगा धारी ।। टेक
सारद घन शंभु, चपला पुंजे गौरी ।
निरखी आरा छबि, गर्व अनंग हारी ।। हां रे०
कर कंकण शाली, अंगद भुजंग धारी ।
मुक्त मुंड विलासि, सोहत त्रिपुरारी ।। हां रे०
अजिन चीर कटि, नुपुरी घुघुरु धारी ।
जय जय सुरकारी, शिवानन्द बलिहारी ।। हां रे०

—वही, पृ० ७८४

पद ५४

गिरिनंदनी शिव झूले, हिंडोले गिरिनन्दनी शिव झूले ।
देखि सुरिनर निमेष भूले ।। हिंडाले०
चारु विमान चढ़ी सुर वषे, कल्पतरुने फूले ।। हिंडोले० टेक
रुचिर पदांबुज नेपूर घुघरु, कटि रसना शर भारी ।
अंगद कंकण भूषण शरदा, मेघे चपला वारी ।। हिंडोले०
राका निशाकर पूर्ण कला धर, दत मयूख विशाली ।
चिकुर जटा वलि सोम सदा शिव, शिवानन्द बलिहारी ।। हिंडोले०

—वही, पृ० ७९५

पद ५८—राग धन्या श्री

खेले हिंडोले रे, सोहत गिरिजा संग ।
मास मधू सूरत टिनी तटमां, पधारे बैरि अनंग ।। खेले० टेक
दुंदुभि भेर मृदंगनि नादे, वाजे सुर वधु चंग ।
हय हंसारव अगणित सोहे, कुंजर वृहण रंग ।। खेले०
चन्द्र मयूख पताका झलके, ललके छत्र मयंक ।
चामर शोभा कहि न परे, आकर काली रंग ।। खेले०
अगणित जय जय निनदे, नाचत ततथै थंग ।
धिमिक्ट धिमिक्ट धिमिक्ट धिमिक्ट, बाजत रुचिर मृदंग ।। खेले०
सुर किन्नर मुनि गण आदे, वर्षे सुमनस संग ।
कमलासन बैकुंठ शचिपति, अंजुरि करत भुजंग ।। खेले०
स्यदन तें रजताचल आये, सोहि गिरिजा संग ।
रसिक शिवानंद पद पंकज मकरंद, बदन कहो चह भृंग ।। खेले०

—वही, पृ० ७८६

 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भोजन समय के पद

पद ६५—राग आशावरी

नीरांजन जग जीवन भव हर ।
पूर्ण ब्रह्मकला सपूरण, नहि न जानतया विधि किंकर ।। नीरांजन०
काह प्रकाश करे दिप कणिका, आगे धरे तेजो निधि सूर ।
ऐसो निरांजन विधिचन्द्र शेखर, शिवानंद पर करुणा पूर ।। नीरांजन०

—वही, पृ० ७८९

पद ६६—राग आशावरी

जय चन्द्र मौली त्रिपुरारी, दुरी कर हर भव पाशा ।। जय चंद्र०
तुझे मस्तक गंगा बीराजे, जय जय भुवना चा शरणा ।। जय चन्द्र०
अंग विषधर क्षित धर वाला, जय जय रंजित त्रिनयना ।। जयचन्द्र०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(आ) वैष्णव कवियों की कविताओं से संकलन

नरसिंह मेहता

(१)

पदार्या मारे कुंकुरा पगले ।। टेक ।।
डगमग करता मोहन जी पधार्या, पग भरता डगले ।।
लटपटि पाग लीलांबर सोहे, पीतांबर बदले ।
भाल तिलक भलमलता मोती, देखत मन हर ले ।।
साकरडी आंगण बीच बूठी, ढिग बुडा ढीगले ।।
दूधां मेह बूढा नरसीधर, आंगणिये सघले ।।१।।

—गुज० सा० सम्मेलन, १२ वें अधिवेशन की रिपोर्ट

(२)

वास नधी ज्यां वैष्णव केरो, तहांभ वसिये बासडियां ।
मोहन मोहन की माया विलख्यो, सो पडसी जभ पासडियां ।।
जिण कानां हरि कथा न सुण ही, सो सखन की बांबडियां ।
जिण नैनां हरि रूप न निरख्या, सो मोहन की पांखडियां ।।
सास सास शिमरण नहीं कीनो, धमण धर्म वाकी सासडियां ।
जिस रसना हरिनाम न गायो, सो जिभ्यां है कांसडियां ।।
जिण पायां हरिपंथ न चाल्यो, सो पग करीये ठापडियां ।
जिण हाथां हरि पुण्य न कीनो, सो कर करीये डांडडियां ।।
जनम दियो सो लेखो लेखी, क्युं न होय हरिदास दिया ।
कहे नरसी उन बोत्यां मारी, मावलडी दस मासडियां ।।११।।

—वही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

भालण

(१)

व्रज को सुख समरत श्याम ।
पर्नकुटी सो वीसात नाहीं न भावत सुन्दर धाम ।। व्रज ।।
बदोर मात्र नवनीत के कारन, उखले बांधे ते बहु दाम ।
तिमें वे जु चुभी रही है, चोर चोर करत है नाम ।। व्रज ।।
निशदिन पुनी दोहन बंधन को सुख, करि बैठत नाहीं तो नाम ।
मोर पिच्छ गुंजाफल ले ले, वेख बनावत रुचिर ललाम ।
भालन प्रभु विधाता की गति, चरित्र तुमारे सब जाम ।। २१४ ।।

—भालण कृत दशम स्कंध

(२)

कोन तप कीनोरी माई नंदराणी । कोन०
ले उछंग हरिकुं पय पाबत, मुख चुम्बन मुख भीनोरी । मा०
तृप्त भये मोहन ज्युँ हसत हैं, तब उमगत अधरहु कीनोरी । मा०
जसोमती लटपट पूँछत लागी बदन खेचित बलिनोरी । मा०
रिदे लगाय बरजु मोहि तुँ कुलदेवा दीनोरी । मा०
सुन्दरता अंग अंग कए बरनु तेज ही सब जग हीनोरी । मा०
अन्तरिख सुर इन्द्रादिक बोलत वृजजन को दुःख खीनोरी । मा०
इह रसर्सिधु गान करी गाहत भालन जन मन भीनोरी । मा०

—वही

मीरांबाई

पद ३

हां रे मेरी सलाम कहीए बीद्रावक, छेल छबीला ठाकोर कुं ।
सब गोकुल में गोपालन मंडल, राधा मीशरी साकर कुं ।। हां०
जीवते रहीओ ने चोखां करो यो, नीभाव करो यो आखर कुं ।
तुम प्यारे की मोहोबत सुनकर, इशक लग्यो मेरे चाकर कुं ।। हां०
खुब बनायो रे में खुब बनो है, क्या करु गुण सागर कुं ।
मीरां कहे प्रभु गिरधर नागर, निहाल लीयो भुज नागर कुं ।। हां०

—बृहत्काव्य दोहान, भाग ६, पृ० ७६३

पद ४

करना फकीरो क्या दीलगीरी, सदा मगन में रहेना रे ।
कोइ दिन वाडी ने कोइ दिन बंगला, कोइ दिन जंगल रहेना रे ।। कर०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोइ दिन हाथी कोइ दिन घोडा, कोइ दिन पाउं से चलना रे।
कोइ दिन गादी कोइ दिन तकीया, कोइ दिन मोंयसे पडना रे ।। कर०
कोइ दिन खाना ने कोइ दिन पीना, कोइ दिन भूखे सोना रे।
कोइ दिन पेहेरना कोइ दिन ओढ़ना, कोइ दिन चीथराव ओठना रे ।।कर०
कोइ दिन मोजा ने कोइ दिन जोडा, कोइ दिन फक्कारे फक्का रे ।।
मीरां कहे प्रभु गिरिधर नागर, ऐसा कुंभन करणा रे ।। कर०

—वही, पृ० ७६३

पद २७

चरण रज महिमा में जानी ।। टेक
येही चरण से गंगा प्रकटी, भरीरथ कुल तारी ।। चरण० १
येही चरण से विप्र सुदामा, शरि कंचन धाम दीनी ।। चरण० २
येही चरण से अहल्या उधारी, गौतम की पटरानी ।। चरण० ३
मीरां के प्रभु गिरिधर नागर, येही चरण कमल में लपटानी ।। चरण०

—बृहत्काव्य दोहन, भाग ७, पृ० ७०८

पद २८

राधा प्यारे दे डारो जी बंसी हमारी । टेक
ये बंसी में मेरा प्रान बसत है, वो बंसी लेइ गइ चेरी ।। राधा० १
ना सोने की बंसी ना रूपे की, हरे हरे बांस की पेरी ।। राधा० २
घटी एक मुख में, घटी एक कर में, घटी एक अधर धरी ।। राधा० ३
मीरां के प्रभु गिरिधर नागर, चरण कमल पर बरो री ।। राधा० ४

—वही, पृ० ७०८

पद २९

माइ मोरे नयन बसे रघुबीर । टेक
कर सर चाप, कुसुम सर लोचन, ठाडे भये मन छीर ।। माइ० १
ललित लवंग लता नागर लीला, जब पेखो तब रणबीर ।। माइ० २
मीरां के प्रभु गिरिधर नागर, बरसत कांचन नीर ।। माइ० ३

—वही, पृ० ७०८

पद ३०

बाइ मैंने गोविन्द लीन्हो वण मोल । टेक
कोइ कहे हेलका कोइ कहे भारे, लीयो जु तराजु तोल ।। बाइ० १
कोइ कहे सस्ता कोइ कहे मेहंगा, कोई कहे का न अनमोल ।। बाइ० २

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chennai. Digitized by eGangotri

बिंद्रावन की कुंज गलन में, लीह्यो बजाके मैंने ढोल ।। बाइ० ३
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, पूर्व जनम को दीयो बोल ।। बाइ० ४

—वही, पृ० ७०८

पद ३२

कायकुं न लीयो तब तुं, कायकुं न लीयो,
रामजी को नाम तब कायकुं न लीयो । टेक
नव नव मास तुं ने उदर में राख्यो,
झुलणे झुलायो तुने पारणे पोठायो । रामजी को० १
रतन सो जतन करी तुने राख्यो,
बडो रे भयो तबते कुल लजायो । रामजी को० २
गुनका को बेटो गली मांही डोले,
पिता बीन पुत्र ए गुनका को कहायो । रामजी को० ३
बाई मीरां के प्रभु तिहारा भजन बिना,
आवो रूडो मनखाँ ते अे ले गुमायो । रामजी को० ४

—वही, पृ० ७०९

पद ३३

मैंने सारा जंगल ढुंडा रे, जोगीडा न पाया । टेक
कानु बीच कुंडल जोगी गले बीच शेली,
घर घर अलेक जगाया रे ।। जोगीडा० १
अगर चंदन की जोगी धुणी धरवाई,
अंग बीच भभुत लगाया रे । जोगीडा० २
बाई मीरां के प्रभु गिरधर नागर,
शबद का ध्यान लगाया रे ।। जोगीडा० ३

—वही, पृ० ७०९

पद ३४

कवन गुमान भरी, बंसी तुं कवन गुमान भरी ।। टेक
अपने तन पर छेद परे ये, बाला तुं बिछरी ।। बंसी० १
जात भात सब तोरी में जानुं, तुं बन की लकरी ।। बंसी० २
मीरां के प्रभु गिरिधर नागर, राधा से कीयुं झगरी ।। बंसी० ३

—वही, पृ० ७०३

पद ३५

दर्द ना जाने मेरा कोई रे, मैं तो दर्द दीवानी ।। दर्द ना०
घायल की गति घायल जाने, जा शिर बीती होय रे ।। मैं०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जल बिना जैसी मछली ही तेल पे, शो गत मेरी होय रे ।। मैं०
सूलि उपर सेज हमारी, तापर रहेवुं सोइ रे ।। मैं०
मीरां को दुःख जब मीटेगो, बैद शामरो वोही रे ।। मैं०

—वही, पृ० ७०९

पद ३७

तेरो कहा न कालो माइ मेरी राधे गोरी, हो माइ तेरो कहा न०
ऐसी राधे रूप बनी, कंचन सी देह ठानी, ऐसो कारे कांहांन पर,
कोटी राधे कारी हो ।। माइ०
गोकुल उजार कीनी, मथुरा बसाय लीनो, कुवजा कु राज दीनो,
राधा को बिसारी हो ।। माइ०
बिनति सुनो व्रजराय, लागुजी तुम्हारे पाय, मीरां प्रभु से कही यो जाय,
सेवक तुहारी हो ।। माइ०

—वही, पृ० ७१०

पद ५३

बहीयाँ जो ग्रही रे, मेरी सुद्ध न रही रे,
काहना बहीयाँ जो भारी रे ।। टेक०
झगमग ज्योत जडाव को ग्रेनो,
गज मोतियन की सेर लटकी रही रे ।। काना०
मैं दधि बेचन जाती गोकुल में रे,
पकडो री पालव मेरी जलकी भरी रे ।। काना०
जाइ पोकारूँ कंस की आगे रे,
तेरी नगरी में मेरे बसवो नहि रे ।। काना०
मीरां के प्रभु गिरधर नागर,
झगडत सारी रैन बीत गई रे ।। काना०

—वही, पृ० ७१३

पद ५४

शामरे की दृष्टि मानु प्रेम की कटारी है,
माइ शामरे की दृष्टि मानु । टेक
चांदा त्यां चकोर बसे, दीपक जले पतंग,
जल बिना मरे मीन, एसी प्रीति प्यारी है । शामरे की०
गोकुल गाम उजारी कानो मथुरा में साहेर लीनो,
कुवजा कु राज दीनो, राधे तो बीसारी रे । शामरे की०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कुबजा कुरीयो जाय, बिनति सुनत ब्रजराय,
इतनी अरज हमारी, मीरा तो तुम्हारी है। शामरे की०

—वही, पृ० ७१३

पद ८३—राग ठुमरी

झुलत राधा संग गिरिधर, झुलत राधा संग। टेक
अबील गुलाल की धूम मचाइ, डारत पीचकारी रंग ॥गिरिधर०
लाल भयो वृन्दावन जमना, केसर चुवत अनंग ॥ गिरिधर०
नाचत ताल आधरि, सुर सुन्दरी, डारी डारी बाजे ताल मृदंग।
गिरिधर०
मीरां के प्रभु गिरिधर नागुण, चरण कमल कु वेहत गंग ॥
गिरिधर०

—वही, पृ० ७१९

पद ८७—राग मारु

कर्म की गति न्यारी, संतों कर्म की गत न्यारी।
बड़े बड़े नैन दिये मरघन कु, बन बन फरत उधारी रे। संतो०
उज्ज्वल वरन दीनी बगलनु कु, कोयल कर दीनी कारी रे। संतो०
ओर नदीयन जल निर्मल कीनो, समुदर कर दीनी खारी रे। संतो०
मुरख कु उत्तम राज दीयत हो, पण्डित फरत भिखारी रे। संतो०
मीरां के प्रभु गिरधर नागुण, राणोजी तो कौन विचारी रे। संतो०

—वही, पृ० ७१३

कृष्णदास

पद ३—राग ठुमरी

ले हरी नाम को नाव जाकुं संत चलावे।
उतारे भग पार, प्रभुजी से जाइ मिलावे ॥ ले हरी नाम० टेक
एक पलक के मांहीं, अनंत लख योजन चालें।
सो एसी तरे लेइ जाय, पेट में पानी न हाले ॥ ले हरी नाम० १
लेवत नहीं कुछ दाम, जाराज में जाइ बेठावे।
सो वैकुंठ धाम के बीच, जाराज कुं जाइ झुकावे ॥ ले हरी नाम० २
सदा एि करो सतसंग, गुण गोविन्द का गाओ।
भवसागर तरी जाओ, परमपद प्रेम सुं पाओ ॥ ले हरी नाम० ३
सद्गुरू किया उपदेश, जम को जोर न चाले।
देखा दे हाल हुल्लास, प्रभुजी के मन ही भावे ॥ ले हरी नाम० ४

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्भर भया नर सोइ, जो जण जमें बैठे।
कहे कृष्णदास उल्हास, साहेब केरा मेहेलो में पेठे ।। ले हरी नाम० ५

—भजन सारसिंधु, पृ० ६९

पद ४—होरी

सुन ले कंथ शीख हमारी, करत मनोहरी नारी । टेक
राम चन्द्र को निरंजन जानहुँ, मानहुँ अज अविकारी ।
विश्व रूप रघुवंश मणी है, भक्त अर्थ तनु धारी ।
कहत है निगम पुकारो ।। सुन ले० १
पद पाताल शीश अज धामहीं, भ्रकुटी काल भयकारी ।
नैन दिवाकर कच वनमाला, निशि दिन निकीश अपारी,
श्रवण दीशा दश भारी ।। सुन ले० २
नाशा अश्विनी कुमार विराजत, सुरत श्वास सुखकारी ।
अधर लोभ जन दशन कराला, वाणी बंध अनुसारी ।।
बहु दोगपाल खरारी ।। सुन ले० ३
अनंत अनल वरुण रसना में, माया हारा मोह कारी ।
अस्ती शैत्य केश द्रुम शाखा, सरिता नस नाडी,
रोम अष्टादश भारी ।। सुन ले० ४
अहंकार शिव बुध ब्रह्मा जी, मन शशी शीत माहारी ।
कृष्ण प्रभु हु ऐसी जाणी, समज लीयो मन भारी ।
अचल चरी बात सवारी ।। सुन ले० ५

पद ५—होरी

जानकी रघुनाथ कों दीजे, कह्यो मेरो इतनो करीजे । टेक
अंचल पसारी दीन होय मागुं, प्राणयती सुण लीजे ।
तुम तो चतुर शिरोमन स्वामी, नीति बिरोध न कीजे ।।
जासें रघुनाथ क खीजे ।। जानकी० १
जगत गुरु से जाइ पोकारो, गाहो चरण भुज लीजे ।
दीन बंधू यही चूक हमारी मम अपराध क्षमीजे ।
सुनत रघुनंदन रीजे ।। जानकी० २
सिंघ के कारन ग्रहे वही मारत, प्रभु पर प्रीत करीजें ।
अनतपाल जाकी द्रठ बानी, जा के जिवायें जीजें ।
मोह ममता कुं तजीजें ।। जानकी० ३

CC-0. Agamnigam Foundation. Chandigarh. Digitized by eGangotri

रामचंद्र को रूप सुधानिधि, नैन प्रेरहु रस पीजें।
कृष्णदास प्रभु उर उपर, निशि दीन ध्यान धरीजें।
जातें भवसिंधु तरीजें ॥ जानकी० ४
—वही, पृ० ७०

पद ६—गोडी

बनहुँ से आवत धेनु चरावै। टेक
आगे-आगे धेनु पीछे-पीछे जदुनंदन, वृज रज मुख लपटावै ॥ बनहु सें० १
मोर मुकट मकराकृत कुंडल, उर वनमाल सुहावै।
बाहु विशाल विभुषण सोहै, कर गही कमल फिरावै ॥ बनहु सें० २
चंदन चरचीत अंग मनोहर, भृगु लक्षण छवि छावै।
शेष सहस्र मुख रटत निरन्तर, सो वाको पार न पावै ॥ बनहु सें० ३
कंबु कंठ कौस्तुभ मणि राजे, शोभा वरणी न जाये।
घुघर वारे अलक वदन पर, मधुकर रहे लोभाये ॥ बनहु सें० ४
चढ़े विमान देव मुनि हरखें, पुष्पमाल झरि लाये।
कृष्णदास प्रभु की छबि निरखे, चरण कमल चित लाये ॥ बनहु सें० ५
—वही, पृ० ७०

दयाराम

सतसैया

मंगलाचरण दुहा

श्री गुरु बल्लभ देव अरु, श्री विट्ठल श्री कृष्ण।
पद पंकज बंदन करूँ, दुखहर पूरन तृष्ण ॥१॥
—दयाराम कृत काव्य संग्रह, पृ० ३०३

प्रेम बर्नन और नायिका वर्नन

लाल लली ललि लाल की, लें लागी लखि लोल।
ल्याय देंर लय लालकर, दुहु कहि सुनि चित डोल ॥७३॥
यद्यपि रवि आतप भयों, सीतल लगत सरोज।
सकुचें लखि सो सुधाकर, समुझ प्रेम की चोज ॥७४॥
नोंधा प्होप सुगंधिते, हरि-हरि मन सुच पाय।
दसई पंकज प्रेम बिन, रुके कहूँ नहिं जाय ॥७५॥
—वही, पृ० ३२३

प्यारे मोकों तीर दिहु, पें जिन देहु कमान।
कमान लागत तीर सम, तीर लगत प्रिय प्रान ॥८७॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फूलुं हों लखि लाल कों, पिघरे घेना गात।
सो हितु क्यों वे दूर जब, दुहु की उलटी बात ॥८८॥

—वही, पृ० ३२७

अनन्यालंकार

कछु न प्रिय प्रिय प्रान सों, सो तुमसों नहिं प्रान।
तुम प्यारे इक तुमही से, नां पहतर सम आंन ॥१४३॥
राज रूप रस पान सुख, समुझत हैं मो नेंन।
पें न बेंन हैं नेंन को, नेंन नहीं हैं बेन ॥१४४॥

—वही, पृ० ३४२

प्रोषितभर्तृका नायिका

बारी-बारी बारियें, बारीलों दे बारि।
फिर बारी दै बारि जनु, बारिद लौं बनवारि ॥१५७॥

क्रिया विदग्धा नायिका

दोउ अटारी पीठ दें, किए दरस आदर्ष।
मिलि कर नै दे चुट कि त्रय, पिय तिय उदयों हर्ष ॥१५८॥

—वही, पृ० ३४७

क्रिया विदग्धा और वाक् विदग्धा नायिका

खरक सवारों कर भरे, गोबर छुट उर छोर।
ऐहे बड को बाल तुम, ठांक्यि नंद किशोर ॥१७१॥
बार चलेंगी तूं चलें, हम सब मान सुभोंन।
टेर सुनाइ सखिन मिस, सुनि कल परि पिय कोंन ॥१७२॥
रपट्यों पग ढिग को नहीं, सुनिये गोकुल नाथ।
साच कहूँ समजो समय, एंच लेहु दुहें हाथ ॥१७३॥
मन्मथ मोहन जमुन जल, लखि सयूथ चलि बाम।
मिस कर मेली कर नइ, जय कृष्णा कहि नाम ॥१७५॥

—वही, पृ० ३५३ से ३५५

खंडिता विदग्धा नायिका

बधि गुन भुज इत्सन हती, दिहु दुज सनसी लगाय।
में उर सुघउ चढाय मो, धिज हर सि कर त्याय ॥१७७॥

—वही, पृ० ३५७

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वयंदूतिका नायिका

जेठ दुपेरी दुसह तप, सुनहु बटाउ छैल।
पुरतें पर बन सघन में घरि टकि गहियो गैल ॥१७८॥

—वही, पृ० ३५८

ज्ञात अज्ञात यौवना नायिका

कटाछ नोक चुभि किधों, गडे उरोज कठोर।
के कटि छोटी में हितु, रुचि न नंद किशोर ॥१९१॥

—वही, पृ० ३६५

भक्ति प्रकरन

सबतें भक्ति प्रताप बड, सब करि लेहू विचार।
बिमुख दास दस कंध तहु, बस बर्त्या संसार ॥३०६॥
धाता के सुनु सत रूखी, द्रुव छत्री के बाल।
दे वे चाहि परिक्रमा, भक्ति बड गोपाल ॥३०७॥
ग्यांनि भक्त सों क्यों लरत, बिना किये अनुमान।
कृष्ण आप फल भक्ति के, वाहि मुक्त को दान ॥३१०॥

—वही, पृ० ४०९-१०

अथ प्रस्ताव प्रकरण

दुहा

डस्यो कस्यो हरि भ्रमित मन, हरिसुं घररो अभिपान।
फस्यो चिबुक कुपथ कि प्रिया, तारी अभय दे दान ॥६४१॥
जातें प्रताप पदवि प्रभु, तांसुं सु कबु न अरून।
चिन्तामनि दानीकुं जिमि, सब कछु दीनों नून ॥६५०॥
सलज नैंन आधे बचन, कहत कहत सकुचाय।
ललना समुझि लच्छ सों, लिय हिय लाल लगाय ॥६५१॥
माननि प्रीति परिछ को, दुति बरने पिय दोश।
सुनत लाल द्रग व्है गये, मानुं रोश के कोस ॥६५२॥
प्रीत रूप को कव्यका, तुंमें व्याहि में कहान।
करबट राखो आप ढिग, देहुं छुडाय कुंबान ॥

—वही, पृ० ४८७-८८

वस्तु वृंद दीपिका

दुहा

वंदु श्री गुरु पद कमल, सकल सिद्धि दातार।
श्री म्हा प्रभु गोस्वामी श्री, सह श्री नंद कुमार ॥१॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सब सलेस जातें टरे, ठरें सुधी हिय आय।
पूरन हुर अभिलाख सब, असपद गुरु हरिराय ॥२॥
गम्य नहिं गिरवान की, चाहि समुझि सब नाम।
तिन लगि दया यथामती, फुटकिन वस्तु जु ग्राम ॥३॥
नाना द्रुमरस पक्षि ले, रचत मयुष आपूप।
विविधागम में नाउं त्यों, गहि इह ग्रन्थ अनूप ॥४॥
इक द्वे त्रियों क्रम सहित, गुहि बस्तू पद बंध।
अंत होत सब अर्थ को, श्री कृष्ण सों समंध ॥५॥
और बरनहू सफल सब, जो संजोग घनश्याम।
ज्यों कंसारि मुरारि अरु, मधुसूदन सुठि नाम ॥६॥

एक बरुन नाम

रवनी इक श्री राम जू, गननाइक इक दंत।
शेष चन्द्र मन आतमा, पतिव्रता इक कंत ॥१॥
सिंहनी वृश्चिक कदुलिअन, सुक्तिन प्रसुत अनेक।
शुक्र दृष्टि रविचक्र अरु, श्री परमेसुर एक ॥२॥

—वही, पृ० ५१३

शृङ्गार

पद १

आज को दिन धन-धन मोरी माइ, देख छेल छव कुंवर कन्हाइ। आज को०
मंद मुसकानि चित मेरी चोर्यो, कुटिल कटाक्षे कलेजो कोर्यो ॥ आज को०
श्री मुख देखत सब सुख फीके, मधुर भये जीवन जी के। आज को०
अज अजहू पदरज नहिं पाइ, सो लालन मोहे लाड लराइ ॥ आज को०
कहत बने नहीं जो सुख पाई, मो मन जानत के वृज राई। आज को०
व्होत दिनन की आशा पूंजी, दया प्रीतम करी तोसी नहिं दूजी ॥ आज को०

—वही, पृ० ६०२

पद ४—राग भैरवी

मोहे नेंना लागिरे, रतवारी, रतनारी, वतवारी,
जादुवारी, मोहे नेंना लागिरे। टेक०
हांसी मंद मानुं मदन की फांसी,
चितवनि काम कटारी रे, मोहे नेंना लागिरे ॥१॥
दया के प्रीतम तहारी मोहनी मुरत,
नख सिख लग लगें प्यारी रे, मोहे नेंनां लागि रे ॥२॥

—वही, पृ० ६०३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ९—राग भैरवी

ओ प्यारी जी, मेरी तुंही चितचोर, मेरी तुंही चित चोर,
मेरो कछु नहिं जोर । टेक
तेरे बिरह दुख विकल रहतहुँ, तूं समजत कछु ओर ॥ ओ० १
ज्यों निरखुं त्यों आरत अधिकी, जैसे चन्द्र चकोर । ओ० २
सहो न परत रोवे मत मेरी, सो जिय निकसेगो फोर ॥ ओ० ३
तुंही मेरो द्रग मुखन प्यारी, तुंही मेरी जीव डोर । ओ० ४
यों कहलाइ हिये दया प्रीतम, पुछें नयन पट छोर ॥ ओ० ५
—वही, पृ० ६०५

पद १६—राग भैरवी

मोहे बांके नेंन खंजर से लगाय गयो रे ।
ओ लगाय कें झमक हिये लाय गयो रे ।
खुनी नेंन खंजर से लगाय । टेक
गजबी घायल कर गयो, दारु दवा न कोय ।
मलम मालम मेरे बुब हार, मिले तबी सुख रोय ॥ हो लगाय० १
मिल बिछरन की पीरकं, बीरन समझत कोय ।
कहत अयांने बाहावरी, जांने लागी होय री ॥ हो लगाय० २
सहज गती सुधा चले, तिरछे पर जिय लेन ।
भये बुद्धि बलके पद ती, नंद कुंवर के नेन ॥ हो लगाय० ३
नेंन नोक नट सालसी, सालन हैं हिय मांही ।
दया प्रीतम मुख चमक बिन दरसन निकसे नाहीं ॥ हो लगाय० ४
—वही, पृ० ६०७

पद २२—राग ललित

जोबन रस झलकाय, रसिया रोष तजोजी ।
प्यारे सुख की बाहार बेहे जाय, रसिया रोष तजोजी ॥ टेक
तुम मधुकर हम केतकी, सदा बन्यो संजोग ।
कंटक दोष बिचारिये, तो केसें बने रस भोग ॥ रसिया० १
हम कपूर तुम मीरच, मोहन राय तुम बिन हम उडि जाय ।
हम बिन तो तुम सदा सुखी हो, कही ऐसो कहा बसाय ॥ रसिया० २
ललित त्रिभंगी छेल छबीलो, नटवर नंद किशोर ।
भइ सो भइ अब व्होत नहीं, आछो जुवती जनपें जोर ॥ रसिया० ३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिछलि बात पिया चित ना धरिये, अबला हठिली होय।
बिना मूल की मैं दासी तिहारी, यों के है दीनो रोय ॥ रसिया० ४
देखी दिनता रती हृदे की, प्रसन्न भये बृज राय।
दया के प्रीतम हंस दोरी अंक भरी, अधर कपोल छुवाय ॥ रसिया० ५

—वही, पृ० ६०९

पद ३९—राग काफी

जुठी चोरी लगाय, मैया मोहे जुठी चोरी लगाइ। टेक
कबु-कबु याकी में गौनही दोहुँ, तातें ऐ घुनसाइ।
याके जिया की तुं नहि समुझत, मैं समजुं मेरी माइ ॥ मैया० १
चली परस्पर सें नामें नी, हिय कछु मुख कछु गाइ।
दया प्रीतम गोपीहित हिय को, लखी मेहेरी मुसकाइ ॥ मैया० २

—वही, पृ० ६१३

पद ४६—राग कालिंगडो

हो हरि रे, पीया जान दे हमकुं। टेक
उमड घुमड बृंदाबन छाइ लों, पात वात अंबुबा पाउर पाइलो।
कोयल बोले कहु-कहु, पीया जाने दे ॥१॥
दया प्रीतम घनघोर सांवरो, याकुं रटत भयो हें बाहावरो ॥२॥

—वही, पृ० ६१५

पद ६२—राग सोरठ

म्होरा मनडा ने माना हो बिहारि नंद लाल। टेक
रंगीली रसीली नेंनां चात बीच चुभी रही, सालत ज्यों नटसाल। म्हारा० १
नटवर छबरी लटक हिये अटकी दया प्रभु मदन गोपाल ॥ म्हारा० २

—वही, पृ० ६१९

पद ७१—राग मल्हार

मैं तो मेरो बाला जोबन दीयो नंदलाल कुं।
दियो नंदलाल कुं, वे सांवरे गोपाल कुं ॥ मैं तो मेरो० टेक०
बालपने से मेरो मोहन मीतवा,
कैसे बचूं आलि कैसे बरजुं गोपाल कुं ॥ मैं तो मेरो० १
लंगर ढीत गुमानी रसियो,
क्यों कर छोडे वे तो न्यामत माल कुं ॥ मैं तो मेरो० २
दया को प्रीतम प्यारो प्रेमरस भोगी,
कोउ न जांने वाके अदभुत ख्याल कुं ॥ मैं तो मेरो० ३

—वही, पृ० ६२१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद७३ —राग केरबो

बन में गुजरियां टी, अहिरीयां लुटी,
लूँटी-लूँटी मदन गोपाल बन में ॥ टेक
कंचन के कलस दोउ लूंटी, हां रे अधरकी लाल । बन में० १
चोर्यो चीत सुध बुध लीनी; कर डारी बेहाल । बन में० २
जाको जाय सो सब कोउ रो वे, यातें भइ हुँ खुशाल । बन में० ३
दया प्रीतम रस प्रेम लुंटारे, कीनी नेंनन में न्याहाल ॥ बन में० ४

—वही, पृ० ६२१

पद ८६—धोसी

प्रेम के पंथ नहीं परनां, परे मरने से नहीं डरनाँ ।
लाज का झाझ डुबा देनां, झहांन में बदनामी लेना ॥
लगन लग पीछू पच मरियें, न छूटे निसदिन जिय जरियें ।
सोडू व्याज शक्ति लागी, दया लगी हारसों बडभागी जी रट तुंही-तुंही ।

—वही, पृ० ६२५

पद—९७ लावणी

नागर नटरे, मिल जावो मोहन प्यारे । टेक०
तुम मोहन बेनु बजाइ, को हो सांच न हमें बुलाइ ।
हम सब तज धाई आई, आव निकट रे ॥ मिल जावो० १
हमे रूप सकुल बृज बासी, नहिं व्यापक ब्रह्म उपासी ।
ताहे क्यों छांडो अबिनासी, तुंमें अ घट रे ॥ मिल जावो०२
हम निपट मूठ बृजबाला, तुम सों कियो गरव नंद लाला ।
सो क्षमा करो बृजवाला, हो उम्मर घट रे ॥ मिल० जावो० ३
किये कुटुंब सहोदर बेरी, भई बिना मूल तम चेरी ।
तुम बिन कोउ हमें न हेरी, बिचार है घट रे ॥ मिल जावो० ४
यों कहे रोइ सब बामा, तब दया प्रगट घनश्यामा ।
सब त्याय लइ उरकामा, युमना तट रे ॥ मिल जावो० ५

—वही, पृ० ६३२

पद १०७—राग जंगली होरी

प्रोये प्रान बांन रसिया के नेंन ।
कैसे जाऊं रे धाम कर भगें न काम पल परें न तेन ॥१
होरी खेलत हीये होरी प्रगटी, ब्रेह दरद गरद की या सलके सेन ॥ २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मोरनी मंगसी गारी बिहारि की, रोम रोम जासुं लाग्यो हैं मेन ॥ ३
दया के प्रीतम बिना अलप कल्प सम कैसें कहुंगी अब धौस रेन ॥ ४
—वही, पृ० ६३५

पद ११४—राग काफीनी होरी

क्यों न पीया संग खेलत होरी ।
खेलत हो बृखभान किशोरी ॥ क्यों न पीया० टेक
रंगीली तुं में मान न आछो, परम प्रबीन भइ कीत मोरी ॥ क्यों० १
फिर पछतायगी समज सयांनी, मानत तुं न करी अब मोरी । क्यों० २
लाखन ललना बनी ठाढ़ी तेरी, निपट तरनी त्रिभुवन केरी ॥ क्यों० ३
दया के प्रीतम सो तुं उठ चल हलमिल, लंग से भरी ललना चिनचोरी ॥
क्यों० ४
—वही, पृ० ६३७

पद ११५—असावरीनी घुमार

राघा आइ खेलन सखी वृंदन में । टेक
अबीर गुलाल की आंधी बनेगी, मचेगो कीच चुवा चंदन से ।
पीचकारन की झर बरखेंगी, केसर रोरी बदन सें ॥ के हेरी० १
चंद्रावली आई ललीत विशाखा, चंद्रमगा नी की चंदन से ।
चंपकलीता चंद्रिका चपला, खेलेगी उर आनंदन से ॥ के हेरी० २
ताल मृदंग झांझ डफ खंजरी, महुवरी सुर सुख कंदन सें ।
ढोल ददामा डिमिडिमि झीडी गिडि, लाज कुल लोक निकंदन से । के हेरी०३
सुनत आये बलमोहन तैसें ही, सब विधि साज अमंदन सें,
सुबल सिदामा तोफर सब आदि, चतुर खेलइ सब फंदन सें । के हेरी०४
मिलि दुहु गाय चारु भयोरंग, कह्यो न जाय श्रुति छंदन सें ।
जुगल रूप पर बारी लोंन हु, बलहारी धो जग बंदन सें । के हेरी० ५
—वही, पृ० ६३८

पद ११२

नंद के नेनो तेरे जादुवारी, नेनन की नोक आगे खंजरका खपवा,
क्या बरछी बी कुछ नहीं कटारी ॥ नंद० १
नेनन की रसनी मंद मंद बोले, मधुरी तन मोरो ने मीली नां कुचारी ।
नंद० २
दया के प्रीतम तेरे माधुरी महुरत, अंतरते टरत ना टारी ॥ नंद० ३
—वही, पृ० ६३९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भक्ति

पद १९—राग कालिंगडो

लगन लगेहुँ सुखरूप गिरिधारी सों।
जो मिलियें तो महासुख पैयें, समर तलपबों अनुप गिरिधारी सों।
लगन० १
हरि बिन और सबे दुःखदाता, कहाँ रंक कहाँ भूप।
दया के प्रीतम से दोस्ती झुरे तो, तरियें माहा भवकूप ॥ लगन० २
—वही, पृ० ६४५

पद २२—राग जंगलो

मेरी रसना तुं वे राधाकृष्न क्यों न गाय, शाम श्यामा क्यों न गाय।
आयुरदा तेरी आयु रह्योही, बह्यो जायरे ॥ मेरी रसना० १
मेरा जीयराजी वे दुरिजन संग मत जाय दुरिजन संग मत जाय।
येही बडो दुख दायरे दया दीलघर वे दयानिधिजु के पाय ॥
दयानिधिजु के पाय जो भलो तेरो चाय वे ॥ मेरी रसना० २
—वही, पृ० ६४७

पद २३—राग जंगलो

श्री कृष्न हरि राम राम, राधे गिरधारी। श्री कृष्न० टेक
श्री वल्लभ श्री विट्ठल श्री जी, केशव कुंज विहारी ॥ कृष्न हरि० १
दया प्रीतम रट नाम निरंतर, शब्दलहर सुखकारी ॥ कृष्न हरि० २
—वही, पृ० ६४७

पद १—राग जंगलो

केवल एक भावभूख गिरिधारी, कोइ बस्तुना हरि मन हारी। टेक
गरुड सों आसन कौस्तुभ भूखन, लच्छमी ललना प्यारी।
सरस्वती पति स्तुति कहा करे कोइ, धरत ध्यान सदा त्रिपुरारी ॥ १
कीर्तन शेष शुकादि परमहंस, सेवे सतत पाद श्रीनारी।
तप दुर्वासा बगदालम्य से योगी, श्रुति पुरान स्तुति भारी ॥ २
अठ्यासी सहस्र मुनि स्मरण करत, अरु सनकादिक ब्रह्मचारी।
जनकादि ज्ञान दान बलि, प्राचिन बर्हिष यक्ष अपारी ॥ ३
नृगादि साधन धर्म देख, तेरो साधन मद दे डारी।
दया प्रीतम एक प्रीति पराधन, देख ले गोप कुमारी ॥ ४
—भक्त कवि श्री दयाराम भाई कृत काव्यमणिमाला,
भाग ४, पृ० २५१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद २—राग सोरठ

गारे गारे गिरिराज धरन गारे,
गोपि केश राधिकेश प्रान प्यारे प्यारे, गारे। टेक
त्रिगुन अजा काल अक्षर परस्वामी रे,
इशाइश आत्माराम अंतरजामी रे,
जगतउद्भव स्थिति लयकर बहुनामी रे।
विभु प्रधान पुरुषेश्वर अच्युत सच्चिदानन्द, सकलरूप,
अकल सकल न्यारे ॥ गारे० । १
वाणी मन अगम्य अनिर्देश रूपारे।
अकलगति स्वयंप्रकाश श्री अनूपारे।
छबी ललित त्रिभंगी नटवर ब्रजभूपा रे।
नंदात्मज यशोदोत्संग लालित, ब्रजभूषण, ब्रजवल्लभ,
ब्रजरत्ना दृग तारे नारे ॥ गारे० । २
पूर्ण परमानन्द रूप राशि रे,
आदि वृंदावन राररस विलासी रे।
दया प्रीतम प्यारे निकुंज वासी रे,
पूर्णनन्द पुरुषोत्तम अद्भुत आनन्द कंद,
मन्मथ मन हरन, बंसीवारे वारे ॥ गारे० । ३

—वही, पृ० २५२

पद ३

हरिदासा हरिदासा, बनजा हरिदासा हरिदासा ॥ टेक
सुधासिंधु के समीप बसके मूढ़ रहत क्यों प्यासा।
दीन होत क्यों दुःख पावत है, बसत परस के पासा ॥ बन० १
कामधेनु सुरद्रुम चिंतामनि, ईश्वर अखिल निवासा।
विनकुं छोड ओर कुं ध्यावे, सो तो वृआ प्रयासा ॥ बन० २
मनसा देह दुर्लभ छिन भंगुर, ज्यों जल बीच बतासा।
अचल सत्य एक सेवा हरि की, सब कुछ तुरत तमासा ॥ बन० ३
सरनागत वत्सल श्री बिट्ठल क्युं मन रहत उदासा।
दयाराम सतगुरु बताया है मनसुबा खासा ॥ बन० ४

—वही, पृ० २५३

पद ४—लावणी

सब सीरदारा, श्री कृष्ण हमारा प्यारा, गोपाल हमारा प्यारा।
अगनित अंड के करनेवारा, पालन पोखन फिर निस्तारा ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सबमें और सबनतें न्यारा, कोई न पावत जीनको पारा।
मोर मुगट पीतांबर धारा, मदन मनोहर मोरली बारा॥
नखशिख नटवर रूप अपारा, त्रिलोक सुन्दर भव सिवगारा।
प्रपन्न पारिजात दुःखहारा, अधम उद्धारन दीन उद्धारा॥
अन्य भक्त के तारनबारा, सब सुख दायक अति उदारा।
ललित त्रिभंगी नंद कुमारा, राधा जी हैं जिनकी दारा॥
नित ब्रिंदावन करत बिहारा, जान दयाराम उरहारा॥

—वही, पृ० २५३

पद ५—राग कानडो

यह मांगो श्री वल्लभ लाल, अपने चरण कमल मन मेरो,
लुभ रहे ज्यों मधुव्रत बाल॥ यह० टेक
नन्द नन्दन बृषभाननन्दिनी सेवुं सतत सब सुखजाल,
सतसंगत गुन गान अहर्निश, रुचे नहि कछु अनुचित ख्याल॥१॥
श्री वल्लभ सब बल्लभ सह मोहे, अति वल्लभ रहो ज्यों मनि व्याल।
श्री सुबोधिनी श्रवण वास व्रज, नित्य जमुनाजल पान रसाल॥२॥
दृढ आश्रय श्री महाप्रभु पद को, बिना मोल चेरो सब काल।
दासी दोस्ती कुंज महल में, दम्पती प्रसन्न देखी होउ निहाल॥३॥
युगल उच्छिष्ट आहार नित्य पाउं, चलुं अनुव्रति प्रिया गोपाल।
दास दयाकों यह फल दीजै, सहज कृपा मेंटी सब साल॥४॥

—वही, पृ० २५४

पद ६—राग भैरवी

हस साकार उपासी वे, सब गोकुल के बासी वे॥टेक
उधौ तुम अद्वैत ब्रह्म कहो, निराकार गुन हीने।
प्रेमी जन को पंथ नही, हम शुष्क ज्ञानी तुम चिन्हें॥ हम० १॥
झीलवो अरस परस भल कहीए, हिल मिल बानी विचारा।
मुंदे नैंन मृतक बराकर, ऊदास ध्यान तुमारा॥ हम० २॥
ललित त्रिभंगी छेल फांकडे, नटवर नाथ हमारे।
निर्गुन ब्रह्म सो धामरे उनका; समुझत समझन वारे॥ हम० ३॥
ब्रह्म रूप कों जीव कहत ज्यों जीव ब्रह्म ठहरावे।
ऐसो ज्ञान बसत जाके हीय, कबु कल्याण नहि पावे॥ हम० ४॥
जग कर्ता के रूप नहिं तो, जगहुँ काहां ते आया।
कारन जैसा कारज होवे, न्याय शास्त्र में गाया॥ हम० ५॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निराकार केहे दूर निवासी, निकटी अवयव देखे।
तेजोमय रवि जकत कहत परि, अरुन रूप क्यों पेखें ॥ हम० ६ ॥
रूप बिना कर्तृत्व बने नहिं, दिव्य रूप श्रुति गाया।
कर मुख बिन क्यों बंसी बजाई, पाउं न क्यों वन धाया ॥ हम० ७ ॥
तुम जो जूदे नही ब्रह्म सो, को ब्रह्मानन्द भोगी।
भोग्य भोगता नहि तुमरे मन, तब जोगी क्या रोगी ॥ हम० ८ ॥
ऐश्वार्यादि खट गुन संयुत, निर्गुन कैसे कहीए।
अजा त्रिगुन पर शुद्ध सत्व हरि, निरखत सब सुख लहीये ॥ हम० ९ ॥
भक्त नेत्र भूषण माणि, राधावर श्री कुंज बिहारी।
दास दया के मान जीवन धन, श्री गोवर्धन धारी ॥ हम० १० ॥

—वही, पृ० २५५

पद ७—भैरवी राग

तेरो कीयो कछु बनत नही, ते वृथा करत चित काहेकुं चिंता।
ते तो हुँ भयो टरत नहीं, बिन रुचि भगवंता ॥ तेरो० १॥
निज बल पार न पाय जहाँ जब त्यों, हरि के बल विन सब जंता।
चिंता अखित दोष की माता, तातें हिय न बसन दे सन्ता ॥ तेरो० २॥
जियकुं करनो परत नही कछु, प्रथम होंते इची राख्यो अनंता।
गज उष्टर उंची सुढि ग्रीवा, लंब करी श्री कन्ता ॥ तेरो० ३॥
केवल हो करता मानत हैं, तिनकी मुरखता नहिं अन्ता।
दया प्रीतम जिय प्रेरि करावें, तितो होय समजुत मतिवंता ॥ तेरो० ४॥

—वही, पृ० २५५

पद ८—राग भैरवी

हरदम कृष्ण कहे श्री कृष्ण कहे ते जबां मेरी।
ये ही मतलव के खातर करता हुँ खुशामत तेरी ॥
दही और दूध शक्कर देता हुँ हर वख्त तुझे।
तोभी हररोज रिनाम न सुनाती मुझे ॥
करे गुनगान गोविन्द का तो मुख परी वे भला।
नहीं तो मैं मैं एंच निकालूँगा, क्या मुख चाम बला ॥
खोई जींदगानी सारी, सोई गुनाह माफ तेरा।
दया प्रीतम नाम मत भूले, आखर वख्त मेरा ॥

—वही,पृ० २५६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद ९—जोगी आशावरी

अब हों सरन पर्यो मेरो कर धारो हो श्री जी ।
तब में जाय तर्यो निज बलसों; तारी हो श्री जी ।। टेक
साधन धर्म सकल में देख्यो, बहुत कठिन फल फीको जी ।
श्रम छोटो फल मोटो जिनमें, सरन तिहारी नीकी जी ।। तब० १ ।।
अबल जीव एक अनेक रिपु क्यों शुद्ध साधन बनी आशे जी ।
चित्त क्लेश बनी जदवा तदवा, सो का तुमकुं रीझावे जी ।। तब० २ ।।
कबु कोउ बहुत कियो श्रम साधन, सुफल कबु कोउ होई जी ।
ललित त्रिभंगी मोहन मिलावे, सो साधन नहि कोई जी ।। तब० ३ ।।
एक बेर कोउ कहे तिहारो, ताहें अभय कर डारो जी ।
दयो कहे लख कोटि बेर कहुँ, हुँ श्रीकृष्ण तिहारो जी ।। तब० ४ ।।

—वही, पृ० २५६

मंगलाचरणम्

द्रुपदराग-कल्याण

महा मंगल रूप श्री गुरुदेव श्री महा प्रभो,
जाके पदपद्म को प्रथम सिर नाइये ।। महा मंगल०
नाम लेत उदय होत आनन्द कन्द,
पाप ताप टरत छब ध्याइये ।। महा मंगल०
ब्रह्मा शिव विष्णु परब्रह्म सो गुरु राइ,
सकल तीरथ आदि अंघ्रिरज नाइये ।। महा मंगल०
दयो कहे आचारज अधिक को दूजो नहि,
गुरु सेवा चिन्तामनि इच्छित फल पाइये ।। महा मंगल०

—श्री दयाराम कृत काव्यमणिमाला, भाग ३
(दयाराम के हस्ताक्षर के पहले का पृष्ठ)

श्री हरिदास मणिमाला

॥ दुहा ॥

श्री गुरु वल्लभ देव को, प्रथम ही करूं प्रनाम ।
श्री विट्ठल श्रीकृष्ण श्रीयमुने पूरन काम ।। १ ।।
प्रभु मों पर करुना करो जांनी अपनो दास ।
प्रेम लछना भक्ति दे, राखो अपनी पास ।। २ ।।
निज सेवा सत्संग, समुरन निशदिन गुनगान ।
दृढ आश्रय अति दीजिए, हरीए क्लेश अभिमान ।। ३ ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आयो शर्न त्रिपाक को भूरस्यों जग जीवन।
चरन सरन मोही राखीए, ज्यों राखे बहु जन ॥ ४ ॥
श्री दामोदर दास सब पुष्टि सृष्टि को मूल।
श्री गोवर्धन नाथ तुम सदा ताहे अनुकूल ॥ ५ ॥
कृष्णदास सूर चत्रुभुज, कुंभन परमानन्द।
नन्द दास छीतस्वामी जु अरु स्वामी गोविन्द ॥ ६ ॥
अष्ट सखा यह आपके, प्यारे पुरुषोत्तम।
निज लीला में नित्य निकट राखे पूरन ब्रह्म ॥ ७ ॥
चोर्यासी द्वै शन अरु, बावन वैष्णो जन।
दैवीजन सब पुष्टि के, राखे सदा शरन ॥ ८ ॥
प्रनत माल हरि भक्त बच्छल, प्रभु दीन दयाल।
इत्यादि अति बर्द तुम बहन करो ब्रज पाल ॥ ९ ॥

—दयाराम कृत काव्यमणिमाला, भाग ६ में
श्री हरिदास मणिमाला, पृ० ११०

रावन कुम्भ करन हनैं, दीयो विभीषन राज।
तुम विचारी रघुकुल तिलक, शरन आये की लाज ॥ ४३ ॥
पुंडरीक पर प्रसभ व्हे, आये हरि बरुद देंन।
भीमातर विट्ठल बरों, कीये इंट पर ऐंन ॥ ४४ ॥
ध्रुव को अविचल पद दीयो, टारे सब सन्ताप।
चरन धरायो काल शिर, ऐसें प्रिय जन आप ॥ ४५ ॥
चन्द्र हास नीजदास लही, छनु छनु कीन्हीं सहाय।
विष टारी विषया करी, जन बच्छल ब्रज राय ॥ ४६ ॥
हरिश्चन्द्र को तुम हरि, भलो निभायो सत्य।
दूर कियें संकट सबें, दीनी उत्तम गत्य ॥ ४७ ॥
अंबरीष को कीर्ति सब जग प्रगटाइ आप।
जनरच्छन कुं सुदर्शन, दीनो चक्र मोरार ॥ ४८ ॥
रति रुकमांगद राय को एकादशी पर अत्य।
नगर अयोध्य सहित हरि, बैकुंठ दीनी गत्य ॥ ४९ ॥
उदर उत्तरा पैंठीं के, परीक्षत रच्छा कीनी।
शुक कों संग मिलाय कें, माधो मुक्ति दीनी ॥ ५० ॥
भागीरथ की भक्ति लखी, दीनो गंगा दान।
भूपति साठ हजार कों, हरि कीनो कल्याण ॥ ५१ ॥

—वही, पृ० ११४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञान देव सोपान अरु नवृत मुक्ता बाइ ।
ताहीने यश हित, हरि तुम जड भींत चलाई ॥१०२॥
मत अद्वैत स्थापन कीधो, भक्ति पंथसु भिन्न ।
शंकर स्वामी प्रगट व्हे, प्रभु आज्ञाधीन ॥१०३॥
पृथ्वीराज भरथरी बिक्रम हरिदास ।
श्रीमट रामानंद उर परमानंद प्रकास ॥१०४॥
जेमल की लज्जा, प्रभु राखी भृत्य बिचार ।
दारु असि दरसाई तुम, नृप सांची तरवार ॥१०५॥
बीजे सांध प्रियदास तुम, तुम ताकुं नहीं ओर ।
जीन हित श्रीरनछोरजी, आय बसें डाकोर ॥१०६॥
भक्त बिल्वमंगल, प्रगट दीने दरस गोपाल ।
"करनामृत" एक ग्रंथ, जीन कीनो परम रसाल ॥१०७॥
इत्यादिक सब संत कुं, अगनित करूं प्रनाम ।
सकल मोहे करुना करी, देहुं रति सुन्दरश्याम ॥१०८॥
श्री हरिदास अपार है, कैसें पाऊँ प्रनाम ।
ज्यों खग चंचु समुद्र सों भरें, ताही बिधि जांन ॥१०९॥
हरि गुरु हरिजन एक त्रय, ज्यों गंगत्रय धार ।
भोगवती भागीरथी मंदाकिनी बिच्यार ॥११०॥
मंगल रूप निधान यह, आदि मध्य लों अंत ।
नामांकित हरिदास हरि, प्रति पद दीजे चंत ॥१११॥
नाम धर्यो यह ग्रन्थ को, श्री हरिदास मनिमाल ।
महापतित पावन बने, करत पाठ ततकाल ॥११२॥
अनायास भक्ति मीलें, प्रेम सहित घनश्याम ।
सकल मनोरथ सिद्ध होय, पावे वेकुंठ धाम ॥११३॥
सदा काल श्रद्धा सहित, यह चरित्र जो गाय।
कटे पाप संताप सब, परमानंद सुख पाय ॥११४॥
संत रत्न सूत्र चारु, श्री कृष्ण कंठ पहेराय ।
मग्न कृतार्थ कवि भयो, निश दिन एही यश गाय ॥११५॥
घरी संख्या यह ग्रंथ के, दूहा शत एक बीस ।
पढ़े सुनें शीखे सदा, ताही मीले जगदीश ॥११६॥
पुनित पुलिन श्री नर्मदा, निकट चंडीपुर सदम ।
श्री जल शाइजु जगपति, ता छांहे जुगल पद पदम ॥११७॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्विजनागर साठोदरा, दयाराम अभिधान।
कहावे बैष्णव बल्लभ, कीयो संत गुनगान ॥११८॥
भेद छंद गुन बरनके, लहुं नहीं रति मांन।
क्षमा करो सब दोष, हरि देहों अभय दान ॥११९॥
यह मागुं प्रभु आपपें, रहों प्यारे प्रिय संग।
बांच्छे बल्लभदास हरि, प्रेम सुभक्ति अभंग ॥१२०॥

इति श्री कृष्णजन श्री वल्लभ दासानुदास कवि शिरोमणि रसिक भक्त श्री दयाराम भाई कृत "श्री हरिदास मणिमाला" संपूर्ण

—वही, पृ० १२० से १२२

कौतुकरत्नावली

दया दारतें यों बतों, ज्यों छहि सके न छहांइ।
छांय छवत काया ग्रसे, छाया मगरी नांइ ॥४॥

—दयाराम कृत काव्य मणिमाला में कौतुक रत्नावली, पृ० २०९

म्हेरि अजब गुल कृष्ण जप, अचल धार व्रत लीन।
चूगनी ज्हिं मुख पद, प्रभु जल पुंछ ऊंट मुख दीन ॥१६॥
हरिजन संग मरे जीये, दैवी जीव अनेक।
मेघ बुंद परसत मरे, जैसें जीवत भेक ॥१७॥
राधा मोहन दरस बिन, जीवे न रसिये दास।
गुंजा केधां मिरच्य बिन, संग न बसे बरास ॥१८॥
मरेहू प्रेमी सघ जीवे, दरसत हरि जीवन।
आवत ज्यों जड लोह में, चमक लखत चेतन ॥१९॥
जननी जनक में प्रीति, अस हरिजन धरि निर्दोष।
नाग बेलि जब हिम जरे, जरे सुदल शत कोष ॥२०॥
राधा माधव एक असु, जुगल देह दरसाय।
तरमादा जिमि एक है, कुरंद पंखी न्याय ॥२१॥
हरिजन को मन हरिहि में, कहुँ जिसे पंचभूत।
ऊँट मरे ज्यों क्यों हुँ; गिरिमुख सन्मुख मरूत ॥२२॥
क्योंहुँ रुक्यो न रहे, धसें हरिपें मन हरिजन।
अमर घूम्र मृग मद झुके, प्रतिकूल जदपि पवन ॥२३॥

—वही, पृ० २१४

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अकल चरित्र चंद्रिका

नाग पाश बंधाये, नटबर काली नथ्यो अहि छिन में।
अकथित अचिंत महिमा मोहन, आवत बचन न मन में ॥१०॥
का सुंदर छबि ? महा भयंकर अंतक को कंपावे।
छेल छबिले मदन मनोहर, सोहु निगम नेति गावे ॥११॥
शांत न नरहरी महा क्रोधी, श्री, शिव, शंके न सुनि गाथा।
क्रोधीहु क्यों कही ? भृगु पद प्रहार सह्यो प्रभु ! महा विभुनाथा ॥१२॥
सत्य संकल्प तदपि बहु खटपट, श्री गोपाल श्रुति गावे।
जो साचें क्यों छल्यों बलि नृप ! निश्चय एक न आवे ॥१३॥
जननी सहोदर आदि हते, तहु भृगुपति दोष न मीने।
राम पूरन संग्राम हतें रिपुरावन, हयमख कीने ॥१४॥
बानर बल्लव बच्छ जिवाये, निज जांनी पलमांही।
यादव कुल क्षय करवाये, प्रभु वे का अपनी नां री ॥१५॥

—दयाराम कृत काव्य मणिमाला, भाग ६ में अकल चरित्र चंद्रिका, पृष्ठ २५३ और २५४

अशरन शरन अनाथ नाथ हरि, आरत बंधु सांचे।
पतित पावन भक्ताधीन भगवन्न, उहि श्रुति बांचे ॥५४॥
निस्साधनी को नाहीं धीधावनो, साधनी गर्व न करनो।
दीन होय रेहेनो दोहु को भल है, मधुसूदन कर तरनो ॥५५॥
ऐसें सब बिधि समर्थ इश्वर, श्री मुख गिरा अलापी।
अहित क्योंहु मेरे भक्तन कों, होय न करूं कदापी ॥५६॥
अति अपराधी होय तहुँ, जो अनन्य व्हें मोहि ध्यावे।
धेनु बच्छ ल्यों मोहे भक्त प्रिय, अवगुन क्योंहु न आवे ॥५७॥
भक्त प्रानतें प्यारे श्रीहरि, माने आप अधाको।
तहुँ मन गर्व न धरनो जनको, सत्य दीन सो नीको ॥५८॥
ओर दोष कों रोष न आवें, रुचे न कबु अभिमाना।
गोपी जन सें प्यारे तिनसों हू, भये अंतर्ध्याना ॥५९॥
ब्हारे दीनता साची केवल, आइ मीले तब आई।
टरीवे मील बेकी दुहु बस्तु, दीनी कृष्ण बताई ॥६०॥
जैसो हों तेसों तुम मम प्रभु, कृष्ण करूं हुँ प्रनामा।
जेसो हूँ तेसों मोहि पालो, महा प्रभु सुंदर श्यामा ॥६१॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दया प्रीतम की "अकल चरित्र चंद्रिका" जो कोइ गावे ।
तिनके सब संदेह मिटि जावे, श्रीहरि पदवी पावे ॥६२॥

—इति श्री कृष्णदास श्री वल्लभदासानुदास कविवर श्री दयाराम भाई विरचित "श्रीकृष्ण अकल चरित्र चंद्रिका" समाप्त ।

—वही, पृ० २७१ से २७३

मुकुन्द

पद १०—राग गोड मल्हार

मघवन कोप्यो मुरारी श्री वृज पेंरे ।
महा परले को मेघपति आयो, सार करो ज्युं हमारी । श्री वृज०
वादल ठठ घटा घन घेरो, दामनी चलकत कारी ।
आदिन अर्क तनक नहीं तेज को, हो गई रेन अंधारी ॥ श्री वृज०
उत्तर दीश थी सारिंग प्रगटे, बुंद परत हठारी ।
सुन्दर श्याम प्रभु चरणे रे राखो, अघात परत है वारी ॥ श्री वृज०
तब उछरंगे कृपा दृष्टि रे कीनी, बात हृदय में बिचारी ।
गीरी कर घरवे की मनसा रे कीनी, मुकुंद महिमा भारी ॥ श्री वृज०

—बृहत्काव्य दोहन, भाग, ५ पृ० ८०७

पद ११

गोवर्धन गिरधारी, प्रभु मेरे, गोवर्धन गिरधारी ।
आई उठाके प्रभु उर्धज लीनो, वाम कर पर ठेरा री ॥ श्री प्रभु०
नंद के नंदन गोवर्धन हेरो, उपर चक्र धराही ।
वास कयों गोवर्धन नीचे, गौ बछ हेठ चराही ॥ श्री प्रभु०
सात दिवस लौं वृषा भइ व्रज में, ता पिछ हार कराही ।
हे ठे घोर बाजे गोरस को अपने घेर ज्युं कराहीं ॥ श्री प्रभु०
धवल मंगल गावे व्रज वनिता, मान भंग मघवन कराही ॥
आदि नारायण प्रगटे श्री व्रज में, जाय मुकुन्द बलिहारी ॥ श्री प्रभु०

—वही, पृ० ८०८

पद १२

श्री हरी चरण रेन परवारी ।
कीटि कलप को संकट कापे, यम किंकर थी अभय करारी ॥ श्री हरी०
मुकुट मनोहर पीताम्बर धर, शंख चक्र गदा कर धारी ।
मकरा कृत कुंडल कर्णोपरी, ऐसे विराजत मदन मुरारी ॥ श्री हरी०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोटि काम वाकी स्तुति करत है, अज सुरिनर वाकी करत ही सेवारी ।
पय सुत में जैसे घृत रहत है, ऐसे अन्तर में कुंज बिहारी ।। श्री हरी०
हृदय कमल में हरि देव जानो, एक आखे नामें गनिका तारी ।
प्रल्हाद कारने नृसिंह प्रकटे, हिरण्याकश्यपु फाडो उदर विडारी ।। श्री हरि०
अम्रीष कारन दश रूप प्रगटे, गज मुकाव्यो जुड शेरे मारी ।
ऐसे अनेक भक्तन हुँ उधारे, मोर मुकुट पर मुकुन्द बलिहारी ।। श्री हरि०

—वही, पृ० ८०८

पद १३—राग सारंग मल्हार

आज रथ बैठे श्री मदन गोपाल ।
आइ मिले सब वृज के वासी, निरखत गोपी ग्वाल । आज०
हरित बसन धन भाइत वाधा, पाध कुसुंबी रसाल ।
मोतन माल कुसुम और गुंजा, कनक जडित तडित मणि लाल ।। आज०
शुची मास शुक्ल ही तृतीया, मीले हरी जन जन चोक विशाल ।
गावत राग सप्त स्वर विधके, बीन मृदंग तान अरु ताल ।। आज०
आए जुगल तुरी हरी पाए, चलत विमल मति गति सु मराल ।
गाजत घोर घन्टा कंकनीयाँ, विविध मनोहर शब्द रसाल ।। आज०
निरखी हरखी सुर वृज की बनिता, रथ राजीत भुवन प्रतिपाल ।
मुकुन्द प्रेम मगन भरि निरखत, पुन्य प्रबल जाके अति भाल ।। आज०

—वही, पृ० ८०८

पद १४—राग सोरठ

मोहन मधुवन में बीराजे ।
बादर झुक आयो चौफेरी, मधुर-मधुर स्वर गाजे । मोहन०
घटा छटा घन दामनी चमकत, मोर बपैया समाजे । मोहन०
सुन्दर श्याम प्रभु मनोहर मूर्ति, देखी मदनमस लाजे । मोहन०
मुकुन्द मंद मति कहे कर जोडी, हृदय कमल में बिराजे । मोहन०

—वही, पृ० ८०८

पद १५—राग कानडो

जय वृजराज जगत सुखकारी ।
निज्जन प्रेम भक्ति केरे कारण, प्रगट भये वृज कुंज विहारी ।। जय०
कश्यप सुत तनया के तीरे, नेरे-नेरे संग सखारी ।
लीला रंग अंग रस भीने, प्रेम मगन अति द्रगन निहारी ।। जय०
वेद भेद मर्जादा कारण, तारण प्रिय रिपु शब्द उचारे ।
नाम भजन अर्च्या द्रग सेवा, प्रथ ही चले सोही जन कुं ओधारे ।। जय०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कृपा सिंधु बंधु निज जन के, अगम अगोचर अद्य सें रे तारे।
त्रिगुणातीत अखंड अविनाशी, सो प्रगट भये कलि दोष निवारे॥ जय०
पतित के पावन बरद तुहारे, ओरी सुनके तुम चरण निहारे।
अधम अति सो मुकुंद तम चरणे, भव सागर को भय अति भारे॥ जय०

—वही, पृ० ८०९

पद १६

आ अवसर प्रभु सेवा रे कीजे।
त्रिविध ताप मिटे निज जन को, मन क्रम वचनेरे हरि रस पीजे। आ०
करुणा नायक बहु सुख दायक, लायक जनके कष्ट हरीजे।
प्रेम मगन भजन लगनी से, एहि विधि जन्म सफल करी लीजे॥ आ०
करी सत्संग अंग रस भीने, परमारथ में जो कछु दीजे।
सब परिवार अर्थ के बंधु, विपति कालमां रे कोनसें रे कीजे॥ आ०
मन क्रम वचने रे द्रढता सेवो, हृदय कमल में रे ध्यान धरीजे।
मुकुंद त्रिविध ताप निवारन, क्रिपा करे तो भव से रे जीजे॥ आ०

—वही, पृ० ८०९

पद १८—राग अडाणो

नवल किशोर कित मिले चंदावनी, कित मिले चंदावनी। नवल०
है घणुं प्यारी भ्रखुभान कुमारी, मेरे मन चित्त कुं चोर। कित०
कारि-कारि बादलीमां बिजली चमूके, मेहूला करे घमघोर। कित०
शशिवदनी के चित्त के विंछु रे, सुरती रहत नहीं ठोर। कित०
मुकुंद मदन मोहन छबी निरखी, आनंद की गति और। कित०

—वही, पृ० ८१०

पद १९—राग घुमार

आज लाल खेले होरी रे, वृज की बीथनी में। आज० टेक
इतही मीले नंद लाल ग्वाल सब, उत भ्रखभान किशोरी रे। वृज०
नागरी-गागरी रंग भरी लाई, केसु कसुंवो घोरी रे॥ वृज०
भरी पिचकारी ग्वाल सब ठारे, भारे है गुलाल की झोरी रे। वृज०
छिरकत मोहन युवति परस्पर, बोलत फाग बहोरी रे॥ वृज०
निरखत मोहन प्रेम मगन भर, निज जनके चित चोरी रे। वृज०
मागत फाग लाग सब जन को, युवति कहे कर जोरी रे॥ नृज०
फगुवा देत लेत सब जनकुं, पूरण काम भयोरी रे। वृज०
मुकुंद कहे ओ ही अवसर की शोभा, कहा वर्णवुं मति थोरी रे॥ वृज०

—वही, पृ० ८१०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद २०

मत डारो पिचकारी रे, वृज की वनिता परमत। मत० टेक
तुम नंदजु के कुंवर कन्हैया, हम गुजरी वृज नारी रे। वृज की०
और गली खेलो मन मोहन, सगरे संग, सखारी रे। वृज की०
सासु ननदी बहु विध बोले, अवली बात विचारी रे। वृज की०
मन की वृत्ति तुम सब जानो, हम तो हो दासी तुमारी रे। वृज की०
मुकुंद कहे मोहन वृज की वनिता, हसि-हसि लेतहे तारी रे। वृज की०

—वही, पृ० ८१०

पद २१—राग सोरठ

मोहन मधुवन में बीराजे, मोहन मधुवन में बीराजे। मोहन०
बादुर झुक आयो चोफेर, मधुरे-मधुरे सुर गाजे। मोहन०
घटा छटा घन दामनी चमकत, मोर बपैया समाजे। मोहन०
सुन्दर श्याम मनोहर मुरती, देखी मदन मन लाजे। मोहन०
मुकुंद मंद मति कहे कर जोरी, हृदय कमल में बिराजे। मोहन०

—वही, पृ० ८१०

नरभेराम

रासलीला

पद ५

कनैया कीकी तेरी हो, कामन गारी ।। टेक १
जमनां तीर नीर भरने गइ थी, कंकरी गगरी में मारी हो ।। कनैया० २
.... दृष्टि फरे छे न्यारी न्यारी हो ।। कनैया० ३
ककरी वागी छे कानयां आवी,तेछी वारनी रही छुं हारी हो ।। कनैया० ४
गुरु चरण प्रताप थी नरोभ, फरी फरी जाय वारी वारी हो ।। कनैया० ५

—प्राचीन काव्य माला ग्रंथ पृ० २२

पद ७

हरिने हेते बंसरी बजाइ हो, नंदने लाले बंसरी बजाई। टेक १
वन में चाले राग रागनी सहित, गोपिका अकलाइ हो ।। नंदने० २
कामिनी सेज समारे कंथनी, शब्द कानमां पेठो छे आइ हो। नंदने० ३
कोइ श्यामा ए शब्द सुण्यो कानमां, प्रेम रस भांय भीजाइ हो। नंदने० ४
कहे नरभेराम गुरु प्रतापे, पूरा प्रेम समुद्रे नाही हो ।। नंदने० ५

—वही, पृ० ५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(इ) सन्त कवियों की कविताओं से संकलन

अखो

अकल कला खेलत नर ज्ञानी
जैसे ही नाव हिरे फिरे दसों दिश
ध्रुव तारे पर रहन निशानी ॥ ध्रुव ॥
चलन वलन अपनी पर वाकी
मनकी सुरत अकाश ठरानी ॥
तत्त्व समास भयो है स्वतंतर,
जैसे हिम होत है पानी ॥ अकल० १॥
छुपी आदि अन्त न पायो,
आइ न सकत जहाँ मन बानी ॥
ता घर स्थिति भई है जिनकी
कही न जात ऐसी अकथ कहानी ॥ अकल० २॥
अजब खेल अद्भुत अनुपम है
जाकू है पहिचान पुरानी ।
गगन हि गेब भया नर बोले ।
एहि अखा जानत कोई ज्ञानी ॥

—आश्रम भजनावलि, पृ० ११९

संतप्रिया

दोहरा

ओंकारथी आध हो, अकलरूप अनंत ।
कल्पितता मध्य शून्यसी, मानिनता मानंत ॥१॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आध निरंजन आप अज, त्यां[1] कीनो अध्यारोप ।
अर्धमात्रा अखो कहे, कीनो प्रकट गोप ॥२॥
ताही को विस्तार सद्य, भाषा कवित्त करके कहुँ ।
हे चिद् अरणव अगाध, हुँ[2] चीडी चंच भरके कहूँ ॥३॥
संतप्रिया सुखवर्धनी, जाके हृदे हेत ।
अखा करत आलोचना, तहाँ घर आप ले देत ॥४॥
संतप्रिया संतकुं रुचे, बड़ आसे शिवरूप ।
रूप अरूपी जे[3] नरा, अनुभव अकळ अनुप ॥५॥
परब्रह्म कहत परोक्ष हे, बिन प्रत्यश प्रमान ।
जाकुं पिंड परचा नहीं, सो कोटि करे अयान ॥६॥

कवित

प्रत्यक्ष के प्रमान बिना नर, धावत धूपत तोरत पाती,
प्रत्यक्ष के प्रमान बिना, नर नाचत गावत होय रे याती;
प्रत्यक्ष के प्रमान बिना, नर खावत पीवत श्यामा सराती,
न प्रत्यक्ष प्रमान सो नारा, बिन भरतार सोहे ज्युं बराती ॥७॥
परब्रह्म राम नारायण नरहर, जाके हे नाम अनंत अपारा,
सो हरि हाज हजूर हथोहथ, स्वे नर पावे जो आवे विचारा;
गुरु गोविन्द गोविन्द सोही गुरु, गुरु गोविन्द गने नहि न्यारा,
बैकुंठ ते शुकदेव गुरु बिन आयो, फरी भू भाखे सो नारा ॥८॥
सद्गुरु चरन सरन ग्रहे बिन, भवजल आए सो बहुत विरासे,
सद्गुरु चरन सरन ग्रहे बिन, वेद पढ़ें ते बंभ निरासे;
सद्गुरु चरन सरन ग्रहे बिन, दानी करन संसे परे साँसे,
सद्गुरु चरन सरन सो नारा, स्वे हरिरूप करे मन आसे ॥९॥

दोहरा

मनसा वाचा कर्मणा, हरि न भज्यो प्रिय जान ।
अनन्त विषे रससें पच्यो, पुनी गयो पसारे पान ॥१०॥

कवित

कहा भयो कंचन कुन्दसो अंग, रंग सुगन्ध शोभा अति ओपे,
कहा भयो तान तुरंग तूरी चढ़े, ध्रूजे धरा जाके नेक कोपे;
धनद सो धन करन सो दानी, तो कहा काम सर्यो हरि तोपें,
एते गुन अवगुन भरा सोनारा, जो[4] गुरुज्ञान न पायो गुरु पें ॥११॥

---

[1] वहाँ, [2] मैं, [3] जो, [4] यदि ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन रिझावन वेदविद्या सब, मन रिझावन चौद विद्यारी,
मन रिझावन पाट पटम्बर, मन रिझावन महल अटारी;
मन रिझावन ताप तपे सब, मन रिझावन होय ब्रह्मचारी,
मन कुं मेट मनातीत पावे, सो तो अखा है गुरुकल न्यारी ॥१२॥
राम रसायन पी न शके जन, बहुत जीएँ तें कहा कीनो भगो रे,
राम की मेर चामरंग राच्यो ज्युं, स्वान सुनी कीरेही लग्यो रे;
गुरु गोविन्द पहिचान न पायो, रिपु सों हेत तो सोही डग्यो रे,
ए डहक्यो डगेडग माया सोनारा, जो गुरु बेन न जग्यो रे ॥१३॥
धन-तन-त्रियासुं ऐसे जडयो मन, जेसें पडयो मीन के मन पानी,
धन-तन-त्रिया सों छाँड़[1] जात है, मन की प्रीति न होय पुरानी;
एही अविद्या घेर्यो[2] दशोदश, ज्यों जल डूबत नाव भरानी,
अब कर करतार शब्द को खेवा, जी लों सोनारा भीनेकी भान न जानी ॥१४॥
रे मन ! राम भजन की ठोरनें, भई है रंग रंगीली सी रामा,
सुन्दरश्याम सुनायो सुन्यो है, स्वे सत्यरूप सरावे तुं श्यामा;
अंबुज सी अंगना अति आछी, मन मधूप पाये विरामा,
भाव भगति भरोंसो सोनारा, भूधर की ठोर भई है ज्यों भामा ॥१५॥
रे मन ! राम रहे न पहचान्यो, तू कवन निंद सोयो रे गुमानी,
ओस को नीर चह तन धन जोबन, ज्यों घन में बिजली मुसकानी;
ताही में मोती तू पोई ले प्यारे, सई ले सद्गुरु सन्त ज्ञानी,
हंसकला गुरु देवे सो नारा, न्यारा[3] रहे दूध पानी का पानी ॥१६॥
सद्गुरु सान संभाले सो संतजन, अन्य तें मन कछु ठोर न आवे,
मंजन सो मल टारे उपर के, भवभंजन गुरु ज्ञान बतावे;
खंजन सी मति छांड़ सद्गुरु, अजन दे नैन घेहेन गँमावे,
गुरु गोविन्द नहीं नर न्यारा, सोनारा सेवे सो सबे सूझ पावे ॥१७॥
सद्गुरु मान सबे वहे संपन, खंपन[4] येही के ब्रह्म न जाने,
ब्रह्मज्ञान बिना भटके नर भूले, अटूले[5] आपा परहाथ बिकाने;
आप कोई ओर उपासन और ज्यों, नीलका नीर मसी[6] मध्य साने[*],
ऐसें अखो कहे भये भवमें गुरु, गोविन्द कहा शीष पें उर आने ॥१८॥
ऐसे नरकुं गुरु कीजे सोनारा, ज्यों न्यारा जमे सिंधु में जलमोती,
ज्यों किंमत कोई कला न पहिचाने, जल में पहाड़ छिपे मध्य जोती;

---

[1] छोड़, [2] घिरा, [3] अलग, [4] निर्बलता, [5] अकेले, [6] काजल,
[*] मिलता है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जले जुपरी[1] ओर शून्य जरे नहि, जो भरपूर भरी मध्य होती,
ऐसा गुरु राम राम कर छौड़े, टाले सो श्वान शृगाल के गोती[2] ॥१९॥

दोहरा

अच्युत गोत्र जन रामका, हंस बरन हरिरूप।
गुरु गोविन्द कुं जब ही मिले, तब ही भये तद्रूप ॥२०॥

कवित

नीचर्थे नीच कैसा कुल होता, जात वरन खपे चतुराई,
पंडित जान बड़े भट बैकुंठ, न चले ज्यों निसान बजाई;
चमार जुलाहा नाई धुनिया, दादू रैदास सेना कबिराई।
राम सोनारा अग्नि की सी ज्वाला, मध्य पडयो सो कीनो अपनाई ॥२१॥
नांहीं करम की कीच हरिजन कुं, मक्षिका न छुए जैसें चंदन कुं,
ज्ञान गगन में जात सबे गेब, एब नहि मेघ बुंदन कुं;
भीली के बोर[3] जूठे भक्षे भाव सों, तो कहाँ लाज लगी रघुनन्दनको,
ए[4] जेसो तेसो है हरिजन सोनारा, कियो है ज्यों नीर बंधन को ॥२२॥
जोपें[5] राम रह्यो रदिया[6], उदया है दिनकर कहों शशी,
विधि निषेध बपुरा को[7] कहाँ बल, जहाँ गुरु की करुना विलसी;
स्वे शुकदेव पायो गुरुभेव[8] कहाँ चंदन चरच्यो तुलसी,
अखा जैसे हैं मूक्की[9] साकर, घट ब्रूंटे[10] सो जाने सीरी भी लसी ॥२३॥
ब्रह्मज्ञान बिना सुख की सीहोर[11] न पावे, ज्ञान बिना संसे नही छूटे।
ज्ञान बिना देह को अपराधो, ज्ञान बिना नित्य थे सब लूटे;
ज्ञान बिना श्वान शुकर जैसो, ज्ञान आयो भ्रम को भांड फूटे,
ज्ञान सो गोविन्द गोविन्द सोही ज्ञान, ऐसे अखो कहे माया सें टूटे ॥२४॥
ज्ञान बिना ढूंढ़े गिरिगह्वर, ज्ञान बिना पराधीन सो नंचे[12]।
ज्ञान बिना मंजन मलधारी, ज्ञान बिना काय के केश खंचे[13];
ज्ञान बिना जुवती जन मोह्यो, ज्ञान बिना करम कोध्य न वंचे[14],
जब ज्ञान गर्ज्यो संग सोनारा, भागे भ्रम मेगल[15]मद मंचे ॥२५॥

---

[1] झोंपड़ी, [2] खोजकर, [3] बेर, [4] वह, [5] जिसपे, [6] हृदय, [7] बेचारे का, [8] गुरु का रहस्य, [9] गूंगे के लिए जैसे गुड़ है, [10] जो प्रत्येक वस्तु में राम को देखता है वह जानता है कि यह इसकी ही सुरभि है। [11] झरन, [12] नाचे, [13] खिचे, [14] दूर होता है, [15] भ्रम रूपी हाथी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोहरा

सर्वातीत सब जा विषे, सब समेत अब शून्य ।
स्वे स्वरूप स्फुरन भयो, नांहीं ज्ञान नहि नून्य ॥२६॥

कवित

ज्यों जन सोयो एक सेजा[1] पर, सो स्वप्ने सत कोट भयो है,
हय हस्ती नर वाहन नरपति, सेन सुन्दर जोषिता नच्यो है;
आई गुरु जग्यो जन सोवत, ताकत अंत ही एक रह्यो है,
तेसें अखा सोया स्वप्न सब, देखत सो गुरु ज्ञान दियो है ॥२७॥
ज्ञानी हीं ज्ञान पुकारे सबकुं, ज्ञान को रूप अनन्त अपारा,
कोउ है कर्म धर्म के ज्ञानी, कोउ है मन्त्र-उपासन हारा;
कोउ है जोग पवन के ज्ञानी, कोउ करे पंचभूत विचारा,
जाकुं सोनारा आपा पर छूटा सो, ज्ञान विज्ञान ज्यों का त्यों सारा ॥२८॥
सोहागन की सीर जाने सोहागन, न जाने दोहागन[2] कन्थ विछोई,
नव नव नेह नव पल्लव नारी, उर आतुर रहत है ज्यों अछोई;
प्रत्यक्ष राम पलोपल पूरन, जानत नांहीं मैं कौन हों ओई,
आपा गयो गुरुभेव सोनारा, सारथे सार लीनी है ज्यों द्रोही ॥२९॥
ईतउत मन फिरे कहा तेरो, तो में रहत सा आधार धराधर को,
तेरो समास होवे मन तोमें, जब जाने तू भेव गिरिधर को;
शब्द में शब्दातीत बोलत, पायो परछन्दो[3] परधर को,[4]
जाने को सन्त सोनारा सीधी कळ, प्रत्यक्ष पहूँचे पराधर को ॥३०॥
पूरन ब्रह्म म्हरे सो पूरन, पूछयो गिरिजा गिरिजापति सों,
पूरन ब्रह्म ठेहेराव सुन्यो जब, कह्यो आध पुरुष प्रजापति सों;
पूरन ब्रह्म ठेहराव कीनो है, गुरु वसिष्ठ हर जापत सो,
महाजन ब्रह्म ठेहेराव सोनारा, सत्य मान शब्द प्रजापति सो ॥३१॥
सोहं प्रकाश स्वरूप को पुनी, तहाँ पहोंचत नहिं बतियाँ दन्त की,
आपा पर भंग अध्यास नहिं अंग, सूत्र नहि तहों कहाँ मन्त की ॥
सदगुरु के बिन बगसे निज नेन समझ सोनारा सरे सन्त की ॥३२॥
जेसो है ब्रह्म एनेएन पूरन एसो न जनी शकत हे जियरा,
कोट काल की कला मन जानत, तेसो तो कहे न शके ए गियरा;

---

[1] शय्या, [2] विधवा, [3] छाया, [4] परावाणी को धारण करने वाले को, परमात्मा को ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जेसी रसना भाषा कर भाखे, एसो तो ले न सके अगरा,
सेन गुरु की समज सोनारा, लक्ष पायो निबर्यो झगरा ॥३३॥
जहाँ कछु नांहीं कहाँ कछु थापत, शुद्ध निरंजन के मध्य ओटे,
ज्युं का त्युं सोही सहज स्वतन्त्र, कल्पना नेक सो भ्रम की कोटे;
जहाँ परपंच तहाँ पुरुषोत्तम, जहाँ मध्यभाग तहाँ क्षेतो करोटे,
कहत अखो यहाँ नहि चितवन, चित्त उठा विना ज्युं कोई अठोटे ॥३४॥

दोहरा

एसो लक्ष है ज्ञान को, और सबे मनकीन;
अखा सबे मनको रच्यो, मनुआ अधिक आधीन ॥३५॥
देह अभिमानी जब भयो, इत उत फेल्यो आप;
कहत अखो मन ताहीं सब, लोक चौद को व्याप ॥३६॥

कवित

जावत है सब लोक यहाँ से, आवत नहीं जन कोई फरी[1],
राय राना से बड़े भट पंडित, कोई न दे पडयो पतरी;
घन दारा सुत रहत परे, मानिनता देह संग वरी,
इतनी तो अपने नेनुं देखो, ओर अखा मन ने पकरी ॥३७॥
देहधारी कहत अलौकिक, परलोक की देह करत बतियां;
साधन संग करत देहधारी, देह लिखत पुस्तक पतियां;
स्वर्ग वैकुंठ बतावे देहधारी, कहत बनाई घर छतियां;
देखियत है सोनारा सबे इत, उनकी कोई कहे नहि रतियां ॥३८॥
इत उत मन फुर्यो है ज्युं तेरो, मन खड़ो है तो सबे सच्चो,
कारन करज सबे मन ही को, मन भयो है पवन रच्यो;
मन पवन की ले शून्य सागर में, एसें ही खेल मच्यो,
एरी अनुक्रम अखा भयो गोचर, अचयो[2] रस उनकुं ज्युं अच्यो ॥३९॥
हे कछु ओर भई कछु ओर, अटपटी[3] आद्य अनाद्य चली,
लौकिक ओट अलौकिक उरे, लौकिक लौकिक मांही ज्युं भली[4];
सदगुरुसेन सोनारा सीधी कल,[5] जैसे ऊघडत है कदली,
शेषे रह्यो सो रह्यो बराबर, बिन समज्यो शुक बंध्यो नली ॥४०॥

दोहरा

छूट कथीर कंचन भया, गुरुकल वस्तु विचार;
आपा मेट्या आप रहे, कहेता हवा सोनार ॥४१॥

---

[1] फिर से, [2] बिना चखा, [3] अगम्य, [4] मिली, [5] कला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवित

मैं नहीं मैं नहीं प्यारे, तू ही है तू ही है सही,
कंचुकी को बल है ज्युं कहा, हरे फिरे ज्युं आपे ही अहि ।
अंग भुजंग गयो जब निकसी, तब जड़ जरा जितही तितही,
नेन श्रवन नासा अंग मेरो, राम सोनारा फरे है ज्युं बही ॥४२॥
ज्युं अङ्ग ! अहि के अङ्ग होत जरा, सो तो अङ्ग ही ते आही[1] ऊपजी[2],
अन्य उपाय कारन नहि उरे, सहज समारी सो सेज सजी;
तेसे नर नारायण निरगुन, सगुनता ऐसे हीं भजी,
गुन निरगुन अखा नहि उरे भेव पायो भव भ्रांत तजी[3] ॥४३॥
जो मन मान्यो तो ब्रह्म सबे को, जो मन मान्यो तो जीव सबे,
जीव ही जीव टरत नहीं को जुग, अब जैसो है तैसो तबे ।
देह दरसी दिनोदिन दारुन, देह के दोष तें रहे ज्युं दहे,
जो दिव्य दृष्टि दीनी गुरुदेव ने, तो ब्रह्म सोनारा सबेहीं फबे ॥४४॥
मन को लक्ष पलटे तें पूरन, ब्रह्म जैसो को तैसो है सदा,
ज्ञान बिना भटके है जुगोजुग, ज्ञान आयो भयो ब्रह्म तदा ।
अक्षर तें उलझण नहि भागत, कहा भयो पुस्तक पोठ सदा,
कहे सुने सिध[4] नांही सोनारा, स्वयं हरिरूप भयो है न ज्युं रदा[5] ॥४५॥

दोहरा

चिद चराचर चिह्नि बिन, चितवत हीं चित्त कहेन,
पूरन लक्षबिन पामरा, आयु घटत दिन रहेन ।
पूरनता जानत नहि; लेत गुनन की ओट,
सो भव में भटके अखा, सीस तिमिर की मोट[6] ॥४६॥

कवित

ज्ञान की गत बूझत नाहीं बावरे, ज्ञान बिना ज्युं अज्ञान टटोरे,
देह विदेह कीनी चाहे मूरख, उद्योत कैसे होय गुंजा बटोरे ।
मित्र सुभाव इन्द्री गुन उरे, तां करी सुदासुद चाहतो रे,
देहातीत अध्यास अनुपम, सो तो अखा है गुरुकल ओरे ॥४७॥
सूझ न बूझ न गुझ गोविन्द की, लूझ परे देखी लोक अडंबर,
आछो सो अग उर तान तरंग, शोभा सुगंध रंग पाट पटंबर ।
तनसुख मनसुख लालच के लिये, चित्र-विचित्र देखी भयो गुंबर,
राम बिना रीत्य मानी सोनारा, जैसे ही अङ्क भरे कोई अंबर ॥४८॥

---

[1] है, [2] पैदा हुई, [3] छोड़कर, [4] सिद्धि, [5] हृदय में, [6] भार ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धन-तन-मन उपासे सबे को, जानत है जगदीश आराधे,
एठो सो चाल, एठो सो आराधन, एठो सो बोले बोल ज्युं आलाधे।
आत्म ज्ञान नहीं गुरु को गम, भ्रांत ही छोत सारे दिन साधे,
ठाकर को ठेहेराव न पायो, माया तें सोनारा खेलावन खांधे ॥४९॥
माया के रङ्ग देखी ज्युं मनोहर, मानत है जगदीश गुसाईं,
धन-तन हय हस्ती शिष्य सेवक, जान सबे गेब जैसे घनछाँई।
पंचभूत को ठाठ ठर्यो चौद लोक में, कीट पतंग स्वामी सेवकताई,
नांहीं को अधिक नून्य सोनारा, सब चित्र चितेरा है सांई ॥५०॥
देह दरशी देह देखी जुग मोहे, भंगुरकु मानत अविनाशी,
ऊपज्या सो अलपाय निश्चे कर, कोई रहंत नहीं भूतलवासी।
पंचभूत कों परमेश्वर मानत, आई लगी कोई गेब बिलासी,
पंचातीत अलख सोनारा, जानत है कोई पंथ निराशी ॥५१॥
अन्य उपासन पेठो रदामें, जा तन है हम है ज्युं अछोहे,
अन्यही अन्य देखे सबनीको, पलभर रहत ज्युं नांही विछोहे;
अनीन को उपदेश सुने कहाँ, ज्युं लों ना अनर्थ गछोहे,
नर-नर मध्य नारायण निरगुन, सगुन सोनारा भेख कछोहे ॥५२॥
मन के पीछे फरे खट दरशन; राम पहचानत नांहीं मना;
दांही लगा बिलग्यो है अचानक, तहाँ तदरूप रोवे ज्युं घना।
पानी की सी बान परी मनही की, रङ्ग-रङ्ग में रूप धरे अपना,
मनातीत अगोचर आसे, तहाँ तो अखा मन होत फना ॥५३॥
अपरस अङ्ग रहत नांहीं बावरे, राख सके जोपें मन अछूता,
तन तपास करत नांहीं तार्थे; कुंजर शौच की नेथें पशुता।
जावत चिहीनत नहि परमातम; तावत देह कृत में सब गूता,
आपापर छांड भयो वस्तु रूपी, तबे सोनारा सबे ब्रह्मभूता ॥५४॥
भंडु[1] न जाने भलासा अनुभव, जैसी तैसी अपनी करे आगे,
नेहेचा नाहीं-नाहीं गुरु की गम, स्वान भूके जैसे[2] जाग कु जागे।
कर्म न धर्म न ज्ञान न बूझत, जानत नाहीं चंचल भक्ति वैरागे,
ज्ञान अखा है हंस को खावनो[3], मुक्ताफल चूग्या जाय कैसें[4] कागे ॥५५॥
संग ते रंग फरे न कुबुद्धि का, बक मिल्यो जैसे हंस की टोरी,
मराल मिले मुक्ताफल चूगे, बग बूरी बूरी मछी ढंढोरी;
त्युं ज्ञानमतां में मिल खलज्ञानी, मन को मोड जैसे को तैसो री,
एसे नरकों नेक मत मानो सोनारा, कहा भयो दूध जैसी छाछ की गोरी ॥५६॥

---

[1] बुरा आदमी, [2] अच्छी या बुरी जगह पर, [3] खाना, [4] कौए से।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्ष की कोटि पच्यो पपरा, नीर मध्य सोतो रहत पर्यो,
नीर को नेक समज न लागत, टांकी लागी तब पह्मि जर्यो;
त्यों खलज्ञानी अहंकार न छांडत, अंतर भिन्न भंगार भर्यो,
एसें नरकुं फिटकार सोनारा, कर्म अरु ब्रह्म दोनों तें ज्युं टर्यो ॥५७॥
ज्ञानीसुं ज्ञान कथीजे[1] सयाने, अज्ञानी सुं वाद वदे कौन भोरे[2],
अज्ञानी अंकार आने उर अंतर, सत्य शब्द को देत मरो रे;
भीतर भिन्न भंगार भरे है, बाहर बात बनावे ओरे,
संत समाज सोनारा सो न्यारा, सतभाव बिना भवभूत[3] पछो रे[4] ॥५८॥
अज्ञान कुं ज्ञान माने मन मूरख, ज्ञान पर्यो कहीं दुरी दराजे[5],
सीखी सुनी गल[6] मारे गुसांई, ज्युं जोगपवन कुंभ खाली सो गाजे;
जीव जंजाल बला भरी भीतर, उपर आछी सी[7] बात बिराजे,
सो नरकुं मत मानो सोनारा, कहा[8] कुलटा टले जो नवसत साजे ॥५९॥
कहा ज्ञान कथ्यो ममता नहीं छूटी, कहा ज्ञान कथ्यो निंदा मुख बाढ़ी,
कहा ज्ञान कथ्यो लक्ष्मी लक्ष लागी, कहा ज्ञान कथ्यो मनछा[9] भई गाढ़ी[10];
कहा ज्ञान कथ्यो पीछो फर्यो पामर, ज्युं पाको[11] इन्द्रानीफल कटुकता
बउ काढ़ी,
ज्ञान ओटे अज्ञान सोनारा, भाव गयो भूत भराडी[12] ॥६०॥
टूटो तन गान ममता मटी नहि, फूट फजीत पुरानोसो पिंजर,
जरजर अंग झूकयो तन नीचो, जैसे हीं वृछ भयो चले कुंजर;
फटे से नेन दसन बिन बेन, एसो फबे जेसो ऊजर[13] खंजर,
अजहो सोनारा रामभजन की भात नांही, जोपें आई पहोंच्यो है भजर[14] ॥६१॥
एसे नरतें खरखरो भलो, जो क्षाम भयो खरता न टरी,
जरजर अंग जरत नेन नासा, जैसे गीष्म चल्यो पगरी;
जरा को जोर बढ़यो जिनके अंग, जोबनता डससुं उगरी,
अजहुँ सोनारा टेडो न टर्यो नर, जोपें आय मिल्यो मृत्युलग जगरी ॥६२॥
यौवन गयो जरा ठन्यो, सिर सेत भयो बुध कारे की कारी,
सब आपन्य वटी तन निरत घटी, मनसा ज्युं रटी कुलहा जैसी नारी;

---

[1] कहना, [2] मूर्ख, [3] संसार रूपी भूत को, [4] चाँटा लगावे, [5] गुप्त स्थान में, [6] अभिमान करे, [7] सुन्दर, [8] सोलह शृङ्गार करने पर भी क्या कुलटा छिप सकती है? [9] ईच्छा, [10] दृढ़, [11] पका [12] चोर, [13] उज्ज्वल, [14] काल रूपी मार्जार।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्ञान कथ्यो सो तो नीर मथ्यो, आई अखा शून्यवादी की गारी,
राम न जाने कलिमल साने, भये ज्यु पुराने अविद्या कुमारी ॥६३॥

दोहरा

कहेत अखो केती कहुँ, जीव कुबुध की बात;
कोट कल्प सुधी जीए, तोहु न विषये अघात ॥६४॥
ताको आतम ऊलसे, परापार थे ब्रह्म ।
कोट कर्म छिनमें बरे, येरी प्रभु को धर्म ॥६५॥
जीव न करे अघ इतनो, जे एक राम जराय ।
बारो मेघ बरषे अखा, ज्ञहाँ लागी सके वयुं लाय ?६६॥

कवित

भावना फिर परत जिया जान ले, भाव जेसो तेसो रूप तेरो है,
जो तुज भाव होई शिवरूपा, तो तुंही चराचर जोपें भाव फुर्यो है;
ज्युं लों मानत है आपा साचा, भूत भविष्य सत्य तो तू चेहेरो है,
कहत अखा सतभाव निश्चे कर, चित्त फर्यो तो चिद् नेरो है ॥६७॥
सुधीसी चिहीन न आवे सबन कुं, ताथे रहे परपंच उपासे,
ता घरको पहेचान न आवत, जामें समात है सास उसासे;
कागद ओट नहीं जीव शिव बीच, भ्रम पर्यो लागो माया तमासे,
कहत अखो गुरुगम बिना नर, कालके हाथ बिकानो निकासे ॥६८॥
धोखे के धंध परे ज्युं सयाने, अयाने ब्रेहे ताकी कौन चलावे ?
धोखे परे परलोककुं ताके, धोखे परे ध्यानी ध्यान लगावे;
धोखे परे ज्ञानी आप कों थापत, धोखे परे देही दूर बतावे,
गाम नहि कहा सीम सोनारा, सहज कथा कथी द्वैत बढ़ावे ॥६९॥
संसे संसार साचा कर लीना, संसा मटे सोई सान बिचारो,
नाद न बिंद, विसतार न वाचा, ता दिन कोन कहाँ थे ज्युं न्यारो;
आप हुए तें ठाठ ठठ्यो है, आप मटे तें मट्यो ज्युं पसारो,
शून्य सोनारा विचार सो सुन्या, शून्य लखे सो लखनहारो ॥७०॥
पिंड ब्रह्मांड का भेद को भेदे, तो वेद वदन सवे बिलावे,
देहदरशन दीओ मुख आगे, प्रतिबिंब ब्रह्मांड तबे सत्य कहावे;
जब आ दृश्य अङ्ग अल पानो आग थें, तब जगत जंजाल की कोन चलावे,
सद्य सोनारा समाया ताही में, जा घरकुं निगम नेति-नेति गावे ॥७१॥
नाहम् ज्ञानी अज्ञानी सयाने, मानी न ध्यानी कब हम हुए,
पानी पवन अगनी ओर अवनी, अंबर थें नाहीं को दिन जुए;

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्यों गेब घटा घन गरजत घेरा, वर से विलावे तो कहा कछु मूए,
अखा आनंद आपे आप करता, देह देखे सो देवकुं खूए ॥७२॥
मंदिर की मनसा नहि जाकों, कंदर सेवा तो ताही भली है,
मंदिर कंदर दोउ नहि जहाँ, बूझ की सूझ तो ताहु चली है।
पंथ चले सो तो पंथ समारे, पंछी कुं तो सो अटक टरी है,
सोवे अखा सो जागृत चाहे, जागृत कुं तो जागृत मिली है ॥७३॥

नाम अरु रूप संकल जन ठहरे, पंडित जाण भक्त अरु ज्ञानी,
कारज कारन दोउ विवरजीत, ता घर की विरली दे जो निशानी।
भ्रांत के भ्रम भूले जन सारे, पानी के चंदहीं स्थिति ठानी,
होवे अखा उसी देश के सानी, और क्या जाने पुरान के मानी ?७४॥

ज्ञान अरु ध्यान सयान सबे कृत, भक्ति वैराग माया की ठगोरी,
धंधा का फंद बढे जो दिनो दिन, टारत नाहीं न झामर झोरी;
सहज के नये हेज में पहेज कहां को, आप नहि कहा व्याप सचोरी,
एह सूझ की बूझ सबन तें न्यारी, कृत की बूझ अखा है ज्युं थोरी ॥७५॥

ज्ञान का गहेन लगे बहोतेरे, ध्यान के धोखे धूनी वही सारी,
भगत के भ्रम भटके जो भये, पण अवगत की गत रहत जो न्यारी;
कृत्य की कलंक छपी है जो छानी, अहंकार की ओट परी है जो भारी,
ग्रहन छोडन एहो वस्तु खंडन, कहत अखा जो पुकार पुकारी ॥७६॥

बिदथे कंद कियो जन पेदा, छंद करी छुपियो सब मांहां,
नेननी देखे बेननी बोले, श्रवननी सुने सब चहेन जे जों हा।
नापेद थें केद कर्या जन पैदा, केद नापेद[1] करत कोई कांहां,
आपे तू खुदी खुदा भी तू आपे, नाहीं अखा इस ठांहा[2] उस ठांहा ॥७७॥

जाक नेन-नहीं सब नेन हीं देखे, बेन-नहीं सब बोली सो बोले,
कान-नहीं सब करन ही बाके, नासा-नहीं सब वास तो ओले।
व्योम की ओटे तू आप सहराई, फोम धरी कही व्योम नी खोले,
अखा भेख खेलारा सांइयां, बुध का फेर कपोल कपोले ॥७८॥

भेख की टिक चली खट दरशन, भेख नहि तहाँ टेक किना की,
टेक की टेक चली जो दशो दिश, टेक हमारी तो है जो फनाकी;
नेति-नेति कर निगम जहाँ रहे, टेक छूटी तहाँ बहोत जनाकी,
एसी बूझ अखा धर काना, टेक गई है तिनों दिना की ॥७९॥

---

[1] जो पैदा नहीं हुआ है, [2] स्थान।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञान गयंद[1] चढ्यो नर नीके तें, लोकन की बक चित्त न आवे,
ज्युं बुंद की घडी पहाड़ न टूटत, चोट अनेक करी जो धावे;
चित्रलता को रस को देखत, तो औरन की कहो कौन चलावे,
चैतन निंद्य के भोगी अखा, कहाँ श्वान शृगाल के भक्षकुं खावे ॥८०॥

जीव रीझे अरु खीजे तो कहा है, बूझ गयो मेरो कहा जो ट्टढेगो,
ज्युं जल बुंद पड़े बहुतेरे, कहा बुंद के जोर उद्यान बढेगो ?
ज्यों दिनकर दीप दिखावे को मूर्ख, कहा दीप बिना वाको रथ अढेगो ?
चढा ओ अखा कहाँ नावकुं तारे, सोही तरेगो जो पे नाव चढेगो ॥८१॥

लंढ[2] कहो कोउ, भंड[3] कहो, पाखंड कहो, ओरे कहो जो भिखारी,
सज्जन कहो, दुरिजन कहो, चोर कहो, कोई कहो ब्रह्मचारी;
काहु को पाव टिके नहि तहां लों; जहाँ जाई कीनी अखे जो पथारी,
जिने जेसो देख्यो तिने तेसो ध्यायों, बहोत करेह जो विचार विचारी ॥८२॥

रहेणी की कहेणी चलावे सबे सो, रहेणी की बात न बूझे संसारा,
जे जिनकुं परलोक उमेदा, अही लोक की आस करे न पसारा;
नाम ही भूत भविष्य का सोचा, वर्तमान का काल चलावन हारा,
कहेत अखो गेब रहेनी हमारी, ज्युं बादल तें नभ न्यारे का न्यारा ॥८३॥

कहाँ रहेणी[4] कहुँ कहाँ सहेणी सहुँ, कहेणी[5] कहुँ कहाँ जैसे का तेसा,
कालो पीलो लाल सबज[6] श्वेत, अभ्र गगन गेब नभ एसे का एसा ।
बाबुर[7] करी दुरगंध पंचामृत, वहनि जरावत नांहीं अंदेशा,
कहत अखा जाकुं प्रगट पाईयत, ताकुं कहेवां इत केशा संदेसा ॥८४॥

माला न पेरुं टीका न बनाउं शरणे न जाउं मैं कोउ किसी का,
आपा न मेटुं, थापा न थापुं, मैं मदमाता हूँ मेरी खुशी का;
भिस्त न दोजख दोउ न चाउं, ना चाउं नाम न रूप किसी का,
है-नहीं की संध्य पदी जो अखा की, जानेगा जे कोई डेर उसी का ॥८५॥

सोणां की[8] बरढ[9] बकत जन सारे, जागृत की बतियाँ कछु ओरे,
ज्युं सूरज को भरी[10] भाद अंधेरा, देखावन को जन रहे जो बटोरे;
तरनी की दृष्ट कीनो जब थें तब, जेसे को तेसो मध्य ठोरे,
एसो ज्ञान के आगे अज्ञान सोनारा, नागोह पहेरे धोवे कहाउ निचोरे ॥८६॥

---

[1] ज्ञान रूपी गजेन्द्र, [2] गंवार, [3] भ्रष्ट, [4] सहन करना वह, [5] कहना (=बात), [6] हरा, [7] एक जात की मिठाई, [8] सपनों की, [9] बकवास, [10] अच्छी तरह ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चंद राहु गत्य है जीव शिवकी, चंदराहु कुंज देत दिखाई,
भिन्न परे राहु दृष्ट न आवत, संग मिले बतियाँ लोक गाई;
इन्द्रिय तत्त्व तन्मात्रा चतुष्टे, या वस्तु की आभा बनी आई,
भांत की भ्रम भूलो जन कोउ, कोविदजन ते अखेमति पाई ॥८७॥
चित्तकी चलक चलके ज्युं बहुतेरे, चित्र चितेरी आप भयो है,
चितेरा चतुर चले चाल एसी, जो चित्त चले ओप एन रह्यो है;
जलके जो के ज्यां चन्द्र चपलता, सहेजे चपल चन्द कहा जो कयो है;
चैतन की चिहीन जो एसी अखाकी, जो चित्त अचित में गेब गयो है ॥८८॥
अब ध्यान धरी कहो कौन को निहारुं, जो प्रगट खेल को आप खेलैया,
भक्ति करी करी भोग लगाउं, सो प्रगट भोग कों आप लेवैया;[1]
गुन निर्गुन को विचारो कैसे, जो विवेक विचार को आप करैया,
वाम[2] फाम[3] चाहा[4] अपनी सो, एसे अखा गइ दैईया[5] मैईया[6] ॥८९॥
सोई भगत भगवन्त भरोसे, खेडत है भर खुटा[7] के महीयां,[8]
सो सतज्ञानी रहत आप आधारा, लागत नांही प्रभुता शून्य बहियां;
इन्द्रिय अचल चलत नहि कबहु, कोट मध्य कोई करे उपईयां,[9]
अखा बलेव[10] के सो बामन, जो धान माने को देखी बड़ाईयां ॥९०॥
ना मुंही वणज व्यापार उपासन, ना मुंही मंत्र गुरु नाहीं चेरा,
ना मुंही रस रसायण आवत, ना गुटका अंजन देव देहेरा;
लालच लोभ की बोली न बोलुं, मैं हूं तुमारा कि हो तुम मेरा,
एसी गेबकी बान परी जो अखा की, हठ परहठ नांहीं सेहेजे नर बेरा ॥९१॥
रानीकुं मानी कहे सोई बावरे, रावरी रोतकुं रंक कहा जाने;
नरपति नेक[11] न माने न्यूनाधिक, कुल की क्रिया जो सुभाव ही ठाने;
ज्यां[12] घनघटा करी गरजन गेहेरा, केहरी प्रान तजत हाठ माने;
एसें अखा कल्पो कोउ केसा, ज्ञानी की गत्य गोविंद पहिचाने ॥९२॥

दोहरा

लक्ष बड़ो है ज्ञानी को, अखा न चिहीनत[13] कोय ।
हारद हाथ आवत नहि, ताथे असंभावना[14] होय ॥९३॥
ज्यों बहुमूली हीरा बन में, दूर थे देख्यों जात ।
डर्यो बटाउ[15] प्रेत मानी, अखा अंधेरी रात ॥९४॥

---

[1] लेने वाला, [2] वामा, [3] रंग, [4] इच्छा, [5] देव, [6] माया, [7] खूंटकी, [8] पृथ्वी, [9] उपाय, [10] बके, [11] भला, [12] जहां, [13] पहिचानता, [14] विपरीत, [15] मुसाफिर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्युं रहेणी करणी ज्ञान की, मेचक[१] लागे जंत।
गुण छांडे अवगुण ग्रहे, जानत नांहीं महंत ॥९५॥

कवित

संत की निंद करत जन भंडु, सो आनत है अपने घर कूता,
वेरीकुं[२] सोण बूरा करनेकुं, नासिका निज काटी सो आप विगूता;[३]
ज्यों पारोंसी को मन्दिर जार[४] ने मूर्ख, आपनो भुंप[५] लगाय के सूता,
कहत अखा कुबुद्धि नर जेते, ओर अकाजकुं आप भे[६] भूता[७] ॥९६॥
निंदक नेक नारायण न जानत, ठानत है औगुन मुख निंदा,
काग कुकर कपूर मानो विष्ठा, अन्तर सहेज सुभाव का गन्दा;
सुन्दर सरमध्य खर नहि नहावत, मर्दन छार कीने थे आनन्दा,
कहत अखो सतसंग न लागत, कुबुध कुटिल नर मति का मन्दा ॥९७॥
संसे को बाण लग्यो सबके तन, मार लिये सब माया आहेडे,[८]
मारे हे वंचक श्रोता सबको, ज्युं तरुवर फल दारे पबेड़े;[९]
ज्युं बिछुआ जनमे बहु बालक, ए ही अपत्य वाको तन उघेडे,
कहत अखो बेठे ब्रह्म झरूखे, सो संतनिकु माया नहिं छेडे ॥९८॥
राम हीं राम जपे सो राम है, नाम कहे नित्य सो श्यामसुन्दर,
श्यामनी सुरत चली सुरलोक में, ताथे फर्यो गिरि सेवत कन्दर;
जब ऊलट फर्यो नर निज उर अन्तर, कोट कलारवि पावे सो चन्दर;
कहत अखो गुरु ज्ञानी सेवे बिन, राम न पावे जो देखे पतन्दर ॥९९॥[१०]
देखे सब अंजन माने रंजन, रंजन मन कों वाहे ते वाहायो,
ताथें भयो नहि भव को भंजन, नाम पुरंजन मान कहायो;
संतजन साहे न सद्गुरु बहारा, मंजन माटी मलीमली नायो,
कहत अखा जहाँ नहि स्वर व्यंजन, सो बावन बास को हाथ न आयो ॥१००॥
आप हीं राम रमे जो रमावत, सत्य कहुँ हुँ दुहाई पिता की,
चेतनरूप चराचर चलकत, मानिनता मन छत[११] छताकी;
जहाँ उद्योत भयो है अचानक, सो नरकुं सता है परातीत[१२] ताकी,
कहत अखा एसो वेदवचन है, ओर कु चलावे जो मन मताकी[१३] ॥१०१॥

---

[१] काली अंधकार मय, [२] दुश्मन की नींद, [३] उलझ गया, [४] स्थान को, [५] द्वार, [६] भय, [७] हुआ, [८] शिकार में, [९] फेंके, [१०] पर्दा, माया का पट, [११] छत का छाता, अभिमान भी मन का ही घिरावा है, [१२] तक, [१३] मान्यता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोहरा

मनकी सुरत है सामनी, रहत पूरवकुं राम ।
कहत अखा गुणरंजना, मान कियो आराम ॥१०२॥

कवित

राम न रीझे जो दान अनुपे, राम न रीझे अजान खेलवना,
नाचन गावन थें राम न रीझे राम न रीझे पानी पाहान मेलना;
आश्रम वरन भरोसे कों भूलो, कविकलारस करत केलवना,
कहत अखो मृगवारि झकोरतें, मानत है हम गँग झेलवना ॥१०३॥
जो गावन थें गिरिराज रिझावत, तानथें पथ्थर को करे पानी,
पंडित सो परजापति पुलकत, सरसती सुनतेही जोत सरानी;
सिधीथें सुरसुमन को समारे, और ब्रह्मांड करत उर आनी,
कहत अखो बिन आप पहीचान, मानो स्वप्ने की लक्ष्मी सत्य मानी ॥१०४।
निराधार रहे सो सबके आधारा, आधार रहे सो तो है जियरा,
करत्रिम वसतु तेल पूंछ[1] बाती, बयार तें दरपत रहे दियरा;[2]
आत्म अरक जतन बिन झलकत कोट सुधाकर सो सियरा,
कहत अखो स्थित भई तज्ञाकी,[3] जहाँ बिराजत है गियरा[4] ॥१०५॥

दोहरा

अब कहुं परब्रह्म पीठ का, वस्तु विश्व को भेव ।[5]
रूप अरूपी वही रमे, जे जगत दुर्लभ देव ॥१०६॥
सर्वाङ्गी प्रकरण कह्यो; कवित चोरासी चोज,[6]
वीस कह्या मध्य दोहरा, कोई ज्ञानी देखे खोज ॥१०७॥

ब्रह्मलीला

राग सामेरी

चोखरा १

ॐ नमो आदि निरंजन राया, जहाँ नहि काल कर्म अरु माया;
जहाँ नहीं शब्द उच्चारण न जंता, आये आप रहे उर अंता ॥१॥

छंद

उर अन्तर में आप स्ववस्तु, ढिग नहीं भाया तबे,
अन्य नहीं उच्चार करिवे; स्वस्वरूप होही जबे ॥१॥

---

[1] पीछे, [2] दिया, [3] तज्ज्ञों की, [4] वाणी, [5] भेद, रहस्य, [6] युक्ति ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिथ्या माया तहां कलियत अध्यारोप किनो सही,
अर्धमात्रा स्वभाव प्रणव सो, त्रिगुण तत्त्व माया भई ॥२॥
आप ज्यौ के त्यौ निरंजन सर्व भाव फैली अजा,
ज्यों चुम्बक देखके लोह चेतन त्यों द्रष्टोपदेश पाई रजा ॥३॥
परम चैतन आदि निरंजन अकरता पय सो सदा,
अजा अल्प अर्वाक अंजन, भो जगत पल में तदा ॥४॥
सगुण ब्रह्म सो स्तुति पदारथ, दृष्ट पदारथ स्वामिनी;
अआ ब्रह्म शैतन्य घन में भई अचानक दामिनी ॥५॥

चोखरा २

ऐसे आप सगुण ब्रह्म स्वामी ऐसे ही अंश भयो बहुनामी ।
आप फेलाव किनो ग्रही माया सहज लोग करी सुत तीनुं जाया ॥१॥

छंद

जाये तीन सुत जगत कारण, सत्त्व रज तमसदि भये ।
पंचभूत अरु पंचमात्रा, तमो गुन केरे कहे ॥१॥
देव दश अरु उभय इन्द्रिय, बेग उपजे रजहीं के ।
भये चतुष्टय सत्त्वगुण के नाम दिनो कर अजहीं के ॥२॥
रजो गुन सो आप ब्रह्मा, तमोगुन सो रुद्र हे;
सत्त्वगुण सो विष्णु आये, सगुनब्रह्म पहुँची चहे ॥३॥
चार पंचक अरु चतुष्टय, एक प्रकृति मूलकी ।
आप को परिवार बढ़ायो, भई माता स्थल की ॥४॥
चली आवे कला चितकी बन्यो पुरुष विराट ए ।
कहे अखा माया कहो, के कहो परब्रह्म घाट ए ॥५॥

चोखरा ३

ऐसेई अंश चल्यो अविनाशी, ताकी भाँति भई लक्ष चोराशी;
निर्गुण ब्रह्म सगुन भयो ऐसें; ताको ओर कहीजें कैसें ॥१॥

छंद

ओर नहि कोई कल्प हरितें, ज्यां पानि को पाला भयो;
जोई निर्गुन सोई सगुन है, नामरूप आपे नयो ॥१॥
नाम नहि ताके नाथ सब है, रूप नहि ताके रूप सबें;
कारज कारन ओर नांही, रूप अरूपी व्हें फबे ॥२॥
सगुन वेत्ता निर्गुन को है, निर्गुन पोषक सगुन को;
ज्यों पुरुष की परछांहि दर्पन, आनन समर्यो जंन को ॥३॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जड को रूप चैतन्य लीनो, चैतन्य ज्यों को त्यों सदा;
रूप बिना खेल फबूत नाहीं, आप बन्यो अपनी मुदा ॥४॥
सहज इच्छा बानक बन्यो है, अन्य नहि कोउ आपतें;
कहे अखा अहंकृति दुजी, मान लीनी व्यापतें ॥५॥

चोखरा ४

ऐसो रमन चाल्यो नित्य रासा, प्रकृति पुरुष को विविध विलासा;
जैसें भीत रची चित्रशाला, नाना रूप लखे ज्यों विशाला ॥१॥

छंद

बिशाल दर्पन भींत[1] कीनी, ओर स्वच्छ सत्यस्वामिनी;
ताही के मध्य भाति भासी, वेसि सत्य सुहावनी ॥१॥
त्यों अजा के मधी भांति नाना, वस्तु विशेष हीं भासी है;
आत्मा अकर्त्ता अभोग अवयव, जानत जीव विलासी है ॥२॥
प्रकृति पुरुष के जोग जंतुन, मिथ्या पुरुष प्रकट भयो;
सो आद्य नाहीं अंत्य नाहीं, मध्य मानी तापें रह्यो ॥३॥
संशय मिथ्या विपरीत भावना, जब लागी जो नर करैं;
तब लगी नाना देह धरहीं, माया में ऊपजैं मरैं ॥४॥
पिंड पर सो मोह पायो, पुरंजन तातें भयो;
कहे अखा यह जीव उत्पत्ति, मान मिथ्या ले रह्यो ॥५॥

चोखरा ५

सदा सर्वदा नाटक माया, नाट्य चले देखे पर ब्रह्म राया;
सो सब अपने शिर जन्ता, तातें न आवहीं जीवको अंता ॥१॥

छंद

अंत न आवहीं कृत्य भावही, रंजना देहसों सदा;
में ममता कर आप पोखे, त्यों त्यों मन पावै मुदा ॥१॥
स्वरूप जैसो पुत्र वंध्या, कर्म नित ऐसे करे;
आकाश की नित्य मोट बांधे, भण्डार ले अपना भरे ॥२॥
अजाये नर सुभट योद्धा, ताही की सेना रची;
गांधर्व नगरी जीतीवें को, चले राय सुन्दर शुचि ॥३॥
जय-पराजय नित्य पावे, हर्ष-शोक हृदे विषे;
तन मनके आनन्द कारन, कर्म मादक नित भखे ॥४॥

---

[1] दीवार ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

असंभावना विपरीत भावना, ताही के हिय में रही;
कहे अखा ये जीवन लच्छन, उत्पत्ति स्थिति वाकी कही ॥५॥

चोखरा ६

होता नहीं अबे नाहीं आगें, मिथ्या भ्रम भ्रमीवेकों लागे;
ज्यौं देहके संग छाया होई, सो मिथ्या ना सांची सोई ॥१॥

छंद

नाहीं मिथ्या नाहीं सांचो, रूप ऐसो जीवको;
जन्म मरन औ भ्रमन संशय चल्यो जाई सदैव को ॥१॥
ताही अचानक चेतना जब, ऊपजे नरके विषे;
जन्म मरन औ भोग सुख दुःख, काल कर्म फल को लखे ॥२॥
यही विचार गुरुतें आयो, आतुरता ऊपजी खरी;
चरन कमल पर शीश धरके, सेवा स्तुति अतिशय करी ॥३॥
कीनी जु नवधा भक्ति भावै अधिकार परते गुरु कही;
प्रेमातुर वैराग केवल जेसी कही तेसी ग्रही ॥४॥
कहे अखा महा वाक्य गुरु को, ऊग नीकसे आपसे;
ज्ञान अर्ककी जोन्हुसो कल, रह्यो नहीं मन मापसे ॥५॥

चोखरा ७

जैसे अंड पिंड फूटैं विहंगा, और रूप भयो ओरही रंग;
आगें अंडमध्य गंदा पानी, चलन हलन ताकी कोमल बानी ॥१॥

छंद

बानी कोमल अंग खेचर, भूचर भावना सब टरी;
तेसें जत प्रसाद गुरुते, अहंता अपनी गिरीं ॥१॥
यथारथ स्वस्वरूप हरिको, हरिजन के उर में बस्यो;
सांख्य योग सिद्धान्त पायो, कह्यो गुरु त्यां[1] अभ्यस्यो ॥२॥
तत्त्व मसि जो बाक्य श्रुतिको, गुरु कृपातें सो भयो;
साद्य जीव मिथ्या कह्यो, तब ऐसें को ऐसो कह्यो ॥३॥
आप परविन खेल देख्यो, नित्य नाटक संभ्र मैं;
अरूप मध्य स्वरूप भास्यो, ज्यों पुतरिका खम्भ में ॥४॥
कहे अखा ऐसोई जाने, ताई के घट उपजैं,
जैसें को तैसो भयो जब मध्यतें अहंता तजैं ॥५॥

---

[1] वहाँ।

 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चोखरा ८

महाजन जाने महाकल भेवा, जो पर ब्रह्म पर्यो सत्य मेवा;
ज्यां[1] चुबकतें चेतन भयो लोह, जीव पनो ताको यों खेवा ॥१॥

छंद

खोहा गयो बिच बल अजाको, ताहीतें चेतन भयो;
अंधा अचानक नेन पायो, द्वन्द्व बिचतें टर त्रयो ॥१॥
स्तुति पदारथ नयन देख्यो; दृष्ट पदार्थ गया बिला;
मिटी देहकी भावना अब, स्वयं चैतन व्है चला ॥२॥
ध्येय ध्याता अरु करन कारन, माया के मध्य जो सही;
रज्जु लगी सो भुजङ्ग भ्रमहें, बिनु रज्जु केसो अहि ॥३॥
प्रीछी वेको प्रताप बड़ हे जानही विरला जना;
आगे पाछें ओर नांहीं; आप बिलस्या आपना ॥४॥
कहे अखा ए ब्रह्मलीला बड़भागी जन गायगो;
हरि हीरा अपने हृदय में अनायास सों पायगो ॥५॥

ये मनका कैसा इतबारा रे ?

ये मनका कैसा इतबारा रे ?
चेतन के कोइ मत रहो सारा रे ?
ये मनका कैसा इतवारा ? ये मनका०
छिन छिन ढंग पलटे ये मनका ।
छिन इतबार नहीं ये तनका ।
तातें अर्थ होवे क्यों जनका ?
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०
जा ही मशाला है वा, पानी ।
तिसको तो जीव सके न जानी ॥
मोहे अज्ञान कीरत की बानी ।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०
काय, कर्म बादल की छाया ।
तिसको 'सत' मा ने मोह माया ।
कल छटकी, और बाय बिलाया ।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०
सत् और जूठ न होवे था पा ।
तिस को हुंना मानुं आपा ।

---

[1] जहाँ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आप अखा समज्या रे अमापा।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

—अप्रसिद्ध अक्षयवाणी में श्री अखाजी की जकडी, पृ० ८३

मुज कामिन का तू कामी रे !

मुज कामिन का तू कामी रे।
तू बहुरूपी, घननामी रे।
मुज कामिन का तू कामी रे।
मुज कामिन का तू कामी रे॥ मुज कामिन का०
लट काका ! तू मीता रे।
तें बहुविध लटका कीता रे।
तें सबमें दरसन दाता रे।
मुज कामिन का तू कामी। मुज कामिन का०
हेज दीआ मुज सांई रे।
मुखे मुख नेन मीलाइ रे।
तब थे लाली पाई रे।
मुज कामिन का तू कामी रे। मुज कामिन का०
मुज रूपे तुं बोले रे।
धन फरते पियु डोले रे।
कौन मुझी के तोले रे।
मुज कामिन का तू कामी। मुज कामिन का०
मल पतडी हुँ चालूं रे।
मन मौजे हूँ महालूं रे।
पियु है अखा के ख्यालूं रे।
मुज कामिन का तू कामी। मुज कामिन का०

—वही, पृ० ९४

१३ पंचरंगी मेरा चोला रे !

पंचरंगी मेरा चोला रे।
सो पहिन्या है ठोला रे॥
पंचरंगी मेरा चोला रे।
पंचरंगी मेरा चोला॥ पंचरंगी०
सब आभूषण मेरा रे।
सोल सिंगारा सेरा रे।

 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुं हंसी बहो तेरा रे।
पंचरंगी मेरा चोला ॥ पंचरंगी०
मेरा प्रीतम रसिया रे।
भुज वेसे तू वसीआ रे॥
मुज देखी लोक हसीआ रे।
पंचरंगी मेरा चोला ॥ पंचरंगी०
हूँ सांइया ! तुज साथे रे।
तूहि मेरी आथे रे।
तें खेल बनाया खाथे रे।
पंचरंगी मेरा चोला। पंचरंगी०
तें साघ अनेरी चाही रे।
ते तुं जरा वन तांई रे।
कीआ अखा ओछांइ रे।
पंचरंगी मेरा चोला ॥ पंचरंगी०

—वही, पृ० ९५

२९ क्या जाने लोका काला रे ?

क्या जाने लोका काला रे ?
घेन मयी सोलाल गुलाला रे।
क्या जाने लोका काला ? क्या जाने०
मोहे पियु सेजुं पर मीलीया रे।
तबकी सो रस उजलीआ रे।
क्या जाने लोका काला ? क्या जाने०
लालन ! तुं राता ! मैं माती रे।
लालन ! तुं दीपक ! मैं बाती रे।
तुं तो न्यारा ! नहीं संगाथी रे।
क्या जाने लोका काला ? क्या जाने०
लालन, तुज चलते मैं चालुं रे।
लालन, तुज हलते मैं हालुं रे।
मैं तो एक मेक होय बहालुं रे।
क्या जाने लोका काला ? क्या जाने०
लालन ! तुं मैं तुज मांही रे।
तब जीत पडी आ दां ही रे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तब अखा आप सराही रे।
क्या जाने लोका काला ? क्या जाने० —वही, पृ० १११

पद ६—भजन

अब मोए आनंद अद्भुत आया।
कीया कराया कछु बी नाहीं, सेजे पियाजी कु पाया।
अब मोए आनंद अद्भुत आया। टेक
देश न छोड्या, वेरु न छोड्या, नहीं छोड्या संसारा।
सुता नर निद्रा सें जाग्या, मीट गया स्वप्ना सारा।
अब मोए० ॥१॥

कृपा नाल अंतर सें छूटी, गोला ज्ञान चलाया।
आल अटक फोड सब निकल्या, दुर से अज्ञान उडाया।
अब मोए० ॥२॥

भला कहे कोई बुरा कहे, अपनी मति अनुसारा।
खारा मोरा लोहा पारस पर, सोन भया अखा सोनारा।
अब मोए० ॥३॥
—भजन सागर सिंधु, पृ० १३

प्रीतमदास

७ ज्ञाननुं अंग

ज्ञान विना अभिमान की, टले न अहंता आड।
कहै प्रीतम निज ज्ञान का, जाहेर झंडा गाड ॥१॥
ज्ञान रवि घटमें उदे, टाले तिमिर अज्ञान।
प्रीतम मोटम ज्ञान की, भाखे श्री भगवान ॥२॥
गीता के अध्ये सात में, ज्ञान शिरोमणि कीन।
प्रीतम पारथ कुं कहा, कृष्ण चंद्र प्रवीण ॥३॥
एकादश उद्धव प्रत्ये, करी ज्ञान की गोष्ट।
कहै प्रीतम रघुवर प्रत्ये, कह्यो जोग वसीष्ठ ॥४॥
सनकादिक शंकर सदा, रहे ज्ञान में लीन।
कहे प्रीतम पूरण सदा, ज्ञान गुरु की सेन ॥५॥
ज्ञानी को जीवन सुफल, सबही कुं सुख रूप।
कहे प्रीतम ज्ञाने मीटे, माया भ्रम तम कूप ॥६॥
ज्ञान गीरा ते उचरे, ज्ञान तणो उपदेश।
कहे प्रीतम ज्ञाने टले, बहुरूपी राग ने द्वेष ॥७॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक चराचर आतमा, अपना तुल्य सब कोइ ।
कहे प्रीतम को उपरे, दुष्ट भाव नव होय ॥८॥
अपने पग से पग सबे, अपने प्राण से प्राण ।
अपने मुख से मुख सबे, प्रीतम एह प्रमाण ॥९॥
अपने नैन से नैन सबे, अपने करन से करन ।
अपने अंग से अंग सबे, प्रीतम ए दुख हरन ॥१०॥
सागर मांही होत है, ले हेरी लोढ तरंग ।
कहे प्रीतम एक ब्रह्म में, उपजत ह बहु रंग ॥११॥
वाजी कूप तडाग के, नीर भिन्न नव होय ।
कहे प्रीतम एक आतमा, ज्ञान दृष्टि करी जोय ॥१२॥
उग्र दशा है शान की, ने कोई जाणे भेद ।
कहे प्रीतम वर्णन करे, निशदिन चारे वेद ॥१३॥
ज्ञानी कर्म करे सबे, अंतर नहि अहमेव ।
कहे प्रीतम भीतर नहि, उपर सकल अवेव ॥१४॥
ज्ञान गुरु ते पाईए, गुरु है ज्ञान स्वरूप ।
कहे प्रीतम ज्ञाने मीले, अखिल भुवन के भूप ॥१५॥
निन्दा स्तुति कां करी, चंदन अथवा छार ।
कहे प्रीतम दुःखे नहि, दिल में एक लगार ॥१६॥
शत्रु मित्र समान चित्र, सरखुं कंचन लोह ।
कहे प्रीतम ज्ञानी विषे, नहि ममता मद मोह ॥१७॥
सोल बरसनी सुंदरी, नख शिख सजे शणगार ।
कहे प्रीतम मेंला रहे, न मले विषय विकार ॥१८॥
खड्ग काढी शिर पर रहे, मान कुं निरधार ।
प्रीतम भय उपजे नहिं, ज्ञान लक्षण सार ॥१९॥
छल प्रपंच करे नहि, सबही में शुद्ध भाव ।
कहे प्रीतम पूरण रहे, कोय दो कोच ले जाव ॥२०॥
वस्तु छुपावे नहि कशी, नहि चोर शाहुकार ।
कहे प्रीतम एक आतमा, सबही सरजन हार ॥२१॥
ज्ञान विना बहु गरबडी, उपजे अनंत अपार ।
कहे प्रीतम ज्ञाने समे, भासे ब्रह्माकार ॥२२॥
ज्ञान-ज्ञान सबही कहे, आतम ज्ञान सो ज्ञान ।
कहे प्रीतम पारसमणि, और सबे पाषाण ॥२३॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भरत ऋषभ शुकदेव जी, दन्त कपिल त्रिपुरार ।
गरक रह्यो ते ज्ञान में, प्रीतम प्रेम अपार ॥२४॥
भक्ति जुवती जे ज्ञान है, सोइ ज्ञान शुभ सार ।
कहे प्रीतम परमारथी, ज्ञानी पुरुष उदाव ॥२५॥
दया करे सब दुःख हरे, देवे निर्मल ज्ञान ।
कहे प्रीतम प्रेमे करी, मूकावे अभिमान ॥२६॥
ताको सुख में का कहुँ, ऐसो अवरन कोई ।
कहे प्रीतम त्रिभुवनपति, भक्तन कुं बस होय ॥२७॥

—प्रीतमदास जी की वाणी, पृ० ११० से १११

२० नारी निंदानुं अंग

नारी कुं निंदुं नहिं, निंदु अवगुण एक ।
कहे प्रीतम कहते गये, आगे पुरुष अनेक ॥१॥
नारी नरक की खाण है, शास्त्र कहें सब कोय ।
कहे प्रीतम प्रभु भजन से, परम पवित्र होय ॥२॥
नारी चार प्रकार की, ज्युं नाणा की रीत ।
कहे प्रीतम कर जुगत सु, जाणा बुझकर प्रीत ॥३॥
मोहोर रुपैयो तांबायो, कौडी नाणा मांहि ।
कहे प्रीतम यह हाम है, सबहि बराबर नांहि ॥४॥
सती शूरी पतिव्रता, क्रत्या कहीए नार ।
कहे प्रीतम सोई समज के, वाको संग निवार ॥५॥
अमृत सीचे एरडे, जुगते जवासा पाय ।
प्रीतम कोइ काले करी, अमृत फल नव थाय ॥६॥
सो वरस सेवे शीमलो; तोय न मागे मूख ।
कहे प्रीतम विषय भोगवे, तोये दुणा दुःख ॥७॥
नारी निर्दय कठोर अति, कठण कृपाण की धार ।
कहे प्रीतम नर काटतां, कछु न लागे वार ॥८॥
नारी को अपराध नहि, पुरुष पातकी होय ।
कहे प्रीतम एक हाथ सुं, ताली पडे न कोय ॥९॥
नारी प्यारी लगत है, तब लग विषय विकार ।
कहे प्रीतम कर दूर सें, नारी कुं नमस्कार ॥१०॥
हरि की माया मोहनी, प्रगट नारी निज रूप ।
कहे प्रीतम मोहे सबे, दानव मानव भूप ॥११॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नारी नेह उपजावही, मिथ्या प्रपंच प्रीत ।
कहे प्रीतम सबहि हरत है, ज्ञान ध्यान गुण चित्त ॥१२॥
नारी नहि ए नागणी, नर मेडक निरधार ।
कहे प्रीतम केते ग्रसे, लेखा नहि लगार ॥१३॥
लालच लोभ दिखावहि, अति उपजावे भाव ।
कहे प्रीतम ज्युं मुषक पर, मीनी मांडे दाव ॥१४॥
नेण वेण मोह बाण है, प्राण कियो बेहाल ।
कहे प्रीतम मुसाफरे, मीनी के मन ख्याल ॥१५॥
मंजरी के मुख थकी, उंदर नासे आप ।
कहे प्रीतम मुखे मरे मीन का, उदर कुं क्या पाप ॥१६॥
नारी नदी स्वरूप है, प्रबल विषय को पूर ।
कहे प्रीतम केते गये, तासे रहियो दूर ॥१७॥
नेणे काणल नाक नथ, वेणी वसीयर जाण ।
कहे प्रीतम घुंघट करे, हरे पलक में प्राण ॥१८॥
कहेत कामरू देश में, करे पुरुष कुं वेल ।
करे प्रीतम सब देश में, एहि निरंतर खेल ॥१९॥
नर मुरख माने नहि, कीजे कवन उपाय ।
करे प्रीतम हाथे करी, पडे जाल में जाय ॥२०॥
बंधन बीजे बहुत है, नारी सभी नहि कोय ।
कहे प्रीतम छुटे नहि, जे कोइ बंधन होय ॥२१॥
मुख से मीठा उचरे, अंतर ओरु बात ।
कहे प्रीतम जुदी न होय, करे दया दुइ घात ॥२२॥
परमेश्वर के पंथ में, नारी डर यो पास ।
कहे प्रीतम अध बीच से, उडावे आकाश ॥२३॥
मारग छुटा दो मिली, कनक कांता कहेवाय ।
प्रीतम बात भुलावहि, जिधर तिधर ले जाय ॥२४॥
बात पीत कफ आध लई, सप्त धातु को देह ।
कहे प्रीतम नर मूढ़ जे, करे तेरसुं नेह ॥२५॥
मांस लपेटया चरम से, उपर आछा रंग ॥
कहे प्रीतम भय पावही, जबही उघडे अंग ॥२६॥
स्त्री पुरुष आनन्द मय, सबही हरि को रूप ।
प्रीतम जाकुं जे भावना, ताकुं ताफल रूप ॥२७॥

—वही, पृ० १३४ से १३६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ७७—राग प्रभात

प्रभात भयो प्राणपती, प्रेमे प्रभु जागो। टेक
दंत धावन करो कांन, मांखन रोटी मागो ॥ प्रभात० १
शिश समारो पाघ पहेरो, अंग धरो वायो।
चंद्र वदन दर्शन दइ, दुनिया दुःख भागो ॥ प्रभात० २
भयो प्रकाश अरुण उदे, आलस उंघ त्यागो।
प्रीतमना स्वामी श्याम, तुमसुं स्नेह लाग्यो ॥ प्रभात० ३

—वही, पृ० १८९

पद ७८—राग प्रभात

जागीए गोपाल लाल, मेरे प्राण प्यारे। टेक
आपके अद्भुत खेल, रूप अनेक धारे ॥ जागीए० १
मुदक को अस्वार एक, दुंद दंत भारे।
शिश हु के सूंढ वाके, शिव सदन निहारे ॥ जागीए० २
मोर को अस्वार एक, खटवदन बिचारे।
अंग-अंग अधिक रंग; संग सेन सारे ॥ जागीए० ३
वृषभ अस्वार एक, कंठ नाग कारे।
संग है सुकुमार नार, कोटि काम वारे ॥ जागीए० ४
हंस वाहन चतुरवदन, वेदहु उच्चारे।
स्वेत हस्ती सप्त सूंढ़, शीश चमर ढारे ॥ जागीए० ५
द्वार आये दर्शन दियो, नंद के दुलारे।
सुरनर मुनी मगन भये, बोले जे जे कारे ॥ जागीए० ६
गान तान छंद भेद, करत नृत्य भारे।
प्रीतम के स्वामी पर, सर्वस वार डारे ॥ जागीए० ७

—वही, पृ० १८९

रविदास

भजन १

देखा रे देखी मत करो यह रे, सान गुरु की है न्यारी।
बार जा गली सब है भूलन की, अंतर की गत है न्यारी ॥ टेक
बिना सुरत नट खेल करत है, दोर दगे भोंपर डारी रे।
भोजन पाये जायगा जीव सें, एक पलक सारा जुग हारी रे ॥

देखा रे देखी० १

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोइ कहे श्रीकृष्ण पुरण ब्रह्म, सोलसों गोपी नावे हारी रे।
ऐसा देखी कोइ आप दौडावै, तो नरकें जावे नरनारी रे॥
देखा रे देखी० २

राजा जन के आतमा चिन्ही, राज कीनो लुब्धा टाली रे।
एक हाथ माया के ऊर पर, दुजे हाथे अग्नि जाली रे॥
देखा रे देखी० ३

बिना समज मन सब में खावे, उदर भरन के अधिकारी रे।
ज्ञान तो न जाणे विषय रस माणे, दे खप्पर में एकाकारी रे॥
देखा रे देखी० ४

ऐसा रे संत कोइ सम दृष्टि रे वे, सोहि संतन की में बलिहारी रे।
कहे रविदास और जग में घूता, खेल करत पण होय बोहारी रे॥
देखा रे देखी० ५

भजन ११—राग जील परज

आतमा निरखो रे निरवाण॥ टेक
सतगुरु के परताप ज्ञान अनुभव उर जाग्या रे।
पपियल मीन विहंग, खोज कर भ्रम जो भाग्या रे।
प्रत्युत्तर सदगुरु करे, जाकी कला अनंत।
बेद बुद्धि बुद्धन लहे, जाको जाणे विरला संत॥ आतमा० १
नाभि पवन को मूल, मन अष्ट कमल मांहि रे वे।
त्रिपुटी वाको स्थान, दोइ मिल त्यांहि समावे रे।
शब्द शुन्य से उठत है, फेर शुन्य में समाय।
बुंद लीन भयो नादमां, नाद निरन्तर राय॥ आतमा० २
जीव की शक्ति ग्यान, शिव की शक्ति माया रे।
इन दोनों से भिन्न, अखंड अद्वैत अजाया रे।
जीव शिव कहेवाय नहीं, ने हम तुम नहीं कोइ हाम।
वत्रीक पद परमातमा, सो निजानंद निज धाम॥ आतमा० ३
पंच तत्त्व के मांय मलीने, जीव कहावे रे।
देह इन्द्रिय मन प्राण, मलीने माप बंधावेरे।
सोरंग वस्तु अगाधरै, लीपे छीपे ना सोय।
घट-घट परगट रमि रह्या, बूझे विरला कोय॥ आतमा० ४
ए सतगुरु को देश, निगम नेति का गावे रे।
ब्रह्मा विष्णु महेश, खोज के पार न पावे रे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निजानंद को अनुभवे, तो नाम रूप को नाश ।
ब्रह्म मगन होइ बोलिया, सो अणछता रविदास ।। आतमा० ५

—वही, पृ० ८०४

भजन १२

दल दरियामां हमेश न्हाना, कादव कपड़ा क्युं धोता ।
पतिव्रता घर नार पद्मणी, गुण कासे मन क्यों म्होता ।। टेक
श्राध सरावतां कहिक जुग वही गया, मुवा बापकुं क्यों रोता ।
आया कुं आदर नहीं देता, मुवा पछी मुख नहीं जोता ।। दल०१
खावे पीवे ने मारे खासडे,[1] माल मूरखा क्यों खोता ।
ऊगे त्यां कवु न वावत, कलरमें बा क्यों बोता ।। दल०२
आंब वृक्ष की छांय तजीके, आक वृक्ष पर क्यों सोता ।
हंस सभामां कवुन बेसता, बगल साथे खावे गोथा ।। दल०३
करी ले बन्दगी साया साहेब की, अमर रे वे तेरा तोता ।
कहे रविराम गुरु भाण प्रतापें, फेर अवसर नहीं होता ।। दल०४

—वही, पृ० ८४०

भजन १४

जी रे संतो भेद आगम का बूझो । टेक
कैसे सद्गुरु समरियें, क्युं कर लीजे नाम ।
कहाँ तमोने निरखियें, तमे[2] कहाँ छो[3] आतमाराम ।। जी रे० १
श्वासो श्वासें समरियें, अहर्निश लीजे नाम ।
सुरत निरत में निरखियें, तो घट-घट आतमाराम ।। जी रे० २
कहाँ से विजुरी करे चमुका, कहाँ से ज्योति जागे ।
कहाँ सत गुरु की नोबत बाजे, कहो क्यां आप विराजे ।। जी रे० ३
आप तेजसें करे झबूका, त्रीकुटी ज्योति जागे ।
गगन मंडल में नोबत बाजे, तखतें आप विराजे ।। जी रे० ४
कहाँ से आया कहाँ जायगा, कहाँ तमारूं धाम ।
आ काया पलमाँ पडि जाशे, पछे ठोर बतोवो ठाम ।। जी रे० ५
हम आया है नूर से, अमरापुर है धाम ।
सुरत चडी अस्मा ने ठेरानी, ब्रह्म हमारो ठाम ।। जी रे० ६

---

[1] जूते से, [2] तुम, [3] हो ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कौन शब्द से धून लगाई, कौन नाम निरधारा।
खीमदास रविदास कुं बुझे, माँहे खेलोके वारा ।। जी रे० ७
सत्य शब्द से धून लगावो, उरध नाम निरधारा।
रविराम सत्य भाण प्रतापें, ओह सोहथी अपारा ।। जी रे० ८

—वही, पृ० ८०५

भजन १५—राग परज

मैं सिपाइ सतगुरु साहबका रे, लहुँ टोप बख्तर पेरी[1]। टेक
शील संतोष का बख्तर पेहुँरें, लेअं समशेर सतगुरु केरी।
सात साहेर का घुंट भराऊँ, मारूँ काल दुशमन बैरी। मैं० १
सिंह बकरी भेलाँ चरावुं रे, राजा रंकको एक सेरी।
पाँच पचीस कोई जानन पावे, ब्रह्म मेल में जोऊँ हेरी ।। मैं० २
सत्य शब्द की लगी खुमारी रे, शुन्य शिखर सुरता मेरी।
पार ब्रह्म के परचे खेलुं, करूँ टेल संत सबूरी ।। मैं० ३
अरधुं[3] राज्य ने अरधा दुआइ रे, होइ छाप पातशा केरी[4]।
कहे रविदास सतगुरु के आगे, मागुं मौज चाकरी मेरी ।। मैं० ४

—वही, पृ० ८०६

पद १—ठुमरी

रमता राम हमारा नाथ जी, रमता राम हमारा रे।
ज्यां ठेराऊं त्यां हरि नांही, ऐसा अपरमपारा रे। टेक
कोई कहत है नामि निरंजन, को कहे हृदय प्रकाश रे।
कोई कहे नाशा के अग्र है, कोई कहे भृकुटि वास रे ।। रमता० १
कोइ कहत है नैन झरूखे, ए दरमें दरसाय रे।
कोइ कहत है दश में डारे, अकल कल्या नव जाय रे। रमता० २
अनेक क्थे आपके उर मांहीं, सुन गुण के मैं फूल्या रे।
करता जुग में सब कचराणा, किनहु न पाया निज मूला रे। रमता० ३
रोम रोम अनेक ब्रह्मंडा, घट घट हरि बोले रे।
आप ही खोजे आप पारस मण, खबरबिना दिन तोले रे। रमता० ४
निराकार निर्लेप निरंजन, लेखे बिन सब लेखे रे।
रवीदास ग्रही सतगुरु शरनां, पुरुष निराला पेखे रे ।। रमता० ५

—वही, पृ० ८०९

---

[1] पहनकर, [2] साथ में, [3] आया, [4] की।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजे

काफी कानडो

हरि से हेत राखो रे भाई ।
जन किसी का कोई नहीं तेरा, जग की जानो जूठ सगाई ।। हरि०
सुख का तो सब कोई सगा है, लाखो लोक मिले घर आइ ।
अंत की बेर अलेख वी आशा, बेठे रहे बाप और माइ ।। हरि०
कुटुम्ब कबीला अनमिल जाते, तोरी नहीं तलब कराइ ।
जो जाने तो चेत सवेरा, ये दुनिया है सब दुःख दाइ ।। हरि०
बेवड[1] कोट करे बलवंती, फरती खोदावे और खाइ ।
लाख जतन करे जीव जाशे, एक समे पड़ेगी धाइ ।। हरि०
जाशे[2] बाप ने जाशे बेटा, जाशे मा और जाशे जाइ ।
एक लाख पुत्र सवा लाख नाती, ए रावण की खबर न पाइ ।। हरि०
एकीला आना एकीला जाना, तातें कछु एक करो भलाइ ।
राजे का प्रभु अंतरयामी, अधम ओद्धारण है रघुराई ।। हरि०

—नवीन काव्य संग्रह, पृ० १५१

अंते पडेगी काची[3] रे काया ।
गर्व न करो मूर्ख मन मेरा, दुनिया देखो फरती छाया । अंते०
तेरा घर की खबर न तोकुं, जा घर से जीव है आया ।
साचा साहेब तुने बिसार्या, जूटे जग से जोडी माया ।। अंते०
नित उठी निंदा करे पराइ, गोविन्द का गुण कबुन गाया ।
प्रीत नहीं परमेश्वर साथे[4], जूडी प्रीते प्रीत लगाया ।। अंते०
साधु संगत में नव बेठा, आठे पहोर धंधा में धाया ।
एक रोज जंगल को जाना, मनने मीथ्या नाम धराया ।। अंते०
जोबन जावे बुढ़ापा आवे, तो भी मूरख मर्म न पाया ।
काले केश हुए सब धोले[5], तो भी नाहि भजे रघुराया ।। अंते०
हरिभक्ति भूतल में कोनी, तीने साहेब का पटा मिलाया ।
राजे का प्रभु अंतरजामी शर्णे आया सोही निभाया ।।

—वही, पृ० १५१

बनज करो रे भाई बनजारा ।
बातो मांहि बहु दिन बीते, जोतां जावे ये जन्मारा । बनज०
पोठी सब है हराये हरसे, भावे भेलावे माल पियारा ।
पांच पचीस संगे बनजारा, मोटा नायक नाम तुमारा ।। बनज०

---

[1] दुगुना, [2] जाएंगे, [3] कच्ची, [4] के साथ, [5] सफेद ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सभा संवारी लाध चलेगो, मत राखो लौको कुं उधारा ।
चोंपे करो चुकादा सबही, तब होवेगा छूटक बारा ।। बनज०
खेप लाखेणी लुणस[1] भरीए, अंत की बेरा ये सब खारा ।
ऐसी व्होरत कीजे बारू, जामें होवे लाभ अपारा ।। बनज०
दो दश दाणी बैठा बाटे, वांहां नाहीं होवे नकारा ।
सोका साहेब लेखा मागे, जो जाका दस बेके सारा ।। बनज०
पंथ का पार कबु नहीं आया, हाय हाय अब करत गंवारा ।
राजे का प्रभु अंतरजामी, पार उतारे सर्जन हारा ।। बनज०

—वही, पृ० १५२

जीवण

जागंदा कोइ आ घटमां, परखंदा कोइ आ देह मां ।
झननन इननन इनक झालरी वाजे । जागंदा०
बोले बोलावे सब घट बोले, सब घटमां रह्यो समाई ।
ज्यां[2] जोउं त्यां[3] तेवो रिसे, थिर करी थाणे रसो ठेराइ ।। झन०
बिना ताल एक तन मन मर तुंबा, बिना मोहन मोरली बजाई ।
बिना अरीसे[4] आप सुझे, बिना दीपक ज्योत जलाई । झन०
एही दुकाने दडदड वाजे, कर विण वाजां और सरणाई ।
विना दांडीआ नोबत बागे, ऐसा है कोई वो घर जाइ ।। झन०
जाप अजपा जागे नाहीं चांदो सूरज पहोंचे नहीं तांहीं ।
साची टेक सो ते घर जावे, आपोआप[5] रहे ओल खाइ । झन०
नव दरवाजे नवे राम छे,[6] दशमे महेल रह्यो देखाइ ।
ते[7] महेलमां राम ही बोले, आप ही त्यागी वो घर जाइ ।। झन०
अक्षरातीत ने अर्ज करूं छुं, अखंड ये ही अवाज सुनाइ ।
दास जीवण संतो भीम के चरणो, मजरो मानो गरीब सुख दाइ । झन०

—नवीन काव्य दोहन, पृ० १६५

धीरो

पद १—राग धोल

दम का भरोसा मत कर भाई, साधन करंदा साइ ।
साधन करंदा साई, मैं वारी वर्या दमका ।। टेक १
पाव पलक की खबर न जाणे, करे काल की आश ।
शीर पर जमडा जडप रहे, होयगा जंगल वास ।। दमका० २

---

[1] नमक से, [2] जहां, [3] वहां, [4] दर्पण, [5] अपने आप, [6] है, [7] उत ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हस्ती घोडा माल खजाना, कोइ काम नहीं आवे ।
अचेत होकर कब बैठा हो, पीछे थी[1] पस्तावे ।। दमका० ३
सद्गुरु के शरणे जाई, चरणे शीश नमावी ।
आधीन होकर निश दिन रहेनां, जमकी त्रास मिटाई ।। दमका० ४
जे आ आश जानेकु माई, रहनेकु थीर नाही ।
सद्गुरु धारा भगत बतावे, रोगी भगवान भलाई ।। दमका० ५

—धीरो बृहत्काव्य दोहन, भाग ३, द्वि० सं०, पृ० ७३६

बापु साहेब गायकवाड

पद १०

सांइ का मीलने का तो सबकु लगे प्यारा रे ।
भाइ रे सांइ का मीलने का तो सबकु लगे प्यारा ।।
ए तो भेद रख्या हेगा प्यारे न्यारा रे ।
भाइ रे सांइका मीलने का तो सबकु लगे प्यारा ।। टेक १
माल जो हुता सो घर का धंणी[2] सब ले गया ।
भूरख खेत ठुंठ मुआ सारा ।
एभ[3] हिंद मुसलमान मक्के और द्वारका ।
दोर दोर के पीछे हारा रे ।। भाइ रे सांइ का० २
वज्जु तवज्जु करके जो निवाज पठता ।
हिन्दु नाहा धोके मन मारा ।
पण[4] मन नहिं मुआ सैतान संसे हेगा ।
सच्ची बूटी मिले जबही मरे पारा रे । भाइ रे सांइ का० ३
माया नदी कुं कोइक पार जावे ।
ऐसी जबरी जो हेगी धारा ।
बापु नाम नाव बैठा सोइ पार जावे ।
आखर डूब मुआ हेगा जो तारा रे ।। भाइ रे सांइ का० ४

—प्राचीन काव्यमाला; भाग ७, पृ० ९

निरांत

पद २—राग प्रभात

नाम धणी को सबसें नीको, अनुभवी जन अधिकारी है ।
सब देशन को सब गुरु दाता, मंगता भेख भिखारी है ।। टेक

---

[1] से, [2] स्वामी, [3] इस तरह, [4] पर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महा मर्मीजन मर्म न जाने, नाम लखी गत न्यारी है।
सद्गुरु साहेब दया करे तो, पल में पार उतारी है ॥ नाम० १
थाक्यो पंडित थाह ना पावे, बुडी बुद्धि बिचारी है।
जोगी जोग जुगत बिना हारे, खुशी पें सब खुवारी है ॥ नाम० २
बावन अक्षर बूझत नांही, बेद पुरान विचारी है।
खट दरशन मत खेल तपास्या, कहा बडे आचारी है ॥ नाम० ३
मुल्लां काजी मरम नां पावे, हक बिना मत हारी है।
दोउ दिन पर सच्चा साहेब, नाम धनी परवारी है ॥ नाम० ४
नाम नां चींने सो नर नुगरा, कहा साधु संसारी है।
निरांत नाम अमे अविनाशी, पाया प्रेम पसारी है। नाम० ५

भजन सारसिन्धु पृ० ५१७

पद ३—राग प्रभात

बड़े गुरु वाकी जाउं बलिहारी, कहा सेवक कुं सिखलाया।
पास अंधे की अंधा आया, अंधा राह चलाया ॥ टेक
बन्दा कहावे छुरी चलावे; एही फलकुं फुरमाया।
किया कराया दोउ दो झख जाएगे, हक नाम कुं नां पाया ॥ बड़े० १
भगवा कहावे मुंड मुंडावे, दिल अंदर नहिं दरशाया।
और सब समे बहे जात है, अलख नाम कुं नां पाया ॥ बड़े० २
सन्यासी सों सब कर नासी, नां गाया पद परसाया।
गउमंत्री में जन्म गुमावे, मूल मंत्र का नां पाया ॥ बड़े० ३
जोगी कहावे जोग द्रढावे, गगन मंडल में मठ छाया।
जोत जाँख कें जन्म गुमावे, आप अलख कुं नां पाया ॥ बड़े० ४
जंगम कहावे कान फरावे, देवी देवकुं मिल चाया।
आश अधूरी बहे जात है, देवी नाम कुं ना पाया ॥ बड़े० ५
ब्रह्म कहावे जनोउ सुहावे, खट्ट करम नित निरमाया।
एही करम कर बहे जात है, नेह करम कुं नां पाया ॥ बड़े० ६
जनि कहावे सुवांग सुहावे, शील भाव दान तप भाया।
धरम बखानी बहे जात है, नेह धरम कुं नां पाया ॥ बड़े० ७
भेख कुल का बडा बनाया, कुल त्रूंकों न काया।
कुल त्रूट तो सतगुरु कीवे, सब देखो उनकी माया ॥ बड़े० ८
सद गुरु बाके शिर सतगुरु है, घर मठ पट परखाया।
निरान्त नाम इनुं का कहीए, विमल विमल वेदुं गाया ॥ बड़े० ९

—वही, पृ० ५१८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद ९—राग धनाश्री

राम समर मन मेरा, अब तुं राम समर मन मेरा।
एक दिन अंते उठ चलेगो, कोई नहीं साथी तेरा रे ॥ टेक
अवसर आवो[1] बहु नहीं आवे, समजी समजी ने सवेरा।
पंड पलकमां पलट जायेगो, जंगल होयगा डेरा रे ॥ अब तुं० १
वेद पुराण शाख सर्व बोले, हरि ने भजे ते भलेरा।
बीजुं कंइए कामना आवे, सब साहेबी गा बीछेरा रे ॥ अब तुं० २
कोण[2] सुकृत मनुष्य देह पायो, बहोत फर्यो तुं फेरा रे।
हजु[3] चेत भूल मत भाई, माथे मरण का हेरा रे ॥ अब तुं० ३
जनम मरण कर्म जाल कटेगी, मिटेगा कालका घेरा रे।
निरांत नाम ग्रहे सदगुरु का, नामे होयगा निवेरा रे ॥ अब तुं० ४

—वही, पृ० ५२७

पद ११—राग कल्याण

बाजीगर का वडा तमासा, सब देखन कुं आइ।
बाजीगर कुं कोइ ना देखे, चित बाजी से आइ ॥ बाजी० १
खेल खेलन का खूब बन्या है, अचरत बरनी न जाइ।
नर नारी कोउ नजर चूके, खुसी में मान पाती आइ ॥ बाजी० २
साची ने साची जूठी है, ऐसी जुगत बनाइ।
तीन लोकमां ऐही तमासा, रांक राव रीझाइ ॥ बाजी० ३
खेल खूबमां दुनियां खुशी, ऐसी खेल खीलाइ।
ते तो सबही जूठा जानो, जानत जग भरमाई ॥ बाजी० ४
तीन देव आदे सहु दुनियां, ए सब बाजी बनाई।
बाजी सें सबका मन माना, बाजीगर नां पाई ॥ बाजी० ५
जड चेतन का ऐसा खेला, अटूट चाल चलाइ।
निरांत नाम बाजीगर न्यारा, बाहेर भीतर पाइ ॥ बाजी० ६

पद १४—राग आशावरी

राम रस पीवे सो जन पुरा, शंत में कोइ एक शूरा ॥ टेक
राम रस ने प्रेम पियाला, पाका पात्र न फूटे।
आप पिए औरन कुं पिलावे, तल भर तामें नव खूटे ॥ राम रस० १

---

[1] ऐसो [2] कौन, [3] अभी।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रस मतबाला रूप बखानुं, मगन रहे मन मांही।
त्यागी तनकी शुद्ध बिसारी, छाक चढ़ी भय मांही ॥ राम रस० २
गगन गुफामें योगनि ग्यान का, आप रहे एकीला।
अन्य देव वाके दिल्ल नाहीं, नहि गुरु नहिं चेला ॥ राम रस० ३
अनन्त कला वा तन के मांहीं, उलट समे संसारा।
निरांतदास देख्याता मांहीं, तीन लोक से न्यारा ॥ राम रस० ४

—वही, पृ० ५२९

पद २१—राग गोडी

आप चिन्या बिन अन्धा, जगत सब आप चिन्या बिन अन्धा।
पठवे गणवे आद लेऊँ, सबही उपा का धंधा ॥ टेक
मंत्र जंत्र भेरव भवानी, वीर जोगणी जंदा।
उत संगत करी आप भुलायो, परे है काल को फंदा ॥ जगत० १
खट दरशन भली खेल गयो, कहावे साहेब का बंदा।
उन सबे आप लखे नहीं आयो, भेख धरहीं भीखंदा ॥ जगत० २
प्रपंच में सब पच पच हारे, संशे परो समरंदा।
सारे असार की सूझना पाइ, चढ़ है खोट की खंधा ॥ जगत० ३
सद्गुरु पावे अलख लखावे, छूटे सकल कुल बंधा।
निरांत नाम आपको पायो, एही सार करी संधा ॥ जगत० ४

—वही, पृ० ५३३

पद २२—राग गोडी

आज कालमां दुनिया देखो, पानी की सारी।
नरनारी को ओर न रेशी, जांहान लगी है झाहारी ॥ टेक
मोत बडा सबके शिर ऊपर, कौन रंक कौन राजा।
प्राण सबका पकड़ रहा है, सबकी लेगा माझा ॥ आज० १
कोइ कहे अब किस विधि करीए,[1] सब दोर में आया।
दश दरवाजा बंध लिया है, काल रह्यो गढ़ छाया ॥ आज० २
तीन लोक में ओही तमासा, सब के शिर पग दाया।
एक जगे ऐसी सद्गुरु की, वहाँ से काल मगाया ॥ आज० ३
उस जगोपर जाने ज़ीवड़ा, ओहे अमर निशानी।
निरांत नाम नमे सद्गुरु को, पूर्ण पद निरबानी ॥ आज० ४

—वही, पृ० ५३३

---

[1] करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद ६२—राग गोडी

दुनियां मरड मू की दो मन की, फेरफार नहिं, फना होइ जायेगे ।
नहीं भरोसो तन को, दुनियां मरड मू की दो मन को ।। टेक १
कहाँ से आये ने कहाँ तुम जाओगे, खोज करोने उनकी ।
दो दिन की जिंदगानी सारु,[१] कहा करो तुम धन को ।। दुनिया० २
संसार सुख स्वप्नावत देखो, कोइ जगे नहिं किनको ।
सब कोइ देखत जाना होयगा, रहेने नहि होय एक दिन को ।। दुनिया० ३
फूल फूल्या सो कल करमायेगा,[२] जाता नहि बेर जोबन को ।
निरांत नाम गुरु का ग्रही ले, सहु सुधरे एसो जन को ।। दुनिया० ४

—प्राचीन काव्य, भाग १०, पृ० ५६

पद ७

मैं तो प्यारी पिराने पियु की,
जातां जान हमेरे जीव की ।। टेक १
रही अरस परस एकता मली,
सुख पियाजी को मुख कही न शकुं कली,
धिक धिक कहीए एवी नार ने,[३]
दियो पियाजी को सुख बीसार ने ।। मैं तो० २
कीनो सनगार उपर नाव की,
रही अंतर और सभाव की ।
भइ दुर्मति दोहोदश धावती,
व्यभिचारिणी पियाकु ना भावती ।। मैं तो० ३
ऐसी नार पिया की अनेक छे,
तामे कोइ कोइने काइ टेक छे,
पतिव्रता समोवड[४] को नहि,
वृत्ति वशी रही पियु के महीं ।। मैं तो० ४
प्रेम वंती ने पियु की चाहना,
व्रेहेवंती ने व्रेहेनी लोचना ।
आतुरवंती ने आतुरता घणी,[५]
एवी विजोगवंती बोहोघणी ।। मैं तो० ५
पिया कोण मिलाया कीजिए,
वाके आधीनता होइ दीजिए ।

---

[१] के लिए, [२] मुरझाएगा, [३] को, [४] समान, [५] बहुत ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कीजे तन मन अरपन ताही कुं ।
मोहे पिया मीलावे वाही कुं ।। मैं तो० ६
ऐसी जानी गुरु आये आपसु,
जैसे स्वाति छीप सभावसु ।
निरांत दया करी दास ने,
आप पिए मीलाओ हरी आशने ।। मैं तो० ७ —वही, पृ० ६१

पद ७२

बड़ी आश कीइ तेरे नाम की, मन मेहेरमकुं लागी है ।
मन मेहेरमकु मेहेरम मलिया, भूल भरम की भागी है ।। १
उलटी सुरता चढी गगन मां, तदवत् थइ तन त्यागी है ।
सत सामी सत बनी सोहागन, जीवन भरमां जागी है ।। २
बिन बस्ती वां बसती कीनी, उन्मनी घर अनुरागी है ।
नौतम नारी पियाकु पियारी; पाई मोज बिन मागी है ।। ३
सदा सोहागन वाकुं कहीए, नरखत नाम सोरागी है ।
निरांत नाम अमूलक पाया, सोइ पुरुष बडभागी है ।। ४
—वही, पृ० ६५

पद ७४

सद्गुरु की महिमा बडी, ग्यानी जन गत पावे ।
जगत पावन ए परमातमा, गुरु देव कहावे ।। टेक १
अन्य देव उनथे भये, भये दस अवतारा ।
ब्रह्मा आदे विश्वना, स्वामी सरजण हारा ।। सद्गुरु की० २
तीन देव तासें भये, अभे सकल ब्रह्मांडा ।
इंड पिंड उनथे भये, गुरु आप अखंडा ।। सद्गुरु की० ३
आद अंत गुरुदेव है, गुरु की सब माया ।
निरांत निर्मल नाम है, गुरु देव लखाया ।। सद्गुरु की० ४
—वही, पृ० ६६०

पद १०५

नाम बिना बहु कृत कमाये, जैसे नीर ओस को पीवे ।
बौहोत पीवे पण[1] प्यास न जावे ।। नाम० १
जप तप नीम वरत बोहो करनी, नाना विध के नित्य ठरावे ।
कर्म जाल से कबहु न छूटे, ज्युं बालक पे खेल खेलावे ।। नाम० २

---

[1] पर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करत है ए छूटन को भाइ, त्यम त्यम बपरा बोहोत बंधावे ।
मूरख मन समजत नहि ए सो, कोडी ग्रहे ने होरा गमावे ।। नाम० ३
बिन कीमत का एहे पसारा, गांधी[1] वस्तु बोहोत वसावे ।
निरांत नाम गुरु नहि चीना, बोहोत बस्तमे बस्तु न पावे ।। नाम० ४

—वही, पृ० ९५

पद १०६

हम है वाही देश के वेरागी,
बिना सद्गुरु कोइ जाइ शके नाहीं,
सद्गुरु आध अंत कहे तागी ।
वही देश ते सब चली आये,
दूर परे दुर्मंत नाहीं भागी ।। हम है० १
अमर लोक से दुनिया आइ,
महाजल मीन परी है आधी ।
छीलर में सब खुश रहे हैं,
जल धरे जब मरे तन त्यागी ।। हम है० २
जनम मरन ता जन कुं नाहि,
जाकु चोट शब्द की लागी ।
निरांत नाम लख्या वाही देशी,
जाई मले मनवा जो जागी ।। हम है० ३ —वही, पृ० ९६

[ज्ञानोपदेश]

पद १५—राग आशावरी

राम रस पीवे सो जन पूरा, शत में कोइ एक शरा । टेक १
राम रस ने प्रेम पियाला, पाका पात्र ना फूटे ।
आप पीए औरन कु पीलावे, तल भर तामें नव खूटे ।। राम रस० २
रस मत वाला रूप बखाणुं, मगन रहे मन मांही ।
त्यागी तनकी शुद्ध बिसारी, छाक चढ़ी भय नाहीं ।। राम रस० ३
गगन गुफा में चोगान गियान का, आप रहे एकिला ।
अन्य देव वाके दिल नाहीं, नहीं गुरु नहि चेला ।। राम रस० ४
अनंत कला वा तनके मांही, उलट समे संसारा ।
निरांतदास देख्या ता मांही, नित लोक से न्यारा ।। राम रस० ५

—वही, पृ० १२३

---

[1] पंसारी ।

 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद २८—उच्च प्रभात

नाम बीना कछु न मीले, ग्यानी जन गत पावे।
नाम मीले जाइ नामकु रे, नाम नाम लखावे ॥ टेक १
अगम अगोचर नाम है, नाम निरगुण कावे।
सिर गुण सोइ सत नाम है रे, नामे सब धावे ॥ नाम० २
पीर पेंगम्बर ओलिया, अल्ला ईसम पढावे।
ईसम ईसम के आसरे, काजी कलमा सुनावे ॥ नाम० ३
ईसम नाम दोउ उपरे, भला वाही कु लहीए।
निरांत निर्मल नामकु, कहो कैसा कहीए ॥ नाम० ४

—वही, पृ० १३३

पद २९—उच्च प्रभात

राम नामका पारखुं, कहो कैसे पावे।
हसन की छत कहाँ मीले रे, बग बहोत मील आवे ॥ राम० १
काजी पंडित पढ़े घने, ध्यानी सब धावे।
सिद्धान्त कु रामजे बिना, कछु हाथन आवे ॥ राम० २
खट दर्शन मिली जोगहि, अजा एक ना पावे।
भिन्न भिन्न भेखी भये, खट राह चलावे ॥ राम० ३
आध अन्त मध्य एक है, दूजा नहि दरशावे।
निरांत निर्मल नाम है, गुरु देव खावे ॥ राम० ४—वही, पृ० १३३

पद २३

परम धाम पद राम नामको, सद्गुरु अलख लगावे रे।
नथ[1] समोवड कहेवा सरखुं, आप आप दरशावे रे ॥ परम०
शेष शारद मुनी नारद रटत है, शिव सुमाध सुवावे रे।
वेद आद लेइ वरणव करता, वर्णव्यामां ना आवे ॥ परम०
त्रर्ण असरमां तो रह्यो विमासी, नित्य करम नी रमावे रे।
खट दरशन भली[2] खोज करत है, मूल परम नव पाये रे ॥ परम०
सो जान जोगी जपे अजापा, खट रसना गुन गावे रे।
खर अखर पर नरख नामकुं, उलट निरन्तर धावे रे ॥ परम०
सोही जनकी में जाउ बलिहारी, सो मेरे मन भावेरे।
निरांत नाम नरखपद पूरन, सुमरन महीं समावे रे ॥ परम०

—बृहत्काव्य दोहन, भाग ५, पृ० ६४८

---

[1] नहीं है, [2] मिलकर।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद ३१

प्रीछो भाई सन्त सुजाण, रूप श्री राम नो[1] ।
पायो पदारथ देह, मही मणी नामनो ।।
नाम तणो प्रवेश, चराचरमां जुवो ।
नाम तो अनादी क्रन्द, वधी वेल जुग हुओ ।।
वदे भाइ वचन बिचारी, संचो करी नामनो ।
शब्दमां सुरती मेलावो,[2] मकान सुन गामनो ।।
त्रवेणी के धरमां, भली रह्यो नाथ शुं ।
पूजा प्रेम आचार, अनोपम भात शुं ।।
अवरतणी[3] होय आश, समज के परहरी ।
तमो आपमां आप देदार, नाम निश्चे करो ।।
सतगुरु के परताप, पाइ ए गति पलकमां ।
निरांत निरंतर जोइ, समइ रहो अलखमा ।। —वही, पृ० ६५२

रविदास

पद २

कोइ जागंदा-स्वप्ने की लेहेर, समावरे-कोइ जागंदा । टेक
एक दिन जागा क्या भया रे, स्वप्न घेन मदमाती ।
जेसा चन्दा बीज का प्रगट्या, फिर अंधारी राती रे ।। कोइ० १
समज्या नहीं सद्गुरु को समश्या, निरख्या नहीं नीराटा ।
खोज खबर दील खोज्या नहीं रे; उघड्या नहीं कपाटा ।। कोइ० २
गावे बजावे करे कलोला, हरदे न पड्या छेदा ।
जैसा पथ्थर पाणीमां रे, कदी न भींतर भेदा रे ।। कोइ० ३
मारग बंका कर ले डंका, नहीं कायर का कामा ।
सत् शब्द सत् गुरु का ग्रही लो, देख तमासी नामा रे ।। कोइ० ४
कहे रविदास सत भाण प्रतापे, समज समज मन मेरा ।
शुं सुतो चोराशीमां, अफल फरेगो फेरा ।। कोइ० ५
—बृहत्काव्य दोहन, भाग ७, पृ० ७९८

पद ५

आत्मा निरख्यो रे निरवाण, आत्मा ।। टेक
सत् गुरु के परताप, ज्ञान अनुभव उर जाग्या ।
परि उतर सद्गुरु कहे, जाकी कला अनंत ।
वेद बुद्धि बुध ना लहे, समजत विरला सन्त ।। आत्मा० १

---

[1] मिलाओ, [2] औरों की ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाभि पवन का मूल, मन अष्ट कमल दल मांही।
त्रिकुटी वाको स्थान, दोह मील तहाँ समाई ॥
शब्द शून्य उठत हैं, पुन हीं शून्य समाय।
नाद लीन भयो बिंदु में, बिंदु निरन्तर रहाय ॥ आत्मा० २
पंच तत्त्व के विषय, मिलि कर जीव कहाया।
देह इंद्री मन प्राण, मान सोइ मांहे बंधाया ॥
साहं ब्रह्म अगाध है, लीपे छीपे नहीं सोय।
घट घट परगट रम रह्या, चीने वीरला कोय ॥ आत्मा० ३
जीव की शक्ति अज्ञान, शिव की शक्ति माया।
इन दोनों तें भिन्न, अखण्ड अद्वैत उजाया ॥
जीव शिव कहेवा नहीं, हम तुम नहीं कोइ राम।
व्यतिरेक पद परमात्मा, निजानन्द निज धाम ॥ आत्मा० ४
ए सद्गुरु को देश, निगम नेती कर गावे,
ब्रह्मा विष्णु महेश, खोज कोइ पार न जावे।
निजानन्द कुं अनुभवी, नाम रूप को नाश,
ब्रह्म मग्न होइ बोली आ, अणछता रविदास ॥ आत्मा० ५

भोजो भगत पद—३

अब तो भजन करना मन भाई।
कुटुंब कबीलो तारे काम नहिं आवे, एक साची राम सगाई ॥ आब तो०
भुखे जीवे धन भेलुं कीधुं, ठाशी भरियुं पर साही।
पा दमडी तारे संग नहि चाले, हाथ धसतो जाई ॥ अब तो०
काम क्रोध मोह मदमां मो ह्यो, चढी रे कर्म केरी काई।
मदै घणा तेरे आरे मुलकमां, लुंटी लेशे रे लुगाई ॥ अब तो०
आ तन तारो काल उडी जायगो, जैसे वंटोलियो[1] वाई।
अब का दायो फारि नहि आवे, पछे[2] मन पछताई ॥ अब तो०
सर्व तीर्थ सद्गुरुजी ने चरणे, ले नित्य गंगाजल नाई।
कालनो त्रास कदी नही लागे, आ तन अनभे थाई ॥ अब तो०
शु[3] सुतो तुं चेत अभागी, आ देह ते उत्तम पाई।
भो जो भक्त कहे गुरु प्रतापे, एक लेनी गोविन्द गुण गाई ॥ अब तो०

—वृहत्काव्य दोहन भाग ५, पृ० ६२६

पद—६

संतो पामी हुं[4] प्रीतम प्यारा।
दिलमां दरश्या देव निरंजन, हता जीवन जग सें न्यारा ॥ संतो०

---

[1] आंधी, [2] बाद में, [3] क्या, [4] मैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक समय मुज पासे हरि आव्या,[1] अनहद रूप अपारा ।
प्रीति हती[2] कांइ पूर्व जन्मनी, निरख्या नन्द कुमारा ।। संतो०
कोमल काया ने[3] वदन सुकोमल, क्यारे कहुँ करतारा ।
मारी सेजे में मुख लीधुं तो पामुं नहि कांह पारा ।। संतो०
चले न चूके कच्छु आवे न जावे, निर्गुण रूप निराकारा ।
भोजो भक्त कहे गुरु प्रतापे, समरूँ सरजन हारा ।। संतो०

—वही पृ० ६२७

पद—७

संतो निर्गुण की गति न्यारी ।
समश्या हे सद्गुरु की जे[4] समजे, ते[5] धाय सुखकारी ।। संतो०
अडसठ तीरथ करी घेर आवे, ओही रे अनुका चारी ।
प्रीति बिना पालव तजी बेसे, तोय मले नहिं रे मुरारी ।। संतो०
जोगी जति ने तपसी सन्यासी, रह्या छे ध्यान मां धारी ।
फल मींठा केने हाथ न आवे, पछे रह्या छै है येसें हारी ।। संतो०
सात पाताल एकवीश ब्रह्मा, रह्या सवै राम उचारी ।
सद्गुरुना प्रताप बिना भाई, भेद समजवो भारी ।। संतो०
भोजो भक्त कहे गुरु प्रतापे, सूइ से छै संसारी ।
जाग्या सो नर जग में जीत्या, एक प्रेम पियुगति न्यारी ।। संतो०

—वही पृ० ६२७

पद—८

संतो मूल रे ग्राहे तो फल पाये ।
तरणि तत्त्व प्रेम प्रकायो, तो तेजमां तेज मली जाये । संतो०
उँचा उंचा तरवर गगन में, फले हे पंखियाँ वेगलुरे ।
कंह कंह पक्षी बलुंधी गयां, फल मीठेरां दूरे ।। संतो०
मूल ग्रहयुं तव क्या भया, चढन की गत नाहीं ।
परख्या पण स्परश्या नहीं, होंस रही मन मांही ।। संतो०
मूल ग्रहयुं मोटे मुनिवर, जो सद्गुरु चरण चित लाये ।
भीलड़ी भावे आपे चाली आये, जो मोटम मान गमाये ।। संतो०
इन्द्रकु इन्द्रासन आप्यो, ब्रह्माए ब्रह्म रचायुं ।
संत समर थे सागर पीधो, लइ रे न्याये वसायुं ।। संतो०
अमर वरसे ने सरोवर छलियां, नरपति नीर भरी नाये ।
भोजो भक्त कहे गुरु प्रतापे, अमर पटो लखाये ।। संतो०

—वही पृ० ६२८

---

[1] क्षाये, [2] थी, [3] और, [4] जो, [5] वह ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ९

संतो मुनिवरे मन समजाया ।
समजी चाल्या शब्द सद्गुरु का तो, पर ब्रह्म कु पाया ।। संतो०
पाँच कुमारी पचीश कुवारी, काम क्रोध हठाया ।
हद बेहद अनगत गति आवी, कर्म बिनानी काया ।। संतो०
कर्म धर्मनी भ्रमणा भागी, एक लालन सें लेहे लागा ।
अवला[1] हुता ते सवला[2] कीधा, लखिया फेर लखाया ।। संतो०
सुरता सांधीने चाल्या अकासी, अनहद नाद बजाया ।
आध हता सो अंते उठी धाया, जई रूपमां रूप समाया ।। संतो०
सूक्ष्म वेदमां सुरता पहोती, बावन बार बुझाया ।
भोजो भक्त कहे गुरु प्रतापे, जन्म मरण में ना आया ।। संतो०

—वही, पृ० ६२८

पद १०

संतो कोय बूझे बावन हारा ।
जाके हृदय गुरुगम प्रकटे, सो जन खेले चोधारा ।। संतो०
पाँच पचीश पर ब्रह्म सें उपजे, कोइ शाणा समजी जावे ।
सोय दिऐ सोय रमे एकीला[3], आपे नाव चलावे ।। संतो०
नयन कमल सें निरख्या नटवर, खोल्या कर्म कपाडा ।
दिलमां दरश्या देव निरंजन, नकरा हुआ नराडा ।। संतो०
अकल कला केना कल्यामां नावे, अनुभवे एने बूझे ।
उँ सोहं शब्दने ओलखे[4], तो चौद लोक तेने सूझे ।। संतो०
झलकत ज्योत ने नूर अपारा, मान जइरे मिलाया ।
भोजो भक्त कहे गुरु प्रतापे, रूप में रूप मिलाया ।। संतो०

—वही, पृ० ६२८

होरी १

नाथ मोरी अरज सुणो[5] अविनाशी ।
हुँ[6] तो जनम जनम तोरी दाशी ।। नाथ०
सती सभामां श्याम संभारे, त्रिकय तोरे संग राची ।
पारखुं पलमां देजो पातलिया[7], नहि तो हवे थाशे हांशी[8] ।। नाथ०
आ समय तो अर्जुन जेवा, ते पण रह्या छे तपाशी ।
भीमसेन बैठा भूमि खोतरवा, पीठ फेरवी गया पाछी ।। नाथ०

---

[1] औंधे, [2] सीधे, [3] अकेला, [4] पहिचाने, [5] सुनो, [6] मैं, [7] भगवान, [8] मजाक.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पांडव तो पृथ्वी ने हार्या, हस्तिनापुर तणा वासी ।
अबला नारी एम पोकारी, जीवन तमने हुँ जाची ।। नाथ०
भीड पडी हवे आवो भूधरजी, वनिता कहे व्रजवासी ।
भोजो भक्त कहे भक्त वत्सल, प्रेम तणो छे पियासी ।। नाथ०

—वही, पृ० ६३५

होरी २

पत राखो पांचाली पोकारी, ना मोही जानत है नो धारी ।
नाथ मोरी अरज गुणो अविनाशी ।।
दुर्योधन आ दुःख पठाये, कलपत राजकुमारी ।
केश पकड़ के लाये सभा में, जैसे निर्मल कोइ नारी ।। नाथ०
भीम ने द्रोण करण सब बैठे, कौरव अंध कचेरी ।
सबकी मति हरि एसी मीले, केणे न बात बिचारी ।। नाथ०
उठे भूप रूप पर आये, अंबर लेत उतारी ।
खेंचत चीर वीर सब देखत, नव गति श्याम संभारी ।। नाथ०
अर्जुन भीम, नकुल ने सहदेव, रह्या छे हिंमत हारी ।
विश्वनाथ विलंब न कीजे, अब मोय लियोनी उगारी ।। नाथ०
वनितानां वचन वज्र सम लागे, गरूडे चढ्या गिरधारी ।
धाये नाथ अनाथ की व्हारे, भोजन भव दुःख तारी ।। नाथ०

—वही पृ० ६३५

पद ६

संतो निरगुण की गत न्यारी ।
समश्या है सद्गुरु की जे समजे, ते थाय सुखकारी ।। संतो०
अडसठ तीरथ करी धरे आवे, ओही मनुका चारी ।
प्रीति विना पालव तजी बेसे, तोय मले नहिं रे मुरारी ।। संतो०
जोगी जति ने तपसी सन्यासी, रह्या छे ध्यान मां धारी ।
फल मीठा केने हाथ न आवे, पछे रह्या छे हैये से हारी ।। संतो०
सात पाताल एकविस ब्रह्मा, रह्या सर्वे राम उचारी ।
सद्गुरुना प्रताप बिना भाई, भेद समजवो भारी ।। संतो०
भोजो भगत कहे गुरु प्रतापे, सुइ रिछे संसारी ।
जाग्या सो नर जग में जित्या, एक प्रेम पियु गत प्यारी ।। संतो०

—बृहत् काव्य दोहन, भाग ६, पृ० ७३१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छोटम

पद २९

मुखडा क्या देखों दरपन में ए राग
रसना तुं राम नाम ले बाइ, जस कर ले हरीगुन गाइ ॥ रसना० टेक
हरि गुन घेरो पान सुधा को, पीवत क्यों न लजाइ ।
क्या मनमानी, बनत गुमानी, जानी ना सलुकाइ ॥ रसना० १
खेल नहीं मुख मंडल भीतर, संग सखा बनि सांइ ।
खावन भायो, मदरस पायो, गायो नां सुखदाइ ॥ रसना० २
जब न रटे हो तुं, तब तो तेहारी, जैसी चर्म जडताइ ।
तो फिर कौन है काम तिहारो, नहिक भार उठाइ ॥ रसना० ३
साधन सुख के श्री हरी दाता, त्राता लेत तराइ ।
तासें तुं नहिं प्रीत लगाइ, भाइ कर्म कथनाइ ॥ रसना० ४
छोटम दास कहुं कर जोडी, तुं बिनती सुनि लेहो माई ।
जो मम आश निराश करे तो, तुज कुं राम दुहाइ ॥ रसना० ५

—भजनसार सिन्धु, पृ० १५९

पद ३०—राग वरी

तुं क्या फिरता है मगन में, जमरा ले जावेगा छिन में,
नहिं चित लगायो मोहन में । टेक
बालपना तुंने व्यर्थं गुमाया; खेल रह्या लरकन में ।
जोबन का जब जोर झुकाया, तिरिया के मोहन में ॥ जमरा०
थाक रहा जब थरकन लागी, काया बुड्ढापन में ।
ताकत न रही तन अपने की, शुद्धि नहीं कछु मन में ॥ जमरा० २
हे हत भागी तोहु न लागी, प्रीत हरी कीर्तन में ।
अब तुं कहा पस्तात[1] गुमानी, मौत खड़ी है अंगन में ॥ जमरा० ३
मान करी अब एक घडी पल, तुं मत खो कछु फंद में ।
छोटम दास को प्रभु चित धारी, ध्यान लगा सुमरन में ॥ जमरा० ४

—वही, पृ० १५९

पद ३१—राग वरी

जो तुं मानत है कही मेरा, तामें कौन पदारथ तेरा ।
रज वीरज का देह बनाया, पंच भूत का डेरा ॥ तामें कौन० टेक
हाड पिंजरा चाम लपेट, मल भरिया बहुतेरा ।
नवे द्वार से निकसत सारा, है दुर्वास घनेरा ॥ तामें कौन० १

---

[1] पछताने हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन बुद्धि अहंकार चित्त में, पंच विषय है मेरा।
ए लालच में तुं लपटाया, आप न लह्या अनेरा ।। तामें कौन० २
जन्म जरा दुःख रोग शोक भय, धर्म सकल वपु केरा।
पेट काज बहु पाप करत है, फिरत कर्म का प्रेरा ।। तामें कौन० ३
देह इन्द्रिय मन प्राण नहीं तु, रूप अनुपम तेरा।
कहे छोटम निजरूप विचारे, फिरे न भव में फेरा ।। तामें कौन० ४

—वही, पृ० १६०

पद ३४—राग वही

अलख नाम धुन लागी गगन में, मगन भया मन मेरा जी। टेक
आसन भारी सुरत दृढ धारी, दिया अगम घर डेरा जी ।। १
इंगला पिंगला दोनुं छांड के, सुक्ष्मणा मध्ये धारा जी।
तरवेणी में तार मेलाइ, अजपा नाम उचारा जी ।। २
जंत्र अनाहद बाजे अहोनिश, होत नाद झनकारा जी।
घन बिन अद्भुत होत गर्जना, बरसे अमृत धारा जी ।। ३
कोटि-कोटि रवि शशि की शोभा, झगमग ज्योति उजाराजी।
जन छोटम सद्गुरु प्रतापे, दरस्या अलख दीवारा जी ।। ४

—वही, पृ० २६१

पद ४८—कीर्तन राग वही

समरण सोहं का सोंहं का, ज्यां बजे अनहद डंका। टेक
आसन बांधी सुरती सांधी, चतुर दिल चित लाया।
मुलाधार पृथ्वी रङ्ग पीला, देव गणपति राया ।। समरन० १
अक्षर चार विचारो ईन में, वंश षस वरणा।
खट शो जाप अजपा जपकं, उनकुं अरपण करणा ।। समरन० २
उतपत द्वारा खटदल सारा, श्वेत रङ्ग जल जान्या।
चतुरानन की ज्योति जगाइ, खटहजार दीया दाना ।। समरन० ३
खटदल में खट अक्षर देखो, बं भं मं का बासा।
से हं लक लखो लक्ष सें, खेल वन्या है खासा ।। समरन० ४
नाभि सरोजा दस दल खोजा, तेज तत्त्व का तापा।
लाल रङ्ग में लक्ष्मी नायक, खट हजार जहाँ जापा ।। समरन० ५
डं ढं णं तहाँ अक्षर दरशा, तं थं दं धं वासा।
नं पं फं कु फिरकर पेख्या, कट्या कर्म का पासा ।। समरन० ६
हृदे विचारा द्वादश आरा, शिव शक्ति का ठारा।
नील रङ्ग मारुत का मांही, झगमग ज्योति उजारा ।। समरन० ७

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खट हजार तहाँ जाप अरपनां, कं खं गं घं वरणा ।
नं च छं जं जाहां निवासा, झं, झं टं ठं ठरणा ।। समरन० ८
कड्ठे कंजा षोड शरंजा, पत्र कह्या परमाना ।
शम रङ्ग आकाश तत्वका, जीव ज्योति का ध्याना ।। समरन० ९
सहस्र जाप तहाँ जपो अजंपा, षोडष वरण विचारा ।
अं आं इं ईं उं ऊं ऋं लृं लृं ए ऐ सारा ।। समरन० १०
ओ औ अं अः उनके मांहीं, ए स्वर खटदश कहावे ।
इनका ध्यान धरे नर जेही, सो भव जल में नावे ।। समरन० ११
भृकुटी चक्रे द्वेदल पतरे, वाके निर्मल रंगा ।
हं क्षं अक्षर रहे निरन्तर, चिद् शक्ति के संगा ।। समरन० १२
सहस जाप तहाँ करो निवेदन, परम तुरीपद तांही ।
बजे अनाहद नाद निरन्तर, अमृत बरशे ज्यांही ।। समरन० १३
ब्रह्मरंध का भेद अपारा, दल हजार तांहां दरशे ।
सहस्र जाप तहां जपो जुगत सें, परम ज्योत कुं परसे ।। समरन० १४
सब अक्षर अव्यक्त रहे तांहां, अकल अनोपम रंगा ।
कोटिक रवि शशी तेज कहावे, परम पुरुष के संगा ।। समरन० १५
उनके आगे लक्ष अलौकिक; सद्गुरु भेद बताया ।
छोटम श्री गुरुदेव प्रतापे, अचल अभय पड पाया ।। समरन० १६

—वही, पृ० १६९

पद ५९—राग नाफी

श्री कृष्ण वसन्त विहारी, मन मोहन मंगल कारी । टेक
दिव्य स्वरूप अनन्त शक्ति धर, स्रजनहार सुखकारी ।
निरालम्ब निरलेप निरंजन, चैतन्यमय अविकारी ।
अजब गति नाथ तिहारी, श्रीकृष्ण वसन्त बिहारी ।। १
इच्छा सें ब्रह्मांड बनाये, गुंजामय तत्त्व पसारी ।
सरजे पाले और संहारे, निरखी काल कछु न्यारी ।
ब्रह्म को महिमा भारी, श्री कृष्ण बसन्त विहारी ।। २
स्थावर जंगम जात की, रमणिक रचना न्यारी ।
रूप रङ्ग आकार अनुपम, निरखी भये नर हारी ।
धन्य तुं बहु गुनधारी, श्रीकृष्ण वसन्त विहारी ।। ३
ललित खेल लिलासें कीनो, मुनी मन मोहन कारी ।
जन छोटम ऐसें प्रभुजी की, वारवार बलिहारी ।
ध्यान ऊपर लीनो धारी, श्रीकृष्ण वसन्त विहारी ।। ४

—वही, पृ० १७५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ६१—राग होरी

विभु देव वसन्त विहारी, मन मोहन मंगल कारी। टेक
दिव्य स्वरूप अनन्त शक्ति धर, स्राजनहार सुखकारी।
निरालम्ब, निर्लेप, निरंजन, चैतन्यमय अविकारी।
अजब गति नाथ तिहारी ॥ विभु देव० १
इच्छा से ब्रह्मांड बनाये, गुनमय तत्त्व पसारी।
सरणे पाले और संहारे, निरखी कला कछु न्यारी।
ब्रह्म को महिमा भारी ॥ विभु देव० २
स्थावर जंगम जातु जात की, रमणिक रचना न्यारी।
रूप रङ्ग आकार अनुपम, निरखी गये नर हारी।
धन्य तुं बहु गुन धारी ॥ विभु देव० ३
ललित खेल लीलासें कीनो, मुनि मन मोहन कारी।
जन छोटम ऐसा प्रभुजी कों, बारम्बार बलिहारी।
ध्यान उर लीनो धारी ॥ विभु देव० ४
—वही; पृ० १७६

पद ६२—राग होरी

खेले कोइ आनन्द होरी, ओंकार तार ग्रही दोरी। टेक
इनमें गंगा इनमें जमुनां, बीच में खेल मचोरी।
देव सकल तिहां देखन आये, स्तवन करत कर जोरी।
दुरगइ दानव टोरी ॥ खेले० १
बिन करताल मृदंग बजावत, बिन मुख गावत होरी।
बिन तनु तान मिलावत अद्भुत, अटकी[1] दृष्टि सब छोरी।
चित्त चिदरूप भयोरी ॥ खेले० २
विश्वनिवास विशाल विमल गुण, अचल रह्यो एक ठोरी।
ताको ध्यान धरत दृढ़ मन सें, पातक पुंज गयोरी ॥
पुन्य को उदय भयोरी ॥ खेले० ३
सरजनहार सदोहित सुन्दर, व्यापक देव रह्योरी।
जन छोटम परसद वा पदकुं, तिहां मन मग्न भयोरी ॥
भरम सब दुर गयोरी ॥ खेले० ४
—वही, पृ० १७६

---

[1] रूकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्जुन भगत

खोज

कहाँ मिलेगा स्वामी ? सखीआँ, कहाँ मिलेगा स्वामी ?
काया भई मेरी कामी ! सखीआँ, कहाँ मिलेगा स्वामी ? टेक
देश देशका देवल ढुंढा, दिलमें बनी दिवानी ।
अडसठ तीरथ अफफल फेरा, नहि पुरुषोतम पामी । सखीआँ०
भारत और महाभारत ढुंढा, ढुंढी अमृत बानी ।
चार वेद चौरासी ढुंढी, सब घर मामो मामी ।। सखीआँ०
जप तप त्यागी बनी बेरागी, काया किनी न कामी ।
जइ जंगल में अंग जलाया, नहिं वेदना वामी ।। सखीआँ०
तीन लोक और चौद मंडाना, ढुंढा ठाम कठामी ।
परनी तकबी पीअर में भटकी घर घर करत गुलामी ।। सखीआँ०
हुँ गुणग्रामी मैं शीश नामी, खमा करो मेरी खामी ।
जेही पतनी का पियु नहि पासे, उरमें रहत हरामी । सखीआँ०
नहिं था जोगी, नहिं था भोगी, नहिं था नामी अनामी ।
मेरा पियुकी खबर बताबे, अरजुन अन्तरजामी ।। सखीआँ०

—अरजुन वाणी, पृ० ५

मेरी क्या मति रे मेरम मेरी क्या गति ? गुरु गोविन्दा
गुरु गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ? टेक
नहि पानी पवना नहि जमी असमाना,
नहि सूर चन्दा नहि दिपक बती गुरु गोविंदा,
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?
नहि पंथ पोथ नहि, नहि जोश जोती,
नहि तप तीरथ, नहि जोग जती, गुरु गोविन्दा,
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?
ऋषि अठ्यासी नहि सिद्ध चौराशी,
साते मुनीजन मुवा मथीरे मथी, गुरु गोविन्दा,
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?
नाम निशानी नहि, अंगनी अेधानी,
आतम आंख बिना ढुंढुं अति, गुरु गोविन्दा,
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?
नहि पाय पांखो नहि, नहि अंग खांखो,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहि देश दुनिआं नहि, दिवान पति, गुरु गोविन्दा
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?
नहि सुन शब्द नहि, नहि धून ध्यानी,
अरजुन वाणी नहि छानी छती, गुरु गोविन्दा,
गोविन्दा ने देश जवा मेरी क्या मति ?

—वही, पृ० १४

अनुभव

नींद नहि पल घडी, शबद में जिन कुं खबरां पडी । टेक
अविगत में कुछ गत नहि पावे, सृष्टि क्युं सांपडी ।
एक पलक में खलक बनाया, अकलित बातां अडी ।। शबद में०
बड[1] के बीज में भर्या सबी थड डाल पात पांखडी,
ब्रह्म बीजक में जगत जमाया, बुभेल कोइ बातडी । शबद में०
लम्बी दोरी खेंचत गोरी, घर फरती गरगडी,
लम्बी सुरता शबद में बांधी, धरे शिर पर पाघडी ! शबद में०
आडी[2] नदीआं नीर भरी वहेती, पंखी ने क्या पडी ?
एक पलक में पार पराजे, नहि बेसे नावडी ! शबद में०
एक शबद तो एसा आवे, वहु सासु बहु वढी,
एक शबद तो एसा आवे, सुनतां सन्मुख खड़ी ! शबद में०
मनभरी माप्यो राम न जान्यो, रावन उठ्यो रडी,
अरजुन गावे वैकुंठ जावे, क्या बातां है बड़ी ! शबद में०

—वही, पृ० १८

अम्मर जोत जलाया रे, अबदु आतमहीरा उडाया ! टेक
अंध अस्मानी अगोचर धरमां, सतगुरु सूर उगाया ।
अबदु आतम हीरा उडाया ।।
आसन तरकुटी अधर अनोपम, तरवेणी तीरमां न्हाया ।
दिल रे मंदिरमां दरशन दीठां, नाम रूप नरखाया ।
अबदु आतम हीरा उडाया !
नाभी नगरमांय गुंज गलन है, प्रेमना पाया रोपाया ।
रोम-रोम वह व्यापिक वामें, सुन शिखर पर आया ।
अबदु आतम हीरा उडाया !
ज्ञान दीपक दिवी देह पर मूक्यो, वन-वन शोध चलाया ।
आबुगिरि गढ भीतर जातां, उनमुन अम्भर आया ।।
अबदु आतम हीरा उडाया ।

---

[1] वरगद, [2] टेढ़ी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनहद वाजा विरोधी रे वागे[1], सुरताए ताल बजाया ।
नरत करी नर नाम अनामी, बक नार सें जगाया ।
अबदु आतम हीरा उडाया !
आतम अरजुन ज्ञान गुरू का, लेकर अम्मर ओडाया ।
भाव बिना भव दुःख न मांगे, प्रेम करी पद गाया ।
अबदु आतम हीरा उडाया !

—वही, पृ० २१

कोई बड़ा बाजीगर आया ! नहि जादु नहि जूठ ।
जगत में अजबी इलम लगाया ! टेक
नहि नोबत नहि नाद नगारा, नटवी नाच नचाया,
नहि मंतर नहि तंतर जंतर, छतरीश[2] राग सुनाया । कोई०
उन मुन एक तंत बनाया, तंत में पंच मिलाया,
सेवा साधन बिन आराधन, कोटिक बन रही काया । कोई०
नहि बुंद नहि बीज चीज बिन जमी असमान जमाया,
नहि सूरज चंदा कु थंभा, अधरोअधर चलाया ॥ कोई०
नहि बादल घनघोर गगन में, अनहद धन बरसाया,
नहि ऋतु तरुवर तिन गूना पेर पेर पाक पकाया । कोई०
क्यां से आवे क्या उड जावे, भूल्या जग भरमाय,
पंडित काजी करे जक[2] झाझी[3], नहि परपंच परखाया । कोई०
एक पलक में खलक बनाया अलख में सकल बनाया,
अरजुन उसमें क्या जग जाने, अकलित खेल खेलाया । कोई०

—वही, पृ० २२

मेरे गुरु बताया गली, से वागन चकला मुकी चली । टेक
चली पवन की ल्हेरी, सुरता-सागरमांथी छली,
पवन गया फिर मिट गई ल्हेरी, महासागर बिच मली । सेवा०
तरुवर में नहिं तंतु जंतु, क्यां[4] से निकली कली ?
मनवा माली बहुत मथे, फल जातां आवी फली । सेवा०
सतगुरु मणि बाग बनाया, बोय पारस पीपली,
कल्पतरु कुं फल आया, क्या करूं आंवा[5] आंबली[6] ? सेवा०
न्हाना धोना लखना पढना, ठाली परपंच टली,
एक अगनी ज्यां प्रगट भई, जंगल की लकडी जली । सेवा०

---

[1] बाजे, [2] छत्तीस, [3] बहुत, [4] कहां, [5] आम, [6] इमली,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कीरतारे क्या खेल मचाया, जग ढंग थापी थली,
पथरा मिट्टी पड्या रह्या, ओर ढीली वस्तु ढली । सेवा०
राम नाम नी[1] उठी गर्जना, भइ घन में बिजली,
अरजुन ज्ञानी सिंधु समाणी[2], आकाश की आभली । सेवा०
जीमिआ जंतर बाजत मोरली, नाचत मुरता खड़ी खड़ी,
अखंड धर्मी घन गुरुदेवा, लगी शिखर पर खरी झडी । टेक
कैसा तमासा नरभर नरखो, देखी कमल में जडी दडी,
अधर तखत पर तपीआ जोगी, बैठा गफामां घडी मढ़ी । जीमिआ०
दशमी बारी उघाड़ी उरमें, जोयो तमासो फरी चढ़ी ।
ओहंग सोहंग सडक उपर, अनहद गाडी गरगडी । जीमिआ०
आदि अनादि अंतर बीच में, वाकी शाखा बडी बडी ।
अपार गिनतां पार न पावे, आठ ठाठ में मणि जड़ी । जीमिआ०
देखो देवलमां देह वैराटे, निर्गुन बातां जरी जरी,
सो भणकी एक शल्या तोडे, मणि नीपजे बडी बडी ! जीमिआ०
शुभ मूरत के शुभ चौघडीआं, नहि आवेगा फरीफरी,
परमेश्वर के पद के पाये लागे, अरजुन लरी लरी ! जीमिआ०
—वही, पृ० २५

मैं तो मेरे जाते, मैं तो मेरे जाते ।
चलो कोई आते, में तो मेरे जाते ॥
मालवे का एक मार्ग, जे आवे ते जाते ।
रंक राय भले थाय, उंच नीच नाते ॥ चलो०
कोई सभी सांज चले, कोइ मध राते ।
दिन रात चले जात, कोइ परभाते ॥ चलो०
कोइ भूख्या भूख्या कोई खांड खाते ।
कोइ लिया लुखा सूका, कोइ घृत पाते ॥ चलो०
भेदु विना भूला पडे, चलो मेरी साथे ।
जंगल में जाना पडे, चोर लूंही लाते । चलो०
आजकाल जाना पडे, कौन थार थाते ।
बडे बड़े भूप गये, महा मदमाते ॥ चलो०
बीत गया वायदा ने[3] तेड लिया ताते ।
अरजुन तो अब चले ज्ञानी पद गाते । चलो० —वही, पृ० २६

भेद भालडी लीआ ढालडी, अरजुन अब नहि डरता है ।
जूठ बात जग में नहि बोलुं, सतगुरु शिरपर रखता है ॥ टेक

[1] की, [2] समान, [3] और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जय राजा को मुवा हुवा जब जीव राजा लइ जाता है।
मुडदा[1] जाता चलकर मशान जाता जीवता नर जल जाता है ।। भेद०
रेयत बैठी राज चलावे, राजा बन बन फिरता है।
सतवादी कुं शुली चडावै, चोर कजीआ चूकाता है ।। भेद०
डबगर वाजे नरघां नाचे, जंतर ताल मिलाता है।
गुनका बैठी गायन सुनती, न्यारा खेल मचाता है ।। भेद०
बिना तोप से भया भडाका, कीडी[2] कुंजर लडता है।
पंखी फद में पड्यो पारधी, शिकार सिंह कु जमता है ।। भेद०
पूर बपोरे अघोर रजनी, रानी गोथा खाता है।
अरजुन बैठा ओर झाझ में, जल में अगनी जलता है ।। भेद०
—वही, पृ० ३१

पढ़े नाम सो पक्का पंडित, पढ़े नाम सो पक्का। टेक
पुरातन सें पंडित काजी पोथी पढ-पढ थक्का।
उत्पत्ति का मर्म न पाया, क्यांसे आया कक्का ।। पंडित०
विना भेदका वेद कुं भणकर[3] झाझी करता जक्का।
हुंपड की हुशियारी रखता, चित्त में खेंचे चक्का ।। पंडित०
कोई कासीकेदार किलावे, कोइ मसीद कोइ मक्का।
आंख विना अडसे वे धाया, खाया धरनी धक्का ।। पंडित०
बिना खबर से क्या तम खोजें ! शब्द सुने सो सच्चा।
चार वेद ने चौदे विद्या, कोट भणे सोई कच्चा ।। पंडित०
अम्मर जोडा रहेगा तेरा पढी ले नाम का नक्का।
मेरी मरदाँ पीओ पीआला, अरजुर छकभर छक्का ।। पंडित०
—वही, पृ० ३४

चौराशी चोगान रान में भेदु विना नर भमता है।
अवन गवन में असंख ऐसा, अरजुन जुग वही जाता है ।। टेक
तरुवर तन अवतार भया, जब जंगल बैठा बसता है।
अघोर निद्रा अंग अंधारा, देही बिचारा दमता है ।। चौराशी०
पशुजात पेदाश भया जब घर-घर उदर भरता है।
नहि रामा नहि माया माणे, अफफल[4] फेरा फिरता है ।। चौरासी०
काग नाग और खग बग पंखी, जइ जंगल में भमता है।
अपरम पापी पडे चौराशी, जीव जन्तु कुं जमता है ।। चौरासी०
मनुष्य देह मुलदार मिला, जब गुरु बिन गोथां खाता है।
अमृत जल तेरा मुखमा आया, क्युंकर मुखमां से
भुकता[5] है ।। चौरासी०

---

[1] मुर्दा, [2] चींटी, [3] पढ़कर, [4] निष्फल, [5] रखता है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भेदु विना नर भगती करता, क्युं कर पार उतरता है।
मिली नाव ने नहि खेवटीआ, अधर जल में डुबता है ॥ चौरासी०
जन्म मरण में अखंड आत्मा, अरजुन फिर अवतरता है।
सात वार एक सूरज है, फिर शनिश्चर गिनता है ॥ चौरासी०

—वही, पृ० ३६

नगर नाम निशान बंदा, ए ही शबद घर जाना। टेक
नहि ज्यां[1] देवा, नहि ज्यां सेवा, नहि गुरु और ज्ञाना।
नहि पोथी पुराना पढना, नहि काजी कुराना ॥ बदा एही०
नहि ज्यां दरिया[2], नहि ज्यां डुंगर[3], नहि बस्ती वन राना।
दुर देश के नाम नसीका, नहि राणा दिवाना ॥ बंदा एही०
नहि ज्यां चंदा, नहि नवखंडा, नहि भूमि सूर माना।
नहि गगना पवन और पानी, नहि मुक्ति मेदाना ॥ बंदा एही०
सरग नरक नहि वैकुंठ वासा, नहि ठाम ठिकाना।
कोध काल कष्टी नहि करनी, नहि भक्ति भगवाना ॥ बंदा एही०
आद अन्त नहि उतपत प्रल्ले, नहि जुग जुग जमाना।
निर्गुन शिर्गुन नहि दो देवा, आपोआप पिछाना ॥ बंदा एही०
बंदा बेठा बंदगी कर ले, बिन बाचा गुन जाना।
अरजुन सूता सुनम्हेल में, नहिं आना नहि जाना ॥ बंदा एही०

—वही, पृ० ३७

सत गुरु नाम निशान बतावे, अंधा नर चल जाता है।
ओर मथन मत करना बन्दा, भेदु विना नर भमता है। टेक
रहेणी रहेता साहेब मिलता, बालक रहेणी रहेता है।
बालक मरता फिर अवतरता, वेद पुराणे कहेता है ॥ सत०
रूप निहाले राम मिले तब मेघ रवि दरशाता है।
कुरान पुरान का कोट मचावे, पलक खड़ा नहि रहेता है। सत०
पंच धूप की धुणी जलाता, तपीआ तापे तमता है।
सूका काष्ट में जैसा जन्तु, सघली देही जलाता है ॥ सत०
न्हावे धोवे पदवी पावे, मीन गंगानीर न्हाता है।
दान पुन में देव मिले तब, दरिया मोती देता है ॥ सत०
सुरता सुत में म्हेल मचाता, मनवा ध्यान लगाता है।
स्वप्ना में सुखपाल मिले तब, दुनियां क्युं दुःख सहेता है ? सत०

---

[1] जहाँ, [2] समुद्र, [3] पहाड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जात जात का रंग मिलाया, जात जात मिल जाता है।
निरांत नाम का अरजुन चेला, अंग में अंग मिलाता है ॥ सत०

—वही, पृ० ३७

दूर से दूर मेरा देश है, परा पार से पारा हो !
गगन घटा अवनी नहिं, नहि नवलख तारा हो ॥ दूर से०
बस्ती नहि वरण चारकी, नहि छतरे अढारा हो।
एक वाणी वलगे नहि, भारत भव भारा हो।
सोहं शब्द सुरता नहि, नहि मनवा विचारा हो ॥ दूर से०
चतुरे बनाया चारनी, कचरा मिट्टी चारा हो।
जैसा जगत जूदा हुआ, रानी मूरख न्यारा हो ॥ दूर से०
सूरज चले महा सुन में, आसे पासे उजारा हो।
रजनी सूरज नहि साँपडे, आदे अंते अंधारा हो ॥ दूर से०
बाल जुवानी जरा नहि, नहि वार क्वारा हो।
उतपत अंत प्रल्ले नहि, नहि हे जुग चारा हो ॥ दूर से०
अरजुन वाणी उचरे, बावन घर बहारा हो।
सतगुरु मेरा सुनत, दूजा क्या बुझे व्हेरा हो ॥ दूर से०

—वही, पृ० ४६

क्युं नरखेगा राम ? मन तुं क्युं नरखेगा राम ? टेक
बिना नामका नगर बसाया, अधर धरा एक धाम ॥
नवलख तारा नहिं उजीआरा, गगन की बीच में गाम ॥ मन तुं०
जामनी क्युं कर दिनकर दरसे ? दिन क्युं दरसे जाम ?
तुरीयातीत में तन नहिं पहोंचे, तन मन बिना न काम ॥ मन तुं०
बड़ा हुआ कोई हकीम, क्युं कर दे आकाशे डाम ?
अनहद केरा अंत न आवे, क्यां ठरावे ठाम ? मन तुं०
परजापत का बोज उठावे, गर्धव जात गुलाम।
जइ उकरडे[1] उदर भरतो, नीमकलूण हराम ॥ मन तुं०
नहि है काया नहि है, माया नहि हाउ नहि याम।
नहि रूप ने नहि है रेखा, नहि धोला[2] नहि श्याम ॥ मन तुं०
मेष राश में जन्म धर्यो है, अरजुन मेरा राम।
राशी आदे हे अविनाशी, कैसा धरावुं नाम ॥ मन तुं०

—वही, पृ० ४९

---

[1] घूरा, [2] श्वेत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोध

पाउ पलक में मरता, मन तुं[1] क्युं मगरूबी करता । टेक
चना के काजे मन ललचा कर, मर्कट मूठी भरता ।।
पकड गले में फांसा डाला, घर घर फेरी फरता ।। मन तुं०
महासागर में मन मस्ताना, बोत ही जलचर चरता ।
जमरा माछी जाल चलाता, ओर मगर मुख पडता ।। मन तुं०
राजा होकर रैयत ऊपर, बोनी गुमानी धरता ।
काया पडी पस्ताचा साकुह, गद्धा थई अवतरता ।। मन तुं०
दो दिन का देखाव जगत का, ताबुत जल में तरता ।
मात मात का रूप बताता, बहेता जल में डुबाता ।। मन तुं०
मधुर मोज करे मन भावे, फुल गुलाबी पुलता ।
सूर आथमें खरी पडेगा, खील्या फुल सब खरता ।। मन तुं०
दो पडीआं की बीच में आया, देखो दाना दलता ।
बिल्ली आगे उंदर[2] खेले, अरजुन देखी डरता ।। मन तुं०

—वही, पृ० ८५

सुरता घरमें सुमरन करना, ध्यान गुरु का धरना । टेक
गुरू बिना नर ज्ञाना कैसा ? शबद बिना क्या सुनना ?
नाव बिना क्या नदी उतरना, पाउं बिना क्या फिरना ? सुरता०
फौज बिना क्या करे फिसारा, बान बिना क्या लडना ?
हाम बिना क्या हिंमत चलना ? ढाल बिना क्या धरना ? सुरता०
रवि बिना क्या उर उजीयारा ? तुंबी बिना क्या तरना ?
भेदु बिना क्या भरम मिटावे, ठाम बिना क्या ठरना ? सुरता०
भेदु बिना बोत भूला भटकता, प्हान[3] पुजा क्या करना ?
गुरु-गंगा घर बेठा म्हाना, क्या काशी में फिरना ? सुरता०
सुरता तीर तरवार तकाबी, सुन-शिखर गढ चढना,
दिया संदेश नहिं अंदेशा, पुरा गुरु से लडना ।। सुरता०
सर्पबाल के शिकार करते, माया खाय मस्ताना ।
गरुड बाल के प्रेम रस पीते, अरजुन नीर अस्माना ।। सुरता०

—वही, पृ० ८७

उडायो रे । मूढ़ने ऐसो फाग उडायो । टेक
बालपना में बीत ही खेल्यो, जुवानी में अभिमान आयो ।
वृद्धापना में ध्रुजवा[4] लाग्यो[5], तोए नहिं हरिगुन गायो ।।
मुरखे आखो जनम गुमायो ! मूढ ने ऐसो फाग उडायो । उडायो रे०

---

[1] तू, [2] चूहा, [3] पत्थर, [4] कांपने, [5] लगा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रात दिवस धंधा में मचायो, रंगित म्हेल बनायो।
नहि दान दीधां, नहि खान पीधां, कंजुस बोत कमायो।
नहिं पाइ संग में आयो ! मूढ ने ऐसो फाग उडायो। उडायो रे०
पंड में पतंग जीव व्होत फुलायो, दीपक रूप देखायो।
दिल मांय जाने दोस्त हमेरा, दीप के वाथ भीडायो ॥
पंछी[1] आपे अग जलायो ! मूढ ने ऐसो फाग उडायो ! उडायो रे०
मास बसंत को मर्म न पाये, जूटी रमत रमायो।
गुलाल भूलायो मेरा लगायो, आखरे रोली जलायो।
फरी पीछो चोर्याशी आयो।
मूढने ऐसो फाग उडायो। उडायो रे०
शब्द सरोदा को सूर मिलायो, ध्यान में ढोल बजायो।
अरजुन जोगी गुलाल उडावे, संते बसन्त सुनायो।
मुरख कछु मरन न पायो, मूढ ने ऐसो फाग उडायो। उडायो रे०

—वही, पृ० ९९

सामान्य

मैं पंखी बीन पांख के, पर है सतगुरु ज्ञान।
मत्र पवन के आसरे, अरजुन उडु आसमान ॥२६
अनादि अरजुन दोय है, एक कवि किरतार।
सुरत नुरत का फेर है, अंते एका कार ॥२८
मेरा नाम कुं में जपुं, दूजा नहिं हे देव।
सुरता अरजुन थीरता, मुरता सतगुरु सेव ॥३०
देख अरजुन एक उगीओ, सबके शिर पर सूर।
अंधाकु अंध कोप है, पडियासे बहु दूर ॥३१
मणि अरजुन देखा नहीं, करता माणेक मूल।
कबका नामे काटलुं, कहे भारत मां भूल ॥३२
मांय मर्द मस्तान है, रामजनी का वेश।
छेला बन के छेतरे, अरजुन दोनुं देश ॥३३
काया कसोटि जीभ की, सोनुं शब्द घसाय।
अरजुन पारख चोकशी, वस्तु अमुल बसाय ॥३४
दिया दधि में डूबकी, मोती मिला अमूल।
मन मेरा जाणे सही, क्यू कर भाखु खूल ॥३५
दिल में दरीओ उलटयो, डूब्यो सब संसार।
नाम नाव के आशरे, अरजुन उतरे पार ॥३६

---

[1] बाद में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञान गाय गुरुदेवकी, अरजुन आंचल चार।
बछरा धावे दूध कुं, शणगा शोणित धार ॥३७
वरख वधे धातु घटे, जुग जुग जुदा जाय।
अदल अनादि एक है, अरजुन क्यूं बदलाय ॥३८
संत हमेरा शेठीआ, कबज किया कस्तूर।
आई बास अरजुन कुं, बिना दिठे दुःख दूर ॥३९
गाय खाय[1] छे घास कुं, घृत निपावे गाय।
अरजुन तो जुगते जमे, गाय सो लुखा खाय ॥४०
दिल में रखता दीनता, मुख में रखता राम।
अरजुन जपता नाम कुं, वाका में हुँ गुलाम ॥४१
——से नेन निधा करे, सहस्त्र उगे सूर।
अरजुन गज घोडे चडे, देश हमारो दूर ॥४२
रवि कवि दोनुं करे, सुन अरजुन उजाश।
देशन देखे देव का, नेना बिना निराश ॥४३
दिन उगे दुग्धा धरे, रेन सुवे संसार।
अरजुन जुग जुग जागता, निरांत होय निरधार ॥४४
अरजुन संत बसंत है, गावे राग अनुराग।
नहि जोता होली जले, जग खेले बेफाग ॥४५
अरजुन तरुवर उगीउ, काम करी विश्वास।
मूल काप्या विन नहि मिटे, उग्या को अभ्यास॥४६
घट में अर्जुन घर जले, चौदिश लागी ल्हाय।
किस वस्तु कुं कहा डीए, किसकुं दिए जलाय ॥४७
नास्तिक नर नमता नहि, आस्तिक उडी जाय।
दोनुं रस्ता दूर है, अरजुन क्युं पहोंचाय ॥४८
दीप ढुंढे दीप सें, अंधा ढुंढे अंध।
अरजुन जन्म एले[2] गयो, दिल दरवाजो बंध ॥४९
बिन बाचाकी बात है, क्या बुजे बंधार।
अंग बिना अरजुन है, क्या नरखे अंधार ॥५०

—वही, पृ० १२२

बोलो बे बिसमिल्ला, पकडो पल्ला -ए- अल्ला। टेक
राम रहेमान का रख ले रोजा, चलो मसीदे मुल्ला।
सत्त नाम का निमाज पढ ले, अंतर बीच रसुलिल्ला ॥ पकडो०

---

[1] खाती है [2] व्यर्थ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गौतम नारी है व्यभिचारी, नाहक होइ अहल्या ।
रामचरन का परस भया है, सेजे तिर गइ शल्या ।। पकडो०
राम सभा में साकूट बैठे, कौन कटेगा गल्ला ।
देवदर में उदर जई बेठा, क्या बल चलता बल्ला ।। पकडो०
आज काल में मरन मारगे, चल गये भूपत भल्ला ।
महमूद सरखे गये मशाने, को दाटा को जल्ला ।। पकडो०
मेरा तेरा मत कर प्यारे, जूठा है सब जल्ला ।
गागर कानी, भरीआं पानी, खाली रोता खल्ला ।। पकडो०
खुदा की बंदगी कर ले बंदा, मानो बात मुसल्ला ।
अरजुन ज्ञानी नाम पिछानीं, आदे अंत अचल्ला ।। पकडो०

—वही, पृ० १३२

कुंडलीआ

गंगा बन में व्हेत है, मील गइ साहेर संग ।
गंगा म्हातम मीट गयो, भक्ति हो गई भंग ।।
भक्ति हो गई भंग, भव सागर में मलीयो ।
आरे आप्यो आज, पूर में पीछो पडीओ ।।
अरजुन कहेता यार, रह्या सतगुरु के संगा ।
बन में व्हेती गंग, नाम है निर्मल गंगा ।।
ज्ञानी सुन ले ज्ञान कुं, नहि अवनी आकाश,
अखंड एक दीपक जले, त्यांही हमेरा बास ।।
त्यांही हमेरा बास, श्वास का नहीं शरीरा,
जूग जूग का जोग लीया ज्युं दास कबीरा ।।
अरजुन कहेता यार, नरख ले नाम निशानी,
नहि अपनी आकाश, ज्ञान कुं सुन ले ज्ञानी ।।

—वही, पृ० १३९

आज काल जाना मशाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ।
स्हांज पडे सबी फुल करमाना, कायकुं फुलकुं फुलाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ।।
आदि ने अनादि घर घोर में बंधाना, कायकुं हवेली चणाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुंभार क्या घड्या घाट माटी में मिलाना, लक्ष कोटि दटाना जलाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ॥
बडे बडे भूप गये राजपूत राना, रंक राय वैद्य वृद्ध न्हाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ॥
सतगुरु के चरणे नमी राम नाम गाना, अरजुन तुं भूल मत खाना ।
तुं चेत मन, आज काल जाना मशाना ॥

—वही, पृ० १५८

झूलणा छंद

सार संसार में पार पिछान ले, जान ले जगत क्यां जान समात है ।
ज्ञान सूरभान से जान अज्ञान तुं, कौनसा वाट में उतपति थात है ।
दुःख देंदार में ढुंढता चार में, पार अपार का पार क्युं पात है ?
सुन बे सुन अरजुन कौतक कहे, ल्हेर में ल्हेर साहेर समजात है ॥

—वही, पृ० १५९

३

आश कर आश दीन दास उपासना, एक अविनाश कैलास में खेलते ।
उठीओ सूर दूर देश में देख ले, पेख ले पूरनूर फिजर में फेल ते ॥
ज्ञानी के गाम में नाम मुकाम में, संत शूरा पुरा रंग में रेलते ।
सुन बे सुन अरजुन अंधा हुआ, घाणी ताणी धणी विनो बेल ते ॥

—वही, पृ० १६८

२२

मृग कि मीटी में कुच्छ मिला नहि,
नाभिकमल से कस्तुरी पाया ।
गौरी के गोस में दोष विशेष है,
घृत में जगत जीवत जाया ॥
खार विकार अपार दधी मध,
मोतन पर्वत माल पकाया ।
अर्जुन वाणी में बीत खचीत है,
निर्गुन सें निज नाप निपाया ॥

—वही, पृ० १८१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लविंगलता छंद

कंथ कहेत कवी किरतार सुनो,
तु ने एक अती अवगून कियो।
निच पापी की पाप प्रगट भयो संत,
साधु की पास छुपाइ गयो।
कट कंजुस कुं धन धाम दियो,
दार दातार कुं दुःखियार कियो।
अरजुन ऐसो अवगुन कियो,
तेरी जिक्र नहीं ताकुं जीभ दियो॥

—वही, पृ० १८५

मनहर छंद

२०

काया में कीतरि बसे ताकुं नहीं जानी शके,
मुरख समज बिन मुक्तगति भागता।
चंद्र मणी चकोरनुं चित्त हे खचित पण,
कोई काले हजुर में हस्त नहि लागता।
प्रेम करी पतंगीयुं दीपक में पडे कदी,
दीपक मिले दिवाना तुर्त तन त्यागता।
कहे अरजुन सुन भुक्तगति मागे कौन।
अहोनिश जगत में जुगोजुग जागता॥

—वही, पृ० २१७

पद १—भजन

वंक नाल रस पिया, योगेश्वर वंक नाल रस पिया। टेक
पिया अमीरस अमर भया, त्रिपुटी तकिया किया। योगेश्वर० १
तृषा तन में आष पिवन की, ले लगनी सें लिया,
मन मगन भया चडी खुमारी, त्यारे रोमरोम रम रह्या॥ योगेश्वर० २
नाभिकमल में उलटा पवना, डेरा दिल पर दिया।
खट चक्र भेदिने चडिया, जब घर गगन में किया॥ योगेश्वर० ३
अधर तख्त पर सतगुरु मेरा, नुरत सुरत ने लिया।
नूर निरंजन नजरे निरख्या, त्यारे दरस देदार भया॥ योगेश्वर० ४

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अणी अगर पर आसन करीने, भजन करे भय गया।
दास अरजण संत जीवण चरणे, राम रस भरीने पिया ॥ योगेश्वर० ५

—भजन सार सिन्धु, पृ० १४

मनोहरदास

पद १—राग जंगलो

एक निरंजन सब जग स्वामी सच्चिदानन्द । एक० टेक
जाकी शक्ति प्रताप तें रचत बिरंची लोक ।
विष्णु पालत हरत शिव, आप सदा अशोक ॥ एक० १
सूर्य प्रकाशत सकल कों, अमृत पोखत अंन ।
मेघ वृष्टि बहु करत है, सबको देत अनंत ॥ एक० २
पवन जीवावत प्रान कों, अग्नि पचावत अंन ।
पान करावत जल अवनि देत, विविध भोजन्न ॥ एक० ३
जाकि अविद्या शक्ति में, देव मनुज पशु जाति ।
आवागमन करते सबे, बिलसत है बहु भाँति ॥ एक० ४
देखत बोलत सुनत सब, समज करत बहु काम ।
पावत सब शुभ अशुभ फल, भटकत है बहु धाम ॥ एक० ५
आप सदा निर्लेप है, सबको साक्षी रूप ।
सचराचर व्यापक अजर, अमर अनंत अनूप ॥ एक० ६
सो स्वरूप जो समझ ही, भेद रहित अविनाश ।
मनहर खेलत मग्न हो, छूटत माया पाश ॥ एक० ७

—मनहर पद, पृ० ७९

पद १०—कवित, राग विलावल

ब्रह्म रूप गुरु नर मुख सें कहत पुनी,
कछु न लहत कैसो गुरु ब्रह्म मानिये । टेक० १
आप भिन्न ब्रह्म महे ब्रह्म सो बतावत है,
ऐसो गुरु जीव अनुभव हीन जानिये । ब्रह्म० २
आप तो अभेद लहे, शिष्यन कों भिन्न कहे,
ऐसे दुगाबाज हीं को, ज्ञानीन बखानिये ॥ ब्रह्म० ३
ज्ञाता ज्ञेय भिन्न लहे, ज्ञेय रूप ताको नही,
प्रगट प्रमान ऐसो, कैसे न प्रमानिये ॥ ब्रह्म० ४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रिविध वृत्ति को ज्ञान, विषय में है प्रमान।
तैसे चिद कहे वाकों, जुठो पहचानिये ॥ ब्रह्म० ५
त्रिपुटी को ज्ञान पशु, आदि सब जीवन में।
तामें गुरुताई न काहू की मन आनिये ॥ ब्रह्म० ६
सोई गुरु ब्रह्म लहे, ब्रह्म सें अभेद आप।
चिद धन व्यापक लहीये जाकी बानियें ॥ ब्रह्म० ७
भय को मिटावे माया पाशतें छुडावत है।
मनोहर ऐसो सद्गुरु शिष्य जानिए ॥ ब्रह्म० ८

—वही, पृ० ८८

पद ११

कोइ कहे ज्ञानी जो सकल व्यवहार जानें,
कोइ कहे सब शास्त्र जाने सोई ज्ञानी है। कोइ० १
कोइ कहे ज्ञानी काल भूत अरु भावी जाने।
कोइ कहे ज्ञानी करामतहू को खानी है ॥ कोइ० २
कोइ कहे ज्ञानी ज्यों सकल जग माने सोइ।
बोलत विविध ऐसे मिथ्यामति ठानी है ॥ कोइ० ३
ब्रह्म को लहे अभेद जैसे बोले चारो वेद।
मनोहर सोइ सत्य ज्ञानी की निशानी है ॥ कोइ० ४

—वही, पृ० ८८

पद १३—राग काफी

कौन देव तोय पालत है नर कौन देव कों धावत है। टेक
नाथ विमुख नित्य फिरत दिवाने, कल्पित घाट बनावत है ॥ कौन० १
सकल इन्द्रि को प्रानपति सोइ, वायुरूप श्रुति गावत है।
सकल इन्द्रि के देव वायु सें, उपजत वांही समावत है ॥ कौन० २
सोइ वायु सब जग में व्यापक, हरि को प्रान कहावत है।
सोइ हरि सब जग को पालक, सबको साक्षी सोहावत है ॥ कौन० ३
बाहर भीतर सब घट व्यापक, सकल वस्तु उपजावत है।
सकल जीव का जीव सोइ प्रभु, सबकों ओइ जीवावत है ॥ कौन० ४
ता बिन कोइ देत नहिं तोकुं, लेन कोइ नहि पावत है।
उदर पिशाच मूढ लही तोकुं, जड की लार भ्रमावत है ॥ कौन० ५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देवदत्त धन तनकों कैसें, करी पाखंड गमावत है।
मनोहर मनुज जन्म वे कीमत, वेर बेर नहि आवत है।। कौन० ९

—वही, पृ० ८९

पद २५

कहा फूल बैठे होजी तकिया लगाय। टेक
इह तन सुन्दर थीर न रहन को, छिन छिन छिजत जाय। कहा० १
स्त्री धन पुत्र मित्र यम मुखतें, को नहि सकत बचाय।। कहा० २
रथी अतिरथी सब द्वारा रहि ठाडे, यातें कछु न बसाय।। कहा० ३
हरि बीन हरि न सकत भय भव को, सकल देव सुर राय।। कहा० ४
तन धन को अभिमान विशार हुँ, चिद व्यापक उर लाय।। कहा० ५
सच्चिदानन्द ब्रह्म सम जानत, ताकों काल न खाय।। कहा० ६

—वही, पृ० २५

पद ४१

हम खेलत नाथ के संग, आपन दूर कछु। टेक
कबहु संयोग में कबहु वियोग में, कबहु बने एक रंग।
कबहु खीयाल में कबहुक हाल में, मस्त बने बेढंग।। आप० १
निकट न योग में दूर वियोग में, सम व्यापक है अभंग।
जहां देखे तहां ओइ विराजत, करत न संग न जंग।। आप० २
रंग बेरंग में भंग अभंग में, व्यापक और असंग।
चौद लोक कूं ओइ खिलावत, सबकूं देत उमंग।। आप० ३
सात्विक वृत्ति सें संत लहत है, जाकूं प्रीति उछरंग।
अज्ञ पशु कबु जानत नांही, जैसे कोट पतंग।। आप० ४
ऐसे नाथ सें बाजी करें हम, ज्यों जल और तरंग।
सच्चिदानन्द ब्रह्म में आपा, मेंटी के खोवे अंग।। आप० ५

पद ५५

एसो नर तोकूं हरीने बनायो, काम वश विमुख फिरत वहो रायो। टेक
साक्षी सकल घट नाथ विराजहीं, ताकूं न ढूंढन धायो।
मूरख रंजन घाट बनाय के, पंथ चलाये फुलायो।। काम० १
निज स्वरूप प्रीतमा में जगत से, कोइ सुन्यो नहि पायो,
आप शुद्र बनि सबकूं बिगाडे, पूर्व तंत्रहु गमायो।। काम० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कलियुग रूप आप बनि बैठो, वेदकूं चहत डुबायो ।
भोग सदोष चपल जीवन लीये, महा अपराध कमायो ।। काम० ३
भौम कूं इज्य अकल खर की लहे, कृष्ण जु श्रीमुख गायो ।
तेसें ही बनि पूनी वेसें ही लोग कूं, करि कै चाम पुजायो ।। काम० ४
शंकर शरन बिना कोन बूझहीं, उपनीषद ज्यों बतायो ।
सच्चिवानन्द ब्रह्म सोइ उलटीके, नाहक देह बहायो ।। काम० ५

—वही, पृ० ११३

पद ५६—राग काफी होरी

बोली पढ पंडित बनि आयो, आयोरी,
अमीत अभिमान बढायो । बोली० टेक
काम क्रोध जीतन की विद्या, बूझत काम बढायो ।
धन के कारन करत खुशामत, नर सूकरपें धायो ।
शास्त्र को नाम लजायो ।। बोली पढ० १
नारी को तन यौवन देखत, मरकट ज्यों बोहो रायो ।
नेननि जारे नाचत कूदत, बोध बचन बिसरायो ।
करत उनको मन भायो ।। बोली पढ० २
लोग मिलाय व्यास बनि बेठो, मूछ ही ताब चढायो ।
सबही रिझाय कै धाम धुमसें, पुनि ते सोइ घर आयो ।
नेक नही मन समुझायो । बोली पढ० ३
त्यागी को नाम सुनत मुख मोडत, दोडत जहाँ ललचायो ।
नाथ स्वरूप न आवत उर में, दाम चाम लपटायो ।
जैसो बंग ध्यान लगायो ।। बोली पढ० ४
वेद बचन विचार करी मन में, सद्गुरु शरण न आयो ।
सच्चिदानन्द ब्रह्म बिन जानें, समझ बूझ भटकायो ।
काल के पाश बंधायो ।। बोली पढ० ५

—वही, पृ० ११४

पद ५८

जाने बिन नर आप भुलायो, भुलायो ।
फिरत ज्यों बैल बगायो ।। जाने० टेक
जैसे मृगजल देख कोइनर, बिन समुझे ललचायो ।
दोडत दोडत पांउ थके पुनी, बुंद हाथ नहि आयो ।
फेर दिल में पछतायो ।। जाने० १

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसे तोता स्याल करत ही, लकडी फीरत उलटायो ।
पांउं न छोडत भय के लीने, आप ही आप बंधायो ।
पुरुष ने आन छुडायो ।। जाने० २
तेसे निज स्वरूप सें उलटी, विषय वृत्ति पर धायो ।
चार खाण में भटकत भटकत, अजहु पेट न भरायो ।
पंथ को पार न पायो ।। जाने० ३
तो पुनि सद्गुरु शरण न आवत, नहि कछु मन शरमायो ।
सच्चिदानन्द ब्रह्म सें भडकत, ज्यों हेवान हरायो ।
फेर घर अपुने न आयो ।। जाने० ४

—वही, पृ० ११५

पद ११५

बोले श्रुति बडी तुमहीं पुकारी, बूझो बूझो इमानी यार रे । बोले० टेक
कर्म सकाम को दाम प्रगट है, नरक लोक का द्वार रे ।। बोले० १
करत मनहीं सो छीन में पाकीजे, संग बिनां करनार रे ।। बोले० २
गुरु के शरन में जाके सगुन सो, गावे हरि एकतार रे ।। बोले० ३
थिर मन वन्य के ध्यान लगावहीं, पावे विभूति सार रे ।। बोले० ४
सच्चिदानन्द ब्रह्म रूप बनी पुनि, पावे माया पार रे ।। बोले० ५

—वही, पृ० १५१

काजी अनवर मीयां 'ज्ञानी'

भजन ५

साधु आतम सिद्धि करो

साधु आतम सिद्धि करो, सभी सिद्धि को तम बिसरो ।। टेक
अग्नि खावे अग्नि में न्हावे, अग्नि में करे पथारी रे भाइ,
अग्नि होकर अग्नि में मिल जाय फिर निकले सिद्ध भारी ।। साधु० १
जल में घुसकर कोरे निकले, जल पर चलने लागे रे भाइ,
जल में जाकर जल बन जावे फिर जल में से जागे ।। साधु० २
पवन पै चाले पवन पर बैठे पवन पर अद्धर सोवे रे भाइ,
पवन में मिलकर पवन हो जावे फिरकर परगट होवे ।। साधु० ३
मिट्टी में मिलकर मिट्टी हो जावे, मिट्टी बीच समावे रे भाइ,
यहाँ समावे कहीं जा निकले फिर यहाँ पर आवे ।। साधु० ४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आकाश में जा अलोप हो जावे जड न रहेवे काया रे भाइ,
शस्त्र कोई चले नहीं उस पर तब वो सिद्ध कहाया ।। साधु० ५
एक शरीर के अनेक बनावे, ज्यां धारे वहाँ जावे रे भाइ,
जो कुछ मोंसे बचन निकाले, ओहो तुरत हो जावे ।। साधु० ६
तब हम उसको सिद्ध विचारे और सिद्ध सब खोटो रे भाइ,
दुनिया भीतर ढोंग चलावे बात बनावे मोटी ।। साधु० ७
तीन काल की बात बतावे, चौदे लोककी जाने रे भाइ,
अपनी काया अमर राखे, तब सिद्धि परमाने ।। साधु० ८
रिद्धि सिद्धि छोड के संतो, आत्म ज्ञान विचारो रे भाइ,
अपने स्वरूप को आप पिछानो और अपना भव तारो ।। साधु० ९
जन्म मरण फिर नहीं है संतो, ज्ञानी कहेते वाणी रे भाइ,
इस पिंजर से जिस दिन छूटे, फिर नहीं आवे प्राणी ।। साधु० १०

—अनवर काव्य, पृ० ६

भजन १४

तेरा भेद सभी न्यारा

तेरा भेद सभी न्यारा तेरे बिन नहीं कोसे यारा । टेक
किसी के तहीं तुं कुछ समजावे किसी को कुछ बतलावे रे भाइ ।
किसी के तहीं कुछ और कहे तुं करता अपना धारा ।। तेरा० १
एक लाख चौबीस हजार पेगंबर थे तुज प्यारे रे भाइ ।
कभी जादे तुं जाने पण सब सबके रस्ते न्यारे ।। तेरा० २
सबसें छेल्ले नबी महमद तेरी तरफ से आये रे भाइ ।
सब दीनों को मनसुख करके तेरे हुकम सुनाये ।। तेरा० ३
चौबीस तीर्थंकर जैनी हो गये उनका ओर था खासा रे भाइ ।
एकसो आठ अवतार कहा गये उनका जूदा तमाशा । तेरा० ४
ज्ञानी आरफ और वेहवारी शरइ सुफी सालीक रे भाइ ।
तरेह तरेह के भेद किये तें तुं है सबका मालीक ।। तेरा० ५
वलीउं को कुछ ओर ही सुझा, आशकों का रंग दूजा रे भाइ ।
ज्ञानी तें सब कीये तमाशे भेद कीने ना बुजा ।। तेरा० ६

—वही, पृ० १५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भजन १८

गुरु की महिमा कहा न जावे

ज्ञानी गुरु गुण गावे रे गुरु की महिमा कही न जावे जी । टेक
गुरु की महिमा कही न जावे, गुरु गुण महा भारी रे भाइ,
गुरु हमारा मालक मौला, गुरु का मैं भिखारी ॥ ज्ञानी० १
गुरु से और कोई बडा न जानुं ज्ञान गुरु मन धारूं रे भाइ,
तन मन धन कर गुरू को अर्पण जीव गुरू पर वारूं ॥ ज्ञानी० २
गुरू की सेवा करूं मैं निशिदिन गुरू के चरण पखालुं रे भाई,
गुरू हुकम के आधीन होकर बाट गुरू की चालुं ॥ ज्ञानी० ३
गुरू ने जो कुछ ज्ञान बताया मन में दृढ़ कर राखुं रे भाई,
गुरू बचन को निश्चे मानुं और न दूजा भाखुं ॥ ज्ञानी० ४
गुरु पीर मुरशद को जानुं और न दूजा कोइ रे भाइ,
जो गुरु मुजको ज्ञान बतावे, सतगुरु मेरा सोइ ॥ ज्ञानी० ५
गुरू की नात और जात न देखुं, गुरू के देखुं गुण को रे भाइ,
जो गुरु रव को समजा होवे और समजावे भुज को ॥ ज्ञानी० ६
गुरू के अवगुण कभी न देखुं, उसमें मैं क्या जानुं रे भाइ,
अपनी बुद्धि ओछी समजुं, गुरू कहे सो मानुं ॥ ज्ञानी० ७
मडा ज्युं होवे जीतुं के वश युं, गुरु वश हो जाउं रे भाइ,
चाहे मारे या जीता छोडे मैं सब में सुख पावुं ॥ ज्ञानी० ८
जो कुछ करे हुक्म गुरू मुज पर, उस पर शीष नमावुं रे भाइ ॥
गुरु से कुछ अंतर न रक्खुं गुरु हाथ बेचावुं ॥ ज्ञानी० ९
गुरू बिना कभी न पावे नुगरा मूढ बिचारा रे भाइ,
ज्ञानी को जब सतगुरु मिलाया, भेद बताया सारा ॥ ज्ञानी० १०

—वही, पृ० २१

भजन २३

अजब बना एक तारा

साधु अजब बना एक तारा हो जी,
जाका अलख वजावनहारा, मेरे संतो । अजब० टेक
साधु सुरता का तार नुरत की है खुंटी,
वामे सोहं शब्द जणकारा, मेरे संतो । अजब० १
साधु संत का है तुंबा सुखमण की है नाली,
वामें निश्चे नखी को समारा, मेरे संतो० । अजब० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साधु शील की खाल संतोष की मेखां,
वामें ज्ञान घोडी का सहारा, मेरे संतो० । अजब० ३
साधु भजन का रंग भाव की है कलगी,
जामे हरि जनने ज्ञान विचारा, मेरे संतो । अजब० ४
साधु तार मिला के बजावन लागे,
बाजा तुंही तुंही का रण कारा, मेरे संतो । अजब० ५
ज्ञानी इस ही राग में मगन होइ रहेते,
पीते प्रेम रस मन धारा, मेरे संतो० । अजब० ६

—वही, पृ० २९

भजन २५

हुवा मन मस्ताना

सुरत हमारी छेल छबीली, मनवा हमारा मस्ताना ।। टेक
सुरत हमारी शिखर चडी ओर,
देख अलख दरबार, हुवा मन मस्ताना ।। १
नव दरवाजे बंध किये ओर,
दशमा खुल गया द्वार, हुवा मन मस्ताना ।। २
पाँच इन्द्रि को बस कर लीनी ओर,
गगने चडाया तार, हुवा मन मस्ताना ।। ३
ज्ञानी आपा बिसर गये और,
देख लिया दिदार हुआ मन मस्ताना ।। ४

—वही, पृ० ३०

भजन ३५

क्युं रहेता गाफिल

समज मन मेरा रे क्युं रहेता गाफिल ?
कोइ तेरे जब काम नहीं आवे, आव बने मुश्कल । समज० टेक०
जंतर मंतर दोरा धागा ए है, सब ठग विद्या,
सच्चा मुसलमान होय तो प्यारे ढुंड कलमे को कल ।। समज० १
माल खजाना काम नहीं आवे, मालक की दरघा में,
जमडा तुम को लेने आवे, घडी न जावे टल ।। समज० २
जो कुछ तुम को करना होवे करले आज घडी में,
इस काया का नहीं भरोसा, आज पडे के कल ।। समज० ३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हाथ से नेकी मुख से नेकी, पाउं से नेकी कर जा,
ए सोदा तो मुफ्त है मिलता, जब तक है हलचल ।। समज० ४
ज्ञानी तुम दुनिया में आके कुछ तो सुरत सभालो,
सुरत जो चुका बाजी हारा, निकल गइ वो पल ।। समज० ५

—वही, पृ० ४४

भजन ३६

मत हो तुं मगरूर

समज मन मेरा रे मत हो तुं मगरूर,
जो मगरूरी आयगी, तुजको होवेगा हक सैं दूर । समज० टेक
गरीब आजीझ खाकी पुतला तुं है बहोत झइफ,
ऐसी गरीबी याद करके, रहे तुं रब सें हजुर ।। समज० १
हरदम हक्की याद में रहेना, कोइ घडी मत भुल,
सांसो सांस तुं नाम समर ले, मों पर बरसे नुर ।। समज० २
आखर तो मरना है तुज को, गाफील मत रहे यार,
गोर अंधारी भीतर तुजको, जाना होगा जरूर ।। समज० ३
वहाँ तेरा कोइ संग न साथी ना मुनस गमख्वार,
करनी तेरी साथ आयगी, अनवर येहे दस्तुर ।। समज० ४

—वही, पृ० ४४

भजन ६६

गुरु ने मुजको ज्ञान बताया है ।
गुरु ने मुजको ज्ञान बताया रे मेरे मन अचरज आया जी,
साहेब मेरा मुजमें समाया रे गुरु ने दरश दिखाया जी ।। टेक
मन दरिया की मोज में रे हीरला लगा मेरे हाथ,
अंतर खोजा मैं आपका, वामें मिलिया मुजे दीनानाथ ।। गुरु० १
बासण में ज्युं दुध है रे म्यान में ज्युं तलवार,
खल के में ज्युं तेरी देह है, ऐसा काया में कीरतार ।। गुरु० २
दरिया घडे में समा गया रे, ज्युं बीज में बड का झाड,
सुइ के नाके में ज्युं हस्ति समाया, युं तृण के ओठे पे प्हाड ।। गुरु० ३
काया हमारा है घोडला रे आत्मा है असवार,
चाहे उधर वाको ले चले, वाका कोइ न पाया पार ।। गुरु० ४
काया हमारा म्हेल है रे खासा झुरखेदार,
वामें हमारा वास है तख्त तीर्थ तीरखुटी द्वार ।। गुरु० ५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काया हमारी गोदडी रे, ओढे फिरे दिन रात,
ज्ञानी कहे हम ओर हैं, नहीं काया हमारी जात ।। गुरु० ६

—वही, पृ० ९२

श्री नृसिंहाचार्य जी

पद १—राग गोडी

सद्गुरु तारनहारा, भज मन सद्गुरु तारनहारा,
जो चहे भव जलपारा, भज मन० ।। टेक
जी ही पद रटत तूने दिन ब्रह्मा, काटत कर्म बिकारा,
शिव शक्ति अरु रोष शारदा, जामें होत सुखारा ।। भज मन० १
देव इन्द्र विष्णु जग पालक, पावत जासु किनारा,
यह सब जीव रसातल जाते, जान ग्रही बांत्य उगारा ।। भज मन० २
योगी मुनि ऋषि निशदिन ध्यावे, जीन पद याही दिदारा,
रवि शशि आदि ग्रह सब जाकी, सभा मैं निरधारा ।। भज मन० ३
उपनिषद शास्त्र पुरान सबे अरु, बेद हु देत नगारा,
आदि न मध्य अंत नहीं जाको, अवधि रहित बिस्तारा ।। भज मन० ४
सम सर्वत्र एक रस आपहि, भासत भाति अपारा,
नरसिंह सद्गुरु अनुभवी जांने, आप न अन्य विचारा ।। भज मन० ५

—नृसिंह वाणीविलास, द्वितीय पुस्तक, पृ० १४४

पद १०—राग काफी

अब तो हमही हारे जी, कहो कब तक पोकारे जी । टेक
पूछनहारे बहोत ही देखे, लेने हारे नाही,
जो कछु जोर जुलम से देवे, छोडे वांके वांही ।। अब० १
खरिददार कौडी के नाहीं, बातां लख्खो केरी,
इस विध उमर गुजर गइ सारी, क्या कहे फेरी फेरी ।। अब० २
नरसिंह शब्दरूप ज्वाहिर कों देवे टेरी टेरी ।
बहेरा कहो सुनेंगे कैसे शंख बजे वा भेरी ।। अब० ३

—वही, पृ० १४९

पद २३—राग काफी

सद्गुरु शरणे, रहो तजी अभिमान,
अहो मान रे । सद्गुरु शरणे० टेक
सत्संग में सदा रहे जन, अधिक काल एक ध्यान,
परिपक्व स्थिति होत हे रे, तब उपजत निज ज्ञान रे । सद्० १

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्त्रीपुरुषादि जाति है, हम रहे अंतर यह भान,
ब्राह्मण आदि वर्णका रे, रहत अधिक उर तान रे। सद० २
कुल अभिमान दुऐ निशदिन तुं, निज मन में पहेचान,
तन धन मन भम भाव सें रे, जन सब होत हेरान रे। सद० ३
नृसिंह सद्गुरु चरन समर्पन, करके रहो सुजान,
मैं मम भाव छोडाइ के रे, तद्वत करत निदान रे।। सद० ४

—वही, पृ० १५६

पद ३०—काफी-होरी

जग में होरी खेलत योगी, सखी री जग में होरी खेलत। टेक
बिन प्रियतम हम जरत रहत है, निशदिन जैसे रोगी,
खेल खेलावनहार न पावत, तब लों कहे क्यों भोगी,
सहत दुःख अजहु वियोगी। जग में० १
पतिवृता पियु सुख जो धारत, सो सुख क्यों लहे ढोंगी,
नृसिंह शाम ना मिल ही मोकों, विरहाग्नि सें जरोंगी,
विरहिणी बहोरी न होंगी। जग में० २

—वही, पृ० १५९

पद ४७—राग हींडोल

यह तनु जाने का, जाने का, फेरी दुःखद आने का। यह तनु० टेक
प्रवाह रूप यह स्वभाव सें है, सर्व काल वहेने का।
अनेक यत्न करे जीव तो भी, आखर नहीं रहेने का।। यह० १
योग मार्ग है प्रसिद्ध जग में, काल कर्म जीतने का।
पुरुषार्थ बिन सिद्ध न होवे, नहीं खेल खाने का।। यह० २
क्रिया विचार है द्वार योग के, गुरु मुख से ग्रहने का।
इंद्रिय मन का जय करना यह, नहीं ख्याल गाने का।। यह० ३
भक्ति द्वारा योग करे कोहु, सो भी फल पाने का।
एक इष्ट में निमग्न होना, नहीं रन में धाने का।। यह० ४
निर्विषयी सुख के साधक कों, विषय दुर धरने का।
सकल कार्य में कठिन कार्य यह, नहीं सेहेल करने का।। यह० ५
दुर्जय प्रान साधि युक्ति सों, गगन मंडल लाने का।
काम यही शूरे साधु का, नहीं श्रीमान राने का।। यह० ६
जाना जरूर यह निश्चय सें हरि भज, तन तजने का।
सद्गुरु शास्त्र पुकार करत अब, नहीं ढोल बजने का।। यह० ७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संसार सार हीनता में सार यह, जन्म सार्थ होने का।
नृसिंह हरि भजी तजि जीने ममता, सोइ नहीं रोने का ॥
सुख सें सोने का, सोने का० यह०

—वही, पृ० १६९

पद ५०—राग बिहाग

वासना सूक्ष्म जिने त्यागी, सोइ संन्यासी।
संन्यासी रे, वासना सूक्ष्म जिने त्यागी, सोइ है संन्यासी ॥ टेक
पुत्र दारेषणा कबहु न आवे, लोकेषणा अंतरतें जावे।
वित्तेषणा मनमारी शमावे रे, तब होवे न्यासी ॥ वासना १
आशारूप शिखा जिने टारी, तृष्णा सूत्र पीयो जिने जारी।
ज्ञान रूप दंड लियो जिने, धारी रे, मुक्ति रहे होइ दासी ॥ वासना २
क्षमारूप कमंडलू सेवे, कटु बचन सबही पीलेवे।
अभयदान सबन को देवे रे, सो नहीं गृह वासी ॥ वासना ३
भिक्षा ज्ञानामृत की मागे, अहं मम निःसंशय त्यागे।
षड्रिपुसों शत योजन भागे रे, दिक्षा है यह खासी ॥ वासना ४
सत्य स्वरूप सों प्रीती जोरे रे, देहाध्यास सहज में तोरे,
घर घर सो कबहु ना दौरे रे, पायो पद निराशी ॥ वासना ५
हरिजन, जग कों हरि सम जाने, द्वैत भाव उरमें ना आने।
कारन कार्य समान ही माने रे, होइ रहे उदासी ॥ वासना ६
उंच नीच अभिमान मीटावे, नैन बेन चिह्न सब पलटावे।
राग द्वेषादि क्लेष हठावे रे, तोरी यह मोह फांसी ॥ वासना ७
धाम सकल भ्रांतिमय माने, नृसिंह भेद सुने ना काने।
विश्वेश्वर आत्मा निज जाने रे, काया यह है कासी ॥ वासना ८

वही, पृ० १७२

पद ५३—राग म्हाड

जीव्हे मत कर अन्य पुकार, वद हे हरि हे हरि। टेक
क्या निशदिन गाती रहे रे, निंध विषयको गीत।
सुवर सुजन तोकों कहे रे, धार प्रभु सों प्रीत ॥ वद० १
जामें नाम भगवान को सो, कहे पंडित सुमीत।
तातें तुं न्यारी रहे रे, क्यों कर होवे हित ॥ वद० २
विकट विकट जब आयगो रे, मृत्यु काल विकराल।
दुःख रूप यह सब होयगा तब बुरा होगा हाल ॥ वद० ३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation (Chennai) Gujarat

विषय अप्रिय होयगो वे; जब दावेगो काल।
अब प्यारो कर क्यों रटे, जीने-मार कीयो कंगाल ॥ वद० ४
नृसिंह हरि शरनो चहीरे, विषय रटे दिन रात।
पादशाह सों मुर्ख के, हाय हाय पुकारत जात ॥ वद० ५

—वही, पृ० १७४

पद ५४—ठुमरी

आज गयो में सत संगत में सद्बुद्धि ग्रही आयो रे। टेक
काम क्रोध मद लोभ शोक अरु, मन रिपु मोह दिखायो रे।
नृसिंह गुरु ने दान दियो, रिपु-मारक शस्त्र शिखायो रे ॥ आज०

—वही, पृ० १७४

पद ५५

विश्वपति अब दर्शन देके, मोकों तारीये रे,
मेरा मन ठारीए रे, विश्वपति अब० टेक
सागर यह संसार दुःख को, एक बिन्दु जामें नहीं सुख को,
अनुभव पायो अब में तातें उगारीए रे। विश्व० १
क्षण में सुखमय, क्षण में दुःखमय, देख्यो में कछु होत न निर्भय
कहाँ लो भय में रहेनो आप विचारीए रे। विश्व० २
मेरो कहो धार्यो सुख जासें, अधिक दुःख देख्यो में तासे
विषय विष देके गुरु मत मारीए रे ॥ विश्व० ३
नृसिंह आप सब सुख के दाता, विघ्न रहित भवसागर गाता,
मोह आदि दोषों कुं उरतें टारीए रे ॥ विश्व० ४

—वही, पृ० १७५

पद ५७—राग कल्याण

प्रभू चरन शरन मोए लीजे, मैं पापीकु पावन कीजे ॥ टेक
दिन रजनी में स्मरन न कीनो, आप पद प्रति चिन्तन दीनोरे।
नृसिंह क्षमा मोकुं दीजे। मैं पापी कुं पावन० १

—वही, पृ० १७५

पद ५८—राग देश

कौन दीए सुख दान, प्रभु बिन, कौन दीए सुख दान ॥ टेक
यह जग जनमी इष्ट कृपा बिन, करत नहीं सन्मान ॥ प्रभु० १
ज्यों पति की प्रीति ही न स्त्री कों, करत सबी हैरान ॥ प्रभु० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सेव्य कृपा से रहित दास ज्यों, सहत सदा अपमान ।। प्रभु० ३
विषय विषयी होके अति भोगे, अवर सुन्यो ना कान ।। प्रभु० ४
नाम रूप जग में हम झांखेत, करत विषय रस पान ।। प्रभु० ५
सुख रूप जानी हम जो, सो दुःख रूप होत निदान ।। प्रभु० ६
इश सकल सुख के दाता हम, नाहीं करत पहेचान ।। प्रभु० ७
नृसिंह प्रभु जब होत कृपालु, तब आवत यह माना ।। प्रभु० ८

—वही, पृ० १७६

पद ६२—राग खमाच

मान कह्यो मान कह्यो मूढ मन मेरो ।
जान जाय तब नाहीं, धन तन तेरो ।। मान० १
बाल युवा बीती आयो वृद्धपनो नेरो ।
काल में समज अब डार दीयो डेरो ।। मान० २
काम क्रोध शोक मोह घाल रसे घेरो ।
नरसिंह जाग न तो फेर फिरे फेरो ।। मान० ३

—वही, पृ० १७७

पद ६३—राग भैरव

दान दीयो दान दीयो दान दीयो रे ।
श्री गुरु ने कृपा करी दान दीयो रे । टेक
सुगम रोतीसें पार अब में पायो,
सेवा साधन में कछु नाहीं कीयो रे । श्री० १
नरसिंह गुरु की कृपा से छुटायो,
जीवन् मृतक होइ सुख लीयो रे । श्री० २

—वही, पृ० १७९

पद ६४—राग हींडोल

सोइ नहीं रोने का, सुख सें सोने का सोने का ।
सोने का सोने का सुख सें सोने का सोने का ।। टेक
पृथ्वी जल अग्नि वायु का, नभ में लय होने का,
चिदाकाश में खलय करी के, सत्य स्वरूप जोने का । सुख सें० १
बहिरंग साधन साधी के, अंत रंग बोने का,
देश काल वस्तु तें व्यापक, पद में चित्त प्रोने का । सुख सें० २

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विषय वासना समूल त्यागि के, अध्यासहि खोने का,
निरालंब निश्चल होइ के, नाहीं पुनः छोने का। सुख सें० ३
अनेक जन्म विषे कृत कर्मों, फल सहित धोने का,
नृसिंह सद्गुरु कृपा हीन जल, अनित्य से म्होने का,
दुःख से रोने का रोने का। सुख सें० ४

—वही, पृ० १७८

पद ६७—गझल

जगत जाल में जीव फसे अब, कहो जी कौन छुराता है,
प्रेम पाश में डार पारधी हर घरी आइ झुराता है। जगत० १
सुना हमें सत्संग सकल यह, बंधन सहज तुराता है,
नरसिंह श्रवन मनन युक्ति सें, यह भ्रम कूप पुराता है। जगत० २

—वही, पृ० १७९

पद ६८—राग चोसर

आपके प्रताप, प्रभु कटत है पाप, छुटे तीन यह ताप, अब।
होइए कृपाल रे रे गुरु अब होइए कृपाल।
मन चलत अमाप, मूढ जपत न जाप, वाके शिर मारे थाप,
युक्ति दीजीए दयाल, रे रे गुरु युक्ति दीजीए दयाल।
उग्र कीयोना प्रयोग, स्वस्वरूप को वियोग, वृत्ति होत न निरोग,
तातें चलत कृपाल, रे रे गुरु ताते चलत कुचाल। १।
अति भोगत है भोग, तासें बढत है रोग, कछु बनत न योग,
शिर झुझत है काल, रे रे गुरु शिर झुझत है काल। २।
अंतर पारत है प्रीत, बुजे हित न अहित, गाये विषय के गीत,
अब भये है बेहाल, रे रे गुरु अब भये है बेहाल। ३।
यह मन है अजीत, चित चले विपरीत, कैसे होइए अतीत,
तजी सकल जंजाल, रे रे गुरु तजी सकल जंजाल। ४।
भक्ति आपकी न कीनी, भीति यमकी न गिनी, मौज विषय की लीनी,
तातें हुवे हैं कंगाल, रे रे गुरु तातें हुवे हैं कंगाल। ५।
नरसिंह बुद्धि दीनी, अव गुरुपद चीनी, विषयों में मारी छीनी,
जासें होइए निहाल, रे रे गुरु जासें होइए निहाल। ६।

—वही, पृ० १८०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ७९—राग मल्हार

कौन लीये संभाल, प्रभु बिन, कौन लीये संभाल । टेक
मम शिथिल भये जब तनु के, निकट भयो जब काल । प्रभु० १
स्नेही संबंधी दूर तपत है, जब होवत बेहाल । प्रभु० २
स्वार्थी स्वजन मन शोक धरत ना, ढुंढत है धन माल । प्रभु० ३
औषध एक हुँ कार्य करत ना, जब छुटत नस जाल । प्रभु० ४
अस्त्र शस्त्र कछु काम न आवत, बांधी रहे तब ढाल । प्रभु० ५
नृसिंह निशदिन हरिजीने, गायो, सो अंत करत प्रतिपाल । प्रभु० ६

—वही, पृ० १८५

पद ८५

सुन अज्ञानी, मेरी मेरी करते गये है हजारो,
कोहु ना मानी, सद्गुरु की शिक्षा जानी जग सारो । टेक
यज्ञ याज्ञादिक कछु नहि किये, महादान सुपात्र कु नाहि दीये ।
निश्वास अति दीनन के लिये ।। सुन० १
धन घूत घूत सब गाड दिया, कोहु ने अति ऊंचा महेल कीया ।
ममता तजि जग में कोहु ना जीया ।। सुन० २
कोहु भ्रष्ट भये होके त्यागी, कोहु दुःखी रहे बनि के रागी ।
नाहि निरख्यो निज पद कों जागी ।। सुन० ३
विषयन में पचि पचि मदत भये, दिन दिन प्रति ग्रही दुर्गुन नये ।
ना सुमति ग्रही गुरु शरन गये ।। सुन० ४
जन सकल फसे सुख कों चाही, मोह पाश स्वतंत्र तज्यो नाहीं ।
ग्रही दीन कियो मृत्यु ने ताही ।। सुन० ५
ना जान्यो प्रभुपद सुखराशी, ना वृत्त ना तीर्थ कीयो काशी ।
ना फल पायो मूढ अविनाशी ।। सुन० ६
अधिकारी नर तनु कों पाया, यह शुद्ध भुवि में आया ।
धिक धिक नृसिंह प्रभु ना गाया ।। सुन० ७

—वही, पृ० १९०

पद ८६—राग मल्हार-एक देशी

हो गुरु शरद ऋतु आइ, दुःख सें तारो हो गुरु राय, दुःख से तारो,
भयो मैं दास, क्या अजहु मार मारो ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टारि यह टेरो, हो गुरुराय, टारि यह टेरो ।
दिजे शिर हाथ, होय अखंड यश मेरो ।। टेक
ज्यों नभ में सब अभ्र के, लय होने से आज ।
निरावरण प्रियवर दिसे, निर्मल यह निशिराज ।
त्यों रज तम कों टारि के, करी आवरण भंग ।
मल विक्षेप निवारि के, मन शुद्ध कीजे ज्यों गंग ।
मिटे भव फेरी, हो गुरु राय, मिटे भव फेरी ।। दिजे शिर० १

हो गुरु दुःख अतिशय पाया, अंत ना आया ।
हो गुरुराय अंत ना आया ।
चरन की आश अब ठारो जगराया ।
जाइ कहाँ रोवे हो गुरुराय, जाइ कहाँ रोवे ।
प्रसारी नेन अब आपहिं कों जोवे ।

शरद समय सरिता सबे, ज्यों निर्मल होइ जात ।
त्यों निर्मल प्रभु किजीए, मारि हृदय पें लात ।
ज्यों अभेद हुइ प्रभु गोपि सों, दीनों सुख रचि रास ।
त्यों अनन्य प्रभु जानि के, कीजे ब्रह्म विलास ।
नृसिंह लहि तेरो, हो गुरु राय, नृसिंह लहि ।। तेरो दिजे शिर० २

बसंत तिलका

त्राता सदा सद्गुरु मम देव देवा,
मैं रंक दास अति दीन ग्रही न सेवा ।
कैसे करो बिन कृपा लहुँ भक्ति मेवा,
दाता नृसिंह करुना करि देहु मेवा ।। १
त्राता बिना त्रिविधा ताप न कोहु टारे,
छोटे बडे सबन कों मनने हि मारे ।
जीता न जात अब क्या करके विदारे ।
दाता नृसिंह करुना करी क्यों न तारे ।। २
दासानुदास शिरनामी सदा पुकारे,
मेरे मृदु वचन को उर क्यों न धारे ।
कामी महा विकट मोह द्रहे, गिरारे,
दाता नृसिंह करुना बिन को उगारे ।। ३
संसार पार करीयो हर कोहु द्रारे,
है क्रोध लोभ भय दायक जो प्रहारे ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आशा अंधैर्य विमलो ग्राहि दावि डारे,
दाता नृसिंह करुना बिना को उगारे ।। ४

शिखरिणी वृत्त

अहो ब्रह्मानंदी बचन रस मेरे श्रवन में,
करी दीजे धारा अबल अब आयो शरन में ।
नहीं देखा कोहु, प्रिय प्रभु बिना या धरन में,
दया कीजे मोपें, सकल तज बैठा चरन में ।। १

छप्पय

सोइ कहे विद्वान, पीर औरन की तोरे,
सोइ कहे विद्वान, प्रीत सम सबसें जोरे ।
सोइ कहे विद्वान, किसी सें चित न चोरे,
सोइ कहे विद्वान, दुखद प्रीति कों छोरे ।
नृसिंह कहे विद्वान सों, जो ब्रह्म विचार सदा करे,
और जीव सब जगत के, मिथ्याही उपजी मरें ।। १

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(ई) जैन कवियों की कविताओं से संकलन

आनन्दघन

पद १—राग आशावरी

अब चलो संग हमारे, काया चलो संग हमारे ।
न्हाये बहोत यत्न करी राखी, काया अब चलो ।।
तोंये कारण में जीव संहारे, बोले जूठ अपारे ।
चोरी करी परनारी सेवी, जूठ परिग्रह धारे ।। काया० १
पट आभूषण सुंधा चूआ, अशनपान नित्य न्यारे ।
फेर दिने खटरस तोंयें सुन्दर, ते सब मिल कर डारे ।। काया० २
जीव सुणो या रीत अनादि, कहा कहत वारंवारे ।
मैं न चलुंगी तोंये संग चेतन, पाप पुन्य दो लारे ।। काया० ३
जिनवर नाम सार भज आतम, कहा भरम संसारे ।
सुगुरु वचन प्रतीत भये तब, आनन्दघन उपगारे ।। काया० ४

—आनन्दघन पद संग्रह, प्रस्तावना, पृ० १८५

पद २

कन्थ चतुर दिल ज्ञानी हो मेरो, कन्थ चतुर दिल ज्ञानी ।
जो हम चहेनी सो तुम कहेनी, प्रीत अधिक पीछानी ।। कन्थ० १
एक बुन्द को महेल बनायो, तामे ज्योत समानी ।
दोय चोर दो चुगल महेल में, बात कच्छु नहि छानी ।। कन्थ० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पांच अरु तिन त्रिया जो मन्दिर में, राज्य करे राजधानी ।
एक त्रिया सब जग बश कीनो, ज्ञान खड्डा वश आनी ।। कन्थ० ३
चार पुरुष मंदिर में भूखे, कबहु त्रिपत न आनी ।
दश असली एक असला बुजै, बुजै ब्रह्म ज्ञानी ।। कन्थ० ४
चार गति में बीते कर्म को किणहु न जाणी ।
आनन्दघन इस पदकुं बुजे, बुजे भविक जन प्राणी ।। कन्थ० ५

—वही, पृ० १८५

पद ३—राग वेलावल

जीय जाने मेरी सकल धरोरी ।
सुत बनिता धन यौवन मातों, भर्भ तणी वेदन विसरी री । जी० १
सुपन को राज साच करी माचत, राचत छांह गगन बदरी री ।।
आइ अचानक काल तोपची ग्रहेगो ज्युं नाहर बकरीरी ।। जी० २
अतिहि अचेत कुछ चेतन नाहि, प्रकटी टेक हारिल लकरीरी ।
आनन्दघन होरो जन छांडी, नर मोसे माया बकरोरी ।। जी० ३

—आनन्दघन पद संग्रह, पृ० ६

पद ४—राग वेलावल

सुहागण जागी अनुभव प्रीत ।
निन्द अज्ञान अनादि की, मिट गई निज रीत ।। सुहा० १
घट मंदिर दीपक कियो, सहज सुज्योति सरूप ।
आप पराइ आपही, ठानत वस्तु अनुप ।। सुहा० २
कहा दिखायुं और कुं, कहा समजाउं भोर ।
तीर अचूक है प्रेम का, लागे सो रहे ठोर ।। सुहा० ३
नाद विलूद्धो प्राण कुं, गिने न तृण मृगलोय ।
आनन्दघन प्रभु प्रेम का, अकथ कहानी कोय ।। सुहा० ४

—वही, पृ० ७

पद १४—राग सारंग

अनुभव तूं है हेतु हमारो ।
आय उपाय करो चतुराई, और की संग निवारो । अनु० १
तृष्णा रांड भांड री जाइ, कहा घर करे सवारो ।
शठ ठग कुटुंब ही पोखे, मनमें क्युं न बिचारो ।। अनु० २
कुलटा कुटिल कुबुद्धि संग खेल के, अपनी पत क्युं हारो ।
आनन्दघन समता घर आवे, वाजे जीत नगारो ।। अनु० ३

—वही, पृ० ३४

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद १५—राग सारंग

मेरे घट ग्यान भानु भयो भोर । मेरे०
चेतन चकवा चेतना चकवी, भागो विरह को सोर । मेरे० १
फैली चिहुँ दिसि चतुरा भाव रुचि, मिट्यो भरम तम जोर ।
आपकी चोरी आपही, ओर कहत न चोर ।। मेरे० २
अमल कमल विकच भये, मंद विषय शशि कोर ।
आनन्दघन एक वल्लभ लागत, और न लाख किरोर ।। मेरे० ३

—वही, पृ० ३७

पद २०—राग गोडी आशावरी

आज सुहागन नारी आज ।अबधू०
मेरे नाथ आप सुध लीनी, कीनी निज अंगचारी ।। अबधू० १
प्रेम प्रतीत राग रुचि रंगत, पहिरे जिनी सारी ।
महिंदो भक्ति रंग की राची, भाव अंजन सुखकारी ।। अबधू० २
सहज सुभाव चूरोयां पेनी, थिरता कंगन भारी ।
ध्यान उरवसी उर में राखी, पिय गुन माल आधारो ।। अबधू० ३
सुरत सिंदूर मांग रंगराती, निरते बेनी समारो ।
उपजी ज्योत उधोट घट त्रिभुवन, आरसी केवल कारी ।। अबधू० ४
उपजी धुनि अजपा की अनहद, जीत नगारे वारी ।
झाडी सदा आनन्दघन बरखत, बिन भोरे एक तारो ।। अबधू० ५

—वही, पृ० ५२

पद २१—राग गोडी

निसानी कहां वतावूं रे, तेरी अगम अगोचर रूप ।
रूपी कहुँ तो कछु नहीं रे, बधे कैसे अरूप ।।
रूपारूपी जो कहुँ प्यारे, ऐसे न सिद्ध अनुप ।। निसानी० १
शुद्ध सजातन जो कहं रे, बंध न मोक्ष विचार ।
न घटे संसारी दिसा प्यारे, पुन्य पाप अवतारी ।। निसानी० २
सिद्ध सनातन जो कहु रे, उपजे विनसे कौन ।
उपजे विनसे जो कहुँ रे, नित्य अबाधित गौन ।। निसानी० ३
सर्वाङ्गी सब नच धनी रे, माने सब परमान ।
नयवादी पल्लो ग्रही प्यारे, करे लराई टान ।। निसानी० ४
अनुभव अगोचर वस्तु है रे, जानवी एही रे लाज ।
कहन सुनन को कछ नहीं प्यारे, आनन्दघन महाराज ।। निसानी० ५

—वही, पृ० ५६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद २८—राग आशावरी

आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे ।।
भटके द्वार लोकन के, कूकर आशा धारी ।
आतम अनुभव रस के रसिया, उतरे न कबहुँ खुमारो ।। आशा० १
आशा दासी के जे जाया, ते जन जगके दासा ।
आशा दासी करे जे नायक, लायक अनुभव प्यासा ।। आशा० २
मनसा प्याला प्रेम मसाला, ब्रह्म अग्नि परजाली ।
तन भाठी अवटाई पिये कस, जागे अनुभव लाली ।। आशा० ३
अगम पियाला पीयो मतवाला, चिन्हो अध्यातम वासा ।
आनन्दघन चेतन व्है खेले; देखे लोक तमासा ।। आशा० ४

—वही, पृ० ७१

पद २९—राग आशावरी

अबधू नाम हमारा राखे, सो परम महारस चाखे ।। अबधू०
नहीं हम पुरुषा नहीं हम नारी, वरन न भात हमारी ।
जाति न पांति न साधन साधक, नहीं हम लघु नहीं भारी ।। अबधू० १
नहीं हम ताते नहीं हम सीरे, नहीं दीर्घ नहीं छोटा ।
नहीं हम भाइ नहीं हम भगिनी, नहीं हम बाप न बेटा ।। अबधू० २
नहीं हम मनसा नहीं हम शब्दा, नहीं हम तरण की घरणी ।
नहीं हम भेख भेखधर नहीं, नहीं हम करता करणी ।। अबधू० ३
नहीं हम दरसन नहीं हम परसन, रस न गन्ध कछु नाहीं ।
आनन्दघन चेतनमय मूरति, सेवक जन बलि जाहीं ।। अबधू० ४

—वही, पृ० ८३

पद ३४

देखो आला नटनागर को संग ।
और ही और रंग खेलति तातें, फीका लागत अंग ।। देखो० १
और ह तो कहा दीजे बहुत कर, जीवित है इह ढंग ।
मेरो ओर बिच अंतर एतो, जेतो रूपे रंग ।। देखो० २
तनु सुध खोय घूमत मन ऐसें, मानु कछु इक खाइ भग ।
एते पर आनन्दघन नावत, ओर कहा कोउ दीजें संग ।। देखो० ३

—वही, पृ० ९९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ३६—राग भालसीरी

वारे नहि संग मेरो, यूंही जो बन जाय।
ए दिन हसन खेलन के सजनी, रोते रेन विहाय ॥ वारे० १
नग भूषण से जरी जातरी, मोतन कछु न सुहाय।
इक बुद्ध जिय में ऐसी आवत है, लीजें री विष खाय ॥ वारे० २
ना सोवत है लेत उसास न, मनही में पिछताय।
योगिनी हुँय के निकसूं घर तें, आनन्दवन समजाय ॥ वारे० ३

—वही, पृ० १०४

पद ४१—राग मारू

पिया बीनुं शुद्ध बुध भूली हो।
जांख लगाइ दुःख महेल के जरुखे झुली हो ॥ पिया० १
हसती तबहुँ बिरानोयां, देखी तनमन छीज्यो हो।
समजी तब एती कही, कोइ नेह न कीज्यो हो ॥ पिया० २
प्रीतम प्राणपति बिना प्रिया कैसें जीवे हो।
प्रान पवन विरहा दशा भुयंगम पीवे हो ॥ पिया० ३
शीतल पंखा कुमकुमा, चंदन कहा लावे हो।
अनल न विरहानल पेरे, तन ताप बढावे हो ॥ पिया० ४
फागुन चाचर इकनिशा होरी, सिरगानी हो।
मेरे मन सब दिन, जरे, तन खाख उडानी हो ॥ पिया० ५
समता महेल विराज है, वाणीरस रेजा हो,
बलि जाउ आनन्दघन प्रभु, ऐसे निठुर न व्हेजा हो ॥ पिया० ६

—वही, पृ० १२३

पद ४२—राग सारंग अथवा आशावरी

अब हम अमर भये न मरेंगे।
या कारन मिथ्यात दीयो तज, क्युं कर देह धरेंगे ॥ अब० १
राग दोस जग बंध करत है, इनको नास करेंगे।
मर्यो अनंत कालतें प्रानी, सो हम काल हरेंगे ॥ अब० २
देह विनासी हुं अविनाशी, अपनी गति पकरेंगे।
नासी जासी हम थिर वासी, चोखे व्है निखरेंगे ॥ अब० ३
नर्यो अनन्तवार बिन समज्यो, अब सुख दुःख विसरेंगे।
आनन्दघन निपट निकट अक्षर दो, नहीं समेर सो मरेंगे ॥ अब० ४

—वही, पृ० १२५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ५३—राग सोरठ मुलतानी

॥ नटरागिनी ॥ सहेली ॥

सारा दिल लगा है, बंसी वारे सूं ।
वंशी वारे सूं प्रान प्यारे सूं ॥
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, पीताबर पटवारे सूं ॥ सारा० १
चंद्र चकोर भये प्रान पपईया, नागर नंद डूलारे सूं ।
इन सखी के गुन गंद्रप गावे, आनन्दघन उजीयारे सूं ॥ सारा० २

—वही, पृ० १५८

पद ६०—राग सारंग

अब मेरे पति गति देव, निरंजन ॥ अब०
भटकूं कहां कहां सिर पटकूं, कहा करुं जन रंजन ॥ अब० १
खंजन दृगन दृगन लगावुं, चाहू न चितवन अंजन ।
संजन घट अन्तर परमातम, सकल दुरित भय भंजन ॥ अब० २
एह कामगवि एह काम घट, एही सुधारस भंजन ।
आनन्दघन प्रभु घट वन के हरि, काम मतंगज गंजन ॥ अब० ३

--वही, पृ० २५९

पद ६७—राग आशावरी

राम कहो रहेमान कहो कोउ, कान कहो महादेव री ।
पारसनाथ कहो कोउ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म स्वयमेवरी ॥ राम० १
भाजन भेद कहावत नाना, एक मृत्तिका रूपरी ।
तैसें खंड कल्पना रोपित, आप अखंड स्वरूप री ॥ राम० २
निजपद रमे राम सो कहि ये, रहिम करे रहेमान री ।
करशे कर्म कान सो कहिये, महादेव निर्वाण री ॥ राम०
परसे रूप पा रस सो कहिये, ब्रह्म चिन्हें सो ब्रह्म री ।
इह विधि साधो आप आनन्दघन, चेतन मय निःकर्म री ॥ राम० ४

—वही, पृ० २८५

पद ६९—राग अलहियो वेलावल

प्रीत की रीत नहीं हो, प्रीतम ।
मैं तो अपनो सरव श्रृंगारो, प्यारे की न लई हो । प्रीतम० १
मैं वस पिय के पिय संग और के, या गति किन सीखई ।
उपगारि जज जाय मनावो, जो कछु भई सो भई ही ॥ प्रीतम० २

CC-0. Agamnigam Foundation. Chandigarh. Digital Preservation Foundation

विरहानल जाला अतिहि कठीन है, मोसें सही न गइ ।
आनन्दघन युं सघन धारा, तब ही दे पठई हो ।। प्रीतम० ३

—वही, पृ० ३०१

पद ८२—राग सूरती टोडी

प्रभु तो सम अवर न कोइ खलक में, हरिहर ब्रह्मा विगुते सोतो ।
मदन जीत्यो तें पलक में ।। प्रभु० १
ज्यों जल जग में अगन बूजावत, घडवानल सो पीये पलक में ।
आनन्दघन प्रभु वामा रे नन्दन, तेरी हाम न होत हलक में ।। प्रभु० २

—वही, पृ० ३५४

पद २—राग बिलावर

सुहागण जागी अनुभव प्रीत । टेक
निंद अज्ञान अनादि की, मिट गई निज रीत । सुहागण० १
घंट मन्दिर दीपक कीयो, सहज सु ज्योति स्वरूप,
आप पराइ आपही, ठानत वस्तु अनुप ।। सुहागण० २
काहा दिखावुं ओरकुं, कहा समजाइ भीर,
तीर अचूक है प्रेम का, लागे सो रहे ठीर ।। सुहागण० ३
नाम अलुंध्यो प्रान कुं, गिने न तृण मृय लोय,
आनन्दघन प्रभु प्रेम की, अकथ कहानी होय ।। सुहागण० ४

—भजनसार सिंधु, पृ० १५

साखी

आतम अनुभव फूल की, नवली कोउ रीत ।
नाक न पकरे वासना, कान ग्रहे न प्रतीत ।।

—वही; पृ० १५

पद ३—राग सारंग

अनुभव नाथकुं क्युं न जगावे । टेक
ममता संग सो पाय अजागल, थन ते दुध दुहावे । अनुभव० १
मेरे कहनें बीन न कीजे, तुंही ऐसी सिखावे ।
बहोत कहेते लाग ऐसी, अवगुन स्वरूप दिखावे ।। अनुभव० २
औरन के संग राते चेतन, चेतन न आप बतावे ।
आनन्दघन की सुमति आनन्दा, सिद्ध स्वरूप कहावे ।। अनुभव० ३

—वही, पृ० १६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ४—राग सारंग

अनुभव तुं है हेतु हमारो। टेक
आया उपाय करो चतुराइ, ओर को संग निवारो ॥ अनुभव० १
तृष्णा रांड भांड की जाइ, कहा घर करे सवारो।
शंठ ठग कपट कुटुंबही पोखे, उनकी संगती वारो ॥ अनुभव० २
कुलटा कुबुधी संग खेल के, अपनी पत्त क्युं हारो।
आनन्दघन समता घर आवे, वाजे जीत नगारो ॥ अनुभव० ३

—वही, पृ० १६

पद ५—भजन राग सारंग आसावरी

अब हम अमर भये न मरेंगे। टेक
या कारन मिथ्यात दियो तज, क्युं कर देर धरेंगे ॥ अब० १
राग दोष जब बंध करत है, इनको नाश करेंगे।
मर्यो अनन्त कालतें प्रानी, सोहम काल हरेंगे ॥ अब० २
देर विनाशी हुँ अविनाशी, अपनी गति पकरेंगे।
नासी जासी हम थिर वासी, चोखे वे निखरेंगे ॥ अब० ३
मर्यो अनंत बार बिन समज्यो, अब सुख दुख बिसरेंगे।
आनन्दघन निपट निकट अक्षर दो, नहीं समरे सो मरेंगें ॥ अब० ४

—वही, पृ० १६

पद ६—भजन राग आसवरी

अबधू राम राम जग गावे, बिरला अलख लखावे। टेक
मतवाला तो मत मे माता, मठवाला मठ राता।
जटा जटा घर पटा पटा घर, छता छता घर ताता ॥ अबधू० १
आगम पढी आगम धर थाके, माया धारो छाके।
दुनियादार दुनि से लागे, वासी सब आशा के ॥ अबधू० २
बहिरा तम बुठा तम जेता, माया के फंद रहेता।
घट अन्तर परमातम भावे, दुर्लभ प्राणी तेता ॥ अबधू० ३
खग पद खगन मीन पद जल में, जो खोजे सो बौरा।
चित पंकज खोजे सो चिन्हे, रमता आनन्द भौरा ॥ अबधू० ४

—वही, पृ० १७

पद ७—राग आसावरी

आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे। टेक
भटके द्वार द्वार लोकन के, कूकर आशा धारी।
आतम अनुभव रसके रसिया, उतरे न कबहु खुमारी ॥ आशा० १

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आशा दासी के जे जाये, ते जन जग के दासा।
आशा दासी करे जे नायक, लायक अनुभव प्यासा ॥ आशा० २
मनसा प्याला प्रेम मसाला, ब्रह्म अग्नि परजाली।
तन भाठी अवटाइ पियेकस, जागे अनुभव लाली ॥ आशा० ३
आगम पियाला पियो मतवाला, चिन्ही अध्यातम वासा।
आ आनन्दघन चेतन व्हे खेले, देखे लोक तमासा ॥ आशा० ४

—वही, पृ० १७

पद ८—राग आसावरी

अबधू वेराग बेटा जाया, वाने खोज कुटुंब सब खाया। टेक
जाने ममता माया खाई, सुख दुःख दोनुं भाइ।
काम क्रोध दोनों कुं खाये, खाइ तृष्णा बाइ ॥ अबधू० १
दुर्मति दादी मत्सर दादा, मुख देखत ही मूवा।
मंगल रूपी बधाइ वांची, ए बेटा जब हुआ ॥ अबधू० २
पुन्य पाप पाडोशी खाए, मान काम दोनुं मामा।
मोह नगर का राजा खाया, पीछे ही प्रेम तें गामा ॥ अबधू० ३
भाव नाम धर्यो बेटा को, महिमा बरन्यो न जाइ।
आनन्दघन प्रभु भाव प्रगट करो, घट घट रह्यो समाइ ॥ अबधू० ४

—वही, पृ० १८

साखी—पद ९

जग आशा जंजीर की, गति उल्टी कुल मोर।
जकर्यो धावत जगत में, रहे छूटो इक ठोर ॥ १

—वही, पृ० १८

पद १०—राग आसावरी

अबधू क्या सोवे तन मठ में, जाग बिलोकन घट में। अबधू० टेक
तन मठ की परतीत न कीजे, ठही परे एक पल में।
हल चल मेट खबर ले घट की, चिन्हे रमता जल में ॥ अबधू० १
मठ में पंच भूत का वासा, सासा घूत खवीसा।
छिन छिन तोही छलन कुं चाहे, समजे न बौरा सीसा ॥ अबधू० २
शिर पर पंच बशे परमेश्वर, घट में सुच्छमबारी।
आप अभ्यास लखे कोइ बिरला, निरखे भ्रुकी तारी ॥ अबधू० ३
आशा भारी आसन घर घट में, अजपा जाप जपावे।
आनन्दघन चेतनमय मुरती, नाथ निरंजन पावे ॥ अबधू० ४

—वही, पृ० १८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद ११—भजन राग गोडी आशावरी

आज सुहागन नारी औधू, आज सुहागन नारी । टेक
मेरे नाथ आप सुध लीनी, कीनो निज अंग चारी ।। औधू० १
प्रेम प्रतीत राग रुचि रंगत, पहिरे जिनी सारी ।
महिंदी भक्त रंग की राची, भाव अंजन सुखकारी ।। औधू० २
सहज स्वभाव चूरी में पेनी, थिरता कंकन भारी ।
ध्यान उरवसी उर में राखी, पिय गुन माल आधारी ।। औधू० ३
सूरत सिंदूर मांग रंग राती, निरते वेंणी समारी ।
उपजी ज्योत उद्योत घट त्रिभुवन, आरसी केवल कारी ।। औधू० ४
उपजी धुनी अजपा की अनहद, जीत नंगारे वारी ।
जडी सदा आनन्दघन बरषत, बीन मोर एक न तारी ।। औधू० ५

—वही, पृ० १९

पद १२—भजन राग विलावर

ता जोगे चित ल्याऊं रे वाला, ता जोगे० टेक
समकित दोरी शील लंगोटी, घुल घुल गाँठ धुलाऊं ।
तत्त्व गुफा में दीपक जोउँ, चेतन रतन जगाऊं रे ।। ता० १
अष्ट करम कंकी धूनी, ध्याना अगन जलाऊं ।
उपशम वणणे भशम बणाउं, भली भली अंग लगाऊं रे ।। ता० २
आप गुरु का चेला होकर, मोह के कान फराऊं ।
धरम शुक्ल दोउ मुद्रा सोहे, करुणा नाद बजाऊं रे ।। ता० ३
इही विध योग सिंहासन बैठां, मुक्ति पुरीकुं ध्याऊं ।
आनन्दघन देवेन्द्र से जोगी, बहुर न कुलिमे आऊं रे ।। ता० ४

—वही, पृ० १९

पद १३—भजन राग गोडी

निशानो कहा बतावुं रे, तेरो अगम अगोचर रूप । टेक
रूपो कहुँ तो कछुं नहीं रे, बंधे कैसे अरूप ।
रूपारूपी जो कहुँ पियारा रे; ऐसे न सिद्ध अनूप ।। निशानो० १
शुद्ध सनातन जो कहुँ रे, बंधन मोक्ष विचार ।
न घटे संसारी दिसा प्यारे, पुन्य पाप अवतार ।। निशानो० २
उपजे बिनसे जो कहुं प्यारे, नित्य अबाद्धित गौन ।
सिद्ध सनातन जो कहुँ रे, उपजे बिनसे कौन ।। निशानो० ३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सर्वांगी सबनय धनी रे, माने सब परमान।
नय बादी पल्लो ग्रही प्यारे, करे लराइ ठान ।। निशानो० ४
अनुभव गोचर वस्तु है रे, जानवो एही रे इलाज।
करन सुनन का कछु नहीं प्यारे, आनन्दघन महाराज ।। निशानो० ५

—वही, पृ० १९

ज्ञानानन्द

१ राग भैरव—तीन ताल

भोर भयो उठ जागो मनुवा,
साहेब नाम संभारो। भोर० ।। टेक ।।
सुतां सुतां रयन विहानी,
अब तुम नींद निवारो ।।
मंगलकारि अमृत वेला
थिर चित काज सुधारो ।। १ ।।
खिन मन जोतुं याद करेगो,
सुख निपजेगो सारो।
वेला वीत्यां है पछतावो,
क्युं कर काज सुधारो ।। २ ।।
घर व्यापारे दिवस वितायो,
राते नींद गमायो ।।
इन वेला निधि चारित्र आदर,
ज्ञानानंद रमायो ।। ३ ।।

—गोलेच्छा जैन ग्रंथमाला, पुष्प १, प्राचीन भक्त कवि निर्मित भजन-संग्रह, धर्मामृत, पृ० ३

२ राग झिंझोटी—ताल दादरा

मेरे तो मुनि वीतराग, चितमांहे जोई ।। मेरे० ।। टेक
और देव नाम रूप, दूसरो न कोई ।। १ ।।
साधन संग खेल खेल, जाति पांत खोई।
अब तो बात फैल गई, जाने सब कोई ।। २ ।।
धाति करम भसम छाण, देह में लगाई।
परम भोग शुद्ध भाव, खायक चित्त लाई ।। ३ ।।
तंबू तो गगन भाव, भूमि शयन भाई।
चारित नव निधि सरूप, ज्ञानानंद भाई ।। ४ ।। —वही, पृ० ४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

५ राग विलावल अथवा मल्हार—तीन ताल

साधो भाइ देखो नायक माया । साधो० ।।टेक ।।
पाँच जात का वेस पहिराया, बहुविध नाटक खेल मचाया ।।साधो० १।।
लाख चोर्याशी योनि मांहे, नाना रूपें नाच नचाया ।
चवदह राज लोक गत कुल में, विविध भाँति कर भाव दिखाया ।।साधो० २।।
अब तक नायक धायो नाहिं, हार गयो कहुँ कुन सें भाया ।
यातें निधि चारित्र सहायें, अनुपम ज्ञानानंद पद भाया ।।साधो० ३।।

—वही, पृ० ७

६ सोरठा

प्यारे चित्त विचार ले, तुं कहाँ से आया ।
बेटा बेटी कवन है, किसकी यह माया ।।१।।
आवनो जावनो एकलो, कुण संग रहाया,
पंथक होय कर जाल में, कैसें लपट्यो भाया ।।२।।
नीसर जावो फंद से, इग छिन में भाया ।
जो निधि चारित आदरे, ज्ञानानंद रमाया ।।३।।

—वही, पृ० ८

८ राग आशावरी—तीन ताल

बिन जारा खेप भरी भारी ।। बिन०।।टेक।।
चार देसावर खेप करी तम, लाभ लह्यो बहु भारी । बिन० १
फिरतां फिरतां भयो तुं नायक, लाखी नाम संभारी ।। बिन० ।।
सहस लाख करोडां उपर, नाम फलायो सारी । बिन० ।
बेटा पोतरा बहु घर कीना, जग में संपत सारी ।। बिन० २।।
खूटी खरची लद गयो डेरो, पड गयो टांडो भारी । बिन० ।।
बिन खरची तें कवन संभारे, टांडे की भइ खवारी ।। बिन० ३।।
पहेले देखी पग जो राखे, निधि चारित तुं धारी । बिन० ।
ज्ञानानंद पद आदर तो; खरची होती सारी ।। बिन० ४।।

—वही, पृ० १०

१६ राग बीभास—तीन ताल

मंदिर एक बनाया हमने, मन्दिर एक बनाया रे । टेक ।।
जिस मन्दिर के दश दरवाजे, एक बुन्दकी माया रे ।
नानो पंखी जाके अंतर, राज करे चित राजा रे ।। मंदिर० ।।१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाड मांस जाके नहिं दीसे, रूप रंग नहिं जाया रे।
पंख न दीसे कह से पिछानुं, षट रस भोगे भाया रे ॥ मंदिर० ॥२
जातो आतो नहिं कोइ देखे, नहिं कोइ रूप बतावे रे।
सब जग खायो तोपण भूखो, तृप्ति कबहिं न पावेरे ॥ मंदिर० ॥३
जालम पंखी तालम मन्दिर, पाछे कौन बतावे रे।
वह पखी को जो कोइ जाने, सो ज्ञानानंद निधि पावे रे ॥ मंदिर० ॥४

—वही, पृ० १९

२० राग वसंत—तीन ताल

मैं कैसे रहुँ सखी, पिया गयो परदेशो ॥ मैं० ॥टेक०
नितु वसंत फूली वनराइ, रंग सुरंगीत देशो ॥१॥
दूर देश गये लालची वालम, कागज एको न आयो।
निर्मोही निस्स्नेही पिया मुझ, कुण नारी लपटायो ॥२॥
वसंत मासनी रात अधारी, कैसे विरह बुझाया।
इतने निधि चारित्र पुत बल्लभ, ज्ञानानंद घर आया ॥३॥

—वही, पृ० २३

२८ राग गौड सारंग—तीन ताल

ज्ञान की दृष्टि निहालो, वालम, तुम अंतर दृष्टि निहालो ॥ वालम०टेक
बाह्य दृष्टि देखे सो मूढ़ा, कार्य नहि निहालो।
धरम धरम कर घर घर भटके, नाहि धरम दिखालो ॥ वालम० १
बाहिर दृष्टि योग वियोगे, होत महावत वालो।
कायर नर जिम मदमत वालो, सुख विभाव निहालो ॥ वालम० २
बाहिर दृष्टि योगे भवि जन, संसृति वास रहानो।
तिनतें नव निधि चारित्र आदर, ज्ञानानंद प्रमानो ॥ वालम० ३

— वही, पृ० ३१

विनय विजय

३२ राग भूपाल तथा गोडो—तीन ताल

प्यारे काहे कुं ललचाय ॥ टेक
या दुनियाँ का देख तमासा, देखत ही सकुचाय ॥ प्यारे० १
मेरी मेरी करत है बाउरे, फीरे जिउ अकुलाय।
पलक एक में बहुरि न देखे, जल बुंद को न्याय ॥ प्यारे० २
ज्ञान कुसुम की सेज न पाइ, रहे अधाय अधाय ॥ प्यारे० ३

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया दोर चिहुँ ओर जोर से, मृग तृष्णा चित्तलाय।
प्यास बुजावन बुंदन पायो, यों हि जनम गुमाय ॥ प्यारे० ४
सुधा सरोवर है या घर में, जिस तें सब दुख जाय।
विनय कहे गुरुदेव दिखावे, जो लाउ दिल ठाय ॥ प्यारे० ५

—भजन संग्रह धर्मामृत, पृ० ३५

३४

मन न काहु के वश मन कीए सब वश।
मन की सो गति जाने या को मन वश है ॥ १
पढो हो बहुत पाठ तप करो जैने[1] पाहार।
मन वश कीए बिनु तप जप बश है ॥ २
काहे कुं फिरे है मन काहु न पावेगो चेन।
विषय के उमंग रंग कछु न दुरस है ॥ ३
सोऊ ज्ञानी सोऊ ध्यानी, सोउ मेरे जीया प्रानी।
जिने मन वश कियो, वाहि को सुजश है ॥ ४
विनय कहे सो धनु याको मनु छिनु छिनु।
सांइ सांइ सांइ सांइ सें तिरस है ॥ ५

—वही, पृ० ३७

३६ राग आशावरी—तीन ताल

जोगी एसा होय फरूं, परम पुरुष शुं[2] प्रीत करूँ ओर से प्रीत हरूँ ॥१
निर्विषय की मुद्रा वहेरूं, माला फीराउं मेरी मन की।
ग्यान ध्यान की लाठी पकरूं, भभूत चढ़ाउं प्रभु गुन की ॥२
शील संतोष की कंथा पहेरूं, विषय जलावुं धूणी[3]।
पाँचुं चोर पेरे करी पकरूं, तो दिल में न होय चोरी हुंणी ॥ ३
खबर लेउं में खिजमत तेरी, शब्द सींगी बजाउं।
घट अंतर निरंजन बेठे, वासुं लय लगाउं ॥ ४
मेरे सुगुरु ने उपदेश दिया है, निरमल जोग बतायो।
विनय कहे मैं उनकुं ध्याऊं, जिने शुद्ध मारग दिखायो ॥ ५

—वही, पृ० ३९

४०

परम पुरुष तुंहि अकल अमूरति युंही,
अकल अगोचर भूप, बरन्यो न जात है ॥ परम०॥ १

---

[1] जाकर, [2] से, [3] धुआं।

CC-0. Agamnigam Foundation. Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तिन जगत भूप, परम वल्लभ रूप,
एक अनेक तुंही गिन्यो न गिनात है ॥ परम०॥ २
अंग अनंग नांहि, त्रिभुवन को तुं सांइ,
सब जीवन को सुखदाइ, सुख में सोहात है ॥ परम०॥ ३
सुख अनंत तेरो, ग्रत्थो हु न आवे घेरो,
इन्द्र इन्द्रादिक हेरो, तो हुं नहिं पात है ॥ परम०॥ ४
तुही अविनाशी कहायो, लेख में न का नहीं आयो ।
विनय कही जो चायो, ताकुं प्रभु पायो है ॥ षरम० ५

—वही, पृ० ४३

यशो विजय

४६ राग सारंग—तीन ताल

जिऊ लाग रह्यो परभाव में । टेक
सहज स्वभाव लखे नहिं अपनो, पारियो[1] मोह जंजाल में ॥ जिऊ० १
बंछे मोक्ष करे नहि करनी, दौलत ममता वाउ में ।
चहे अंध ज्युं जलनिधि तरवो, बेठो कांणे नाऊ[2] में ॥ जिऊ० २
अरति पिशाची परवश रहेतो, खिन हुं न समर्थो आउ में ।
आप बचाय सकत नहि मूरख, घोर विषय के धाउ में ॥ जिऊ० ३
पूर्व पुन्य धन सबहि ग्रसत है, रहत न मूल बढ़ाऊ में ।
तामें तज कैसे बनी आवे, नय व्यवहार के दाउ में ॥ जिऊ० ४
जस कहे अब मेरो मन लीनो, श्री जिनवर के पाउ में ।
याहि कल्यान सिद्धि को कारन, ज्युं वेधक रस खाउ में ॥ जि० ५

—भजन संग्रह धर्मामृत, पृ० ५१

४७ राग देवगंधार—तीन ताल

देखो माइ अजब रूप जिनजी को । देखो० टेक
उनके आगे और सबन को, रूप लगे मोहि फीको ॥ देखो० १
लोचन करुना अमृत कचोले, मुख सोहे अति नीको ।
कवि जस विजय कहें यों साहिब, नेमजी त्रिभुवन टीको ॥ देखो० २

—वही, पृ० ५२

राग ४८ धन्याश्री—तीन ताल

जब लग आवे नहिं मन ठाम । टेक
तब लग कष्ट क्रिया सवि निष्फल, ज्यों गगने चित्राम ॥ जब० १

---

[1] पड़ा, [2] नौका ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करनी विन तुं[1] करे रे मोटाइ, ब्रह्मव्रती तुझ[2] नाम ।
आखर फल न लहेगो ज्यों जग, व्यापारो विनु दाम ।। जब० २
मुंड मुंडावत सबहि गडरिया, हरिण रोझ[3] बन धाम ।
जटाधार वट भस्म लगावत, रासभ सहतु है धाम ।। जब० ३
एते पर नहीं योग की रचना, जो नहि मन विश्राम ।
चित अंतर पट छलवेकुं, चितवत, कहा जपत मुख राम ।। जब० ४
वचन काच गोपें दृढ़ न धरे, चित्त तुरंग लगाम ।
तामें तुं न लहे शिव साधन, जिउ कण सुने गाम ।। जब० ५
पढो ज्ञान धरो संजम किरिया, न फिरायो मन ठाम ।
चिदानंद घन सुजस विलासी, प्रगटे आतम राम ।। जब० ६
—वही, पृ० ५३

५२

सज्जन राखत रीति भली, बिनु कारण उपकारी उत्तम ।
जाइ सहज मिलि, दुर्जन को मन परिनति काली,
जैसी होय गली ।। सज्जन० १
ओरन को देखत गुन जग में, दुर्जन जाये जली ।
फल पावे गुन गुन को ज्ञाता, सज्जन हेज हली ।। सज्जन० २
ऊंच इति पद बैठो दुर्जन, जाइ नाहिं बली ।
उपगृह ऊपर बेठी मीनो, होत नहीं उजली ।। सज्जन० ३
विनय विवेक विचारत सज्जन, भद्रक भाव भली ।
दोष लेश जो देखे कब हूँ, चाले चतुर टली ।। सज्जन० ४
अब मैं एसो सज्जन पायो, उनकी रीत भली ।
श्रीनय विजय सुगुरु सेवा तें; सुजस रंग रली ।। सज्जन० ५
—वही, पृ० ५७

५३ छन्द सवैया

आज आनन्द भयो, प्रभु को दर्शन लह्यो ।
रोम रोम सीतल भयो, प्रभु चित आयो है ।। आज०
मनहुँ ते धार्या तो है, चल के आयो मन मोहे ।
चरण कमल तेरो मन में, ठहरायो है ।। आज० १

---

[1] तू, [2] तेरा, [3] प्राणी विशेष ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अकल अरूपी तुंही, अकल अमूरति योंही।
निरख निरख तेरो, सुमति शुं[1] मिलायो है ॥ आज० २
सुमति स्वरूप तेरो, रंग भयो एक अनेरो।
वाइ रंग आत्म प्रदेशे, सुजस रंगायो है ॥ आज० ३

—वही, पृ० ५८

५६ राग देस–तीन ताल

भजन बिनु जीवित जैसे प्रेत,
मलिन मंद मति डोलत घर घर, उदर भरन के हेत ॥ भजन० १
दुमुंख वचन बकत नित निंदा, सज्जन सकल दुःख देत।
कबहु पाप को पावत पैसो, गाढे धुरि में देत ॥ भजन० २
गुरु ब्रह्मन अचुत जन सज्जन, जात न कवण निवेत।
सेवा नहीं प्रभु तेरी कबहुँ, भुवन नील को खेत ॥ भजन० ३
कथे नहीं गुन गीत सुजस प्रभु, साधन देव अनेत।
रसना रस विगारो कहां लों, बुडत कुटुंब समेत ॥ भजन० ४

—वही, पृ० ६१

५७ राग कानडो

ए परम ब्रह्म परमेश्वर, परम आनन्द मयि सोहायो।
ए परताप की सुख संपती बरनी न जात मोपें,
ता सुख अलख कहायो ॥ ए० १
ता सुख ग्रहवे कुं मुनि मन खोजत, मन मंजन कर ध्यायो।
मन मंजरो भइ, प्रफुल्लित दसा, भइ तापर भमर लोभायो ॥ ए० २
भमर अनुभव भयो, प्रभु गुण वास लह्यो।
चरन करन तेरो अलख लखायो।
एसी दशा होत जब, परम पुरुष तब, पकरत पास पठायो ॥ ए० ३
तब सुजस भयो, अंतरंग आनंद लह्यो,
रोम रोम सीतल भयो, परमात्म पायो।
अकल स्वरूप भूप, कोऊ न परखत कूप, सुजस प्रभु चित आयो ॥ ए० ४

—वही, पृ० ६२

५९

कब घर चेतन आवेंगे मेरे, कब घर चेतन आवेंगे ॥ टेक
सखिरि लेवुं बलैया बार बार ॥ मेरे कब०

---

[1] से।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रेन दीना मानु ध्यान तुंसाढा, कबहुँ के दरस देखावेंगे ॥ मेरे कब० १
विरह दीवानी[1] फिरूं ढुंढती, पीउ पीउ करके पोकारेंगे ।
पिउ जाय मले ममतासे, काल अनंत गमावेंगे ॥ मेरे कब० २
करूं एक उपाय में उघम, अनुभव मित्र बोलावेंगे ।
आय उपाय करके अनुभव, नाथ मेरा समझावेंगे ॥ मेरे कब० ३
अनुभव मित्र कहे सुन साहेब, अरज एक अब धारेंगे ।
ममता त्याग समता घर अपनी, वेगे जाय अपनावेंगे ॥ मेरे कब० ४
अनुभव चेतन मित्र भले दोउ, सुमति निशान घुरावेंगे ।
बिलसत सुख जस लीला में, अनुभव प्रीति जगावेंगे ॥ मेरे कब० ५

—वही, पृ० ६५

किशनदास

किशन बावनी ग्रन्थ

मंगलाचरन घनाक्षरी

ओ आंकार अमर अमार अविकार अज ।
अजर जुहै उदार दारन दुरत को ॥
कुंजरतें कीट परियंत जग जंतु ताके ।
अंतर को यामी बहुनामी स्वामी संत को ॥
चिन्ता को करनहार, चिंता को हरन हार ।
पोषन भरनहार, किशन अनंत को ॥
अंतकतें अत दिन राखै की अनंत बिन ।
तातें तंत अंत को भरोसे भगवन्त को ॥ १ ॥

श्री गुरु देव विषे[2]

नमो नितमेव सजिसेव तजी[3] अहमेव ।
नित नरदेव गुरुदेव सुख करत ॥
क्षितिखंड मंडन विहंडन भरम भूरि ।
करम विखंडन धरम धुर धरता ॥
करत बिहालतें निहाल तत काल महिं ।
परम कृपाल प्रतिपाल पाप हरता ॥
'किशन' अपाय जाय पाय सु पशाय जाके ।
कीजें तातें सेवन उपाय पाय नरता ॥ २ ॥

---

[1] मतवाली, [2] के विषय में, [3] छोड़कर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुनर्यथा

मरन डरन तम तरन तरनि सम।
निहत करन घर धरनि रहत है॥
सुकृत भरन फिर दुकृत हरन चिर।
चरन करन अनुशरन सहत है॥
सुगुरु करन सुख अमृत झरन मुख।
कनक वरन वर वरन महत है॥
कुमति परन पर हरन तरन तज।
'किशन' शरन कज शरन गहत है॥ ३॥

—किशन बावनी, पृ० १ से ३

लीला को लगन मांहि ज्ञान की जगन नांहि।
जग न रहा हि नर तोहि न रहाय बो॥
चले जर कौन वट क्यों इहाँ करत हठ।
नदी तट तरु कौन भांति ठहि रायबो॥
सुपना जहान तामें, अपना निदान कौन।
जपना किशन जाप जातें दुःख जायबो॥
मोह में मगन शगबग न धरे है पग।
नग न चलेंगे संग नगन चलायबो॥ १५॥

—वही, पृ० २०

एक उगे सुर करै भोजन कपुर पुर।
एक कुं तो पेट पुर भाजी हु न ताजी है॥
एक नर गज चढै चढत चपल वाजी।
एक पाजी आगें दौरें दौरिबे में राजी है॥
एक की किशन लच्छ देखि लच्छमी हु लाजी।
एक धनहीन मिसकीन दीन माजी है।
कहीं न परत कुदरत[1] ऐसी कार साजी।
अपने अपने यारो बखत की वाजी है॥ १६॥

—वही, पृ० २१

कोरी कोरी कर कोरी लाखन करोरी जोरी।
तोउं माने थोरी जाने लीजे जग त्रूटकें॥

---

[1] प्रकृति।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माया में अरुझ्यो पर स्वारथ न सुज्यो।
परमारथ न बुझ्यो भ्रम भारत तें बूटकें॥
जगत कों देत दगे आन जमदुत लगे।
किशन जो सगे वेउ ठगे न्यारे फूट कें॥
हंस चंश ऐच लियो अंग रंग भंग भयो।
जैसे बीन बजत गयो है तार तूट कें॥ २२॥

—वही, पृ० २८

नाच कानि राशी यह वागुरिन भासी खासी।
लिये हांसी फांसी ताके पाश में न परना॥
पारधी[1] अनंग फिरै भौंह न धनुष धरै॥
पै न नैन बान खरे तातें तोहि डरना॥
कुच है पहार हार नदी रोमराइ तृन।
किशन अमृत एन बैन मुख झरना॥
अहो मेरे मन मृग खोलि देख ज्ञान द्रग।
यह बन छोरि कहूँ और ठौर चरना॥ २६॥

—वही, पृ० ३३

नागिनी सी बैनी कारी बागुरासी पाटी पारी।
मांग जु सम्हारी चोर गली, तोहि टरना॥
तन सर जामें जल यौवन सु झख चख।
ग्रीव कंबु भुजासु मृनाल मन हरना॥
नाशा शुक दंत दार्यो नाभि कूप कांट सिंह।
किशन सुकवि जंघ रभ खंभ बरना॥
अहो मेरे मन मृग खोली देख ज्ञान द्रग।
यह बन छोरि कहूँ और ठौर चरना॥ २७॥

—वही, पृ० ३५

झुठी काया माया के भरोसे भरमाया लाया।
माया हूँ गुमाया पर मूरखता पाया है॥
ज्यों ज्यों समझाया त्यों त्यों जात मुरझाया।
सुरझे न सुरझाया ऐसा आप उर झाया है।
काचा पाया पाया तातें कौन चैन पाया पर।
साचा सोइ सांया जो किशन गुन गाया है॥

---

[1] व्याध।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दगा दिया काया जानि जमकों बुलाया आनि ।
काल बाज खाया तब याद प्रभु आया है ॥३२॥

—वही, पृ० ४३

नीके मधु पीकें मत्त मधुप सरोज ही में ।
रुकी रहयो जब त्रुकि गयो दिनमनि है ॥
जानी जैहे रात व्है है प्रात दरसे है रबि ।
विकशे है कंज तब जात निकसति है ॥
ऐते गजराय आयो पंकज उखारी खायो ।
भयो भायो विधि को किशन घन धनि है ॥
तेरों बहुतेरी तू तो चाहत बनाइ भाइ ।
तेरो न बनाइ बने है सु बनि है ॥३३॥

—वही, पृ० ४४

निशि के परत दिशि दिशि तें परिंद पुंज ।
जैसे काहु कुंज मुनि वास लेत लसै है ॥
होत ही सकोर जात जात न्यारे न्यारे अरु ।
प्यारेहु किशन याहि रीति रंग रसै है ॥
आये ही कही तें दाना पानी के सबब सब ।
जाइगे कहाँही योंही प्रेम फंद फसै है ॥
योग रु वियोग की न कीजियें हरख शोग ।
पाहुने तें घर बसै काके घर बसै है ॥३८॥

—वही, पृ० ५०

पेटनिन्दा

दियो भोग भारी पै अघात नांहि पापकारी ।
यातें इच्छाचारी पेट चेट की करारी है ॥
यामें चीज डारी तेती काम ही तें टारी ऐसी ।
किशन निहारी यह कोठरी अंधारी है ॥
कहा नर नारी सिद्ध साधक धरम धारी ।
पेट के भिखारी प्रथ्रि पेटही तें हारी है ॥
पिटवारी थारी न्यारी न्यारी है गुनह गारी ।
पेट ही बिगारी सारी पेटही बिगारी है ॥४१॥

—वही, पृ० ५५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नदी नाव कों सो जोग तामें मिले लाख लोग।
काको काको कीजें सोग काकों काकों रोइयें॥
कहे काकों मित्त परी काकों काकी चिंत यातें।
सीत पति चितव नचात व्हैन सोइये॥
ध्याइयें न विमुख उपाइयें न काहू दुख।
पाइयें न आम जो पें आक बीज बोइयें॥
स्वारथ तजीजें परमारथ किशन कीजें।
जनम पदारथ अकारथ न खोइयें[1]॥४३॥

—वही, पृ० ५७

नर को जनम बार बार न गमार अरे,
अजहू सम्हार अवतार न बिगोइयें।
लीजेंगो हिसाब तहाँ दीजेंगो जबाब कहा,
कीजे जो संताप तो सताव शुद्ध होइयें॥
पाप करिकें, अग्यानी सुख की कहा कहानी।
घृत की निशानी कित पानी जो बिलोइयें॥
स्वारथ तजीजें परमारथ किशन कीजें।
जनम पदारथ अकारथ न खोइयें॥४४॥

—वही, पृ० ५९

पाप को समाज साज करत न लाज आज।
पुन्य काज परत करत काल परसों॥
जाहि तूं तो जानें मेरो तामें को है प्यारो तेरो।
दिन द्वै बसेरो डेरो कैसी प्रीति परसों॥
एतो कारबार भार लेकें कैसें पावे पार।
किशन उतार डार भार शिर परसों॥
काल तें अभीत माया, जाल में अतीत गीत।
जानियें सो परम पुनीत नीत परसों॥४५॥

—वही; पृ० ६०

फूट्यो फाट्यो ख्वार जाके खुले खट चार द्वार।
पिंजरो असार यार तामें पंखी पौन सो॥
आवत पिछानियें न जाहि जात जानियें न।
बोलै तातें मानियें सुडौले रुचि रौन सो॥

---

[1] गंवाना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करम को प्रेर्यो दानापानी के सबब घेर्यो ।
रोनक किशन जानि भूल्यो मान भौन सों ।।
पावे औधि हून तौलों करिहे कहूँ न गौन ।
करै गौन पौन तो तमासो तामें कौन सो ।।४६।।

—वही, पृ० ६१

बालपने[1] अपने ही ख्याल में खुशाल लाल ।
पून्य कीन चाल खात खेलत सुखात है ।।
आइ तरुनाइ पें न आई करुनाइ जरा ।
काय में जरा की काइ, आइसी दिखात है ।।
गात अनखात होत शिथल सकल गात ।
किशन जरा की घात वसुधा विख्यात है ।।
अरे अभिमानी प्रानी जानी तें न ऐसी जानी ।
पानी कैसी नीक लौं जुवानी चली जात है ।।४७।।

—वही, पृ० ६२

भटक्यो विसूर भवपूर पूर पूर मांझ ।
अटक्यो[2] जरूर भूरि नरकनि[3] गोद में ।।
भयो उद्भव अब लह्यो जु मनुज भव ।
धरम धरहु रहु परम प्रमोद में ।।
थिरहै न कोइ नेक जीवित को लाहो सोर ।
किशन विहाय जोइ बासर विनोद में ।।
जगत नबीनो सब काल को चबीनो तामें ।
कबु चाबि लीनो बाको लीनो गहि गोद में ।।४८।।

मीत एक गरुड को घू घू तांहि चाहि जोरी ।
कह्यो यम आजही बिलाउ हाथ चातु है ।।
ऐसी षाइ गरुड उलूकही उठाय लियो ।
दूरि दरियाव की दरी में घात जात है ।।
मन तन रूखो तहाँ बैठो तो बिलाउ भूखो ।
भच्छन उलू को कियो तच्छन अघात है ।
करता की करनी न बरनी परै किशन ।
रजक रु मोत तें न काहु की बसात है ।।४९।।

---

[1] बाल्यावस्था में, [2] रुका, [3] नरक की ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यम जैसे शीश परि ठाढे निशदिन अरि ।
तासों बिसे बासा डरि ऐसी कर आंध रे ॥
छांड[1] दे हराम खोरी बूझी अब बूझ तोरी[2] ।
जगत सें तोरी जगदीश सें तूं सांध रे ॥
चलाचल साथ न बिसारियें किशन नाथ ।
जैवो है दिखाते हाथ चढे चहुँ कांधरे ॥
केती जिंदगानी जापें ऐती तें अनीनि ठानी ।
अजो पानी पहिले गुमानी पारि बाँधरे ॥५०॥

—वही, पृ० ६३ से ६५

लशुन के लिये न्यारी खात कसतूरी डारी ।
अंबर की क्वारी बारी चंदन करे बेकी ॥
हरख भरावी भरि कंचन कलश रानी ।
शिच्यो इद सानी पानी गंगाही कों देवे की ॥
दुई खुश बोइ त्यों त्यों चल्यो बदबोइ[3] होइ ।
भूले हून करे कोइ इच्छा वोइ लेवे की ॥
सहस उपाय कही किशन उपाय दाम ।
प्रान क्यों न जाय पर प्रकृति न जैबे की ॥५२॥
बार बार करत पुकार घडियार यार ।
होऊ हुसियार बिसियार सुख पायगो ॥
गइ है बहुत आइ रहि है बहुत आइ ।
गाफिल गमाइ है गमार मार खायगो ॥
खाक हिये खाक होइ रहि है किशन खाक ।
खाक को खमीर अंत खाक में समायगो ॥
आपकों हंसायगो हंसायगो कहां के जाय ।
जंगल बसायगो न यमतें बसायगो ॥५३॥
शाखी मधुमाखी लों न चाँखी अभिलाखी राखी ।
कहाँ लों पताल नाखी राशी धन धान की ।
खाबे पोख पावे प्रानी देवे जस होत जानी ।
जान दे हिवानी जैन खान की न पान की ॥
काके संग गई यह कौन की किशन भई ।
रहे कर दई कर दई है निदान की ॥

---

[1] छोड़, [2] तेरी, [3] बदबू ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आवत न बार भ्रात लागे छिन मात जात ।
माया बदलात जैसें छाया बदलान की ।। ५४ ।।
खर ज्यों अयान इनसान को न सान बान ।
कहा मसतान महा खान मद पान में ।।
मूढ रूढ ताने आयें आपही बखाने आपे ।
गान में न काहू आने जाने ज्ञान ध्यान में ।।
चलो अनमान भलो नाहिन वृथा गुमान ।
किशन निदान दिल देहु दया दान में ।।
मान शिख मेरी व्हैगी ऐसी गति तेरी यह ।
जैसी मूठी ढेरी हेरी राख की मशान में ।। ५५ ।।

—वही, पृ० ६७ से ७०

हंस रहै रैन न्यारे कांच सौध पर हारे ।
तारे प्रतिबिंब के निहारे जैसें लीजियें ।।
मान मोती गोती सांच चूगे तब तूटी चांच ।
लागी आंच शोचे अब काहू न पतीजियें ।।
किशन गये सु थाने मानसरे केलि ठाने ।
मुकता बुये ते जाने काहु बुये छीजियें ।।
पिशुन तें दुगो पाइ भले को भरोसों जाइ ।
दूध के जरे की नांई, छाछ फूंकि पीजियें ।। ५८ ।।
लंका को अधीश दश शीश भुज बीश जाके ।
दयो वर ईश अवनीश ता सराहिबी ।।
सागर की खाइ कुंभकरण सें भाइ जाकी ।
दुसह दुहाइ ठकुराइ अब गाहि बी ।।
ऐसो राज साज गयो भयो जो अकाज एतो ।
हाथ प्रभु ही के लाज किशन निबाहि बी ।।
झूठही में झूले नित लता अन भूले फूले ।
साहिब को भूले डूले क्यों न एसी साहिबी ।। ५९ ।।
क्षीन भये अंग पै अनंग के तरंग नये ।
नगये दुरित रंग कहा सतसंग है ।।
क्रोध ही में काम अभिमान मान आठो जाम ।
माया में मुकाम गहे लोभ के उमंग है ।।
निंब की निबोरी दीठी पक्के तब होत मीठी ।
किशन तिहारे तो निहारे तेइ ढंग है ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बूझी तन देश देख कैसे भये केश ।
काग रंग हेतु सोइ कागद के रंग है ॥ ६० ॥
ज्ञान की न गूंजी शुभ ध्यान की न सूझी ।
खान पानं की न सूझी अब एव हम मूंझी है ॥
मूझ सो कठोर गुन चोर न हराम खोर ।
तुझसों न और ठौर और दौर चूंहि है ॥
अपनी सी कीजे मेरे फैल पैन दिल दीजे ।
किशन निबाहि लीजें जो पे ज्यूंहि क्युंहि है ।
मेरो मन मानि आंनि ठहर्यो ठिकाने अब ।
तेरी गति तूंहि जाने मेरी गति तूहि है ॥ ६१ ॥

—ग्रन्थ प्रयोजन, कवि वचन—कवित्त

शिरि संघराज लोकागच्छ शिरताज आज ।
तिनकी कृपा ते कविताइ पाइ पावनी ॥
संवत सतर सतसठे बिजै दशमी की ।
ग्रन्थ की समापति भई है मन भावनी ।
साधवी सुज्ञानी माकी जाइ श्री रतन बाई ॥
तजी देह तापर रची है विगतावनी ॥
मत की न मति लीनी तत्त्वरी में रुचि दीनी ।
वाचक किशन कीनी उपदेश बावनी ॥ ६२ ॥

—वही, पृ० ७५ से ७८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजा और राजाश्रित कवियों की कविताओं से संकलन

महेरामणसिंहजी

लहर १—देव स्तुति

बरन करत अशरन शरन, बंदन अरुन शरीर।
चंद धरन बारन बदन, हरन शरन जन भीर ॥ १ ॥

—प्रवीणसागर, पृ० १

लहर २

प्रेमनेम निरूपण भेद-उल्लेखालंकार—कवित्त

सुघर संयोगी जन चातुकी पियुष धार।
बिरहि बिबेकी रंभा धनसार मानी है ॥
मुक्ता सिकत जोगी मनमें छिपाय राख्यो।
बिना भेद चाहें अहि काल कूट बानी हैं ॥
सागर या प्रेम स्वांत उरमें अजानहुं के।
पंकज के कोश मध्य पर्यो बुंद पानी हैं ॥
देखो यह बारहूँ को जेसो गेह तेसी देह।
जेसी देह तेसो गुन प्रगट निसानी है ॥ १३ ॥

दुहो

प्रेम तत्त्व सत्ता सकल, फैल रही संसार।
प्रेम सधे सोई लहें, परम जोति को पार ॥ १४ ॥

—वही, पृ० १५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लहर ३

श्री राधा कृष्ण युगल स्वरूप ।
ब्रज में राधा कृष्णजू, रच्यो सुरस सिंगार ।
सो बरनन अब करत हों, जाहि जपत संसार ।। १ ।।
रमन राधिका कृष्ण को, प्रेम सहित संयोग ।
सो उरमें रहियें सदा, जाहि जपत तिहु लोग ।। २ ।।

—वही, पृ० १९

समस्या भेद—सवैया

एक भई विपरीत गती यह पैं, दधि कंज के मध्य समानौ ।
हालम कौं बिनु अंग चुगे शुक, इंदुषतें छितिपें ठहिरानौ ।।
अंबुज के बिकसे उलटे तिमि, द्वन्द्व तें अंबु धुनीसे बहानौ ।
लोचन रक्तकि बानि कपोत रटे, विन आस्य अहीं से बंधानो ।। १ ।।

—वही, पृ० २३

अभिसारिका—सवैया

करि मंजन अंजन नील निलोचन, भूषन भूषन भूषित हैं तन में ।
अंधिकारि निशा अलि संग लिये, ब्रजराजहु पे जु चली बन में ।।
दुनि दामिनि सिखी हुलसें, मुख चंद प्रकास चकोरन में ।
सुनि नूपर बाल मराल धसें, सु लगी हैं कुलाहल कुंजन में ।। १८ ।।

—वही, पृ० १७

लहर ४—उमास्तुति सवैया

सोइ बडो सबतें जग में नर, उग्र अद्रिष्ट उहि जग पाय ।
वाक्य बिसारद नारद सो शुक, बारद के पति देखि सराह्य ।।
जो सुलतानि जहैं मनमें तो, सोई छन मैं सुलतान कहाय ।
व्हैं भ्रत पें जगमातु कृपा जुत, तेरि कटाच्छ हुमायु की छांय ।। ३४ ।।

—वही, पृ० ४३

लहर ५—प्रेमनां[1] नाम—छप्पय

स्नेह राग अनुराग, रक्त अरक्त आशक्त ।
प्रीत लगन मन मिलन, प्रनय लय साच कहत हित ।।
चित बंधन इक चित्त, निरंतर ध्यान बिनांतर ।
सुखद अरु संतोष, प्रगट दोय चाह परस्पर ।।

---

[1] प्रेम के ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेलाप मेल मन मान पुनि, उभै एक अरुझन अहिट ॥
बंधान अनूसंधान इह, प्रेम नाम जानहुँ प्रगट ॥ १ ॥

—वही, पृ० ४७

लहर ११

कन्यानां[1] लक्षण—छंद शंखनारी

तनं हेम रंगं, रुची केश भ्रंगं, प्रभा एन नेनं ।
मुखं चंद्र नेनं, तिलं फूल नासा, सरोजं सु वासा ॥
शुकं नीय दंतं, रसा रक्त क्रंतं, छबी सुक्त जैसे ।
शुभं श्रौन ऐसे, पिकं भाष बानी, दरं ग्रीव जांनी ॥
शुभा ओठ बिंवा, हनुं पक्वन अंवा, उरं छीन आभं ।
गती गूड नाभं, कटी तुच्छ आरी, नितंब प्रसारी ॥
बरं रभ जंघं, सु पिंडी निषंगं, पदं पान रक्तम ।
सु रेखा सु वृतं, तन छीनं न मंसं, गति ईभ हंसं ॥
तुछं नीद्र हांसी, सु शीलं प्रकासी, सुकुम्मार ताई ।
मनो कंज छाई यहे लच्छ कन्या, लिखे सु प्रगन्या ॥१६॥

—वही, पृ० ९९

लहर १६—काम विहार

श्वेत बिचित्र तन बसन, सकल नंग सिंगार ।
केसर चंदन कुमकुमा, करत वसंत विहार ॥२७॥

छप्पय—जुवती नर कर जूथ, खुसीमहि फाग सु खेल ही ।
केसर जल पिचकार, लिये अन्तर कर तेलहि ॥
गोद अबीर गुलाल, नडर ईतरेतर नांखहि ।
बोलत राग वसंत, भजें मुख गारि सु भाखहि ॥
बाजें मृदंग ढफ बीन बहु, राजे सब लज्जा रहित ।
बिलसे विलास निसदिन विविध, रस सागर सु बसंत रित ॥२८॥

लहर २५—नायिका भेद

दुहो—पद्मिनी, चित्रिनी, शंखनी और हस्तिनी बाल ।
मुख्य भेद यह तियन के, बरनन बुद्धि विशाल ॥

पद्मिनी

छप्पय—चंद्रानन तन कनक, नेंन मृग कोकिल भाषन ।
कटि केहरि[2] गल कंबु, कंज कर पद शुक नासन ॥

---

[1] कन्या के, [2] केसरी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रंभोरु कच उरग, अधर सुरख रद हालमं ।
गति मराल कुच पीन, छीन निद्रा स्मित भुक कम ॥
सहज हि सुबास सुमती मृदुल, अति उदार पूजा सकति ।
पूरन सु प्रेम ब्रीडा सु शुचि, प्रथम एह पद्मिनी प्रवृति ॥१०॥

चित्रिणी

छप्पय—चपल दृष्टि चित अचल, कंज नेनी रुचि केसर ।
श्याम केश गज गमन, भ्रंग भ्रुअ भाष मयुर बर ॥
काव्य शिल्प संगीत, चित्र रीझे सु रीझावे ।
प्रेम नेम परबीन, चित्त चातुरी उपावे ॥
नैन ह्रस्व दीर्घ प्रथुलन क्रशा, कोप तुच्छ अंबर अमल ।
तुच्छ सु प्रमाद सुकुमार शुभ, यह चित्रिनि लच्छन सकल ॥११॥

शंखिनी

छप्पय—बाहु दीर्घ कृश शीश पाय कुच दीर्घ तपत कर ।
तन दोरघ तनु रीस, वक्र चाले वसुधा पर ॥
स्थूल घ्रान भ्रू अधर, ह्रस्व अंगुलि नंभ्रत गल ।
रति अतृप्त त्रप हीन, भुक्त बहु क्रूर प्रकृति कल ॥
गज मद सुगंध कटि मुख प्रथुल, विह्वल मदन बिलास महि ।
कपटी[1] कुशील पीसुन सदा, केश पिंग शंखिनी सु कहि ॥१२॥

हस्तिनी

छप्पय—स्थूल अंग बहु छुधा,[2] लोभ तिच्छन पिंगल चख ।
गधक गंध कुशील, कुटिल बानी भाषत मुख ॥
रोषवान स्वर रुक्ष, काम केली अगप्त नित ।
बदत अपा बिन त्रपा, दुष्ट दुमनी सदा रहत ॥
अरु चित्त कुरंग कुच शिथिल अति, प्रीत रीत जाने नही ।
अंकुश अजाद माने न कछु, हस्तिनी-हस्तिनी सम कही ॥१३॥

—वही, पृ० २३४ से २३६

लहर २९—हृदय भाव

कवित्त—मानहूँ तें जोत भारी, भारी काम हूँ तें कारी ।
कारीगरहूतें न्यारी, प्यारी हैं चतुर नर ॥
बेद तें अभेद बानी, बानी में न आवे ध्यानी ।
ध्यानी से पुरानी जानी, नाहि न अमर पर ॥

---

[1] धूर्त, [2] क्षुधा ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फैल रही अंग अंग अंगहू न जाने रंग।
रंग की तरंग जसें गंग हर शीर झर॥
पोंब पानीहुँ न पावे, पावे सो स्वरूप गावे।
गावें गुन सागर हमेश चाह उर भर॥ ७॥

—वही, पृ० २७८

लहर ३३—वियोगावस्था

सवैया—नेनन सें असुबा उमहे सो गलीन भई बरषा की तरंगन।
बारहु मास रहे ऋतु ग्रीषम, आयत सास परोसनि अंगन॥
जेहर सो रसनां दोह री भई, पल्लव की मुंदरी भई भई कंगन।
सागर छेद भये छतीयां सर, तोउ भरें मन मध्य निषं गन॥

—वही, पृ० ३१७

लहर ३६—वियोग कथन

सवैया—सागर सागर जू रसनां दुसरी, मुख मौन लही सुलही।
कांनन आंन न बांन सुनि, बरुनीसे घुनी जो बही सो बही॥
गोंन कियो तुम ता छिनसें दिन ही दिन व्याध नहीं सु नहीं।
या कुल कांन रहो न रहो परि, एकहि टेक ग्रही सुग्रही॥

—वही, पृ० ३४५

लहर ३८—व्रष्टांतालंकार

सीत हरी दिन एक निशाचर, लंक लई दिन ऐसो हि आयो।
एक दिनां दमयंती तजी नल, एक दिनां फिर ही सुख पायो॥
एक दिनां बन पांडव के अरु, एक दिनां छिति[1] छत्र धरायो।
शोच प्रबीन कछू न करो, किरतार चहें बिधि खेल बनायो॥१५॥

सवैया

नेंन उसास हियो भर आवत, बासर ऐसें किते भरियें।
ले फिरियाद कहो फिरियें अरु, लाय लगे सो कितें लरियें॥
जाय किधों गिरियें गिरि तुंगन, खाय किधों बिषकों मरियें।
मित कछू उपचार बताइयें, अंत प्रबीन कहा करियें॥१७॥

—वही, पृ० ३६७

---

[1] क्षिति।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लहर ३९

ऋतु वर्णन

कवित्त : वसंत वर्णन

बकुल बसंत बेल, बारब बदाम बट,
बोलत बिहंग वृन्द, बगन बगन बन ।
माधवी मधूक मल्ली, मंजर महोर मंडि,
मधु मकरंद मोद, मगन मगन मन ।।
प्रमदा परस पांनी, परस प्रकाश प्रेम,
पलटें परम पंथी, पगन पगन पन ।
दंपती दिशो ही दिश, दोरत न दुरें देह,
दिन छिनदा न दोऊ, द्रगन द्रगन दन ।। ७ ।।

कवित्त : ग्रीष्म वर्णन

बन बन बिलखि, विषधर विहंग बड,
बासर विषय बाय, बगर बगर बर ।
डंगर डिगम्बर से, डारत डमर डार,
डोलत हैं डंड वारे, डगर डगर डर ।।
न लीका निदाध नीर, नलिन नविन बन,
निलय निवासी नीठ, नगर नगर नर ।
समर समर सूर, सायक सरासन ले,
सधत सधत साधें, सगर सगर सर ।।८।।

कवित्त : वर्षा वर्णन

फूलन चढे हैं फंद, फरकें न फूल फल ।
फहेलत पोंन फूल, फहरत फहर फरि ।।
गावत मयूर गन, गाढी गाढी गहे गति ।
गगन की गाज गोष, गहर गहर गरि ।।
सागर सरीत सर, सुभर सलील सब ।
सुरखी तडित श्याम, सहर सहर सरि ।।
थरर थरर कुंद, थलन थलींन थित ।
थकि थकि पंथी पर; थहर थहर थरि ।।९।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवित्त : शरद वर्णन

शरद की चांदनी सी, प्रगटी सुरत जोत।
बोलत बचन तुत, रात एही है हिमंत ॥
शिशिर को साज सोतो, रोम को भयो समाज।
प्रेम को प्रकाश जैसी, फूलि है प्रभा बसंत ॥
विरह प्रलाप हियें, ग्रीषम तपत ताप।
नैंनन के आंसू नीर, व्रषा के प्रवा[1] बहंत ॥
षट रितु अंग अंग, आज ही बनी है मेरे।
कोन रितु आवन की, सागर तुम बदंत ॥१०॥

—वही, पृ० ३७२ से ३७४

लहर ४२

वर्षा विरह

सवैया

मोरन सोर न मोर बने फणि, चक्र यहें न चढी सेहे रे।
हे चपला न कला रसना फुत, कार न मारुत की फेहेरे ॥
या चिनगे न खद्योतन के गन, बुंद न आनन की जेहेरे।
हे न व्रषा अहि मंडल सागर, लाये विजो गिनि कों लेहेरे ॥३॥

—वही; पृ० ३९५

बागन के किन राग उचारत, लागत बांन बियोगन नारी।
घोर घटा चढि आई अटा, बिरहीन पटा में छटा सु कटारी ॥
पोंन धसें पुरवा धुरवा धर, दादुरवा सुखा भयकारी।
श्रावन में धन जीवन रे पति, संग सुरा भरि पीवनहारी ॥१८॥

—वही, पृ० ४०१

लहर ५१

नायिका भेद

उत्कंठित नायिका

बीन नबीन म्रदंग बजे तित, मिंत समाजरू में सुख पाये।
कीधों करी बिजया बिसरी हम, आसव कीधों असाध पिवाये।

---

[1] प्रवाह।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कीधों मिली कोउ मोहनी कामिनि, अंक लता गलता उर झाये ।
कोंन विचार करेबो अबे, अहो सागर मित अज्यों नहि आये ॥४॥

—वही, पृ० ४८१

अभिसारिका

सवैया—नवसात[1] किये नवसात लिये, नवसात पिये नवसात पिवाई ।
नवसात रची नवसात बिघे, नवसात मने प्रति सागर आई ॥
नवसात कला नवसातन की, नवसातन में अंचला मुख छाई ।
नवसात रह्यो नवसातन में, नवसात छुरी नवसात बताई ॥९॥

—वही, पृ० ४८३

ईसर बारोट

दोहा

लागाहुँ पेहलो[2] लळे पीतांबर गुरु पाय ।
भेद महारस भागवत, पायो जेण पसाय ॥ १
जाडय टले[3] मन मल गले, निर्मल थाए देह ।
भाग्य होय तो भागवत, सांमलीयें श्रवणेह ॥ २
भक्त वत्सल मोदे भगती, भांजपरा सहभ्रम ।
मुज[4] तणां क्रम मेटवा, कथुं तुम्हारा क्रम ॥ ३
पीठ धरणिधर पाटली, हरि होय[5] लेखणहार ।
तोय तारां[6] चरितां तणो,[7] परम न लभे पार ॥४
तोरां हुँ पुरां तवी, शंका केम समराथ ।
चत्रभुज सह थारां चरित निगमन जाणे नाथ ॥ ५
कथा केम[8] ईसर कहे, खांण सकल प्रत खेत ।
वाणी श्रवणे मन बसे, नित्य अगोचर नेत ॥ ६
देव कशी उपमा दायां, तें सरज्यां सह सोय ।
तुंज सरीखो तुंहिज तुं, कहां न दुजो कोय ॥ ७
नारयण तुं संभरे, उण कारण हरि आज ।
जा दिन आ जुग छंडियें, ता दिन तो शुं काज ॥ ८
आम वछटा माणसां, है घर झीलण हार ।
धरणी घर छांडियां, आसें हुं आधार ॥ ९

---

[1] (९+७)=सोलह, [2] पहले, [3] दूर होता है, [4] मेरे, [5] लिखने वाला, [6] तेरे, [7] के, [8] क्यों ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नारायण न विसारीये, नित प्रत लीजे नाम ।
जो लाभे मनुष्या जनम, कीजे उत्तम काम ॥१०
नाम सुतीरथ नाम वृत्त, नाम सलंभो काम ।
एको अक्षर तत्वफल, जीहा जपो श्रीराम ॥११
राम जपंतो रे रुदा, आलस न कर अजाण ।
जो तुं गुण जाणे नहीं, पुछे वेद पुराण ॥१३
क्षुधा न भाजे पाणीयें,[1] त्रशा[2] न छीपे अन्न ।
मुक्ति नहीं हरिनाम विण,[3] मानव साचे मन्न ॥१३
ज्यां जागे त्यां राम जप, सोता राम संभार ।
आतम बेठत उठतां, चालंता चीतार ॥१४
आले हीं नारायणा, जे नर नाम लहंत ।
ते जमराणा परहरे, केशव चरण रहंत ॥१५

—हरिरस ग्रन्थ, पृ० १ से ५

छंद

करो कृपा तो शेवा कीजे ।
लेव रावो तो नामज लीजे ॥
पाखे रजा कोइ चरण न पामे ।
भक्त वत्सल पडियो[4] जग भामे ॥२२
घण दीरो बछटो घण नामी ।
साथ तमाणो त्रिभुक्न स्वामी ॥
ममतो राख्य हवे जग भावन ।
प्रेम भक्ति दे त्रिभुवन पावन ॥२३
कृष्ण राख्य हवे[5] हुँ तुं करतो ।
धरणी धर मन मम ममता धरतो ॥
तुज विषे मति दे ध्रु तारण ।
कूप संसार काढ्य श्रव कारण ॥२४

दोहो

वण अपराध वटमतां, रे रे त्रिभुवन राय ।
कर कुंडा शास्त्रो क्रषन, कर क्रम कूडां काय ॥१८
एह पटंतर दाख्य इम, भक्तां वत्सल भ्रम ।
कीधां अमके तम कीयां, धुर हरि पाप धरम ॥१९

---

[1] पानी से, [2] तृषा, [3] बिना, [4] पड़ा, [5] अब ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तारी इच्छा दाध ते, जीहां आदि जनम ।
त्यां क्यां हुता अमतणा, केशव कशा करम ॥२०
आदि तुजथी[1] उपना, जग जीवन सह जीव ।
उंचा नीचा अवतरण, दें क्युं वंश दैव ॥२१
आपो में हुंता अमंत, आपो तें अवतार ।
पाप धरम की पीडवा, लायो जीवां लार ॥२२
अखिल तुंहिज के कोइ अवर, बहुनामी बुझव ।
लखमी वर लेखे नहि, समवड प्राणी सब ॥२३
आदि तणो[2] जोतां अरथ, भाजे भूज भरम ।
पहेलां जीवा परठीया, कीया च पहेला क्रम ॥२४
अक्रम क्रम उपाय कर, जे जागवीया जीव ।
जगपति कोइ जाणो नहि, गत थारी[3] एय ग्रीव ॥२५
खाण चीया रे खोयण धर, जाया जण दन जन्त ।
कीधा कीण पाखे कृशन, उत्तम मध्यम अन्त ।२६
कीधा[4] कोण पहोंचें कृशण वडा समो सहवाद ।
आद न को तोरा अनत, आतम क्रमना आध ॥२७

—वही, पृ० १५ से १८

मोतीदाम छंद

ब्रह्माय रुद्र विचार ब्रह्मं,
न जाणेय तो राय पार निगम ।
प्रमेश्वर तो राय पार पलोय,
पुराण पुराण न जाणेय कोय ॥ १

छंद

अषक्षर अक्षर तुंज अवेव,
दिनंकर चन्द्र न जाणेय देव ।
त्रणे गुण तूज न जाणेय तंत,
अहिस सबद न जाणेय अंत ॥ २
वडा ग्रह तुज लहेन विचार ।
पुरंदर तुज न पामेय पार ॥
भला मुनी तुज न जाणेय भेद ।
विरंचिए तुज न जाणीए वेद ॥ ३

---

[1] तुम से, [2] का, [3] तेरी, [4] कौन ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दामोदर तूज दशे दिगपाल,
केता एक पार न जाणेय काल ॥
उमा तोय पार अगम अलेख ।
लखमीय पार न जाणेय लेख ॥ ४
महा तंत तूज न जाणेय माह,
कियो तूज केण आयो तूज काह ।
अनीलाय नील कहंत असेष,
आदेश आदेश आदेश आदेश ॥ ५
अलाह अथाह अग्राह अजीत,
अमात अतात अजात अरीत ।
अरन्त अपित्त असेत अनेस;
आदेश आदेश आदेश आदेश ॥ ६
अनंखन शंखन धखंन धीश,
नीवासन शासन शासन ईश ।
नराल नताल नकाल नरेश ।
आदेश आदेश आदेश आदेश ॥ ७
कृपाल गोपाल भुपाल कृष्न,
वडाल संघाल छत्राल वृसंन ।
मृणाल भुजाल विशाल मुनेश ।
आदेश आदेश आदेश आदेश ॥

—वही, पृ० २१ से २४

छंद

नमो धरणीधर धीरज ध्यान,
नमो भगवंत नमो भगवान ॥
नमो हरि देव नमो हरि राम,
नमो हरि नेम नमो हरिनाम ॥ ९४
नमो हरि रस्स नमो हरि हंस,
नमो हरि कान नमो अरि कंस ॥
नमो अवगन्त नमो अकलीश,
नमो अपरंम नमो सब ईश ॥ ९५
नमो निरलेप नमो निरकार,
नमो निरदोष नमो निरधार ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सरी गुण देव नमो समराथ,
निरगुन नाम नमो तुंय नाथ ॥ ९६
नमो हरि लीलाय उत्तम नाम,
सोह अवतार नमो सिय राम ।
व्रसभ मनो तुंय आदि विभूत,
किं जाणेय तूज तणी करतूत ॥ ९७
बुझे कोण नाथ तुंहा राय बंग,
शक्ति न शीव मुरति न लंग ।
करताय कालाय वालाय क्रीत,
चत्रभुज रुडुंच मानोय चित ॥ ९८
पियं पेय ईशर जोडिय पाण,
कृपा करि मूज करोय कल्याण ।
दिठो मेंय तुंज तणोय दिदार,
ससा रोय बाहर माय संसार ॥ ९९
पदारथ ला धोय तूज परव्ब ,
सुत्रां जीम ताणाय वाणाय सव्ब ।
पुरायण नाथ वचाणाय पत्र,
जगपत्त तुं हीज तुंज जगत ॥ १००
जगत्तिय जातिय भातिय जाण,
प्रसन्न हुवो तुज ठीठोय पाण ।
दिठो सह आत्मम आपुय दाख,
भुवनं हुवो सब ठामज भाख ॥ १०१

—वही, पृ० ५९ से ६१

वजमाल महेडु

षट्ऋतु वर्णन

वर्षा वर्णन

दोहा

शावन भादू कहत हैं, बरखा के दो मास ।
दंपन अत आनंद में, वीभो करत विलास ॥ ९८

छप्पय

विभो करत विलास वास रंग महल उतंगह ।
करत सहल घर हरित सरित जल पूर गिरंगह ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुनियन गात मलार दारु प्याला भर पावत।
चमक बीज घन बुंद गगन गहरं गरजत अत ॥
तन कसूम पोसांग सज, भूखन जटितस नंग में।
बिभेस जांम पच्छम धनी, उलसत बृखा उमंग में ॥ ९१ ॥

—विभाविलास, पृ० ५१०

शरद ऋतु वर्णन

दोहा

पावस रत[1] सोहांमणी[2], बरनीं सूछम लाय।
महाराजा बीभेस की, बरनों शरद बनाय ॥ १०० ॥

छंद अर्द्ध नाराच

सरद्दे रत्त सोहनी, महासमस्त मोहनी।
प्रफुल्ल ताल पंकजं, लपट्ट भृंग केलजं ॥ १०१
किलोल ताल सोहियं, मनेक जंतु मोहियं।
सरात हंस सारसं मिलंत मोति मानसं ॥१०२॥
उंचास बास ओपियं, अभास के अनोपियं।
न मेल एल नद्दियं, हलीस हद्द हद्दियं ॥१०३॥
ग्रहे ग्रहे अनोपियं, अती जलूस ओपियं।
नजूक रूप नारियं, सिंगार के सवारियं ॥१०४॥
सपूज जात शक्कती, गहंत हंस की गति।
रती समान रूप में, अती अतीस ओप में ॥१०५॥
कितेक छह आ वहे, ठवेस बाजु ठावहे।
अखंत एक एक कों, करी संकेत टेक कों ॥१०६॥
सिंगार सार सारनं, जरीस पोस धारनं।
लखेस नंग लाल का, मनोस दीप मालिका ॥१०७॥
जगी चिराक जोतियं, अरवक के उधोतियं।
शशि प्रभा शरद की अकास नीस अद्ध की ॥१०८॥
बिछात के छिछातियं, सुवच्छ भांत भांति यं।
उरद्ध के अगासियं, विलोल खास बासियं ॥१०९॥
कही तहां कचारियं, विसद्द पोस वारियं।
खडीस आम नायका, गुनी विघांन गायका ॥११०॥

---

[1] रात [2] सुहावनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मृगद्ध मध्य वेस में, गहन्त नृत्न जो गमें ।
अलाप के अराधहीं, सपत्त सूर साधहीं ॥१११॥
पियंत मद्द मोद में, रसिक गत्त सें रमे ।
विभेस जाम ब्राजियं, सहे तखत्त साजियं ॥११२॥
चहंत चंद्र चंद्र की, इला भुलोक इन्द्र की ।
अनंत सुख लेवहीं, सदा सकत्त सेव हीं ॥११३॥
रची शरद्द रत्त की, भली विलास भत्त की ।
गुणीस क्रीत गाय हे, पसाव लाख पाय हे ॥११४॥

—वही, पृ० ५१४

हेमंत ऋतु वर्णन

दोहा

मिगशिर[1] पोष हिमंत में, जित तित सीत ह गांम ।
दंपत सुख चाहत अधिक, जदुपत वीभो जाम ॥१२७॥

छप्पय

जदुपत वीभो जांम धांम सुन्दर पर पावन,
मंजन अंबु हमाम तप्त भोजन भुगतावन ॥
मृगमद पूंग तंबोल तेल तरुनीं मन भावन ।
सुजनी सदल दुसाल सदल परजंक विछावन ॥
रस कवित्त सुनत कंद्रप कथा सुरापान मद मंत में ।
वीभेस जांम पच्छम धनी[2] हुलस मोज हीमत में ॥१२८॥

—वही, पृ० ५१९

शिशिर ऋतु वर्णन

दोहा

मह अरु फागन मास में, नर नारी हरखाय ॥
आगम जांन बसन्त के, सो रत शिशिर कहाय ॥१३९॥

छप्पय

सो रत शिशिर कहाय उस्न आमंख मद आचन ।
रस पारद पक ताम्र कांय गुटिका अन पाचन ॥
रंग राग त्रिय रवन भवन उत्तम सुख भोगन ।
नवल नींक पोसांग सरस दंपत संजोगन ॥

---

[1] अगहन, [2] पति ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छिरकात रंग रंगन विवध खेलत खेल खुसी रमे।
बीभेस जाम पच्छम धनो सो सुख लहत शशीर में ॥१४०॥

—वही, पृ० ५२२

बसंत ऋतु वर्णन

दोहा

चैत और बैसाख कों, कहत मंत रतराज।
यह रत में विलसत अती, बीभकरन महाराज ॥१४६॥

छप्पय

वीभ करन महाराज आज शिरताज राज मह।
रचत खेल रंगरेल छेल अखवेल बाग मह॥
भर केसर पिचकारी लाल गुल्लाल उड़ावत।
बजत मृदंग धुनि आंन तांन गुनियन मिल गावत॥
सिंगार सार त्रिय गन सजत ललित प्रमोद लसंत में।
वीभेश जांम पच्छम धनी बिलसत मोज बसन्त में ॥१४७॥

—वही, पृ० ५२५

ग्रीष्म ऋतु वर्णन

दोहा

जेठ ओर अषाढ में, तरनी तपत अपार।
रत ग्रीखम चित चाहियें, सब सीतल उपचार ॥१६१॥

छप्पय

सब सीतल उपचार बार जल जंत्र फुहारन।
भरन होज बन बाग त्रिविध गत पोंन बहारन॥
सीतल पटिय उसीर शीर चंदन चरचावत।
छिरकत नीर गुलाब कुसुम कर भवन सुहावत॥
भुगताल माल मंडन विविध, सुंच्छम बसन सुं अंग में।
वीभेश जांम पच्छम धनी रहतस ग्रीखम रंग में ॥१६२॥

—वही, पृ० ५३०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आधुनिक कवियों की कविताओं से सकलन

बंशीधर दलपतिराय

दोहा

नमत सुरासुर मुकट महिं, प्रति बिंबित अलिमाल ।
किये रत्न सब नीलमनि सी गनेश प्रतिपाल ।।

अथ देशधिप वर्ननम्

दोहा

उदयापुर सुरपुर मनों सुरपति श्री जग तेस ।
जिनकी छाया छत्र वस कीनों ग्रन्थ असेस ।।२।।

कवित्त

सकल महीपन के राजें सिरताज राज,
पर उपकारी हारी भारी दुख द्वंद के ।
देव जगतेश धीर गुरुता गम्भीर धरै,
भंजन विपच्छ पक्ष दच्छ फौज फंद के ।।
प्रभुता प्रकाश अति रूप के निवास सोहैं,
प्रगट प्रताप ताप मेटैं जन बृन्द के
मेघ से समुंदर से पारथ पुरंदर से,
रतिपति सुन्दर समान सूर चंद के ।।३।।

दोहा

जदपि नार सुन्दर सुघर दिपत न भूषन हीन ।
त्यों न अलंकृति बिनु लसैं, कबिता सरस प्रवीन ।।४।।
कीने रस मय रसिक कवि, सरस बढाय विवेक ।
छाया लहि गिरिवांन की भाषा ग्रन्थ अनेक ।।५।।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तदपि अलंकृति ग्रन्थ कौं काहू कवि नहिं कीन ।
भाषा भूषन है जऊ कहूँक लच्छन हीन ।।५।।

—अलंकार रत्नाकर, पृ० १ और २

दोहा

गज गामिनी मुखचन्द सम कंज नयनि इक नारि ।
छविसौं रति भजवति भई तर लइकंत निहारि ।।७।।
वाको मिलन इक्कं तकौ रति सुख लाभ अपार ।
भयौ काकतालीय यह बिनु हीने कु विचार ।।८।।

—वही, पृ० ५

दोहा

कोकिल कंठरु गज गवन सुन्दर है मृग नैन ।
ऐसें उपमा जानियैं, कहत सुकवि रस ऐन ।।११।।

—वही, पृ० १०

दोहा

सुधा बैंन सी सन्त के बैंन सुधा सम मांन ।
बैंन खलन के विषहि से विष खल बैंन समान ।।१९।।

—वही, पृ० १३

सवैया

तुम नैनन से नव नीरज है, तिनकौ कुल ले जल मांझ डुबायो ।
तुव आंनन सो रजनी करही सुचहौं दिस घेरि घनाघन छायो ।।
तुव चाल से बाल मरालजु है तज या वनकौं वन और वसायौ ।
तुव अंगन को अनुहार निहारिहों जीवत सौ विधि कौं नहिं भायौ ।।२१।।

—वही, पृ० १४

कवित्त

आनंद की कंद मुख तेरो ता समांन चंद,
कैसें बलि कीजियैं क्लेश नाम धारी है ।
आठ ही पहर कर तेरे तापहर कंज,
तपन को बंधु कैसे होत अनुकारी है ।।
तेरी सुखदाई देह ताके तो न सम होत,
केसर सरस कहि थतु कंटुवारी है ।।
सेनापति प्रभू प्यारो तूं तो है अनूप नारी,
तेरो उपमा की भाँति जात न विचारी है ।।२७।।

—वही, पृ० १५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दोहा

बदन सुधानिधि जांनि कै तुव मंग फिरत चकोर।
बदन किधौं यह सीतकर किधौं कमल भए मोर ॥

कवित्त

अब हो तौ दिन दस बीते नांहि नाह चलैं।
अब उठ आई कह कहाँ लौं बिसूर हैं।
आवों खेलैं चोपर बिसारै मति राम दुख।
खेलन को आई जान बिरह कों चूर है ॥
खेलत ही काहू कह्यो जुग जिन फूटौ प्यारी,
न्यारी भई सारी को निवाह हौंनी दूर है।
पासे दिये डार मन साँसे ही में बूड रह्यो,
बिसरयो न दुक्ख दुख दूनो भरपूर है ॥५२॥

—वही, पृ० २३

दोहा

छे का पन् हुति जुक्ति का परसों बात दुराय।
करत अधर छत पिचकरा सखी सीत रितु बाय ॥६६॥

कवित्त

भोर भयैं आवत निकुंज मधि मंद मंद,
बरसत बेग वाटैं पुलक सरीर है।
अंग अंग काँपे जऊ जतन नदांपे तऊ,
लेत एंचि अंचर कौं आली अति धीर है ॥
मो सौं जो छिपावति सो पावति हौं कोतुक कों,
करैं कुटलाई कहा जान्यो बलवीर है ॥
तेरो सौं न बलबीर जमुना को तीर जवैं,
जात नीर काज तबैं लागत समीर है ॥६७॥

—वही, पृ० २९

कवित्त

रति विपरीत मृगनैनी की बिराजै बैनी,
कनकलता पैं ज्यौं भुजंगी लहरतु हैं।
स्वेद कन गिरत कपोलन मुकंद लाल,
मानौं तम देखि इन्दु अभी छहरतु हैं ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खुटला सभी परा जैं लोल चल दलदल,
कंचन से तन प्यारो त्यों त्यों थहरतु है।
नेजा बरदार इन्दु अंसुन लगायैं मानों,
दुहूं और मैंन की फतू हैं फहरतु है ॥७५॥

—वही, पृ० ३२

सवैया

सोभत अंग फुलेल छुही लटलै पगताल चलैं धुनि आछैं।
पीनषरी कटि पीन उरोज अली अंगिया तंगिया उर काछैं॥
ईस चितै मुरि मोहन त्यों द्रग कीर की ओर करैं जुकटा छै।
गुंघट सेत सरोवर भीतर मीन पर्यो जनु मीन के पाछैं ॥७६॥

—वही, पृ० ३३

कवित्त

गौरी मुख गोल हरें हंसत कपोल बड़े,
लोचन बिलोल बोल लौंने लियैं लाज पर।
लोभा लागे लाल लखि सोभा कवि देव छवि;
गोभासे उठत रंग रूप के समाज पर॥
बादला की सारी जागी जीत जरतारी दर,
दावन किनारी झीनी झालर के साज पर।
मीती गुहे कोरन चमक चहुँ ओरन,
सुतीरन तरैयन की तांनो द्विजराज पर ॥१३२॥

—वही, पृ० ६१

सवैया

मत्त जहाँ मधु भीर के कूजत कोकिल कोक कपोत सराग।
फूलेहैं कंज रु गुंजत हैं अलि पुंज लियैं तरु कुंज पराग॥
ठुंढ भए जल सूख गयो भई ऊखर भूम दयो मनु दाग।
सोई रसालव है वह बाग बिसाल वहैं यह पंथ तड़ाग ॥१४९॥

—वही, पृ० ६९

दोहा

कांधे केशर बांध कैं जो कीनो मृगराज
कूकर क्यों करि हैं कहौ करि कुल कंपन गाज ॥१६२॥

—वही, पृ० ७६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवित्त

फूलन बसीले जाके फसन रसीले छित,
छांह के नसीले पंथ पंथी सुखदाई है।
बिटपन कामदार निपट निकाम डार,
बडे नामदार पूखी अधिक उंचाई है॥
भूल्यो भ्रम सूवा अन्त पायो फिर रूवा हार्यो,
खेल जिम जूवा जिय अगनि लगाई है।
जगत में जनमपै काहू के न काम आवै,
कहा सठसैंवर के बढ़े की बड़ाई है॥१७२॥

—वही, पृ० ८३

सवैया

हाथ गहे हरिने हित सों पित सागर लच्छ के आदि ददाई।
अंबुज चकहु तें अधिक गुन रावरे की पहुँचेन गदाई॥
सा एक हैं मुख लागत हो जिनके हित मीन गहौ न कदाई।
जुद्ध असंखन जीत बजे पै रहै तुम संख के संख सदाई॥१७८॥

—वही, पृ० ८५

सवैया

कंज के पात रहे कुमलाय जितैं लग पीन उरोज रहैं री।
भारी नितंब जितैं परसैं तित पल्लवहू पियराई गहैं री॥
खीन खरी कटि को नहिं संग सुरंग हर्यो छवि आछी लहैं री।
वाके सन्ताप सरीर कौ तापसु आपहि तैं यह सेज कहैं री॥१८०॥

—वही, पृ० ८८

दोहा

भयौ कंबु तैं कंज इक सदा प्रफुल्लित सोय।
देखहु चंपक की लता प्रगटे श्रीफल दोय॥२१३॥

सवैया

वे जग अंधन कौं मगदा चलबौ इन नीक न हू को निवार्यो।
वे वलि वास वसावत हैं इत वास उजार कुवासन पाख्यो॥
सूरत थाह जतावत वे इन प्रेम अथाह के वारिधि डार्यो।
देखहु री हरि की बंसुरी इन कैसे सुबंस की बंस बिगार्यो॥२१५॥

—वही, पृ० १०३

दोहा

पलन पीक अंजन अधर धरैं महावर भाल।
आज मिले सु भली करी भले बने ही लाल॥२२८॥

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवित्त

लखि अरसौं है नेकु सौं है हु न देखत ही,
भौहैं भौहें चाह्यो सो वसों हैं न पत्याय है।
जाके हेत कीनो मांन मांननी अमांन यह,
ताको तुम लीनो नाम सहज सुभाय हैं॥
ऐते पर धार हठ हरजू हठीली अब,
हा हा कियैं बात वह कैसैं चित्त लाय हैं।
मान के छुड़ावन कों आए मनभावन सो,
भांन के बठावन को कीजौ यो उपाय है॥२२७॥

—वही, पृ० २०७

दोहा

विषय सुखन छाँडत निख जिय जग अथिर सुजांन।
विषय सुखन छाँड़त निरख जिय जग अथिर अयांन॥२००॥

सवैया

चित राखहु उभत भाख्यौ यहें निहचे लखि भेद पुरनन के।
अति उभत चित्त तें वित्तरु विघ्न तैं दान जसैं विलसैं जन के॥
बिलखात कहा ऊनखात हहा जिय वाढत ही दुख द्वंदन के।
दूख पापतैं पाप सुदारद तैं पुन दारद तुच्छ कियैं मन के॥२७२

—वही, पृ० २२३

दोहा

दीपक एकावलि मिलैं माला दीपक नाम।
कांम धांम तिय हिय कियौ तिय हिय कौतूं धांम॥२७५॥

कवित्त

कांनन के रंगे रंग नैनन के डोले संग,
नासाअग्र रसना के रस ही समानि हो।
और गूढ कहा कहौं मूढ हौ जु जान जात,
प्रोढ रूढ केसीदास नीकैं करजानि है॥
तन आंन मन आंन कपट निधांन कांन,
सांची कहौ मेरी आंन काहे को डराने हो।
वेती हैं विकानी हाथ मेरे हौं तिहारे हाथ,
तुम ब्रज नाथ हाथ कौंन के बिकांने हो॥२७६॥

—वही, पृ० २१५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवित्त

नर तैं अधिक दौरें, पंछी अंतरिच्छ ही मैं,
पंछी तैं अधिक दौरें वेग नदी नीर के।
नीर तैं अधिक दौरें बंसी कहैं सिंह बली,
सिंह तैं अधिक दौरें तीर महाधीर के॥
तीर तें अधिक दौरें पौंन[1] झकझौर और,
पौन तैं अधिक दौरें नैन हिं सरीर के।
नैन तैं अधिक दौरें मन तिहुँ लोकन में,
मन तें अधिक दौरें बाजी रघुवीर के॥२७८॥

दोहा

मांगन सकुचन पौंन हु जाहि लियौ संग ठान।
तिन तैं तूल रू तूल तैं हरवौ जाचक जान॥

—वही, पृ० २२६

कवित्त

सोवैं जब बांयो हाथ छाती पर भारी होत,
ऐसे वरनारी होत बोहरा के आए तें।
सुपने के हाथी आगैं दौरि-दौरि थाक जात,
एसें थक जात नर व्याज के दुबाए तैं॥
सुक विनि हाल हरकत है सै तान कीसी,
बरकत होत न उधारौ ले कै खाए तैं।
रन सीन और पाप चढ़े विष कैसी ताप,
कै उतारैं आप कै अपूत पूत जाए तैं॥२९२॥

—वही, पृ० १३१

कवित्त

पतित उधारे पति राखवै पधारे जैसें,
तैसें पत मेरो पत पार हौ कपार हौ।
तारव्यौ करनी की प्रभु फेर सीस करनी को,
अब मो अकरनी को हार हो कहार हो॥
मिटैं तीन ताप आप नांम के प्रताप ताप,
बंसी के संताप त्यों बढ़ार हौ कढ़ार ही।
पाप करतार हौंन तेरे करतार मेरो,
एही करतार मोहि तार हो कतार हो॥ —वही, पृ० १३१

---

[1] पवन।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोहा

जो विशेष सामान्य दृढ़ तौ अर्थान्तर न्यास ।
रघुवर के वरगिरत रे बड़े करैं नक हास ॥३१४॥

कवित्त

बडन सौं जान पहिचान तो रहीम कहा,
जीपैं करतार होन सुख देन हार हैं ।
सीत हर सूरज सौं प्रीति कोनी कमल नित,
ऊतौ कमल वन जारत तुरवार है ॥
उदधि के बीच वस्यो शंकर के सीस लस्यौ,
तौऊ ना कलंक नस्यौ ससि के सदार हैं ।
बड़े रिझवार हैं चकोर दुरबार आप,
सुधा धर प्यार तो पैं भखत अंगार हैं ॥३१५॥

—वही, पृ० १४२

दोहा

विकस्वर होत विशेष जब फिर सामान्य विशेष ।
हरि गिरि धार्यो सतपुरुष, भार सह्यों ज्यों शेष ॥३२०॥

सवैया

नागर ही गुन आगर ही रिझवार ज्यों रीझत वात सुनाएं ।
एक निदान कौ जांनौ नदांन सु यातैं, सबैं गुन देत बहाएं ॥
होय जऊ सब ही गुन पूर तऊ इक औगुन राखत छाएं ।
चातुरता कविता दिक के गुन के गन दारिद देत दबाएं ॥३२१॥

—वही, पृ० १४६

कवित्त

सीयो प्रांन प्यारो प्रांन प्यारो अब सीय जाहु ऐसैं,
कहि चली सब सखियां सयांन तैं ।
जाय पति पास हरैं प्रेम परबस हैं कैं,
ताके मुख ही पैं मुख राख्यौ मैं अयांन तैं ॥
जान्यो तब झूठो ईतो आंखन को मूंदबो वा,
ठग कौ रोमांच देख भयौ भ्रम प्रांन तैं,
कीनौ ऐसौं काज आज लाज ही जु सीऊ हरी,
ततछिन तासमै के उचित बिधान नैं ॥३३५॥

—वही; पृ० १५२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवित्त

आयौ अपराध भयो दीनी री निकारि वाहि,
प्रीतम सखी को तब आयो भेष धर कैं।
ताकौं भ्रमि मैंने सब अंतर की बातें कही,
वाके मिलवे की चाह ही सी अंक भर कैं।।
मिलवौ कठिन हैं ही भौरी बाल ताकों अब,
बिहंसि बिहंसि मोसों यों कहि निकर कैं।
भरी अंक वारी भारी हठ कर याही निस,
वाही ठग ठगी आली ऐसो छल कर कैं ।।३३६।।

—वही, पृ० १५३

दोहा

गुन औगुन जब एक तैं और धरैं उल्लास।
न्हाय संत पावन करैं गंग धरैं यह आस ।।३३९।।
लाभ बड़ो जो कुशल तैं सेवक निज घर नांहि।
हैं अभाग धन की चहैं मिलै जु संतन नांहि ।।३४०।।
करे कठिन कुच कौंन हित मृदुता चरनन धार।
निंदत हैं भाजत समैं विधि कौं तुव अरि नार ।।३४१।।

—वही, पृ० १५४

कवित्त

एही अलबेली ऐसे अधिक अंधेरे मांहि,
आज अधरात कौंन काज कित तूं चली।
बसत हमारे मन मोहन जू प्रांननाथ,
ताको हैं संकेत जित जात तित कों अली ।।
साथन सहेली तूं अकेली मोसों बात कहि,
डरत न काहे लखि ऐसी कुंज की गली।
कीनो जग जेर जिह साज सर चाप आप,
सोई हैं सहाय मेरे मदन महावली ।।३४२।।

—वही, पृ० १५५

दोहा

कर फुलेल को आचमन मीडी कहत सराहि।
चुप रह रे गांधी चतुर, अतर दिखावत काहि ।।३४३।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवित्त

अधर पैं दंत छत दीने चकित हवैं,
कर अग्र कंप नाहीं-नाहीं हठलीनी है।
छांड सब ऐसे कही रिस कों जताय नैन,
भौंह न मरोर कोप बचन प्रबीनी है ॥
ऐसो मांननी कैं कियौं चुंबन अचानक ही,
अंमृत तिन ही तैं तब पीनो है ॥
गूढ़ जानैं बिन मूढ़ देवतांन मिल,
सागर मथन कौ वृथा ही श्रम कीनौ है ॥३४४॥

—वही, पृ० १५६-५७

दोहा

मुद्रा प्रस्तुत पद विषैं औरें अर्थ प्रकास।
मन मराल नीकें धरैं तो पद मांनस आस ॥३५५॥

सवैया

ज्यौं झख[1] चाहत हैं जल कौं अरु चाहत ज्यौं घन कौं वन मोर।
ज्यौं चह कंज प्रभाकर कौं तिम चाहैं पतंग प्रदीप हिं ओर ॥
चाहत ज्यों अलि मालती बास सु, चाहत ज्यों परदांम हि चोर।
तो मुख चंद हि चाहत यों चलियैं, बलि नंद किशोर चकोर ॥३५६॥

—वही, पृ० १६

दोहा

रत्नावलि प्रस्तुत अरथ क्रम तैं और नाम।
रसिक चतुर मुख लच्छ पति, सकल ग्यांन कौ धाम ॥३५७॥

कवित्त

परवीन प्रीतम सों कैसें उड़ि मिलौं आली,
सो मति विचार तामें नैंकुं जक परैं री।
अंबु धरे नैंन जिय पलकन चैंन याही,
लखि कवि कुल कौं न बरनन करैं री ॥
परी नेह वस निसा कैसे कैं बिहात चंद,
हियरा हरष कहूँ धीर धरैं री।
जाके अंग अंगन में बरत अनंग आग,
वाके तन ताप के संताप जग जरैं री ॥३५८॥

—वही, पृ० १६१

---

[1] मछली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोहा

सामान्य जु सादृश्य तैं, जांन परैं न विशेष।
नाहिं फरक श्रुति कमल औ, तिय लोचन अनिमेष ॥३७२॥

सवैया

रच दर्पन छात छजे थंभ ताक सुकलि कौ मंदिर सुंदर कीनौ।
सज बैठो तहां हरिराय बुलाय नबोढ तिया चित संभ्रम दीनौ॥
तिहिं भेदन हीं प्रति बिंबरू बिंब कौ चित्त अचंभ अथंभ नवीनी।
मुंह फेर लजाय कैं हेर सुभाय रहैं, जित ही तित कंत प्रवीनी ॥३७३॥

—वही, पृ० १६८

दोहा

प्याज उक्ति कछु और विध कहैं दुरैं आकार।
सखि सुक कीने करम ए लख दाख्यौं मनिहार ॥३९०॥

कवित्त

नख कहां लागे बन बांनर लगाए नख,
चख कहां रागे प्रात ताक्यौ प्यारी मान कौं।
बंदन कहां तै लाग्यौ पूजे गन नायक कौं,
चंदन कहां तैं लाग्यौ पूजे शिवथांन कौं।
रात कहां जागे जहां नटन कौ नृत्य भयौ,
बोलत क्यों ढीले तेरो भय भयो प्रान कौं।
बिगरी सुबिगरी दुरावी जिन आवौ लाल,
थिगरी कहां लौं देही फाटे आस मान कौ ॥३९१॥

—वही, पृ० १७५

दोहा

सुहैं जुक्ति कीनैं क्रिया मरम छिपायौ जाय।
पीव चलत अंसू चले पोंछत नैंन जंमाय ॥४०१॥

कवित्त

दंपती परस पर बोले निस बोल सोई,
पंजर में सूआ सुन सहज सुभाय कैं।
वहैं पुन बात प्रात समैं गुर लोकन मैं,
बोलत सुन्यो सुतब ताकै ढिग आय कैं॥
कांनन के कुंडल तैं मांनक के टूक काढ,
बंसी कहै ताके आगें डारे वे दुराय कैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दारम के बीज मिस चतुर नैं चातुरी सौं ।
कीनी सुक बांनी बंध निपट भजाय कैं ॥४०२॥

—वही, पृ० १७९-८०

दोहा

स्वभावोक्ति सो जांनियै बरनन जाति स्वभाव ।
हंस हंस देखत फिर झुकत मुँह मोरत इतराव ॥४१४॥

सवैया

न्हाय तडाग को तीर सु उच्चल चीर शरीर धरैं सुभ जोती ।
लांबी लसैं लट चारु उरोज ज्यूँ शंभु के सीस पैं नागनि सोती ॥
पाय संकोरि नमाय कटी मुख नीचौ कियौ लट कैं नक मोती ।
भौंह मरोरत कोरत नैंन सु चोरत चित्त निचोरत धोती ॥४१५॥

—वही, पृ० १८५

चौपाई

भाव अंग जिहिं रस को होय । भाव भाव कौ कै अंग सोय ।
अलंकार कहि प्रेय हि तास । वाहि कहत पुन भाव प्रकाश ॥१२॥

सवैया

हौं कब वे अंगसौं अंग राग, बठाय सुहाग के पैम पगैंहों ।
हौं कब चंद की चांदनी मैं मुख चंद कौं चाह कैं तप भगैं हौं ॥
हौं कब वे बड़े नैंन सों नैंन मिलाय कैं चैन सौं रैंन जगैं हौं ।
हौं कब वे मधुरी मधुरी बतियां सुन कैं छतियां सौं लगैं हों ॥१३॥

—वही, पृ० १९७

नभू लाल

पद—राग भैरव

अनुभवी जागो रे, अज्ञान रेन गइ ।
उदे भयो ज्ञान भानु, मिथ्या नींद त्यागो रे ॥ अनुभवी० १
संशो ग्रन्थी कर्म ग्रन्थी, अहंग्रन्थी छूट गई ।
खंड खंड जोत भइ, बंध भय भागो रे ॥ अनुभवी० २
महा वाक्य सिद्ध भयो, पचकोश पार गयो ।
असीपद एक रह्यो, जाकुं लक्ष लागो रे ॥ अनुभवी० ३
न भूतो न भविष्यंति, जल होय बीचरंती ।
सभराभर एकरस, मन कर चाखो रे ॥ अनुभवी० ४

—नभूवाणी, पृ० २११

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद—राग भैरवी

सतगुरु जी ने सेन में समजाया रे, मेरे घर में शाह दरशाया । टेक
पोथी कुरान परापर वस्तु, सो परापर पाया ।। सतगुरु० १
पथ्थरसों पथ्थरसुं प्रीती, आगे चित में पछताया ।
जीव परोक्ष अपरोक्ष लखांया, जीव नामक तजी काया ।। सतगुरु० २
सहज दयासुं संश[1] टारा, ठीक जनम में आया ।
नभु निरंजन तहाँ नहि दोझक, मीस्ती बी नहीं पाया ।। सतगुरु० ३

—बही, पृ० २११

पद—राग बीलावर

गुरु बिनु को अभिमान मिटावे । टेक
मान गये बिनु मोक्ष न पावत, सो गुरु ग्यानतें गर्व घटावे ।
ग्यान बिना नर पामर जैसो, लोभ प्रपंचन में लपटावे ।।गुरु० १
सुरत नहीं चढ़ी पवन दौर पर, दुसह माया लहर लटावे ।
नभु तुं खेल पाँच देही पर, हेलां में यह तिमिर हटावे ।। गुरु० २

—वही, पृ० २१३

पद—राग गोड़ी

सब जग स्वारथ के संगी रे, नहीं कोई परमारथ रंगी ।
न लहे कोइ पराइ पीडा, आपस्वारथ चंगी ।। सब० १
आंबा[2] म्होवा तरवर सुन्दर, बहुत बरस फल खाये ।
फलत नहिं तब काठी कारन, आला काटन खाये ।। सब० २
महिषी दुझ रही तब वाकुं, हांक दइ जंगल में ।
कोस करन कुं चरमा चहिए, तब ढुंढत है जंगल में ।। सब० ३
खेड करी तब बेल भला है, फरी बरध भयो अटके ।
ताकूं घास न डारे कोइ, गली गली में भटके ।। सब० ४
गरज परे तब प्रीत बढ़ावे, गरज[3] सरी तब बैरी ।
नभु सुरीनर दानव सबको, ऐसी रीत में हेरी ।। सब० ५

—वही, पृ० २१७

पद—राग काफी

समज ले श्रुति के बिचार । समज० टेक
चतोवा इमानि भूतानि, सृष्टि समग्र पसार हुँ वारी ।
प्राज्ञामानंद ब्रह्म अयं सो, आत्मा एक अपार ।। समज० १

---

[1] संशय, [2] आम, [3] स्वार्थ ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तत्वं त्वं तत असीपद अदबद, सोहं डंसो च्यार हुँ वारी ।
नभु वानी परस भर भराभर, ठर रहे बानु आधार ।। समज० २

—वही, पृ० २१८

पद—राग काफी

निस दिन मन लयलीन लक्ष में । निस० टेक
सोइ लक्ष को सुमरन अनुभव, दृष्टि परे कोउ क्वचित दक्ष में ।। निस० १
श्रुति के वचन अर्थ फ़ल सोइ, एक असम्भव अन्य पक्ष में ।
इन्द्र सदन सुख काग बीष्टसम, रीद्धिसीद्धि नीधि नव पुट कक्ष में ।। निस० २
जयति सच्चिदानंद ब्रह्म गुरु, नभु परोक्ष नाहिं प्रत्यक्ष में ।
पूरण प्रकास अखंड अगोचर, एक असिपद उरध वृक्ष में ।। निस० ३

—वही, पृ० २१९

छंद—झुलना या मंगल

कर सत संगत नीत, प्रीत परमारथी ।
देख बिचारी साथ, तेरो तब स्वारथी ।।१।।
सत संगत विनु ग्यान, कहांते पाइए ।
काग सदन में मुक्त, कहां ते लाइए ।।२।।
मानसरोवर मुक्त, चारा है हंस का ।
कउआ न जाने जुक्त, हसा के बंस का ।।३।।
सत संगत परताप, बेद श्रुति गाव ही ।
जीन को सुकृत सुद्ध, तीन कुं पावही ।।४।।
उगे अनुभव अर्क अंधेरी जायगो ।
सद्गुरु शब्द बिचार, अन्तर में लायगी ।।५।।
समज शिष्य सुजान, संतन की सेन में ।
नभु निरंजन राय, निरख निज एन में ।।६।।

—वही, पृ० २२७

कटाव

श्री ब्रज राज नंद दुलारे, तुम हो जीवन प्रान हमारे ।
श्री ब्रंदाबन में जुग जीवन, कर बसी धुन,
कान मनक सुन, मन भई उनमुन, परिजन शंक न,
अरपन तन मन, बीपरीत बन,
ठोर ठोर के, दोर दोर के, काम जोर मील,
ठोर नहिं छन, चलन चपल ढिग,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आ कहत करजोरी, नभु सखी चहनन,
विनय उचारे श्री ब्रज० तुम हो० १

—वही, पृ० २३५

पद—राग सोरठ

मास सावन सुखदाइ, सखीरी मास सावन सुखदाइ। मास० टेक
सब सखियन मिल झुलत हिंडोला, झुलन की रत आई ॥ मास० १
जामा पटका लाल लाल के, पगियाँ लाल रंगाइ।
राधे रंग कसुंबल केारी, कंचुकी सुरंग सुहाइ ॥ मास० २
जडीत लालमनी खंभ हिंडोरा झालर लाल बनाइ।
लाल मेखीकर ओर सखीन के, नभु निरखी बलि जाइ ॥ मास० ३

—वही पृ० २३९

पद—राग सोरठ

काना नेनोदी कटारी मोहे मारना रे, काना० टेक
तरछी नेना बरछी लागे, काम कटक दल उमग्यो जागे,
मधु मधुवासी फोगट फांसी, मोहन मोरे गर डारना रे ॥ काना० १
कर सासेरी हेरी फेरो, गीरधारी तोरे गुन घेरी,
नभु सखी चरन कमलदी चेरी, चाउं बलिहारना रे ॥ काना० २

—वही, पृ० २३९

पद—राग सोरठ मल्हार

उधो ऐसी हमसुं कीनी। उधो० टेक
बेली छुट गये ज्यों भमरा, फिर तपास नहीं लीनी ॥ उधो० १
आगे छेह देन की मन में, बीरह आग कत दीनी ॥ उधो० २
छल की बात श्याम सुन्दर की, आगे हम नहीं चीनी ॥ उधो० ३
छुगत जोग की कैसे लहिये, अबला प्रेम अधीनी ॥ उधो० ४
नभु सखी करके कह निहोरा, मैं उनके रस भीनी ॥ उधो० ५

—वही, पृ० २३९

खंडिता नायिका विषयक कवित्त

सुन्दरू किंवार खोल, कौन है अंधेरे में।
गोरी में गुपाल ठोर छोरने के प्रात में ॥
प्यारि में पितांवर, सो भूलसुं लियो है काल।
बिनता में बनमारी, गजरा है हात मैं ॥

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हेली में हरि, रघुनाथ युद्ध करो साहे,
स्यामा घरश्याम, जाय बसों बरसात में ।।
प्यारी तेरो प्रान, कहि थक्यो प्रेम हुतें ।
नभु नंदलाल कुं हठीये बेध बात में ।। १

—वही, पृ० २४२

खंडिता नायिका विषयक कवित्त

आज आये केसे, अनोखे से लगत बाल,
ख्याल रेन जागे तें, नेन रंग राते हैं ।
ठरत न चरन धरत, डगत नहि चित्त ठोर,
ओर सुनो तान गान, चुक चुक गाते हैं ।।
साची निसानी सो, जुठी करने के काज,
लाज के जहाज होय, सोगन सो खाते हैं ।
ऐसी होत नीत नीत, केती कहे दानत सुत,
नाहीं नाहीं कहत तिहां, रोज रोज जाते हैं ।। २

—वही, पृ० २४२

कवित्त

नेन के बान लगे तन में, बदनामी के बीज में बोइ चुकी री ।
उस नंदलला संग प्रीत लगी, जंदुगानी सें हाथ में धोइ चुकी री ।।
घर बार तजो कुल लाज तजी, माय बाप को नाम डबोइ चुकी री ।।
अब लाख करोर कहो सखी री, जैसी होने की थी सो तो होई चुकी री।।

—वही, पृ० २४२

दलपत राम

श्रवणाख्यान

दोहा

गणपति गौरि गिरीश रवि विष्णु विमल यश लोक ।
विधु न दीश दुःख की हरै, सुख दय करे अशोक ।।१।।

—श्रवणाख्यान, पृ० १

प्रश्न दोहा

को कवि दलपति राम है, ठरत कहां किहि ठाम ।
कौन ज्ञाति अरु जाति है, करत कहां नित काम ।।१२।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तर कवित्त

देश गुजरात दुनिया मैं जैसो दीसै बाग,
अहमदाबाद वामें उत्तम अटाली है।
आसपास और प्रांत सारे सो तो क्या रे जैसे,
जामे प्रजा फूलबारी जैसी फूली फाली है ॥
सुधारे की बेली बोवै वामें जो साहेब लोग,
सो मैं कविता रस से पोषी अरु पाली है।
कहै दलपतिराम कहत हुँ सत्य जान,
जाति विप्र जानौ मेरी ज्ञाति तो श्रीमाली है ॥१३॥

—वही, पृ० २१

आत्मा ते आत्मज अति प्यारा, कौन गिनति यह तनुदृग तारा।
पिता प्रवास करत परदेशे, उपराजत धन अधिक कलेशे ॥४७॥
पाप करत कबु होइ प्रपंची, सुत कारन धन राखत संची।
आतप ताप आप सहि काया, तात करत सुत के शिर छाया ॥४८॥
अल्प अहार मिलै जो कबही, छुधा सही सुत को देत।
बही सुत कारन निज शरीर गमावे, तो दृग को कुन मात्र कहावे ॥४९॥

—वही, पृ० २५

कबहु जगत में कोटिधा और कियै उपकार।
सुख न दियो पितु मातु कूं तो सब छिन में छार ॥५५॥
जिन्हें निज पितु मातु को कियो न प्रत्युपकार।
क्या करि हैं सो और को है मतलब का यार ॥५६॥
तात सकलींच तात जहु तनकन रखना त्रास।
हुकुम मानि हाजिर रहौं, राखहु दृढ़ विश्वास ॥५७॥

—वही, पृ० ३७

पति कुँ पत्नी पत्नी कूँ स्वामी, सुख दुख बात बरन विश्रामी।
दंपति सम सगपंन नहि दूजा, कहा तनुज अरु कहा तनूजा ॥७६॥
जो तु स्वर्ग निवासव सेरी, तौ फिर कहहु कहा गति मेरी।
जो सुत निज बनिता वश रे है, तो तुम पीडा अति पै है ॥७७॥

—वही, पृ० ३९

धेनु अधिक अरु अधिक महिषी, करत घनै किंकर जन कृषी।
स्वर्ग समान तिघर सुख लैहो, पंचामृत मय भोजन पै हो ॥९७॥
स्नेह सहित में सजि हों सेवा, भाव धरि हों भू देवा।
भूषन वसन अमौलिक अर्पै, तुमकूँ सरस अशन से तपै ॥९८॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाहन विविध सुखासन जैसे, अहो स्वामि पावहु सुख ऐसे।
पथ से मैं तब पांव पखारो, है अनुचर पुनि और हजारो ॥९९॥
इत वनवास अधिक दुःखदाई, वनचर सम वसि वो फल खाई।
मन क्रम मानहु वचन हमारा, मम माय रूप गुधारहु प्यारा ॥१००॥

—वही, पृ० ४१

दोहा

परमहंसोक्ति

हंस कहै हरि हर भजहु, करहु आत्म विचार।
व्यापक ब्रह्म विज्ञान बिन, नहि पावै भवपार ॥१८

कवित्त

श्रवणोक्ति

सचर अचर सब में है ए अखंड ब्रह्म,
ब्रह्म ते भयो है सोई ब्रह्म में समायगो।
हरिहरादिक सब अंश एक ब्रह्महुको,
वह पुनि अंते एक ब्रह्म में वहायगो॥
ऐसे मात तात पुनि अंश एक ब्रह्म हि को,
ताको तजी औरन को धिमत क्यों ध्याएगो॥

—वही, पृ० ६१

दोहा

संतहु पापिन संग ते परही नरक मझार।
ज्यों सज्जन खल संग तें, बिन अधखाय तमार॥ २०

—वही, पृ० ७३

अविनाशानंद

पद ९—राग लावणी

भोरे बंके बिहारी लाल, चाल चीत चोरे।
तोरे बंके नैन विशाल, करेजवा कोरे॥ मोरे०
शीर बंकी कलंकी धार, प्यार कर प्यारा।
मोरे खाव्रन दिल खुसियाल, ख्याल कर न्यारा॥ मोरे० १
कैसी बंकी कमर हर कंस, हंस गती हेरी।
शीर बंकी पाग बनाय, गाय गुन लेहेरी॥ मोरे० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर बनिता संग बिहार, हार धर हीय में ।
मुख बोली अमृत बोल, कोलकर कीय में ।। मोरे० ३
क्युं नाचे कमल द्रग शाम, काम कर कमनं ।
मोये जांनी दासी अविनाशी, गाय गुंन रमनं ।। मोरे० ४

—अविनाशानन्द काव्य, पृ० ५

पद १२

परनारी सों करी यारी, बारी है दुःख की ।
ता कारन समझी विचारी, बात सुन सुख की ।। परनारी०
अज इंद्र चंद्र भये अंध, नेन लखी नारी ।
गती गौतम ग्रह में कीन, दीन भये भारी ।। परनारी० १
बड लंका वंका कोट, नीशाचर पुरा ।
परनारी के परसंग, भये चकचूरा ।। परनारी० २
सब सब भीत त्रिलोकी भीत, आपकी कीनी ।
सो दुःख पायो दश शीश बात कहो दीनी ।। परनारी० ३
सो बातन को एक बात, धात दुर करना ।
अविनाशानंद की शीख, धीय में धरना ।। परनारी० ४

वही, पृ० ६

पद ३२—राग ठुमरी

दुसरो कौन दुखदाई रे दुसरो कौन दुखदाइ दारा बीनु०
चंद्र इंद्र कुं कलंक लगायो, सुजस दीयो न साई रे ।
रावन दश शिष कटायो, कुल सहीत छीन माइ रे ।। दुसरो० १
शृंगी पारासर नारद पर्वत, सुर गुरू सुखदाइ रे ।
लांछन जुक्त कीये जग सब ही व्यासादिक कवी गाइ रे ।। दुसरो० २
जोगी जती तपसी संन्यासी, ध्यान में ध्यानी रहाइ,
ताकुं ख्वार कीये पल छीन में, जानत संत सुहाइ रे ।। दुसरो० ३
चतुरानन पंचानन जैसे, जग इश्वर कहवाइ रे ।
लीने सबे चावा नीज मुख में, अबला बल अधीकाइ रे ।। दुसरो० ४
बडे बडे संन्यापती लुटे, दीये कलंक लगाइ रे,
अविनाशानंद के मन क्रम वचने त्रीय संग तजहु भाइ रे ।। दुसरो० ५

—वही, पृ० १९

पद ४२—दोहरा

सुशील शील ब्रतधर सदा, कदा न व्यापत क्रोध ।
बोध अधिक बुद्धि प्रबल, सबल सार सब शोध ।। १

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बंक निशंक विलोकनी, लोकनी धरत न लाज ।
काज अकाज करे नहिं, राखी लाज मिजाज ॥ २
वाचक सुख दायक बदे, मदे न अंध महंत ।
मनमथ व्यापे न मन में, सो साचा जग संत ॥ ३
दिल दया दाता सदा, ज्ञांन, मांन विज्ञान ।
पास विनासन दास प्रद, समता शील सयांन ॥४
निज गुन मुख तें नां कहे, लहे न पर के दोष ।
रोश न गुनगन कोश मुनि, सुनि कीर्ति निरदोश ॥ ५
जिनकुं मिले मुनि जगत में, पाप हरत संताप ।
आप आप गुन विमल अति, मति अति गती अमाप ॥ ६

—वही, पृ० २९

पद ४४—छप्पय

सोम से शीतल रूप, अनंग से द्युति अनुपा ।
जक्त भक्त सब जान, शीव सुत सम सुखरूपा ॥
गुणनिधि गोरख साध, शिरोमणि से जग जाने ।
कवि राज से काव्य, हुमे अती खूब सयांने ॥
सुर जरा सिंघ दशशिश से, महि रिपु भिति घर आन ही ।
अविनाशनन्द प्रभु प्रगट विनु, सो मतिमंद प्रमांन ही ॥

—वही, पृ० ३१

पद ५३—छप्पय

हिंसा करत न लेश, लेश आमीष न खावे ।
परत्रिय तजे प्रसंग, मध पीवत नही पावे ॥
अडत[1] न विधवा अंग, अंग निज घात न करही ।
चोरी में देत न चित्त, कलंक न कोइ शिर धर ही ॥
नहीं नींदत कोउ देव को, बिन खप तो नही खात है ।
अविनाशानंद श्रीमुख क्यो विमुख न कथा सुनात है ॥

—वही, पृ० ३३

पद १०७—राग भैरवी

बगीया में मीले बरवीर, भलाजी मोये ।
तरुन शाम संग तरुन उमंग भर, सोहत ग्वालन भीर ॥ भला० १
मरम की बतीयां कही कर छतीयां, डार्यो प्रीतम हर पीर ॥ भला० २

---

[1] छूना ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निपट झपट करो कपट कुटील पीया, फार्यो चतुर वर चीर ॥ भला० ३
अविनाशानंदना नाथ कर पकरो, झकझोरी जमुना के तीर ॥ भला० ४
—वही, पृ० ५३

पद ११०

आवत आली बगीयन से ब्रजराज । आवत०
नीलमनी सम तन दुती नौतम, नौतम बसन समाज ॥ आवत० १
वंशी अधर धर कनक कटक कर, गीरधर गरीब निवाज ॥ आवत० २
ग्वाल बाल संग बालन भावत, निरखत रतीपती लाज ॥ आवत० ३
अविनाशानंद अजब छबी नीरखी, जनम सुकल कीयो आज ॥ आवत० ४
—वही, पृ० ५९

पद १२१

छेल छुवोन छतीयां हमार, फाटेगो मेरे अंचरवा । छेल०
लाख टकेकी लीनी सारी बिहारी, नागर नंद कुमार । फाटे० १
उरज उतंग नहीं शाम चतुर पीया, नाजुक नवीन लगार । फाटे० २
लोक नगर के देखे डगर में, ठाड़े सब नरनार ॥ फाटे० ३
अविनाशानंद के जेल न कीजो, छोटि में अती सुकमार । फाटे० ४
—वही, पृ० ६९

पद १२२

तुम ऐसे न करो नंदलाल, ख्याल परनारीन से । तुम०
जात भरन जल में जमुना को, गेल न रोको गुपाल । ख्याल० १
कायकुं[1] तांनत मेरी नवल चुंनरीयां, प्रीतम जन प्रतीपाल । ख्याल० २
चुंबन मुख चख कायकुं मोहन, लखी के रूप रसाल । ख्याल० ३
अविनाशानन्द के आनन्द दैहुं, ऐहुं एकान्त में लाल ॥ ख्याल० ४
—वही, पृ० ६९

पद १२४

पाई दुर्बल यह नर देह, नेह कर नाथन से । पाई०
मात तात सुत प्रात त्रीया सब, स्वारथ करत सनेह । नेह० १
देव इच्छत नर देहकुं पायो, गायो निगम जश जेह ॥ नेह० २
पांमर परत्रीय में करी प्रीती, सीख्यो अनीति अछेह । नेह० ३
अविनाशानंद के सत्य विचारी, धारी ले अंतर तेह ॥ नेह० ४
—वही, पृ० ६९

---

[1] क्यों ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद १३१—राग जंगली

मन मोहन बजावे मुख मोरलीयां । मन०
कालंद्री त्रट कांन कमल द्रग, चीतवनी में चीत चोर लिया । मन० १
मरकत मनी सम नील कलेवर, गानतांन जीया कोर लिया ।। मन० २
मैंकी मटुकी लै जाति गोकुल सें, आइ डगर बीच फोर लिया ।। मन० ३
अविनाशानंद नाथ छुइ छतीया, मोतन माला मोरी तोर लीयां ।। मन० ४

—वही, पृ० ७२

पद २०८—पुर विख्यात

जाय के ले आवो कोइ प्रांन सनेही,
सुन्दर धरम कुमार रे सैयां ।
पल पल छीन छान जुग सम जावे,
जावे तजी तन प्राण रे सैयां ।।
रेनां दीनां मोहे कछु न सोहावे,
भावे न भोजन पांन रे सैयां ।। जायके० १
जरत है जियरा बीजोग से पीयरा,
हीयरा धरत न धीर रे सैयां ।
कठीन भर अबही नहीं फटही,
छायां बीनु बलवीर रे सैया ।। जाय के० २
मनी बीना ज्युं फनी निशदिन झुरे,
झुरे मीन बीना नीर रे सैयां ।
कर बिना ज्युं करीराज झुरत ही,
त्युं बीना शाम शरीर रे सैयां ।। जायके० ३
घर घर में पुर बनिता रोवे,
गली में रोवे, पुर बाल रे सैयां ।
नगर डगर में सबही जन रोवे,
पुर पशु रोवे बेहाल रे सैयां ।। जायके० ४
बहोत विलाप करत बडे भाइ,
मेघ बिना भानुं मोर रे सैयां ।
छोटे इच्छाराम विलखत छीन छान,
चंद बीना ज्युं चकोर रे सैयां ।। जायके० ५
बीरह व्यथा तन बहुत संतापे,
आवे न दुःख को छांडरे सैयां ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अविनाशानंद नाथ कब ऐहे।
भक्त वच्छल भगवंत रे सैयां ।। जायके० ६

—वही, पृ० १०६

पद २४१—राग कहरवा

स्वामी श्री सहजानंद भज मन स्वामी।
सर्वाधार सकल सुखराशी, अविनाशी आनंद ।। भज मन० १
जन रंजन भंजन भव तारन, कारन करुना कंद। भज मन० २
धर्मनंद सब धाम के धामी, स्वामी सब जगवंद ।। भज मन० ३
अविनाशानंद के अवतारी, सुखकारी सुख कंद। भज मन० ४

—वही, पृ० १२६

वैद्य कुंवरजी नथु

श्री कल्याण राग—पद १

गौरी कुमार गज को वदन जाको, गौरी कुमार। टेक
सुंदर-वर, शंकर-सुत सेवुं, शुध बुधनो रे भरचार ।। गज को० १
चार भुजा कर कंकण सोहे, पीत वसन धरनार ।। गज को० २
मुगट मनोहर शीर पर सोहे, सिंदूरनो रे शणगार ।। गज को० ३
मणिगण मोतन की उरमाला, लाल कुसुम तणी लार ।। गज को० ४
कुंवरजी रे भय हर विघनेशा, सुखवर की रे सरदार ।। गज को० ५

—कुंवरजी कीर्तन संग्रह अने भक्ति विवेक, पृ० १

राग बिहाग—पद १

हरि का भजन बीनुं जनम गमायो मैं। हरिका० टेक
सुत वित देह दारा करी अपनो,
सपनो साचो रे, मानी मनकुं भ्रमायो मैं ।। हरिका० १
विविध विधे पकवान पीरस कर,
साधुं कुं उवेख कर काफर जमाया मैं ।। हरिका० २
भयो मेरो जो बन छीन, बिषयतन सें,
रती सुख समजी ने जीव कुं रमायो मैं ।। हरिका० ३
कपट वेपार कुंवरजीए कीनो,
मु रीकुं गमाइ बेडी करु कमायो मैं ।। हरिका० ४

—वही, पृ० १०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद २—राग बेरावल

सुनो मेरी प्यारी राधे, कहुँ कछु बात । टेक
नीक है वदन तेरो, शोभत सुगात ।। सुनो मेरी० १
बाती जब रेन आधी सोये मम तात ।
फिर बलदाऊ पोढे, पुनी मम मात ।। सुनो मेरी० २
तुं हारे भवन आयो, पीछली सुरात ।
बोल कही चल गयो, खुल्यो ना कपात ।। सुनो मेरी० ३
सखि अब कारा भयो, भये परभात,
कुंवरजीनो स्वामी ऐसों, जाणु तो न जात ।। सुनो मेरी० ४

—वही, पृ० २५

पद ४—राग वेरावल

सुनके रसिली बानी खुल्यो है अगार । टेक
कर सें लगाइ कर, भइ दीलदार ।। सुनके० १
अपने भवन लाये, भयो झलकार ।
मज्जन कराइ पुनी, कीयो शणगार ।। सुनके० २
भोजन बनाइ लाये, कंचन को थार,
जल भरी झारी लाये, पाये दो दुलार ।। सुनके० ३
तं बोल चवाइ वुपनी कीयो है जुहार ।
कुंवर जी का स्वामी सों, करत विहार ।। सुनके० ४

—वही, पृ० २६

पद १—राग विभास

गुण तो तुहारा[1] रे गाऊं, गुरूजी मैं गुण तो तुहारा रे गाऊं । टेक
श्री हरि तेरो शरण तजी ने, ओर शरण नहि जाऊं । गुरू० १
तुंहारी कृपा से मैं नरतनु पायो, अब तो खोटे न खाऊँ ।। गुरू० २
मन क्रम वचन मनोमल छांडी, दास दासन को रे थाऊं ।। गुरू० ३
पाप करूं मैं पुराण प्रीते दिनदिन अधिक उछांऊँ ।। गुरू० ४
कुंवर जी के अवगुण जोशो, तो भव पार न पाउं ।। गुरू० ५

—वही, पृ० ३३

पद १

ऐसी राधे गोरटी[2] रे, चोरटी आहिर की । टेक
कसुंबा को रंग चोर्यो, चंद्र को बदन चोर्यो ।।

---

[1] तुम्हारा, [2] गोरी ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कोकिला को कंठ चोर्यो, नासा चोरी कीरकी ।। ऐसी० १
गज केरी चाल चोरी, इंद्र को गुमान चोर्यो ।
केसरी को लंक चोरी, दामनी शरीर की ।। ऐसी० २
नाग की नागनीयां चोरी, दाडिम की कलियां चोरी ।
मृग केरां नेनां चोर्यो, छल बल मीन की ।। ऐसी० ३
रती रती सब को चोर्यो, सामरा को चित्त चोर्यो,
सुर करे दुरशन दीजे, ठाडो जमुनां तीर को ।। ऐसी० ४

—वही, पृ० ४३

पद २

मेरो मन लीयो भैया, गोरी गोरी गोरी या । टेक
रूप तो रसिला केरो, देखन कुं जाइ ठेर्यो,
कुंजन छुपाइ हेर्यो, ग्वालिनी की छोरीयां ।। मेरो मन० १
हमेरी पकड कीनी, रंग में रसीली भीनी ।
लीयो मन छीनी कीनी चित्तवाकी चोरीयां ।। मेरो मन० २
जैसी लांगी मीनवारी, दीप सें पतंग सारी,
ऐसी बडी प्रीत धारी, चंदवा चकोरीयां ।। मेरो मन० ३
लाज से रहत छांनी, पूरव की प्रीत जानी,
कुंवरजी राधा रानी, बोलती बहोरियां ।। मेरो मन० ४

—वही, पृ० ४४

पद १

मैया मोरी रे, ऐसो मैं जान्यो नहिं कान । टेक
ब्रंदावन की कुंजन में रे, हमकुं भइ है पहेचान ।। भैया० १
गान सुनायो तान सुनायो, दे दे अधिक मोसे मान ।। मैया० २
छेल छबीलो नंद दुलारो, ओहीपें वारूं मोरो जान ।। मैया० ३
अपने वदन तें हम कुं दीनो, पीयो है अधररस पान।। मैया० ४
कुंवर जी नो कंथ रसीलो, वे तो पीयारो मेरो प्रान ।। भैया० ५

—वही, पृ० ४५

पद २

मैया मोरी रे चितवा चोराई गयो श्याम । टेक
वदन विधु-शत कोटिक-शोये, वारी छव कोटिक काम ।। मैया० १
राधे नाम बसुं बरसाना, गोकुल नटवर नाम ।। मैया० २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तही मत जानो जीव जगत के, युगुलु को गोपुर धाम ।। मैया० ३
कुंवर जी का कंथन कीमें, तन मन अरपित वाम ।। मैया० ४

—वही, पृ० ४५

पद ३

दुलारी मोरी रे, तेने कीयो बड काज । टेक
गोपुर तें हरि जगत बसायो, रक्षक धरम को पाज ।। दुलारी० १
गोकुल में हरि वास वसत हैं, सुरनर सहित समाज ।। दुलारी० २
सुकृत से जामात भयोरी, चौदह भुवन को राज ।। दुलारी० ३
कुंवर जी नो कंथ रसीलो, करहुँ रसिलो वाकी लाज ।। दुलारी० ४

—वही, पृ० ४५

पद ४

राधे कुं ले आई मैया, जाई बरसान सें ।। टेक
दुलह हमारो कांनो, दुलहिनी राधे जानो,
अबना दुराव आंनो, कह्यो भ्रखुभानने ।। राधे० १
लगन लीखाइ लाये, ब्रज की बरातां आये,
मंगल मनाइ गाये, दीयो बहु दानने ।। राधे० २
शामकुं शृंगार दीनो, कुल को बेवार कीनो,
अब तो भयो आधिनो पायो पकवान नें ।। राधे० ३
कुंवर जी के छे भैया, गोप हो चरावो गैया,
पाउं में पनैयां पेरी, जाऊँ अब कानने ।। राधे० ४

—वही, पृ० ४६

पद १

सदा विहरत रहुँ वृंदावन में,
नामकरण अवसर शीर नायो ।
आशिष पाइ मगन भए मन में ।। सदा विहरत० १
गोवरधन वन उपवन फिरहुँ,
करहुँ अलौकिक काज कुंजन में ।। सदा बिहरत० २
गोप गोवालनी के उर बसहुँ,
नेह लगाई नये ब्रज जन में ।। सदा बिहरत० ३
कुंवरजी मन मोहन रसिया,
युगल बीच रहुँ नद अंगन में ।। सदा बिहरत० ४

—वही, पृ० १३१

CC-0. Agamnigam Foundation. Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रेलवे विषयक पद

रेल बेल पें वारवार बलहार हार हरखें हेरी । टेक
इष्टेशन[1] अटकात जात है, चीलीपाट खेले खेरी,
दाम लीये तें काम करे है, बिना दाम वाकी वेरी ।। रेल० १
सारा प्यारा ओंर लबारा, रेता हेवाकुं घेरो,
टीकीट लेत है दाम देत है, बैठत है मरदा मेरी ।। रेल० २
लेत विसामा ठाम ठाम, मुकाम बार बोले टेरी,
खबर देत जावे निकेत, ठाड़ी रेवे रस्ते नेरी ।। रेल० ३
चली चली जब जात जोर में, आत जात पवनां लेरो,
कुंवरजी सुख कैसे बरनुं, लेती पैसा की ढेरी ।। रेल० ४

—वही, पृ० १३२

कवित्त

जगत बनायो तब, ब्रह्माजी कुं नांही मिल्यो,
कोऊ कविराज साची, बुद्धि न बताइ है ।
सागर को पानी सुधा, सरस बनायो नांही,
चंदा कलाहीन वाकी, वहन मीटाइ है ।।
मृगमद जाइ के कुरंग नाभ मांही कीयो,
होत जो झभांन चाडीया कीपै भलाइ है ।
कस्तुरी के काज चाडीया की जीभ काटे जग,
तासें मटे क्लेश, मेरे मन यह आइ है ।।
कहे कुंवरजी शशी सागर सुधारे होत,
रोग प्यास जात, मेरी मति ललचाइ है ।।

—वही, पृ० १३३

सौ० इन्दुमती ह० देसाई जो

आपना चरणोमां[2]

आशावरी

क्या धरूँ चरनन में मोरारी क्या धरूँ चरनन में ?
ए[3] तन तेरा ए मन तेरा चित्त धरूँ चरनन में ।। मोरारी०
जगत सारा तूही रच्या प्रभु आप रहे घट घट में,
जल में देखुं स्थल में देखुं रहे हरि तुम सब में ।। मोरारी०

---

[1] स्टेशन, [2] आपके चरणों में, [3] यह ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अणु अणु में प्रभु आप रहे हैं, कृति देखुं सब जग में ।
काहे हरि में मन्दिर जाउं ? आप रहे मेरे दिल में ।। मोरारी०
सागर प्रभु का पलंग देखुं, शयन करे हरि मोरे ।
दासी इन्द कहे नाथ पधारो, चित्त धरूं चरनन में ।। मोरारी०

—श्री कृष्णमंजरी, माला १, पृ० १

तोरे गुण

गाउं में गुण तोरे श्री हरि नहि पार पामुं में कदी । गाउं०
वेद पुराण के स्मृति श्रुति प्रभु, करत बखान तोरे फीरी फीरी,
जन्मोजन्म में मुख से गावें, शब्द पूरत नहि श्री हरि ।। गाउं०
कहुँ गुणसागर के दयानिधाना, करुणासिंधु हरि,
भक्तन के लीये आप पधारत, कहान करुणा करी ।। गाउं०
आश हमारी एक हय विभु तुम जानत अन्तर्यामी ।
मुख से इन्दु क्या कहुँ प्रभु लाज रखो श्रीहरि ।। गाउं०

—वही, पृ० ३३

आपकी चरणरज

मालकोष त्रिताल

तुमारी[1] तुमारी चरणरज नाथ, ग्रहे जो मुरारी हमेरो हाथ । तुमारी०
एक दिन आई मैं जाऊं कबी ऐसे, चरन में ग्रहे जो ओ दीन दयाल ।।तुमारी०
निश दिन आपको भूतल रही में कर दीयो, मोहे क्षमा हो राज ।।तुमारी०
पुरुष पुराणी करुणासागर याचु प्रभु अब कृपा दयाल ।। तुमारी०
पतित पावन ओ अविनाशी, घरणीधर प्रभु श्री घनश्याम । तुमारी०
मागुं मुरारी मैं दर्शन तुमारा, स्मरूं स्मरूं मैं इन्दु तुंज कृपाल ।। तुमारी०

—वही, पृ० ३४

हार गई

मैं ता हार गई हो नाथ अब तुम कृपा करो भगवान । मैं तो०
बहोत गये अब तक आये नहि मोहे चैन नाहि दिनरात ।
ए संसार की माया में से छुड़ावो तुम कृपाल ।। मैं तो०
भजन तोरूं कीर्तन तोरूं, मागुँ निशदिन नाथ ।
भाव भूल्या प्रियतम हमारा पधारो तुम आज ।। मैं तो०

---

[1] तुम्हारी ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मोह माया मत्सर भारी, सतावे दिन रात।
स्मरण तोरू थाय नाहि प्रभु इन्दु रंज हुइ मोरार ।। मैं तो०

—वही, पृ० ३५

मैंने देखे

भैरवी त्रिताल

मैंने देखे एक गोविंद मुरारी जो बिन जग्त देख्यो मैंने खाली। मैंने०
ममता देखी मैंने हरि में, मोहन प्रेम भर्या गिरधारी।
अमृत सागर सुधासिंधु श्याम हमेरे वनमाली ।। मैंने०
ज्योति नयनों में प्रेम भरेली मनमोहन सूरत मुरारी।
हरि प्रभु मैंने जानी तुम बिन विकट जगवाट भारी ।। मैंने०
पूर्ण तुं पुरुषोत्तम तुज बिन देखुं में क्या जग मांही।
इन्दु के तुम प्राण आधारे मिले मुज को श्री अविनाशी ।। मैंने०

—वही, पृ० ३६

नूपुर धूनी

दुर्गा

बोजे बाजे नूपुर की धूनी सखी,
वहाँ चले गोपीन संग मोरे हरि।
लीनी मुरली प्रभुजीए करे ग्रही।
सुधा पूरे अमीरस स्नेहे भरी ।। बाजे बाजे०
बाजे मृदंग चंग अति सुन्दीर हरि,
मोही गोकुल कामिनी अति प्रेमे भरी।
रस रूप मोरे कृष्ण प्रभु आये अहिं,
इन्दु नमत हुँ चरनन में झुकी झुकी ।। बाजे बाजे०

—वही, पृ० ३८

वनमाला

काफी त्रिताल

बनमाला गूंथे श्री मोरार,
फूल रंग बेरंगी अपार ।। वनमाला०
तुलसी पत्र प्रभुजी को प्यारूं अति छे सखी,
गूंथे गूंथे ए हार महीं श्याम ।। बनमाला०

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्यांथी आवी ए जोने सखी केवी सुरभि,
लाजत है कस्तुरी अपार ।। वनमाला०
गूंथी मनोहर माल मोरे श्याम ने,
धरे धरे शणगार मोरे नाथ ।। वनमाला०
माला तोरा भाग्य की मैं क्या करूं बडाइ,
पहेरे इन्दु के प्रभु तारण हार ।। वनमाला०

—वही, पृ० ३९

अमारी[1] आश

आशावरी त्रिताल

अमारी आश को प्रभुजी एक दिन आप पूरेंगे ।
खता[2] कछु हो गई हमसे, मुरारी माफ कर देंगे ।। अमारी०
दया के सागरा मोरा कृपा के पल निधाना हो ।
अमेरे रंक को पर श्याम नजर तो आप लगावेंगे ।। अमारी०
जपत हुँ दिल में मोरे नहि चित रहत हय वारी ।
हृदय के दर्द हय भारी कहुँ क्या श्याम मुरारी ।। अमारी०
पधारो आप प्रभु मोरे दया कर नाथ गिरधारी ।
मिटा दो आग दिल की श्याम इन्दु के श्याम बिहारी ।। अमारी०

—वही, पृ० ४०

दिल की लगन

मालकोष त्रिताल

दिल को लगी लगन तोरी आज ।
मोहे मीलत नाहि मोरे नाथ ।। दिल को०
हृदय तलपत मन मू झावत,
मिलुं कब मोहे श्याम सुहाग ।
जो मोरे प्रभु सुन्दर कृष्ण जी,
मैं देख आइ चौपास ।। दिल को०
जलन कब बूझेंगी हमेरी,
हम जानत नाहि दयाल ।
जब मिलेगा तुज प्रेम जल मोहे,
मैं पाउं दिल आराम ।। दिल को०

---

[1] हमारी, [2] भूल ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक ही दिन एक ही बेला,
दे दीदारा नाथ।
इन्दु के हो प्रियतम प्रभु जी,
तो दर्शन है दयाल। दिल को०

—वही, पृ० ४४

राधेश्याम

तोडी त्रिताल

राधे गोरी मोरारी तुम श्याम जी,
श्याम जी श्यामजी हमेरे घनश्याम जी ॥ राधे गोरी०
गई एक दिन राधे जल भरवा काजजी,
मीले मीले बीच में मोरे कहान जी। राधे गोरी०
मिट्ठी[1] बातों से मन लीना तुंने गिरिवर,
लीना लीना हृदय मोरे नाथ जी ॥ राधे गोरी०
तेडी मधुबन में बैठे हैं कुंज भुवन में,
वाही बंसी मोरे श्री दयाल जी। राधे गोरी०
देखी देखी राधिका ने भूगट मांही सुंदरी,
चली चली रिसा के राधे श्याम से ॥ राधे गोरी०
राधे मोरी राधे मोरी वदत ऐ मुरारी,
तोरो प्रति बिंब है देख राधे प्राण जी। राधे गोरी०
आइ राधे श्याम संगे कीनी बात प्रेम से,
दासी इन्दु नमीनमी[2] करत दर्श मेरे श्याम जी ॥ राधे गोरी०

—वही, पृ० ४५

मेरे कहान

सखी री मोरे कहान नहि रे आये,
मैं तो मोद भरी हूँ प्यारे ॥ सखी री०
देखुं हरि मैं रास्ता तुमारा।
नाथ नाहि वहां पाये ॥ सखी री०
देख देख में थकी सखी मोरी,
श्याम छुपे मधुवन में ॥ सखी री०
नाथ तुम पर देह ओवारूं,
शीष धरूं चरनन में ॥ सखी री०

---

[1] मधुर, [2] नमस्कार करती हुई।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजे राजे पल पल प्रभु मैं तो,
देखुं कबीर सुरत हरि मेरे ।। सखी री०
प्रीति बस रही श्याम तुम्हारी,
खेल जगतन के नहि भावे ।। सखी री०
क्या धरूं मैं वस्त्र आभूषण,
प्रभु दर्शन विन दुःख पाये ।। सखी री०
नहि योग साधन कु जानत,
नहि जानत मैं तप में ।। सखी री०
निर्गुण ब्रह्म को मैं जानत नाहिं,
इन्दु जानत है हरि ।। सखी री०

—वही, पृ० ४९

जग-कथीर

मैंने छिपा लियो छिपा लियो कन्हैयो,
छिपा लियो छिपा लियो, मन को लगाय लियो ।। मैंने०
युग युग से बिसर रही थी, नाग के नथैयो,
नयन मिलाकर, वे आ गयो सांवरीओ ।। मैंने०
हिरदे पट खोलकर, थैठा दियो कन्हैयो,
मुख को मुस्काते, मेरो चित्त को चुरा लियो ।। मैंने०
मोर मुगट और कुंडल कानन को,
बंसरी को लेकर वे आ गयो सांवरीओ ।। मैंने०
बहेनी, अब खोजूं क्या मैं ? दिननाथ आ गयो,
जवहर कमाइ ईन्दु, जग-कथीर को छूडा दियो ।। मैंने०

मेरो प्रितम

प्रीति की रीत न जाने मेरो प्रितम
मेरो प्रितम, नंदराज को छैल,
प्रीत लगाई और नाहिं निभावत
रसिकराज रसके बिखर गये
भोर भई, नहिं आये मेरो प्रितम ।।
यमुना तीर, पनघट बन बन में
बांह पकर, ठठोली करत छी गये
पैया परूं नहिं माने मेरो प्रियतम ।।
फोर दीन्हीं मेरी दधी की मट्टकीआ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बरजोरी से सब गोरस लूंट गये
क्या करूँ और सतावे मेरो प्रितम ॥
मुरली बजावत, घूम मचावत
मधुरी तान, मेरी सुधबुध बिसरावत
सुनत सुनत मन भायो मेरो प्रितम ॥
रंग भरभर मेरी चुनरी भींजावत
खेलत खेलत सब सखीन बिच डस गये
मोहें केसर पिचकारी मारत मेरो प्रितम ॥
ऐसे धूगरे कान्ह नटनागर
ठगके लराई करके, हँस हँस ठग गये
निडर, निपट नाहिं माने मेरो प्रितम ॥
रसभरी मूरत छीन छीन भावदत
कपटी किशोर अति मेरे मन बस गये
देखत चित्त को लूभावे मेरो प्रितम ॥
लग रह्यो मेरो मन मोहन में
प्रीत की आँखें पिया की लग गई
अबतक क्यों नाहिं जागत ? मेरो प्रितम ॥
श्यामसुन्दर ईन्दु के प्रितम प्यारे
बिनती सूनो, हिरदे को लिपट गयो
दरश दीखावो, पधारो मेरो प्रीतम ॥[1]

—ईन्दुमती ह० देसाईजी

श्री रंग अवधूत महाराज

१

(राग काफी, ताल-दीप चंदी)

मेरो दत्त दिगंबर, एक ही तारनहार-ध्रुव
गुरुचरन रज मेरो तीरथ, ए ही गंग अघहार[2]....मेरो० १
गुरु-कंजपद ध्यान[3] स्नान मम, संध्या तर्पण सा....मेरो० २

---

१ उपर्युक्त दोनों पद्य लेखिका ने मुझे भेजने की कृपा की थी। एतदर्थ मैं इनका बहुत ही आभारी हूँ। इनके अन्य पदों के प्रकाशन की अनुमति के लिए भी मैं इनका बहुत आभारी हूँ।

२ पापों को दूर करने वाला।

३ गुरु के चरण-कमल का ध्यान।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वाध्याय[1] गुरुगुण संकीर्तन, सेवा तप कलितार····मेरो० ३
रंग गुरु बिन कोई न तेरो, विषय[2] विषारी[3] बिरवार मेरो० ४

—अवधूती मौज, पृ० १

६

गुरु चरन प्रीत मोरी लागी रे ! ध्रु०
सोती थी मैं जनम-जनम से, गुरुशबद से जागी रे। गुरु० १
हाट बजार फिरूँ मतवाली, लोकलाज सब त्यागी रे। गुरु० २
कोहं कोहं पूछत रागी, सोहं कहत विरागी रे। गुरु० ३
ना मैं रागी ना मैं विरागी, रंग-राग से भागी रे। गुरु० ४

—वही, पृ० ६

(राग-आशा माड, ताल-कहेरवा)

सून सून तपसी[5] ! ज्ञान सुनावुँ, फिर फिर ध्यान लगाव।
मन चले तो चलन दे, पण तन न जाय लगार॥
ऐसी भीतर सुरत[6] चलाव। टेक
गिल्ली दंडा खेल चलाया, गिल्ली उड़े आभ।
गिरत गिरत फिर दंडा मारा, फिर फिर उड़े आप॥ ऐसी० १
मन मरकट निशदिन भटकत है, भटक भटक स्थिर आप।
गोली सुरत बेहोश[7] बनाके, तदाकार कर थाप॥ ऐसी० २
कहाँ[8] कश्मीर, कहाँ गुजराता, कहाँ पक्षी की जात ?
चकोर चंदा नित आनंदा, ए ही सुरत साक्षात्॥ ऐसी० ३
सीतामाई शोक छवाई, दैतगढ घभडाय[9]।
सुरत चलाई सेना आई, रावण मार्यो राम॥ ऐसी० ४

[1] नित्यपाठ या मंत्र जप, [2] (i) कलियुग में तारन हार, (ii) जीवेश्वर के झगड़े से बचाने वाला, [3] विषमय, [4] साँप, [5] पूज्य महाराज श्री अपने पुस्तकों के प्रकाशक एवं अंतेवासी श्री अमृतलाल जी मोदी को प्रेमावेश में आकर कभी-कभी इस नाम से बुलाते हैं। अतः उनको उद्देश्य बनाकर लिखे गये भजनों में यह नाम स्वाभाविक ही आ जाता है। [6] सजातीय वृत्ति का लगातार प्रवाह, [7] मूर्छित, [8] काश्मीर में कुंज नामक श्वेत पक्षी होते हैं। वे वहाँ अपने अंडे रखकर समुद्र के किनारे पर ठेठ गुजरात तक दूर सुदूर, जुआर तैयार हो जाती है तब, दाना चुगने आते हैं। लेकिन उनकी सुरत उनके अंडों की ओर लगी रहती है और उसी सुरत के बल से उनके अंडों की वहाँ पर सेवन होती है, उसी बात का सूचक है। [9] घबड़ाना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रंग राग सब छोड़ जहाँ के सब जग अल्लाह पेख।
बाहिर देखे गद्धा कुत्ता, भीतर राम ही राम ॥ ऐसी०५
—वही, पृ० ७

१२
(राग आशावरी, ताल कहेरवा)

चौद ब्रह्मांड मेरी झोली में।....ध्रु०
अमुलख मोती हीरा माणेक, जड़ी बूटी मेरी झोली में।
ब्रह्मा विष्णु शिव सनकादिक, रिद्धिसिद्ध मेरी झोली में। चौद० १
धनपति[1] ताको पार न पावे, नवों निधि मेरी झोली में।
पंच कुई[2] की झोली हमारी, खैंचत सांई दोरी से। चौद० २
तीन गुणों का तांत बनाया, पट चितर मेरी झोली में।
रग रंगाया सद्गुरु नाथे, रंग निकाल्या झोली से। चौद० ३
—वही, पृ० ८

२२
(राग दोहरा)

एक अलख निरंजन सब जग, भूचर खेचर एक ही वासा।
बम्मन खतरी शूदर भंगी, म्लेच्छ[3] अनारज एक ही श्वासा ॥
पशु पंछी अरु कीट पतंगा, जलथल सब जग एक ही देवा।
स्वर्ग भुवन अरु सप्त पताला, गिरि कंदर जंगल नदी नाला ॥ १
राम कहे रेहेमान कहे कोई,[4] अउर्मइद कोई बुद्ध बखाना।
कृष्ण कहे क्राइस्ट कहे कोउ, जीन कहे को पारसनाथा ॥
महादेव कोउ गणपति देवा, शक्ति कालिका की कर सेवा।
वस्तु एक किन नाम अनन्ता, रूप मृत्तिका घटघट पेखा ॥ २
घटघट रमता राम रमैया, रहेम करे रहेमान कहैया।
अंतदुःख अउर्मइद मिटावे, कर्षत दुखडा कृष्ण कनैया ॥
जीत-इन्द्रिय सो जीन कहेलाना, प्रेम पिलावे पारसनाथा।
इशु ईश्क[5] अंतर पूर बहावे, कर्म मिटावे क्राइस्ट दाता ॥ ३
बुद्धिप्रकाश बुद्ध कहावे, महादेव सब देवनराना।
काल नियामक कालि कहावत, जन गणदेवा गणपति माना ॥

---

[1] कुबेर भंडारी [2] खाना, विभाग, [3] अनार्य, [4] पारसी अपने इष्ट देव को इस नाम से पहचानते हैं, [5] सर्वात्मभाव प्रेम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यापक ब्रह्म मिटावत भ्रम को, शिव[1] करे शंकर कहेलाना।
सक्कर मिश्री खंड[2] कहो कोई, स्वाद अनेरा एक बखाना ॥ ४
गहना[3] घाट अनेक दिखावे, अंदर कंचन एक ही जाना।
इसविध आतम सब जग व्याप्यो, सब कोई कहे अपने मन भाना ॥
पेड़ अनेक भीतर रस एका, साहेब[4] एक ही रूप अनेका।
नामरूप सब छोड़ निकम्मा, अंदर पेखत रंग रमैया। ५

—वही, पृ० १८

३०

(राग भीमपलास, ताल-त्रिताल)

(सबसे ऊँची प्रेमसगाई के समान राग)

सत से नाहीं चीज पराई।
जहाँ देखो वहाँ आपु समाई, रूप अरूप दिखाई। टेक
एक नूर विधु[5] सुर[6] प्रकाश्यो, मृगजल किरण ए ही।
सप्तरंग धनु आप दिखायो, अंत आपु समाई ॥ सत से० १
एक बूँद नख शिख तन व्याप्यो, हड्डी चाम सब ए ही।
पत्ति फूल फल शाखन माँही, एक पेड़ रस[7] माई ॥ सत से० २
जल तरंग अरु फेन बुद्बुदा[8], बरफन शीकर[9] सोई।
एक मृत्तिका घाट घड़ायो, घट कटोरी कहाई ॥ सत से० ३
एक तंतु पट सब बिखरायो, विधविध रूप दिखाई।
अश्व स्वार छवि भिन्न दिखायो, अंत[10] रंग[11] समुझाई ॥ सत से० ४

—वही, पृ० २६

४८

चलो सखीरी पिया मिलन को, वो नाथ हम को बुला रहा है। ध्रु०
ये तट गंगा वो तट जमुना, बीच में गोकुल लुभा रहा है।
श्वासा की बंसी बजा बजा के, वो नाथ ताना लगा रहा है ॥ चलो० १
अगली छोड़ो पिछली छोड़ो, बिचली गली से चलो री आली।
नहीं अँधेरा नहीं उजेरा, सुनेरी संध्या सुहा रही है ॥ चलो० २
देह की नैया मन हलैया, सूरत सढ़िया श्रद्धा भरैया।
जल गहरिया तृष्णा तरैया, वो राममैया रमा रहा है ॥ चलो० ३

---

[1] कल्याण, [2] खांड, चीनी, [3] आभूषण, [4] परमात्मा, [5] चन्द्र, [6] सूरज, [7] पेड़ का रस, [8] पानी का बुलबुला, [9] पानी के हलके से बूँद, [10] अंतिम, [11] रहस्य।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काहे को बातें काहे के नाते, कहाँ लजाते, कैसे हो जाते ।
दुई का परदा हटा के सारा, रंग अकेला जमा रहा है ।। चलो० ४
नींद गँवाई जाग हराई, अखंड आँखें मिला रहा है ।
नैनों का तारा श्याम छबीला, मैं—तूपने को भूला रहा है ।। चलो० ५

—वही, पृ० ४३

६३

(राग—देस, ताल-दादरा)

(अब तो मेरो राम नाथ के समान राग)

अब मैं कहाँ जाऊँ शरण छोड़ चरण तोरे····टेक
घर दुवार कोउ नाहीं, भ्रात बिरादर नाहीं,
नात गोत सर्व तू ही, माई बाप मोरे····अब० १
नाम सुन दौड़ आयो, पतित पावन मन भायो,
साँवरी सूरत देख धायो, दौड़ कर जोरे····अब० २
तू पिया मैं तेरी दुल्हन, अशरण शरण मनमोहन,
लज्जा तोकुं भवभंजन, मार तार ओरे....अब० ३
दिवस रैन चैन नहीं, स्वप्न छबी तू ही सही,
छटक छटक जाय कहीं ? कब लौं दिल चोरे····अब० ४
छोड़ छांड लोक लाज, भक्त भयी मिलन काज,
धूल पड़ी जगत ताज, दरस पाय तोरे····अब० ५
कोउ कहे नफट भयी, लाज मांझ अटक गई,
मैं पिया तेरी भयी, भेदभाव छोरे····अब० ६
घूंघट दूर फेंक दियो, हाथ में हाथ लियो,
रंग रूप एक भयो, कोउ कांही बोले !!····अब० ७

—वही, पृ० ५८

राजकीय संग्रहालय पुस्तकालय, लखनऊ State Museum Library, Lucknow
पुस्तक संख्या 3990
18.2.71

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट—२

सन्दर्भ ग्रंथ

हिन्दी

१	अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय	डा० दीन दयालु गुप्त
२	अखिल भारतीय हिन्दुस्तानी प्रचार सम्मेलन १९४५ की अधिकृत रिपोर्ट	हिन्दी प्रचार सभा
३	आश्रम भजनावली	सं० नारायण मो० खरे
४	उ० भारत की संत परम्परा	परशुराम चतुर्वेदी
५	आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास	कृष्ण शंकर शुक्ल
६	कृष्ण रुकमरीरी वेलि	सं० नरोत्तम स्वामी
७	खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास	ब्रज रत्नदास
८	चारण (त्रैमासिक) वर्ष ३, अंक १	
९	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	गोसाई गोकुल नाथ
१०	दक्खिनी हिन्दी	डा० बाबूराम सक्सैना
११	दादू	क्षितिमोहन सेन
१२	दादू जी की बानी	सं० स्वामी मंगलदास जी
१३	दादू दयाल की बानी	चंद्रिका प्रसाद
१४	दो सो बावन वैष्णवन की वार्ता	गोसाई गोकुल नाथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१५ नागरी प्र० पत्रिका सं० २०१३, अंक १

१६ ब्रज भाषा का व्याकरण — किशोरी दास बाजपेयी

१७ भजन संग्रह धर्मामृत — पं० बेचरदास

१८ भक्तमाल — नाभा जी

१९ भक्त नामावली — ध्रुवदास

२० भारतीय प्रेमाख्यानक काव्य — डा० हरि कान्त

२१ भारतीय भाषाएँ और भाषा संबंधी समस्याएँ — डा० सुनीति कुमार चटर्जी

२२ भारतीय प्राचीन लिपिमाला — ओझा

२३ मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ — डा० सावित्री सिन्हा

२४ मिश्रबंधु विनोद, भाग ३ — मिश्रबंधु

२५ महाराजा छत्रसाल बुन्देला — डा० भगवानदास गुप्त

२६ राज० का पिंगल साहित्य — मोतीलाल मेनारिया

२७ राजस्थानी भाषा — डा० सुनीति कुमार

२८ राजस्थानी भाषा की रूपरेखा — मोतीलाल मेनारिया

२९ राजस्थानी भाषा और साहित्य — मोतीलाल मेनारिया

३० संगीत राग कल्पद्रमु — सं० कृष्णानन्द

३१ सत सुधासार — वियोगी हरि

३२ सूफी काव्य संग्रह — परशुराम चतुर्वेदी

३३ सूफी महाकवि जायसी — डा० जयदेव

३४ हिन्दी भाषा का इतिहास — धीरेन्द्र वर्मा

३५ हिन्दी साहित्य का इतिहास — रामचन्द्र शुक्ल

३६ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास — डा० राम कुमार वर्मा

३७ हिन्दी साहित्य — आ० हजारी प्रसाद द्विवेदी

३८ हिन्दी साहित्य का आदिकाल — आ० हजारी प्रसाद द्विवेदी

३९ हिन्दी संत काव्य संग्रह — परशुराम चतुर्वेदी

गुजराती

१ अखानी वाणी — प्र० सस्तुं साहित्य वर्धक कार्यालय, अहमदाबाद

२ अखो : एक अध्ययन — उमाशंकर जोशी

३ अनवर काव्य — काजी अनवर मियाँ

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

४	अविनाशानंद काव्य	अविनाशानंद
५	अरजुन वाणी	सं० महादेव देसाई
६	आपणुं साहित्य	डा० विपीन झवेरी
७	आनन्दघन पद संग्रह	बुद्धिसागर जी
८	आनन्द काव्य महोदधि सभी भाग	
९	इतिहास निबंध संग्रह	प्र० गु० वि० सभा
१०	कबीर संप्रदाय	किशन सिंह चावडा
११	कविचरित्र १–२	के० का० शास्त्री
१२	कवीश्वर दलपतराम, भाग १	नान्हालाल
१३	कृष्णलीला काव्य	सं० अंबालाल जानी
१४	काठियावाड़ी साहित्य	कहानजी भाई देसाई
१५	गुजरातमां संगीतनुं पुनरुज्जीवन	खरे
१६	गु० साहित्मां स्वरूपो	डा० मंजुलाल मजमुदार
१७	गिरधर	जगजीवन दास मोदी
१८	गुजराती साप्ताहिक, द० मोदी का लेख 'गुजरातनुं हिन्दी साहित्य'	रा० रा० जगजीवन दास
१९	गुजराती ओए हिन्दी साहित्मां आपेलो फालो	डाह्या भाई देरासरी
२०	गु० भाषानुं वृहद् व्याकरण	क० प्रा० त्रिवेदी
२१	गु० भाषानो उत्क्रांति	बेचरदास दोशी
२२	गु० साहित्यनुं रेखादर्शन	के० का० शास्त्री
२३	गुजराती साहित्य	अनन्त राय रावल
२४	गुजराती साहित्य परिषद् की समस्त रिपोर्ट	
२५	गु० साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास	ईश्वर लाल दवे
२६	चारणो अने चारणी साहित्य	झवेरचन्द मेघाणी
२७	छोटमनी वाणी ग्रन्थत्रीजो	सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय, अहमदाबाद
२८	जैन गुर्जर कवि भाग १	मोहन लाल द० देसाई
२९	वही, भाग २	वही
३०	जैन धर्मनी प्राचीन अर्वाचीन स्थिति	बुद्धि सागर सूरि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३१ दयाराम — मोदी

३२ दयाराम काव्य मणिमाला, भाग ६ — प्र० नारायण दास शाह

३३ दयाराम काव्य संग्रह — न्हानालाल द० कवि

३४ दलपत काव्य, भाग १ — वही

३५ वही भाग २ — वही

३६ नरसिंह महेता कृत काव्यसंग्रह — गुजराती प्रेस

३७ नृसिंह वाणी विलास और श्री नृसिंहाचार्य जी शताब्दी स्मृति ग्रंथ

३८ नवीन काव्य संग्रह — प्र० विनय चन्द गु० शाह

३९ नभूवाणी — सं० भट्ट निर्भयराम प्रा० गोगा

४० प्राचीन काव्य माला, २५ भाग — सं० हरगोविंद कांटावाला

४१ प्रवीण सागर — सं० गोविन्द गिल्ला भाई

४२ प्रवीण सागर — प्र० गुजराती प्रेस

४३ प्रीतमदासनी वाणी — प्र० सस्तुं साहित्य, अहमदाबाद

४४ फर्बस त्रैमासिक, वर्ष ५ के अंक

४५ ब्रह्मानन्द काव्य — प्र० गुजराती प्रेस

४६ बुद्धिप्रकाश मासिक, सन् १९१५ के अंक

४७ भजन सागर भाग १–२ — सस्तुं साहित्य, अहमदाबाद

४८ वृहत्काव्य दोहन, भाग १ से ८ — सं० ईच्छाराम देसाई

४९ मेहता हर्षदास कृत पद संग्रह — सं० मेहता दुर्लभराम

५० मध्यकालनो साहित्य प्रवाह — क० मा० मुन्शी

५१ मीरांबाई — भानुसुखराम मेहता

५२ मनहर पद — सस्तुं साहित्य, अहमदाबाद

५३ रणछोड़ भजनावली — सं० निभेराम प्रा० गोगा

५४ वैष्णव धर्मनो संक्षिप्त इतिहास — दुर्गा शंकर के शास्त्री

५५ वसंत मासिक, सं० १९१३ और १९६१ के अंक

५६ बड़नगरा नागर गरबावली — रा० ब० चन्द्रविधानन्द

५७ साहित्य प्रवेशिका — हि० ग० अंजारिया

५८ शैव धर्मनो संक्षिप्त इतिहास — दुर्गाशंकर शास्त्री

५९ शिक्षण अने साहित्य (मासिक),
जुलाई १९५१ से जनवरी १९५२
तक के अंक ।

६० समालोचक (मासिक) सन् १९०३
के अंक

६१ साठीना साहित्यनुं दिग्दर्शन डाह्याभाई देरासरी

६२ सचित्र साक्षरमाला जयसुखराम जोशीपुरा

६३ हरिदास काव्य सं० दामोदर हीरजी जगड़

६४ कुंवरजी कीर्तन संग्रह प्र० अमृतलाल कुं० वैद्य

English

1. A Short History of Muslim Rule in India
—*Dr. Ishvari Prasad*
2. Bombay Gazetiar, Vol. I, Part I
3. Bengali Language and Literature —*D. F. Sen*
4. Classical Poets of Gujrat —*G. M. Tripathi*
5. Early History of India —*Vincent Smith*
6. Further Milestones in G. Literature —*K. M. Jhaveri*
7. Gujrat and Its Literature —*K. M. Munshi*
8. Indian Antiquary 1914, 15, 16
(Notes on Old Western Rajasthani) —*L. P. Tessitory*
9. Lecture on Gujrati Poetry —*H. R. Scott*
10. Linguistie Survey of India, Part I, Vol. IV —*Greirson*
11. Modern Vernacular Literature of Hindusthan
—*Sir George Greirson*
12. Milestones in Gujarati Literature —*K. M. Jhaveri*
13. Selections from Classical Gujrati Literature
(All Volumes) —*Taraporwala*
14. The Nirgun School of Hindi Poetry
—*P. D. Barthwal*

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट—३

हिन्दी काव्य साहित्य को प्रदान करने वाले प्रमुख गुजराती कवि

वैष्णव कवि

१ भालण
२ केशवराम
३ नरसिंह मेहता
४ मीरांबाई
५ कृष्णदास
६ मुकुन्द
७ दयाराम
८ गिरधर
९ हर्षदास
१० आदित्यराम

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के कवि

१ मुक्तानन्द
२ ब्रह्मानन्द
३ प्रेमानन्द
४ निष्कुलानन्द
५ भुजानन्द
६ दयानन्द
७ देवानन्द

संत कवि

१ दादू
२ अखो
३ प्राणनाथ-इन्द्रामती
४ भाणदास
५ रविसाहेब
६ खेम साहेब
७ मोरार
८ त्रिकम
९ होथी
१० जींवण
११ प्रीतम
१२ मूलदास
१३ धीरो
१४ हरदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१५ कल्याण
१६ निरान्त
१७ भोजो
१८ मनोहर
१९ दीनदरवेश
२० अर्जुन भगत
२१ अनवर
२२ नृसिंहाचार्य
२३ हरिदास
२४ कहान

जैन कवि

१ आनन्द घन
२ ज्ञानानन्द
३ विनय विजय
४ यशोविजय
५ नेम विजय
६ उदय रत्न
७ आनन्द वर्धन
८ किशनदास

राजा और राजाश्रित कवि

राजा

१ महेरामणसिंह
२ अमरसिंह
३ रणमलसिंह
४ मानसिंह
५ अमरसिंह
६ उन्नड़जी
७ हरिसिंह ठाकुर
८ विजयसिंह

राजाश्रित कवि—१ : चारण

१ आणन्द करमाणन्द
२ ईसरदास बारोट
३ सांया झुला
४ देवीदास
५ जसुराम
६ गोपाल
७ कालीदास
८ वजमल जी महेडु
९ पिंगलशी गढवी
१० जीवा भक्त राजसिंह
११ केसरीसिंह
१२ रविराज
१३ युगल किशोर
१४ कनक कुशल
१५ दूला काग

राजाश्रित कवि—२ : अन्य कवि

१ पुहकर
२ गंजन
३ दलपतिराय बंशीधर
४ ओंघड
५ केशवरामजी कवीश्वर
६ आदितरामजी कवीश्वर
७ उत्तमरामजी कवीश्वर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूफी कवि

१ शेख बहाउदीन बाझन
२ काजी महमूद दरियायी
३ शाह अलीजी राजघनी
४ हजरत खूब मुहम्मद चिश्ती
५ शम्मवली उल्लाह
६ हजरत कुबबे आलम
७ हजरत सैयद मुहम्मद
८ शेख वजीहुद्दीन अहमदमलवी

आधुनिक कवि

१ नभुलाल
२ हीराचन्द कानजी
३ दलपतराम
४ नर्मद
५ सविता नारायण
६ बालाशंकर कंथारीआ
७ गोविन्द गिल्ला भाई
८ मूलदास
९ दुलेराय
१० दूला काग
११ अविनाशानन्द
१२ वैश्र कुंवरजी नथु
१३ इन्दुमती ह० देसाई (भड़ोच)
१४ रंग अवधूत महाराज

———

राजकीय संग्रहाध्यक्ष पुस्तकालय, लखनऊ
पुस्तक संख्या 3990
18-2-71
Lucknow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh